# जीवन और जागृति

( आत्मकथा )

*

लेखक

टोकरशी लालजी कापड़िया

*

प्रकाशक:

सर्वोदय विचार-प्रचार ट्रस्ट

हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)

१९७२

(जगज्ज्योति) - भारतपिता
महात्मा गान्धी

# समर्पण

*

उदात्त जीवन के प्रेरक

मित्रों और सत्पुरुषों के करकमलों

सादर समर्पित

*

—मोकरशी लालजी कापड़िया

## आचार्य श्री विनोबा भावे की सम्मति

बेनी, विहार
दि. ८-१०-१९६६

श्री विद्धिचन्दजी चौधरी,
हैदरावाद ।

बावा ने यह ग्रन्थ देख लिया । उन की राय है कि यह पाठकों को पुरुपार्थ साधन की प्रेरणा दे सकेगा ।

महादेवी

पूज्य विनोवा भावे

## आन्ध्र प्रदेश के गवर्नर
## श्री खण्डूभाई देशायी का सन्देश

श्री टोकरशी लालजी कापड़िया की यह आत्मकथा मैं पूर्ण-तया पढ नहीं सका, केवल उनके जीवन की कुछ घटानाओं का उल्लेख मात्र देख लिया। उसके आधार पर यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि जो भी व्यक्ति सत्सकल्प तथा आत्मनिर्भरता के साथ परिश्रम करेगा, वह न केवल अपना ही वरन् समाज का भी हित साधन कर सकेगा। उनका जीवन इस बात का साक्ष्य है कि व्यक्ति की कमाई से समाज भी लाभान्वित हो सकता है। अपने जीवन को सफल बनाने की अभिलाषा रखनेवाले पाठकों को मैं सलाह देता हूँ कि वे लोग श्री टोकरशी भाई के जीवन में परिलक्षित जागृति तथा आत्मार्पण-भाव का अनुसरण करे। समाज के कल्याण के लिए इन्होने जो रकमें दान में दीं, और गाँधीजी के बताये विविध रचनात्मक कार्य चलाने में श्रम किया वह सर्वथा स्तुत्य है।

मैं यह कामना करता हूँ कि श्री टोकरशी भाई जनता की सेवा करते हुए स्वस्थ और दीर्घ जोवन व्यतीत करें; अपने उपार्जित धन-संपत्ति का आप संरक्षक रह कर देशवासियों के हित में उसका व्यय करते रहें।

राजभवन, हैदराबाद
८ सितंबर, १९७२

खण्डूभाई-के-देशायी

## आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमन्त्री का संदेश

श्री टोकरशी लालजी कापड़िया की 'जीवन और जागृति' नामक आत्मकथा मैंने पढ़ ली। ख्यातनामा गांधीवादियों में टोकरशी भाई एक हैं। वाणिज्य की अभिवृद्धि, समाज.सेवा तथा शिक्षा प्रचार की दिशाओं में आप तत्परता से काम करते आ रहे है। मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों में सेवाभाव प्रेरित कर देगी।

मनुष्य के जीवन में धन संपादन कोई विशेष महत्व नहीं रखता, बल्कि वह जो कुछ सीखता है और दूसरों को देता है वही महत्वपूर्ण माना जाता है।

पि. वि. नरसिंह राव

# प्रकाशक का निवेदन

आचाय विनोबा भावे से प्रेरणा पाकर श्री टोकर्शी लालजी कापडिया और उनके मित्र श्री भगवानदास जी अग्रवाल ने दि. १९ मई १९५६ को, "सर्वोदय विचार-प्रचार ट्रस्ट" स्थापित किया, और सर्वोदय के आदर्शों के प्रचार के लिए उन दोनो ने कष्ट उठा कर हैदराबाद के गाँधी भवन मे "गाँधी ज्ञान मदिर" का भी प्रबन्ध कर दिया था। आन्ध्र प्रदेश मे प्रचार करने के निमित्त ट्रस्ट ने सर्वोदय संबंधी कुछ ग्रंथ प्रकाशित किये और भविष्य मे और भी कई उपयोगी ग्रंथ विविध भाषाओ मे, विशेष रूप से तेलुगु मे प्रकाशित करने की एक योजना तैयार की है।

श्री टोकर्शी लालजी कापड़िया ने सन् १९६६ मे अपनी आत्मकथा 'जीवन अने जागृति' के नाम से गुजराती मे लिखी थी। उस मे अपने जीवन वृत्तान्त के अतिरिक्त लेखक ने यह भी बताया कि सर्वोदय के आदर्श ने उन्हे किस प्रकार प्रभावित किया था। श्री टोकर्शी भाई प्रधानतया वाणिज्य में व्यस्त व्यक्ति हैं, किन्तु समाज सेवा के प्रति भी उन का लगाव कुछ कम नही है, बचपन से ही उनकी प्रवृत्ति सेवा के कार्यो मे लगे रहते आयी है। उन्होने अपने अब तक के जीवन में वितरणशील रह कर महत्वपूर्ण कार्यों मे द्रव्य की सहायता पहुँचायी है। उनका जीवन इस सत्य का निदर्शन है कि व्यापार-व्यवसाय मे लगे हुए व्यक्ति भी समाज सेवा की प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं और उतनी ही लगन, त्याग और सच्चाई के साथ समाज कल्याण के निमित्त श्रम कर सकते हैं।

ट्रस्ट ने १९६६ मे उनकी गुजराती में लिखी आत्मकथा का प्रकाशन किया था। आचार्य विनोबा ने उसे देखकर अपनी सत्सम्मति दी जिस ने हमारा उत्साह और बढ़ाया। पाठको के द्वारा उस प्रकाशन को जो समादर प्राप्त हुआ उसे दृष्टि में रखकर ट्रस्ट ने उस मूल गुजराती के अंग्रेजी

हिन्दी और तेलुगु अनुवाद भी निकालने का इस समय निश्चय किया है। परतु १९६६ से लेकर अब तक के अरसे मे बहुत कुछ परिवर्तन हुए है। लेखक की सेवा-प्रवृत्ति और भी विकास पा गई, फलतः बिहार में क्षाम निवारण, आन्ध्र मे तूफान का उपद्रव, बंगला देश के शरणार्थी आदि घटनाओं से सबधित कई नूतन अध्याय अनुबध के रूप में जोड दिये गये है।

श्री शान्तिकुमार-जे-भट्ट, श्री रुद्रदेव त्रिपाठी और श्री एस. वि. शिवराम शर्मा के हम बहुत आभारी हैं जिन्होंने क्रमशः अंग्रेजी, हिन्दी और तेलुगु अनुवाद प्रस्तुत करने का श्रम किया है। दक्षिण भारत प्रेस के मैनेजर के प्रति भी हम कृतज्ञ है जिन्होने इन तीनो सस्करणों को अच्छे ढंग से छापने का कष्ट किया।

आन्ध्र प्रदेश के गवर्नर श्री खण्डूभाई देशाई तथा मुख्य मन्त्री श्री पि. वि. नरसिंहराव को हम अपना हार्दिक धन्यवाद अर्पण करना चाहते हैं; इन महानुभावो ने अपने अमूल्य सन्देशो से ट्रस्ट को उपकृत किया है।

हम आशा करते है कि ये प्रकाशन पाठकों को रोचक प्रतीत होने के साथ साथ क्रियाशील आदर्श जीवन व्यतीत करने की भी प्रेरणा दे सकेगे।

बिद्धिचन्द चौधरी
संचालक साहित्य विभाग
सर्वोदय विचार-प्रचार ट्रस्ट

गाँधी भवन हैदराबाद,
सितंबर १९७२

# अध्याय--क्रम

पृष्ठ


| | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| १. कुछ ग्रन्थ रचना के सम्बन्ध में | .... | १ |
| २. जन्मभूमि | .... | ८ |
| ३. माता-पिता आदि | . | १७ |
| ४. बाल्यावस्था | ... | २३ |
| ५ व्यापार की शिक्षा | ... | ३५ |
| ६ लग्न-प्रसंग | .... | ४४ |
| ७. प्रगति के पथ पर | ... | ५१ |
| ८. गृहस्थ जीवन का आरम्भ | ... | ६० |
| ९. युद्ध की लपेट में | .... | ६८ |
| १०. अंत में ब्रह्म देश छोड़ दिया | .. | ७५ |
| ११. स्मरण और सवेदन | .. | ८१ |
| १२. कलकत्ता से कच्छ | .... | ८९ |
| १३ नये क्षेत्र में नया काम | ... | ९५ |
| १४. सेवाग्राम में एक सप्ताह | .. | १०० |
| १५ गाँधीवाद | . | १०७ |
| १६ व्यवसाय का विकास | .... | ११६ |
| १७. गाँधीजी का महा-प्रयाण | .. | १२४ |
| १८. रजाकारों की हलचल तथा निजाम राज्य की विमुक्ति | .. | १३१ |
| १९. किसान सम्मेलन तथा गाँधी विद्यालय | .. | १४३ |
| २०. शिवरामपल्ली में ग्रामसेवा केन्द्र | ... | १५१ |
| २१ सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट | .... | १५९ |
| २२. खेती का एक सफल प्रयोग | .... | १६६ |
| २३ हैदराबाद राज्य में प्रथम निर्वाचन | .... | १७१ |
| २४. महासभा के अधिवेशन आदि | .... | १७७ |
| २५. गुजराती प्रगति समाज | .... | १८६ |

पृष्ठ

२६. दि हैदराबाद चिल्ड्रन्स ऐड सोसायटी .... १९८
२७. व्यापारी मण्डल आदि .... २१०
२८ व्यापार के सबंध में विशेप कथन .... २१८
२९. मेरा मानसिक निर्माण .... २२७
३०. सन्तान परिचय .... २३४
३१. राष्ट्रभाषा-प्रचार .... २४०
३२. ग्राम विस्तार का सुधार ... २४७
३३. नेत्रदान की प्रवृत्ति .... २५३
३४. आरोग्य की सुरक्षा .. २६२
३५. प्रवास के अनुभव ... २७२
३६. सामाजिक जीवन पर विचार .... ३०१
३७ धार्मिक जीवन पर विचार ... ३०८
३८. राष्ट्रीय जीवन पर विचार .... ३१४
३९. शिक्षण पर विचार .. ३२७
४० जीवन-यात्रा .. ३३६
४१. निवृत्ति नही, प्रवृत्ति ही अधिक रही ३४५
४२. आन्ध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन .. ३५९
४३. आन्ध्र में एक महत्वपूर्ण प्रयोग ... ३६४
४४. भारत की आर्थिक स्वतत्रता केलिए एक योजना . ३७०
४५ धर्म और मानवता .. ३८५
४६ विस्तृत गृह-निर्माण-योजना .. ३९५
४७. प्रकृति का प्रकोप और रक्षा के यत्न .. ३९७
४८ तूफान से ध्वस्त आन्ध्र प्रदेश में रक्षण-कार्य .... ४०६
४९. संसार की यात्रा के सस्मरण . ४१२
५०. वंगला देश के शरणार्थियो को सहायता ४४७
५१. उपसंहार . ४५५
५२. संस्थाओं की सूची . ४५७

---

१

## कुछ ग्रन्थ रचना के सम्बन्ध में

अनेक समस्याओं को पार करने के पश्चात् यह ग्रन्थ लिखा गया है। यह कितना उपयोगी बन पाया है, यह कहना मेरे लिये कठिन है; किन्तु 'जो कहा गया है वह प्रकट होता है और जो लिखा गया है वह पढ़ा जाता है' इस न्याय से ग्रन्थ पढ़ा तो अवश्य जाएगा ही तथा भिन्न-भिन्न व्यक्ति अपनी योग्यता एवं रुचि के अनुसार इसमें से तत्त्व चुन लेंगे, यह भी निश्चित ही है। इसकी उपयोगिता के सम्बन्ध में मुझे विचार ही क्यो करना चाहिये ? मैंने एक शुभ-सङ्कल्प से इसका निर्माण किया है, इतना ही आश्वासन मेरे लिये प्रर्याप्त है।

इन ग्रन्थ के लेखन में पहली समस्या तो यह थी कि क्या 'मै' ऐसा ग्रन्थ लिखने का अधिकारी हूँ ?

मेरे मन में आरम्भ से ही ऐसे सस्कार पडे हुए थे कि आत्मकथा अथवा जीवनकथा तो कोई महापुरुष ही लिखता है, अथवा जिसका वाणी पर पूरा प्रभुत्व हो वही इस ओर प्रवृत्त हो। इसमें मुझ जैसे सामान्य मनुष्य का कोई काम नही है। परन्तु

कुछ गहराई से विचार करने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि मुझ जैसे लाखों अथवा करोड़ों मनुष्य इस देश में रहते हैं और वे जीवन की सामान्य स्थिति से ऊपर उठने के लिये प्रयत्न करते रहते हैं, उनके लिये मेरे जीवन-प्रसंग कुछ अंशों में अवश्य ही उपयोगी होंगे।

इस प्रकार पहली समस्या का समाधान पा लेने पर मन को कुछ सन्तोष मिला, किन्तु दूसरी समस्या इस से अधिक कठिन थी। क्या 'मैं अपने जीव-प्रसगों को वास्तविक स्वरूप में लिख सकूँगा ?'

यदि स्वयं के गुणों का विस्तार करें और अवगुणों को छिपा दें तो वह आत्मकथा नही, अपितु आत्मश्लाघा का ही एक पुराण बन जाए। ऐसा पुराण लिखने तथा प्रकाशित करने का तात्पर्य ही क्या होता है ? उससे अपना अह पुष्ट हो और अन्त में पतन हो तथा समाज सत्य वस्तु के ज्ञान से वंचित रहे और उसके आधार पर मनमाने अनुमान लगाये; परन्तु मेरी वाल्य एवं युवावस्था में मैंने पूज्य महात्माजी, पूज्य विनोवा, श्री राजचन्द्र, भगवान महावीर तथा टॉल्स्टाय आदि पहापुरुपों के वचनामृत का समुचित ढग से पान किया था और उससे मन में सत्य की निष्ठा एवं सत्य का आग्रह प्राप्त कर चुका था उसे मैंने अधिक दृढ करने का सङ्कल्प किया।

इस प्रकार दूसरी समस्या का समाधान हो गया, इस लिये मेरा मन आनन्दित हुआ। मानों किसी अरण्य को पार करके

उसके छोर पर आ पहुँचा ! किन्तु वह आनन्द अधिक समय तक स्थिर नही रह पाया, क्योंकि तीसरी समस्या सिर खड़ा करके मेरे सामने उपस्थित हुई थी। मेरा अध्ययन केवल गुजराती पाँचवी कक्षा जितना ही था और भाषाज्ञान में त्रुटियाँ बहुत होती थीं। मैं मनके आवेश वश पत्र आदि लिखता था, किन्तु उन्हे दूसरे से सुधरवाना पड़ता था। ऐसी स्थिति में जीवन-कथा लिखने का काम मै कैसे करूँ?

परन्तु उसी समय अन्तरात्मा से आवज आई कि 'आज तक तूने अनेक प्रकार के साहस किये है और उनमें से वहुत-से साहसों में तू सफल हुआ है, तब इस साहस को अपनाने मे इतना क्यों डरता है? 'हिम्मते मर्दा मददे खुदा।' एक बार तू लिखने का सङ्कल्प कर, तब तेरा शेष सभी मार्ग तेरे लिये सुगम बन जाएगा।''

तब मनमें कुछ हिम्मत आई और उत्साह का संचार हुआ, परन्तु आगे बढ़ना कठिन था। चौथी समस्या मेरा मार्ग रोक कर सामने खड़ी थी। वह मुझसे पूछ रही थी कि "तेरे पास यह सब-लिखने का समय कहाँ है? सामाजिक, शैक्षणिक, राजकीय तथा व्यापारिक प्रवृत्तियों को सँभालने में चौबीस घण्टे भी कम पड़ते है, तो यह नई प्रवृत्ति किस प्रकार करेगा?"

वस्तुतः यह समस्या बड़ी प्रबल थी। समय के सम्बन्ध में मुझे बहुत सावधान रहना पड़ता था और यथासम्भव उसका कृपणता से उपयोग करना पड़ता। यह कार्य तो कुछ सप्ताह

अथवा कुछ महीनों का समय माँगता था। परन्तु 'सँकड़ी गली में फँसी हुई गाड़ी वहीं फँसी नहीं रहती है। वह किसी न किसी तरह बाहर अवश्य निकल आती है।' मेरी इस चौथी समस्या का भी यही हाल हुआ। सन् १९५५ मे शारीरिक अस्वस्थता के कारण कुछ निवृत्ति लेनी पड़ी और इस प्रकार मुझे उस कार्य के लिये अपेक्षित समय मिल गया। अकसर बीमारी भी आशीर्वाद का कारण बन जाती है, यह उसीका उदाहरण है।

उस समय मैंने अपनी स्मृतियों को ताज़ा करके मेरे जीवन से सम्बन्धित प्रमुख घटनाओं का लेखन आरम्भ किया, किन्तु यह काम लगभग आधा हुआ होगा कि निवृत्ति का समय पूरा हो गया और मुझे प्रवृत्तियाँ पुन. सँभालनी पड़ीं। पुनः मैं समय के सङ्कोच में आगया। अनेक बार विचार करता कि जीवनकथा का अपूर्ण पड़ा हुआ कार्य पूरा करूँ, किन्तु अपेक्षित अवकाश के अभाव में मन एकाग्र ही होता और लिखने का ढंग नही जम पाता! ऐसा होते होते दिन और महीने बीतने लगे तथा वर्ष भी बदलने लगे। परन्तु इस कार्य को पूरा करने की मेरे मन में दृढ़-भावना थी, अतः सन् १९६४—६५ मे अस्वस्थता के कारण व्यापारादि कार्यों से पुन. निवृत्ति ली, तब यह टिप्पण का कार्य पूर्ण किया।

इतना कर लेने पर भी समस्यायों का अन्त तो नहीं आ पाया था। अभी एक और महत्त्वपूर्ण समस्या समाधान माँग रही थी, मैने घटनाओं का जो संक्षिप्त अंकन किया था, उसमें भाषा की दृष्टि से बहुत-सा सुधार अपेक्षित था और उसे अधिक सुव्यवस्थित

करने की भी आवश्यकता थी। यह काम पर्याप्त चतुराई और बहुत अनुभव की अपेक्षा रखता था। भाषागत सशोधन करने से यदि भाव बदल जाएँ तो यह चल नही सकता और व्यवस्था करते हुए यदि विशदता ही नष्ट हो जाए तब तो अनर्थ ही होगा। इस स्थिति में बम्बई-निवासी शतावधानी पंडित श्री धीरजलाल टोकरशी भाई का साक्षात् परिचय हुआ जो कि बाल्यकाल से ही पूज्य महात्मा गांधी जी की विचारसरणी के प्रति पर्याप्त आदर भाव रखते है तथा जिन्होने आज तक भिन्न-भिन्न विषयो पर छोटी-बड़ी तीन सौ से अधिक पुस्तके लिखी है। उन्होंने इस ग्रंथ के सम्पादन का उत्तरदायित्व स्वीकृत कर लिया; इससे मेरे सिर का बोझ बहुत ही हल्का हो गया।

यह ग्रंथ मेरे तथा अन्य व्यक्तियों के जीवन मे जागृति का निमित्त बनेगा, यह सोच कर इसका नाम 'जीवन और जागृति' रखा है।

जीवन का प्रवाह तो सभी में बहता है, किसी में प्रबल तो किसी मे क्षीण! परन्तु जागृति सभी मे दिखाई नही देती। इसके दर्शन तो विरले ही स्त्री-पुरुषों मे होते है। हमारी विगत कितनी ही शताब्दियाँ दासता मे बीत गई, अत. हममें मूढता की मात्रा बढ गई और जीवन की जागृति सर्वथा नष्ट हो गई। आज से साठ-सत्तर वर्ष पूर्व हमारी स्थिति कैसी थी, इसका पूर्ण रूप से विचार करें। यह तो हमारा भाग्य अच्छा था कि ठीक ऐसे ही समय मे हमारे यहाँ एक युगपुरुष अवतरित हुआ जो स्वय जागृत हुआ और समस्त देश में जागृति की ज्वाला फैला दी। एक कवि ने उचित ही कहा है—

जेयु प्रमादवश विश्व वधुयं ज्यारे,
त्यागी प्रमाद दूर सजथया त्यारे।
संजीवनी जगत ने दयी ने अनेरी,
निंद्रा हरी सकळ भारतवर्ष केरी॥

अर्थात्: जब विश्व प्रमाद में अधमरा सा पड़ा हुआ था,
तब वह त्यागी उत्साह के साथ जाग पड़ा।
उसने अमृत छिड़क कर सब को सजीव बनाया,
सारा भारत तंद्रा छोड़ उठ खड़ा हुआ।

मैं स्वयं पूज्य गांधीजी के जीवन और प्रवचनों से बहुत ही प्रभावित हूँ और जब कभी समय मिलता है, उनके ग्रन्थों का वाचन करता हूँ। मैंने इन्ही दिनों उनके एक ग्रन्थ में पढ़ा कि 'यदि प्रेम जीवन का धर्म नहीं होता तो चारों ओर मृत्यु के व्याप्त रहते हुए भी जीवन जो टिका हुआ है, वह टिक नहीं पाता। जीवन मृत्यु पर होने वाली निरन्तर विजय है। मनुष्य और पशु के बीच यदि कोई वास्तविक भेद हो तो वह यही है कि मनुष्य इस जीवन धर्म को क्रमशः पहचानता गया है और उसे अपने आचरण में उतारने का उसने प्रयास किया है। जगत के प्राचीन तथा अर्वाचीन सभी साधु सन्त, अपने-अपने ज्ञान और सामर्थ्य के अनुसार, इस परम जीवनधर्म की जीती जागती प्रतिमा स्वरूप थे; हमारे हृदय में स्थित आसुरी-वृत्ति अनेक बार सहज विजय प्राप्त करती दिखाई देती है, यह सत्य है। किन्तु उससे यह जीवनधर्म असत्य सिद्ध नही होता। यह तो बतलाता है कि इसका आचरण कितना कठिन है। जो धर्म सत्य

के समान ही परम कोटि का है, उसका आचरण कठिन क्यों न होगा ? इस धर्म का आचरण जब सर्वव्यापी बनेगा तब ईश्वर जैसे स्वर्ग में राज्य करता है, वैसे ही पृथ्वी पर भी करेगा। स्वर्ग और धरती हमारे हृदय में ही है, यह बात मुझे याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है।,* ये वचन अपना जीवन धर्म समझने के लिए अति उपयोगी है।

* "सत्यएज ईश्वर छे"–पृ १७ मूल 'हरिजनबन्धु' दि. २७–९–३६

२

# जन्मभूमि

मेरा जन्म कच्छ की भूमि पर हुआ है। इस भूमि के तीन भागों में सागर गरजता है और एक भाग में मरु-प्रदेश है, जो कच्छ के रेतीले प्रदेश के रूप में प्रसिद्ध है।

आज तो कच्छ का यह मरु भाग जगत् की जिह्वा पर चढ़ गया है, क्योंकि पाकिस्तान ने अपनी मलिन आकांक्षा की पूर्ति के लिए भारत पर जो आक्रमण किया, उसका पहला प्रयोग इस मरु-भाग की उत्तरी सीमा पर हुआ था और उसके प्रतिदिन के समाचार दैनिक-पत्रों के पृष्ठों पर चमकते थे, और इसी प्रकार आकाशवाणी से प्रसारित किये जाते थे।

मरु का सामान्य अर्थ रेतीला-प्रदेश होता है, किन्तु यहां रेती बिछी हुई नहीं है। यह मरु-भाग खारी मिट्टी और कीचड़ का बना हुआ है, साथ ही इन पर कुछ महीनों मे समुद्र का पानी भी फैल जाता है। इस सब स्थिति को ध्यान मे रखकर विद्वानों ने ऐसा निष्कर्ष निकाला है कि बार-बार होनेवाले भूकम्प के कारण यह भाग समुद्र के अन्दर से उभर आया है।

इस मरु-प्रदेश ने बहुत प्राचीनकाल से कच्छ की उत्तर-पूर्वी सीमा की सुरक्षा की है, इसका कारण यह है कि कोई भी सेना इसे सरलता से पार करके इस ओर आ नही सकती। इतना होते हुए भी कुछ हठी आक्रमणकारी इस मरु भाग को लांघ कर कच्छ में प्रविष्ट हुए, परन्तु कच्छ के बहादुर लोगों ने उनका जोरदार मुकाबला करके या तो उन्हे भगा दिया अथवा उनका विनाश कर दिया। एक कवि ने कहा है कि—'सिंधोड़ों सोंणाइ सुजे, रत मुडसेंजा उछरन' अर्थात् इस भूमि के निवासी ऐसे है कि जिनका रक्त सिन्धुड़ा राग तथा शहनाई का स्वर सुनतें ही अन्तर से उवल पड़ता है।

समुद्री किनारे ने इस प्रदेश के लोगों को नौकाएँ वनाना तथा समुद्र की यात्राएँ करना सिखाया है। प्राचीन भूगोल-निर्माता टॉलेमी ने इस देश के उत्तम समुद्री व्यापार का आदर-पूर्वक सूचन किया है तथा मध्य युग के अंग्रेज लेखकों ने यहाँ के समुद्र सम्बन्धी साहसिक कार्यो की मुक्तकण्ठ से प्रशसा की है।

ट्रफालगर के युद्ध में विश्वविख्यात वना हुआ 'विक्टरी' जहाज तथा इग्लैण्ड और अमेरिका के बीच यातायात करने वाला 'कटिसार' जहाज माडवी वन्दरगाह मे बना था।

इन दिनो कच्छ में लखपत, कोटेश्वर, जखौ, मांडवी, मुदरा, तुणा, कडला तथा खारी रोहर—ऐसे आठ वन्दरगाह है। इनमें आज तक मांडवी का स्थान प्रथम था, किनु विगत कुछ वर्षो से कडला वन्दरगाह प्रमुख वन गया है और उसका विकास इतनी तेजी से हुआ है कि अब उसकी गणना भारत के प्रथम

श्रेणी के बन्दरगाहों में होती है। इस विकास में भारत सरकार ने पर्याप्त सहयोग दिया है तथा इसके निकट ही गांधीधाम नाम से एक नये शहर का भी विकास किया है। अब तो उसे 'फ्री झोन' के रूप में घोषित कर दिया है, इसलिए व्यापार-उद्योग अच्छी तरह से विकसित हो रहा है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि कंडला-बन्दरगाह, 'फ्री झोन' और गांधीधाम का त्रिवेणी संगम होने से इसकी गणना समस्त भारत के एक महत्त्वपूर्ण स्थान के रूप में होने लगी है।

कच्छ की अपनी कई विशेषताएँ हैं। इस सम्बन्ध में कवियों ने कहा है कि—

भल घोड़ा काठी भला पेनी इक पे'रवेश।
मानव मोंघा मूलना, कोडीलो कच्छ देश, ॥

कच्छ देश वस्तुतः कोडीला अर्थात् सुन्दर है, क्योंकि वहाँ उत्तम जाति के अश्व पैदा होते है, उत्तम जाति के काठी लोग निवास करते हैं, पैरों के तलुए ढक जाएँ ऐसा मर्यादावाला पहनावा है और मनुष्य मँहगे मूल्यवाले है।'

बेर बुरी ने बावरी, बरी कंढा ने ब्या कख्ख।
होथल हलो कच्छड़े, जित माडु सवा लख्ख ॥

जहाँ बेर, थुअर और बबूल के वृक्ष है, तथा काँटे और अन्य घास है। इतना होते हुए भी हे होथल ! तू उस कच्छ देश

में ही चल, क्योंकि वहाँ मनुष्य सवा लाख के हैं।' ये शब्द **ओढा जाम नामक कवि के मुख से निकले है।**

कच्छ की भूमि कुछ स्थानों पर हरियाली भी है, परन्तु इसका साधारण स्वरूप ऊपर बताए अनुसार है। ऐसा होने पर भी यह भूमि मुझे तो बहुत प्रिय लगती है। कौन जाने क्यों? इस भूमि में जन्म लेनेवाले की इसके प्रति ममता कैसे भी संयोगों में नहीं छूटती। कहा गया है कि—

> अक्क, वण, जाडेजा ठक्कर, घर घर कूढा रच्छ।
> रब ठडूके कुनियाँ, तो य भडारो कच्छ ॥

वन में आक के वृक्ष हैं, ठकुराई जाडेजा रजपूतों की है, घर-घर बरतनों में पानी के कुंडे हैं और हँड़िया में राब धड़ाके करती रहती है, फिर भी हम कहते हैं कि हमारा कच्छ देश भला है।

कच्छ के तीन प्राकृतिक विभाग है: वागड, कंठी और अब-ड़ासा। इन तीनों विभागों की अपनी-अपनी विशेषता है और यही कारण है कि ये एक-दूसरे से भिन्न प्रतीत होते है, किन्तु इनमे अधिक उज्जवलता कंठी की है। मुनि श्री विद्याविजयजी ने 'मेरी कच्छयात्रा' में लिखा है कि—कंठी को मै नन्दनवन इसीलिए कहता हूँ कि, कच्छ जैसी शुष्क भूमि मे भी कंठी सुन्दर वृक्षो की घटाओं से सुशोभित प्रान्त है। प्रत्येक गाँव में वाड़ियाँ और बगीचे है। प्रमुख रूप से भुजपुर, देशलपुर और बीदडा के बगीचों मे पैदा होनेवाले आम सारे कच्छ मे प्रशसा

पाते है। सारा प्रदेश पूरा हरियाला दिखाई देता है। लोगों का रहन-सहन, खान-पान और वेषभूषा आदि अन्य प्रान्तों की अपेक्षा निराली ही दिखाई देती है।'

इस कंठी विभाग में भूखी नदी के किनारे स्थित पत्री गांव में मेरा जन्म हुआ था। सामान्यतः मनुष्य को अपने जन्मस्थान के प्रति ममत्व होता है और होना भी चाहिए, ऐसी मेरी मान्यता है। जननी और जन्मभूमि को स्वर्ग से भी अधिक कहा गया है, इसका कारण यह है कि वे हमारे पिण्ड का पोषण करती हैं, हमारे जीवन का निर्माण करती हैं और हमें निश्चिन्त होने के लिए आश्रय देती हैं। हम पर सामान्य उपकार करनेवालों को भी हमें भूलना नहीं चाहिए, तब जो भूमि हम पर असीम उपकार करती है, उसे कैसे भूल सकते है? मुझे संयोगवश जन्मभूमि से दूर जाना पड़ा और आज भी दूर ही रहता हूँ, परन्तु उसके प्रति मेरा जो महत्व है उसमें तनिक भी कमी नहीं आई है, इसे मैं अपने जीवन का परम सौभाग्य मानता हूँ।

जब मेरा जन्म हुआ, तब कच्छ की स्थिति ठीक नहीं थी। आजीविका का मुख्य साधन खेती था, परन्तु वर्षा की अनियमितता के कारण बार बार दुष्काल जैसी परिस्थिति उत्पन्न होती और लोगों को बहुत परेशानी उठानी पड़ती। साथ ही शिक्षा का स्तर भी बहुत सामान्य तथा सामाजिक रूढियां इतनी बलवान् थी कि उनमें से लोग तनिक भी इधर उधर नहीं हो सकते थे। इसी प्रकार वैयक्तिक सत्ता तथा उसकी धाक भी बहुत भारी, इससे कोई उसके सामने ऊँची आवाज में बोल नहीं सकता था।

इसके अतिरिक्त उद्योग-धन्धे कम और रास्ते भी अधिकाश कच्चे। ऐसी स्थिति में उन्नति के दर्शन कहाँ से हो? किन्तु कुछ समय पश्चात् स्वराज्य की हलचल से सारे भारत मे क्रान्ति की एक लहर आ गई तथा उसके वाद आजादी की लड़ाई आरम्भ होने पर प्रजा में प्राण आया। उसके मधुर फल इस देश को भी मिले। आज कच्छ में प्रगति के दर्शन हो रहे है और उसके छोटे-छोटे गाँव सुधरने लगे है।

स्वराज्य के पश्चात् कच्छ एक स्वतन्त्र प्रान्त बना था और उसका प्रबन्ध दिल्ली के आधीन चीफ़ कमिश्नर द्वारा होने लगा था। वाद में गुजरात राज्य बनजाने पर उसमें यह मिल गया। इस परिवर्तन के समय भारत सरकार ने पर्याप्त सहायता की तथा वर्तमान में गुजरात राज्य की ओर से भी अच्छी मात्रा में सहायता मिल रही है।

पत्री (मेरी जन्मभूमि) की बात करूँ तो २३०० मनुष्यों की वस्ती में एक 'गाँधी विद्यालय' नाम से उच्चतर माध्यमिक विद्यालय है, एक छात्रालय है, एक कन्याशाला है, एक श्राविकाशाला है, एक ज्ञानभण्डार, एक पुस्तकालय और एक वाचनालय है। तीन धर्मशालाएँ और तीन चिकित्सालय भी है। गाँव की उत्तर दिशा में तीन मील की दूरी पर 'खेगार सागर' नामक एक तालाब है। उस पर बाँध बना कर नहर खोदी गई है, जिसका पानी गाँव की भूमि को मिलता है। इस के अतिरिक्त कुछ छोटे तालाब तथा पचीस के लगभग कुए है। गाँव की ५६०० एकड़ जमीन में से ५००० एकड़ जमीन में खेती होती

है। अब तो इंजिन लगा दिये गये हैं और 'जोते उसकी जमीन' का कानून हो जाने से लोग बड़े उत्साह से जमीन को सुधार कर अधिक फसल उगाने लगे है। इसके अतिरिक्त जैन मन्दिर, स्थानक तथा प्रत्येक धर्म के मन्दिर हैं; इनमें भूतेश्वर शिव-मन्दिर और राममन्दिर रमणीय है। गाँव में एक मस्जिद भी है।

आज से बारह वर्षपूर्व 'श्रीपत्री सर्वोदय समाज' की रजत-जयन्ती के अवसर पर एक विशेषाङ्क निकला था। उसमें 'मेरे स्वप्न' शीर्षक लेख में मैंने लिखा था कि, "सर्वोदय की दृष्टि से 'ग्राम-स्वराज्य' का अर्थ "सबका उत्कर्ष" है; ऐसे ग्रामस्व-राज्य की स्थापना अभी पूर्ण नही हुई है। हमारा गाँव आदर्श गॉव बन सके, हमें वैसा कार्य करना चाहिये। ईश्वर हमें प्रेरणा दे! आदर्श गॉव बनाने के लिये लोगों में उत्साह, उत्तम स्वास्थ्य और निर्भयता लानी पडेगी। लोगों के जीवनस्तर को ऊँचा उठाने के लिये हमें क्रान्ति की दिशा मे जाना पड़ेगा। इसके लिये जन-साधारण मे व्याप्त प्रमाद और आलस्य को दूर करना जरूरी है। चाय, बीड़ी आदि व्यसनों से उन्हे मुक्त रहने के लिए समझाना चाहिए। दूसरों की निन्दा करने के निन्दनीय कार्य से उन्हें रोकना पड़ेगा।"

उस लेख मे यह भी बतलाया था कि 'लोग अपना समय व्यर्थ के कार्यो मे न गंवाकर सार्वजनिक कार्यो में लगाएँ। ग्राम-स्वच्छता तथा ग्रामोद्योग के कार्य मे सभी लग जायँ। सार्व-जनिक कार्य मे सब का भला है, यह समझे। कठोर परिश्रम के बिना कार्य-सिद्धि नही होती इस महामन्त्र को अपनाएँ। गॉवों

में फैले हुए अनेक व्यसन जीवन को पराधीन बना रहे है और गरीबी की ओर ढकेल रहे है। आलस्य भी एक व्यसन ही है। इस सच्ची बात पर लक्ष्य रखकर व्यसनो को तिलांजलि दे। हम इन व्यसनों को दूर करने के लिये उत्साह पूर्वक प्रयत्न करे। सभी मित्र, भाई-बहिन, और बालक साथ मिल कर इस कार्य को करे।'

मुझे यह बतलाते हुए हर्ष होता है कि मेरे ये स्वप्न पूर्णरूप से तो नहीं किन्तु बहुत अधिक मात्रा मे साकार होने लगे है और सभी की दृष्टि पत्री की ओर लगी हुई है।

पत्री मुंदरा परगने का गॉव है। यह भुज से २४ मील, अजार से २४ मील और मुदरा से १० मील के अन्तर मे स्थित है। इन सभी स्थानों के साथ मोटर का आवागमन चालू है। अब तो कडला बन्दरगाह से भी बस के द्वारा सीधे जा सकते है। इसके लिए लगभग ३६ मील का रास्ता तै करना पड़ता है।

पत्री का इतिहास पुराना है, किन्तु वह सब यहाँ लिखना आवश्यक नही है। केवल उसके तीन वर्ष याद रखने लायक है। ई. सन् १२९३ में जेशर क्षत्रियों ने इसे वसाया। संवत् १३६५ से यह ओसवालों की बस्ती हुई सवत् १८३७ में महाराव रायधनजी के राज्यकाल में इस गांव पर आक्रमण हुआ; तब यहॉ के प्रजापालक जाडेजा भारोजी ने इसकी रक्षा करने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी। आज भी दरबार-गढ मे उस वीर पुरुष की याद दिलातीं हुई एक छत्री, एक स्मारक-चिह्न सगर्व खड़ है।

इस प्रकरण को समाप्त करने से वे पूर्व इतना बता देना चाहता हूँ कि पत्री गाँव जिस प्रकार मुँदरा परगने का एक भाग है और मुदरा परगना कच्छ प्रदेश का एक भाग है, वैसे ही कच्छ-प्रदेश गुजरात राज्य का एक भाग है और गुजरात राज्य भारत का एक भाग है। अतः अन्त में तो हम सबको इस भारत की सन्तान के रूप में ही गौरव प्राप्त करना है।

श्री टोकर्शी लालजी कापड़िया
ग्रन्थकर्ता

ग्रन्थकर्ता के पूज्य पिता
**श्री लालजी भाई देवजी कापड़िया**

ग्रन्थकर्ता की पूज्य मातृश्री
**वेजबाई**

३

# माता-पिता आदि

पत्री गाँव में बीसा ओसवालों के लगभग तीन सौ घर है। ये सभी जैन धर्म के अनुयायी है। इनमें कुछ परिवार 'धरोड' उपनाम से पहचाने जाते है। ऐसे एक धरोड-कुटुम्ब में विक्रम सवत् १९७२ की पौष शुक्ला ११ शनिवार के दिन मैंने अपने जीवन का प्रथम प्रकाश देखा। अंग्रेज़ी तिथि के अनुसार कहूँ तो यह दिन सन् १९१६ के जनवरी मास की १९ वीं तारीख का था।

मेरे पिता का नाम लालजी, दादाजी का नाम देवजी और माता का नाम बेजबाई था।

यहाँ के सभी ओसवाल खेती करते थे, इसी प्रकार मेरे पूर्वज भी खेती करते थे, किन्तु देवजी दादा को लगा कि आजकल के इस समय में केवल खेतीबाड़ी से पूरा नहीं पड़ता, अतः उन्होंने खेतीबाड़ी छोड़ दी और बम्बई जानेवाला जहाज पकड़ा। पूरे पन्द्रह दिनों की यात्रा के बाद वे बम्बई पहुँचे।

उस समय अन्य ओसवाल भी व्यापार के लिए परदेश जाने लग गये थे, परन्तु वृद्ध लोग तो यही कहते कि जो अकर्मी हों और जिन्हें मेहनत-मजदूरी नही करनी हो वे ही खेतीवाड़ी छोड़ कर व्यापार के लिए परदेश जाएँ। उनकी यह दृढ मान्यता थी कि 'उत्तम खेती मध्यम व्यापार और कनिष्ठ चाकरी', परन्तु युग के वदल जाने से अनेकों की भावना वदल चुकी थी और वे खेतीवाड़ी की अपेक्षा व्यापार को उत्तम मानने लगे थे तथा इसके लिए चाहे जैसा परदेशवास करना पड़े अथवा चाहे जैसे अज्ञात भाग में जाना पड़, वे जाने को तैयार होते थे। आज तो प्रायः सात लाख कच्छी व्यापार के लिए कच्छ से वाहर वसे हुए हैं और वे भारत के भिन्न भिन्न भागों में तथा विश्व के अन्य देशों में फैले हुए हैं।

यहाँ ओसवालों के सम्वन्ध में कुछ जिक्र करूँगा। श्रीमहावीर स्वामी के निर्वाण के पश्चात् सत्तरवे वर्ष में श्री रत्नप्रभ सूरिजी ने राजस्थान में स्थित ओशिया नगरी के राजा उपलदे सहित अठारह जाति के क्षत्रियो को उपदेश देकर जैन वनाया, तव ओसवाल वंश की स्थापना हुई थी।

इन ओसवालों में जिन्होने अपनी वृत्ति और व्यवहार बीस विसा अर्थात् संवाँश में पूर्ण रखा वे बीसा कहलाये और जिन्होने समय-संयोग के अनुसार उसमें ढीली डोर रखी वे दशा कहलाये। ये वीसा और दशा दोनों प्रकार के ओसवाल क्रमशः मेवाड़, मालवा, गुजरात और सौराष्ट्र आदि देशों में फैल गए और उनका एक जत्था चार पाँच सौ वर्ष पूर्व कच्छ में आया।

पत्री मे ओसवालों का प्रथम आगमन वि. सं. १३६५ में हुआ, यह वात मैं पिछले प्रकरण में वता चुका हूँ। ऐसा कहा जाता है कि उस समय यहाँ केवल दो ही व्यक्ति आये थे। उनमें एक का नाम पबो था और दूसरे का नाम पुनातर था। वे क्रमशः काका और भतीजे थे ओर उनका गोत्र मोहता था। वे दो से चार हुए। चार में से चौदह हुए और उनकी वंशा-वली बढ़ते-वढते पत्री में वीसा ओसवालों के बहुत से घर बन गये।

ऐसा कहा जाता है कि इनमें से किसी प्रतापी पुरुष ने प्रसंगवश **परगना** किया अर्थात सारे परगने के ओसवालों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। उस समय उन सब को खूब धीरता से भोजन कराया, फलतः (धराने के कारण) धरोड कहलाये और उसके वशज धरोड के रूप मे पहचाने जाने लगे।

हमारा कुटुम्ब वैसे तो धरोड़ ही माना जाता है, परन्तु मेरे पिताजी ने बम्बई में जाकर कपड़े का व्यापार आरम्भ किया इसलिए वे कापड़िया कहे जाने लगे।

मेरे पिता श्री लालजी भाई तथा उनके बड़े भाई उमरशी छोटी आयु से ही बम्बई में रहते थे। इनमें मेरे पिताजी भी कच्छ से वम्बई जहाज से आये थे और पन्द्रह दिनो की यात्रा की थी। वे कपड़े की दूकान चलाते थे और कपास वगैरह का धन्धा भी करते थे, जब कि उमरशी बापा अनाज के व्यापार में लगे हुए थे। वे भारत के कोने-कोने से अनाज मँगवाते और लाखों बोरों का कारोबार करते।

इन दोनों भाइयों में पारम्परिक प्रेम बेजोड़ था, मानों राम-लक्ष्मण की जोडी हो! और वे व्यापार-धन्धा करते हुए अपने पूज्य पिता की सेवा के प्रति अधिक जागरूक थे और किसी की भी अपेक्षित सहायता करने के लिये तन-मन-धन से सदा तैयार रहते। उनका कामकाज तो दूकान के अन्य साथी अथवा नौकर-चाकर ही सम्हालते थे। उनका जीवन परोपकारिता के शिखर पर पहुंच चुका था, ऐसा कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

इन दोनों भाइयों की धार्मिक कार्यों में भी पर्याप्त रुचि थी। वे दोनो भाई प्रतिदिन भगवान की पूजा करते और मेरे पिताजी तो चँवर लेकर नृत्य करते थे। साथ ही मन्दिर अथवा धर्मशाला से सम्बन्धित कोई काम आता तो उसमें निमग्न हो जाते और जितना वन जाता धन का व्यय भी करते।

यहाँ इतना स्पष्ट कर दूँ कि जैन धर्म की प्रमुख दो शाखाएँ हैं. श्वेताम्बर और दिगम्बर। इनमें हम श्वेताम्वर शाखा के थे।

मेरे पिताजी और उमरशी बापा यथासम्भव प्रतिवर्ष तीर्थयात्रा करते और उस समय कुछ मित्रों को अवश्य साथ ले जाते। इस प्रकार उन्होने शत्रुञ्जय, गिरनार, आबू, राणकपुर, भद्रेश्वर आदि अनेक तीर्थों की यात्रा करके अपने जीवन को सफल बना लिया था।

मेरी माताजी वेजवाई भी धार्मिक-वृत्ति की थीं। वे प्रति-दिन मन्दिर जातीं, भगवान के दर्शन करतीं और समय मिलने

पर सामायिक करने में नहीं चूकती थीं। सामायिक समभाव प्राप्त करने की एक प्रकार की क्रिया है। इसमें ससार का सभी व्यवहार भूल कर ४८ मिनट तक एक ही आसन पर बैठना पड़ता है और प्राणिमात्र को समान मान कर उनके प्रति मैत्री-भाव जागरित करने के लिए स्वाध्याय किया जाता है।

मेरे चार बड़े भाई थे: शामजी भाई, कुँवरजी भाई, मेघ-जी भाई तथा लखमशीभाई। इसी प्रकार एक बडी वहन थी, उसका नाम नेणबाई था। इनमें मैं सबसे छोटा हूँ, मेरे माता-पिता की मैं अन्तिम सन्तान हूँ।

मेरे उमरशी बापा के कोई सन्तान नही थी, इसलिए मेरे ज्येष्ठभ्राता शामजी भाई को गोद लिया था, और इससे वे शामजी लालजी कापड़िया के बदले शामजी उमरशी कापडिया के रूप में जाने जाते थे। उस समय जैन बीसा ओसवाल समाज में शिक्षा नही के वरावर थी, तब वे इन्टर पास हुए थे और सगीत कला में भी बहुत अधिक आगे वढे हुए थे। उनका विविध वाद्ययन्त्रों पर अच्छा अधिकार था।

उस समय हमारे कुटुम्ब का वैभव बहुत विस्तृत था, पर बाद में मेरे पिता की वृद्धावस्था मे भारी नुकसान हो जाने के कारण धन्धा नष्ट हो गया था और हम वहुत ही कठिनाई में आ गये थे। अब सभी अपना-अपना भार सम्हालने का अवसर आ गया था। अतः तीनों वड़े भाई वर्मा, सिलोन आदि स्थानों पर जाकर काम में लग गये थे और एक भाई ने हिन्दुस्तान मे रह कर अपने भाग्य को आजमाना आरम्भ किया था।

मैं उस समय छोटी आयु का था, इसलिए प्रवृत्ति के इस परिवर्तन को पहचान नही पाया था, परन्तु बाद में ज्ञात हुआ कि धूप के अनन्तर छाया और छाया के अनन्तर धूप आती है। इस लिए बुद्धिमान मनुष्य को उसमें कोई हर्ष अथवा विषाद नही करना चाहिए। कई बार तो ऐसा भी होता है कि कठिनाइयों के आने पर मानव के अन्तर में सुषुप्त शक्तियाँ जागृत हो जाती है और उससे उनमे हिम्मत, साहस, दाक्षिण्य आदि गुण प्रकट हो जाते हैं जो उसे ऊँचा उठने में बहुत सहायता देते है।

पूज्य महात्माजी ने संकट में फँसे हुए लोगों को लक्ष्य में रखकर कहा है कि—'भावी का निर्भीकता और बहादुरी से सामना करो।'

सन्त विनोबा की यह वाणी है कि—'जो गिरता है, वह चढ़ भी सकता है। पशु अधिक नीचे गिर नही सकता वैसे ही चढ़ भी नही सकता।'

स्वामी विवेकानन्द ने बताया है कि—'एक बात मैं दिन के समान स्पष्ट देख रहा हूँ; वह यह है कि दु ख का कारण अज्ञान ही है और कुछ नही।'

अन्त में प्रेमचन्दजी का एक वाक्य लिखकर, प्रकरण पूरा करूँगा :—

'विपत्ति से अधिक बड़ा अनुभव सिखाने वाला विद्यालय

४

## बाल्यावस्था

माता की गोद बालक के लिये स्वर्ग है। उसमे उसे आनन्द और तृप्ति का जो अनुभव होता है, वह अन्य किसी स्थान पर नही मिलता।

आया अथवा नर्स (धात्री) बालकों के प्रति कितनी ही लगनवाली हो तब भी वह माता का स्थान तो नही ले सकती है। माता बालक को पयपान कराती है, छाती से लगाती है, उसे अनेक प्रकार दुलारती है और यदि कोई बीमारी लग गई तो स्वयं क्षीण हो जाती है।

एक समाचार-पत्र मे प्रश्न पूछा गया था कि 'इस जगत् की श्रेष्ठ वस्तु कौनसी है'? इसके उत्तर में किसी ने लिखा था कि 'माता का प्यार।' उसका यह उत्तर श्रेष्ठ माना गया और पुरस्कार योग्य घोषित किया गया था। मैं इस उत्तर में अपना स्वर मिलाता हूँ।

बाल्यावस्था मे मैने माता का दुलार बहुत अधिक पाया है। उसे अपनी सभी सन्तान प्रिय थीं, तो भी मैं सबसे छोटा

था इसलिए उसका प्यार मेरे प्रति अधिक था। वह मुझे ज़रा भी अलग नहीं करती थी। उसने मुझे चलना सिखाया, बोलना सिखाया, खाना-पीना सिखाया, और कुछ उत्तम संस्कार दिये। उसी का यह परिणाम था कि उन दिनों गाँवों में प्रचलित कुछ बुराइयों से मैं बच सका। मेरी उस दुलारभरी माता का उपकार मैं किन शब्दों मे वर्णित करूँ? यदि मैं कवि होता तो उसके इस अप्रतिम निर्मल स्नेह पर कुछ काव्य अवश्य लिख डालता। किन्तु खेद है कि प्रकृति ने मुझे ऐसा कोई उपहार नहीं दिया था।

पिताजी व्यापार के कारण प्रायः बम्बई मे रहते थे, इसलिए उनका सहवास मुझे कम मिला था।

मेरा घर लम्बी गली में बना हुआ था जहाँ कि अधिकांश ओसवाल ही बसे हुए थे यह घर पक्का किन्तु बैठी हुई आकृति का था और उसका दिखाव पूर्णतः सादा था।

मेरा उस घर में जन्म हुआ, उसी में खेला, कूदा और बड़ा हुआ। अत. उसके प्रति मेरी ममता बँधी हुई थी, परन्तु मेरे जीवन के प्रारम्भिक वर्ष बड़ी कठिनाई में बीते, इसलिए उसकी विशेष देखभाल नही कर सका था।

सं. २००५ मे यहाँ 'कृषक-सम्मेलन' हुआ। तब स्वागताध्यक्ष का भार मेरे सिर पर आया था। उस समय कच्छ के कतिपय अग्रणी कार्यकर्ता मेरे घर आये थे। उन्होंने मेरे घर की स्थिति देख कर कुछ आश्चर्य का अनुभव किया। डॉ. वाघजी भाई ने मुझसे कहा कि 'इस घर मे विशेष सुविधा नहीं है, इसे

आप सुधराएँग या नही ? उत्तर में मैंने इतना ही कहा कि 'गाँधी विद्यालय बन जाने के बाद ही इसका विचार किया जा सकता है।' ऐसे उत्तर की आशा तो किसी ने भी नही की थी, अत मेरे इस उत्तर से उनका आश्चर्य बढ़ गया। उस समय गांधी विद्यालय की बात स्वप्न के समान थी। पर अन्त मे यह स्वप्न सत्य सिद्ध हुआ। परन्तु मकान वैसे का वैसा ही रह गया। उसमें कुछ सुधार या वृद्धि नही हो सकी। आज भी वह घर मेरे जीवन के अनेक संस्मरणों को ताजा करता रहता है।

पाँच वर्ष की आयु में मुझे गाँव की सरकारी शाला में प्रविष्ट किया गया। यहाँ मेरी गणना एक शान्त और अच्छे विद्यार्थी के रूप में हुई, क्यों कि मैं अन्य विद्यार्थियों के समान लडाई-झगड़े अथवा मस्ती नही करता था अथवा बीडी पीना, चोरियाँ करना, अश्लील बातों में रस लेना या गाली-गलौज करना आदि कुलक्षणों का मै शिकार नहीं हुआ था।

इस विद्यालय मे अधिक से अधिक पाँचवी कक्षा तक शिक्षा दी जाती थी, उसे पूर्ण करने के पहले ही कुछ दुर्घटनाएँ घटित हो गई।

स १९८१ की आश्विन शुक्ला १४ के दिन उमरशी बापा का देहान्त हो गया। इसका मेरे पिता को बहुत आघात पहुँचा। वे उनमे कभी भी अलग नही हुए थे, पर विधाता ने क्रूर बन कर उन्हें अलग कर दिया। इस आघात से वे बीमार पडे और यह बीमारी उनके लिए प्राणांतक निकली। केवल आठ मास के अन्तर से अर्थात् सं. १९८२ की ज्येष्ठ शुक्ला ८ के दिन वे

स्वर्गवासी हुए। इसके कुछ समय बाद उमरशी बापा की धर्म-पत्नी वीरामाँ ने भी सं. १९८२ की कार्तिक कृष्णा १४ को पर-लोक की ओर प्रयाण किया। इस प्रकार एक ही वर्ष मे तीन स्वजनों के चल बसने से कुटुम्ब मे बहुत शोक पूर्ण वातावरण छा गया और मेरी माता जी पर असह्य भार आ पड़ा। 'दुबले को दो आषाढ़' की भाँति उस समय उनका स्वास्थ्य भी जैसा चाहिए वैसा ठीक नही था। किन्तु उनका हृदय श्रद्धालु था और 'किये हुए कर्म भोगने के अतिरिक्त और कोई चारा ही नही' इस सिद्धान्त पर उनको पूर्ण विश्वास था, अतः हृदय मे हिम्मत बाँध कर उसने संसार सागर में अपनी जीवन नौका को आगे बढ़ाया।

उस समय मेरी आयु १० वर्ष की थी, अत: अधिक समझता तो नही था, किन्तु इतना ज्ञान अवश्य था कि अब हमारे लिए अत्यन्त कठिनाई के दिन आरम्भ हुए है। मैं माता से कहता—'तू तनिक भी मत गभराना, मैं अब काम में लग जाऊँगा और तुझे प्रत्येक काम में सहायता करूंगा।' तब माँ मुझे अपने हृदय से लगा लेती और कहती—'बेटे! यह जीवन का चक्र इसी प्रकार चला करता है। तुझे बुद्धिमान एवं कर्तव्यपरायण देखकर मेरी आँखें शीतल होती है। दु:ख के दिन तो कल ही बीत जाएगे।'

यहाँ उनके शेप जीवन के सम्बन्ध में भी दो शब्द लिख ही दूं। इस प्रसंग के बाद वे २७ वर्ष जीवित रही, अर्थात् मै ३७ वर्ष का हुआ, तब तक उनका शरीर चलता ही रहा था। उन्हें स्वय श्रम करने की आदत पड़ी हुई थी, अतः रसोई

बनाना, दलना, अनाज के फाड़े बनाना आदि सभी काम अपने हाथों करती। मेरी स्थिति जब सुधरने लगी, तव मैने अनेक बार कहा कि 'अब तो तुम अपने हाथों से काम करना छोड दो और आराम लो।' परन्तु वे कहतीं कि 'काम किये विना मेरा दिन नही बीतता। अपना काम स्वयं करे, इसमे किस वात की लाज?' और उन्होंने जितना वन सका उतना काम करना आखिर तक चालू ही रखा।

वे मुझे दो वातें अधिक जोर देकर कहती: 'तू धर्म पर श्रद्धा रख और परिग्रह थोड़ा कर।' धन, धान्य, भूमि, मकान, सोना, चाँदी, घरेलू साजसज्जा का सामान, गाय-भैस आदि पशु तथा नौकर-चाकर इन नौ वस्तुओ के संग्रह को परिग्रह कहते है। जैनधर्म की ऐसी आज्ञा है कि प्रत्येक गृहस्थ को इस परिग्रह का परिमाण अर्थात् इनकी मर्यादा बाँध लेनी चाहिए; जिससे लोभ का विस्तार न हो और दूसरे की आवश्यकताओं मे कठिनाई न पहुँचे। एक ओर धन के ढेर और दूसरी ओर भयङ्कर गरीबी। इन दोनो विपरीत स्थितियो का समाधान निकालना हो, तो इस प्रकार के परिग्रह-परिमाण से ही निकल सकता है। पूज्य महात्माजी, सन्त विनोवा तथा अन्य अनेक विचारकों ने जैन धर्म के इस सिद्धान्त की प्रशसा की है और मैं स्वयं भी इसका प्रशंसक हूँ। मैने अपनी माँ की इन दोनों शिक्षाओं को अपनी रीति से जीवन मे उतारने का यथाशक्ति प्रयास किया है; किन्तु इसके वारे में इतना स्पष्ट कर दूँ कि आज का युग खेती-बाड़ी, उद्योग-धधे आदि का विकास चाहता है, अत. हर एक को उसमें उचित सहयोग देना चाहिए, परन्तु ऐश्वर्य और सुखभोग की

ममता छोड़ने के लिए अपना व्यक्तिगत जीवन और व्यवहार उदारता पूर्ण होना चाहिए।

वे छोटी आयु में बम्बई आई थी, तब मोटर आदि यान्त्रिक साधन नही थे। बाद मे वे पत्री में ही रहती थीं क्यों कि वहाँ शान्ति और नैसर्गिक जीवन उपलब्ध था। संयोग ने मुझे ब्रह्मदेश में ढकेल दिया, उसके बाद मैं हैदराबाद आकर स्थिर हो गया। यहाँ कारोबार तथा अन्य प्रवृत्तियाँ बढ़ती ही रहीं, इसलिए वर्ष भर मे केवल दो-चार दिन ही कच्छ जा पाता और माता के दर्शन कर पाता, विशेष सेवा का लाभ नहीं मिल सकता था। यह बात मुझे अखरती थी, अतः उनसे हैदराबाद आकर मेरे साथ रहने की प्रार्थना करता था, किन्तु वे एक ही उत्तर देतीं कि—'शहर मे मुझे अच्छा नही लगता। वहाँ धर्म ध्यान जैसा चाहिए वैसा नहीं हो पाता।'' परंतु बाद मे वे वायुयान द्वारा हैदराबाद आई और मेरे साथ रही। सन्त विनोबा के ये वचन मेरे हृदय में पैठ गये थे कि 'जिसने माता की सेवा की है, उसने विश्व की सेवा की है।' इसलिए मैंने उनकी सेवा करने में जीवन की कृतार्थता मानी।

इसके बाद वे पत्री गई और बीमार पड़ गई, तब मैं कच्छ गया और वहाँ डेढ मास तक रहा उस समय सेवा करने का जो अवसर मिला, उसे मैं अपना अहोभाग्य मानता हूँ।

स २००९ में पत्री गाँव में उनका स्वर्गवास हुआ। गाँव में सभी के साथ स्वजन जैसा सम्बन्ध बना हुआ था, इसलिए सर्वत्र शोक की छाया व्याप्त हो गई तथा उनकी श्मशान यात्रा

में हरिजनों सहित सौ व्यक्ति सम्मिलित हुए थे। ग्रामवासी सभी लोगों ने बड़ी सख्या मे भाग लेकर भावभरी श्रद्धांजली दी और अन्त्य क्रिया साधु जीवन के अनुकूल हुई थी। श्मशान यात्रा के समय हरिजनों सहित सभी जाति के भाइयो ने पशु-पक्षियो को चारा पानी देने में योगदान दिया था।

अपनी उस पवित्र माता का बार-बार वन्दन करके अपनी बाल्यावस्था की बात आगे बढाऊँगा।

सिर के छत्र रूप पिताजी जब चले गये, माताजी का स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ था और कुटुम्ब की दशा बहुत ही साधारण थी। ऐसी स्थिति में आगे पढ़ने की बड़ी इच्छा रहते हुए भी मुझे अध्ययन छोड़ देना पडा।

इस प्रकार मेरे जीवन में विशेष विद्याध्ययन की कमी रह गई, परन्तु बाद में व्यापारी काम-काज में लगे रहने के कारण काम चलाने योग्य, बातचीत और तार आदि समझने के लिए आवश्यक अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त कर लिया। इतना होने पर भी भाषा में व्याकरण आदि की कमी तो रह ही गई।

यदि मैंने व्याकरण सीखा होता तो आज मेरी भाषा में जो त्रुटियाँ दिखाई देती है वे नही दिखाई देतीं। परन्तु मनुष्य की इच्छा हर समय पूरी नही होती। उसे परिस्थिति के सामने सिर झुकाना ही पड़ता है।

बाद में मुझे शिक्षण-प्रवृत्ति से अनुराग हुआ, मुझे लगा कि मैं विशेष पढ नही सका तो क्या हुआ, किन्तु अब मैं अपने

देशबन्धुओं के पढ़ने में सहायता करूँ, जिससे वे आगे बढ़ सकें और अपने समाज का तथा देश का कल्याण कर सकें।

इसी बीच मेरे जीवन में जो एक सुखद घटना घटित हुई, उसका स्मरण भी मुझे करना ही चाहिए। पूज्य बापूजी की कार्य-प्रवृत्ति तेजी से चल रही थी और उनके चलाये आन्दोलन गाँव-गाँव पहुँच चुके थे। कच्छ का प्रदेश जो प्रायः पिछड़ा हुआ माना जाता है, वह भी इस आन्दोलन से अछूता नहीं रह सका। इस कारण पूज्य बापूजी के कतिपय बालोपयोगी लेख मेरे पढ़ने में आये और उनसे मैं उनकी ओर आकृष्ट हुआ तथा उनकी प्रवृत्ति में रस लेने लगा। मैंने अपनी ग्यारह वर्ष की आयु से ही खादी पहनना आरम्भ किया और तकली चलाना आरम्भ किया। तब से मुझे खादी का जो अनुराग हुआ वह आजतक यथावत् रहा है।

यहाँ इतना और स्पष्ट करना आवश्यक है कि मुझे खादी और सेवा के संस्कार पूज्य पिताजी के पास से मिले थे। अन्तिम दिनों में वे विदेशी पोशाक छोड़ कर खादी का कुरता और सफेद टोपी पहनते थे।

पूज्य बापूजी ने एक स्थान पर लिखा था कि 'तुम्हारे अपने अस्तित्व पर आधार रखना और अपने आप से लड़ना सीखो।' अतः अपनी आयु के ग्यारहवें वर्ष में ही मैंने गुजराती पाँचवीं कक्षा का अध्ययन पूर्ण करके रात्रिशाला में पढ़ाना तथा शेष समय मे पुस्तकालय चलाना और हरिजनों की सेवा में दिल-चस्पी लेना आरम्भ कर दिया था।

कुछ समय बाद गाँव के अधिपति के पुत्र श्री तखतसिह भी इस रात्रिशाला मे जुट गये। इससे मुझे आनन्द हुआ। परन्तु एक वर्ष काम कर लेने के बाद मुझे बम्बई जाना पड़ा, तब मैने उस शाला का भार श्री तखतसिह को सौप दिया। तदनन्तर उन्होने सरकारी विद्यालय में अध्यापक की नौकरी करते हुए भी बीस वर्ष तक रात्रिपाठशाला का काम सँभाला।

पूज्य बापूजी के हृदय-स्पर्शी लेखों ने युवकों के हृदय मे अपूर्व जोश पैदा कर दिया था और उससे स्थान-स्थान पर युवक-मण्डल अथवा सेवा मण्डलों की स्थापना होने लगी थी। ऐसा एक छोटा-सा सेवा मण्डल हमारे पत्री गाँव में भी स्थापित हुआ था। उस समय तो उसका मुख्य कार्य गर्मी के दिनों में बाहर के गाँवों से जो बाराते आतीं, दूर ही से उन्हे लिवा लाने और सब को पानी पिलाने का था। बाद में बम्बई मे रहनेवाले पत्री के धनिकों द्वारा एक अलमारी तथा रोगियों की देखरेख के लिए कुछ साधन सामग्री प्राप्त हुई, इससे सेवा का कार्य और आगे बढ़ा। पहले यह अलमारी दूसरे के यहाँ थी, किन्तु बाद मे वह मेरे यहाँ आई उसे मैने बराबर सॅभाला। संक्षेप मे कहूँ तो मेरे सामाजिक-जीवन की यह प्रथम दीक्षा थी और मैने उसे हर्ष पूर्वक स्वीकार किया था।

तदनन्तर मुझे पुस्तकालय खड़ा करने की सूझी। पुस्तकालय ज्ञान की प्याऊ होता है। वह लोगों को विविध विषयों की जानकारी देता है और उनकी आत्मा को जागृत रखता है। यह कार्य अकेले मुझसे होनेवाला न था, इसलिये मैने मित्रो की

सहायना प्राप्त की। हम सव घर-घर घूमे और ३०० के करीव पुस्तके जुटाई। किन्तु ये सव पुस्तके पुरानी और फटी हुई थी। अत: इनकी पुन: जिल्द वांधी जाए तभी वे उपयोग में आ सकती थीं। किंतु हममें से किसी को पुस्तकों की जिल्द वांधने का अनुभव नही था। इस से हम कठिनाई में पड गये। हाथ में लिया हुआ काम अधूरा रहे तो मुझे चैन नही पड़ता और मित्रों को भी छेडता ही रहता था। वस्तुत: ! इस प्रश्न का समाधान कठिन ही था।

पर इतने में हमें एक ऐसी सहायता मिल गई जिसकी हमने कभी कल्पना भी नही की थी। हमारे गाँव में श्रीगुलाव-चन्दजी नामक एक जैन मुनि पधारे हुए थे। वे अनेक प्रकार की कलाएँ जानते थे। उन्होंने हमे पुस्तक की जिल्द वांधने का काम सिखाने का भार अपने सिर पर लिया और उसके लिये प्रतिदिन दो से चार घण्टे हमारे साथ विताने लगे।

पुस्तक की जित्दों के लिये लेई वनाने आदि का काम मेरे घर में होता उसके लिये मैंने अनेक रात्रियों का जागरण किया था।

हमने थोड़े ही दिनों में उन तीन सौ पुस्तकों की एक जैसे रंगीन कालिको से जिल्दे वाँध ली। अव हमारे हृदय हँस उठे। जव हमने उन पुस्तकों को अलमारियों मे जमाया, तव अनुभव किया कि हमारा श्रम सफल हुआ है, इस प्रकार मूलरूप में जो प्रवृत्तियाँ जागृत हुई वे भविष्य में वहुत लाभदायक सिद्ध हुई। आज तो पत्री मे उपर्युक्त पुस्तकालय तथा वाचनालय आदर्शरूप

मे चल रहा है और अच्छी मात्रा मे उससे लाभ उठाया जा रहा है।

हरिजनों की स्थिति उस समय बहुत ही विषम थी। सवर्ण लोग उनसे दूर रहते थे और यदि कभी स्पर्श हो जाता तो अस्पृश्य समझकर अपने ऊपर पानी छिटक लेते थे। उनके निवासस्थान अस्वच्छ रहते थे। बालक बड़े गन्दे रहते और उनका जीवन प्रायः बहुत दबाया हुआ रहता था। मानवता के अनन्य प्रेमी पूज्य गांधीजी को यह कैसे सहन हो सकता था? उनकी आत्मा सिहर उठी और उन्होंने हरिजनों की इस स्थिति को सुधारने के लिए दृढ सकल्प किया। इसके लिए नवजीवन, यग-इण्डिया आदि साप्ताहिक-पत्रों में लेखन आरम्भ किया और बाद में 'हरिजन-बन्धु' नामक खास साप्ताहिक-पत्र निकालने लगे।

श्रीगोकुलदास भाई जो कि अफ्रीका में पूज्य गांधीजी के साथ सत्याग्रह में सम्मिलित हुए थे, अफ्रीका मे चल रहे अपने व्यापार को समेट कर मातृभूमि कच्छ में आगये। पूज्य बापूजी के आदर्शो के अनुसार हरिजनो की सेवा के लिये वे काफी श्रम करने लगे थे। उनकी प्रेरणा से मेरे मित्र-भाई मगनलाल वीरजी ठक्कर को भी हरिजनो की सेवा करने की उमंग पैदा हुई और वे हरिजनों को पढ़ाने और नहलाने आदि का कार्य करने लगे। उस कार्य मे मैं भी साथ देने लगा। दूसरे वर्ष अर्थात् सन् १९२८-२९ में बारह वर्ष की आयु में मै नौकरी के लिए बम्बई गया। फिर १९२९ में ब्रह्मदेश गया। तब पत्री में

यह कार्य श्री मगनलाल वीरजी भाई ठक्कर चलाते थे। मैं उन्हें आर्थिक सहायता पहुँचाता था। पत्री में हरिजन शाला के मकान के लिये मैंने ब्रह्मदेश से चन्दा एकत्र कर भेज दिया था।

भूखी नदी को मैं भूला नहीं हूँ जिसके विशाल पाट पर कई बार मित्रों के साथ अनेक प्रकार के खेल खेला हुआ हूँ। वह भराकड़ी, वह भूतेश्वर का मन्दिर, वह वीरों का पालिया आज भी याद आते है। घड़ी भर के लिए तो ऐसा लगने लगता है कि मेरी वह बाल्यावस्था मुझे वापस मिल जाए तो कितना अच्छा हो! मतलब यह कि उस समय जिस आनन्द, जिस निर्दोषता और जिस भावुकता का अनुभव हुआ था, वह बाद के जीवन में फिर कभी नहीं हुआ।

५

# व्यापार की शिक्षा

बारह से सोलह वर्ष तक की आयु भी बाल्यावस्था ही मानी जाती है। सम्मतिवय का नियम तो मनुष्य को अठारह वर्ष तक नाबालिग ही मानता है; परन्तु उस आयु में मैने एक व्यापारी पेढ़ी पर नौकरी की और व्यापार की शिक्षा प्राप्त की थी, इस लिए वह घटना पृथक् प्रकरण के रूपमें लिख रहा हूँ।

मुझे बारहवाँ वर्ष लग चुका था। उस समय मेरे बड़े भाई शामजी कापड़िया सिलोन से स्वदेश आये थे और कुछ दिन हमारे साथ रहे। उन्होंने सब के समाचार पूछे, माताजी को धीरज बँधाया और अपने व्यापार के विषय में भी कुछ बाते बताईं। इसके बाद मुझसे पूछा कि 'बोल! तू क्या करना चाहता है? यहाँ देहात में पड़ा रहेगा, तो भाग्य पलटेगा नही। मेरे साथ बम्बई चल, वहाँ तुझे काम पर लगा दूँगा।'

मैने इसका उत्तर देने के बदले माताजी की तरफ़ देखा। माताजी ने कहा कि—'शामजी ठीक कहता है। व्यापारी के

लड़के तो व्यापार में ही अच्छे लगते। यद्यपि तेरे जाने से मुझे अच्छा नही लगेगा, पर तेरा समय पलटता हो तो मैं किसी भी तरह निभा लूँगी।'

पुत्र के कल्याण के लिये माता कितना स्वार्थत्याग कर सकती है, इसका यह स्मरणीय उदाहरण है।

अन्त में यह निश्चय हुआ कि मुझे बड़े भाई के साथ बम्बई जाना होगा, अतः मैने रात्रिशाला छोड़ दी और सभी मित्रो से विदा ली। प्रेममयी माता से पृथक् होते हुए मेरा हृदय भर आया और उनकी आँखो से भी बेर जितने बड़े-बड़े आँसू टपकने लगे। वह दृश्य आज भी मेरी आँखों में तैर आता है और मुझे गद्‌गद् बना देता है।

समुद्र की यात्रा करके तीसरे दिन हम बम्बई पहुँचे। यहाँ मुझे सेठ देवजी खेतशी कम्पनी में काम पर लगाया गया। बड़े भाई इस कम्पनी के सिलोन शाखा का कारोबार सम्हालते थे। वे तो थोड़े समय के बाद ही सिलोन चले गये और मैं अपना काम देखने लगा।

आज व्यापार-सम्बन्धी शिक्षा प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्र विद्यालय है और उनकी परीक्षा मे उत्तीर्ण होनेवालों को बी. कॉम• एम कॉम,, आदि उपाधियाँ दी जाती है। किन्तु उस समय व्यापारी-शिक्षण पाने के इच्छुक व्यक्तियो को किसी व्यापारी पेढी पर लग कर वहाँ का सम्पूर्ण काम-काज कर लेना पड़ता था। यही अनुभव उनको व्यापार-धन्धे मे बहुत सहायक होता।

यहाँ मेरा मुख्य कार्य पेढी के स्थान को साफ करना, गादी-तकिया जमाना, डाक लाना, लेजाना तथा कोई व्यापारी आये हों तो उन्हें पानी पिलाना अथवा उनके लिए चाय आदि तैयार करना—यही था। सक्षेप में यदि कहूँ तो ऑफिस में जो काम चपरासी का होता है, वह सभी काम मुझे वहाँ करना पड़ता था।

मैं श्रमप्रधान वातावरण में पला था, अत. इन सव कार्यों को मै उत्साह से करता था; और माता ने भी कहा था कि—'परिश्रमी बनना' तथा वड़े भाई साहब ने प्रमुख रूप से शिक्षा दी थी कि 'लघु से महान् बनता है, अत. पेढी के किसी भी काम को करने में छोटेपन का विचार मत करना।' ये दोनों शिक्षाएँ मेरे लिए वहुत ही हितकर हुई।

इस कम्पनी के मुख्य कार्यकर्ता श्री प्रेमजी सेठ थे जो मेरी एक मात्र वड़ी वहन के सगे ससुर लगते थे। वे मेरे काम पर सूक्ष्म दृष्टि रख रहे थे। उन्होने मुझमें काम करने की निष्ठा और कुशलता भी देखी, इसलिए पन्द्रह दिन के वाद ही मुझ से कहा—'तुम कल से हमारे चावल के गोदाम पर जाना और वहाँ जो वजन हो उन्हे लिखना और हिसाब बनाना। यह काम तुम कर सकोगे न?' मैंने कहा 'वहुत खुशी से। मुझे हिसाव करना बरावर आता है।' अब दूसरे दिन से गोदाम पर जाने लगा। यह पेढी ब्रह्मदेश से चावल का बड़े परिमाण मे आयात करती थी।

यहाँ दूसरे भी कुछ लोग काम करनेवाले थे, किन्तु उनसे मैं पूर्णतया मिलता नहीं था, क्योकि मेरे और उनके संस्कार

भिन्न-भिन्न थे। वे बाराबर चाय पीतें और बीड़ियां फूंकते। यह मुझे अच्छा नहीं लगता था; और उनकी बातों में प्रायः किसी की स्तुति-निन्दा अथवा अश्लील हँसी-मजाक होता था। उन्हें जो काम दिया जाता था, उसे वे शीघ्रता से पूरा नहीं करते थे। 'यह तो होता रहेगा।'—ऐसी उनकी मनोवृत्ति थी; जब कि मैं अपने काम में पर्याप्त सावधानी रखता और यथाशक्ति समय पर पूरा करता। अपनी अच्छी आदतें ही अपना प्रमाण-पत्र है, उस से हम अवश्य आगे बढ सकते है।

यहाँ यह बात भी बता दूं कि रात्रि में जब मैं काम से अवकाश पाता तभी मेरी माता की याद आती, मित्रों का भी स्मरण हो आता और ऐसा मन होता कि पत्री वापस चला जाऊँ। परन्तु सवेरा होने पर जब काम में लग जाता तो वह सब भूल जाता। प्रायः बारह महीनों तक मेरी स्थिति इसी प्रकार की रही।

इतने में एक दिन श्री प्रेमजी सेठ ने दोपहर में तीन बजे के लगभग गोदाम से मुझे बुला लिया और कहा कि—'कल तुझे शामजी भाई मौना के साथ रंगून जाना है!' उस समय रंगून की नौकरी बहुत आकर्षक मानी जाती थी, क्यों कि वहाँ जाने वाले दो पैसे कमाये बिना नही रहते थे। इससे मुझे बहुत आनन्द हुआ और मैं अपने-आपको भाग्यशाली मानने लगा। किन्तु मेरे पास रंगून जाने के लिए न कपड़े थे न पेटी थी!

मैं जब बम्बई आया तब से पेढ़ी के भोजनालय में ही दोनों समय भोजन करता था। उसका व्यय दस रुपये मासिक मेरे

खाते में लिखे जाते थे, क्योंकि यह तो काम सीखने के लिए बिना वेतन की नौकरी थी। उन दिनों प्राय. सभी स्थानों पर यही क्रम चल रहा था। मुझे चाय अथवा बीड़ी का व्यसन नहीं था, तथा अपने वस्त्र स्वयं धो डालता था, इसलिए कोई अन्य व्यय नहीं होता था। उस समय बम्बई में देशी नाटक समाज आदि के नाटक होते और सिनेमा भी चालू हो गये थे, परन्तु मैंने कभी नाट्यगृह अथवा सिनेमागृह में पैर नही रखा था। उस समय मेरी जेब मे पैसे नहीं थे और मैंने किसी से उधार भी नहीं माँगा था। अपनी जैसी स्थिति हो, उसके अनुसार चलना, यह उस समय का प्रचलित व्यवहार-मन्त्र था। आज न जाने किस कारण वह मन्त्र भुला दिया गया है और पास मे पैसे न हों तो दूसरे से उधार लेकर भी उड़ाने की वृत्ति सब में प्रविष्ट हो गई है। परन्तु यह पद्धति अच्छी नहीं है। इस से मनुष्य अन्त में कर्जदार बन जाते है; और उनकी इज्जत पर पानी फिर जाता है।

मुझे रंगून जाते समय पैसों की आवश्यकता हुई, तब सेठ से कहा। सेठ ने तत्काल ही ४० रुपये निकाल कर दे दिये। उनमें कपड़े लिए, पेटी खरीदी और बिस्तर के लिए सतरंजी खरीदी। उन दिनों बहुत सस्तापन था अतः इन सब वस्तुओं को खरीद लेने पर भी मेरे पास कुछ रुपये बच गये थे।

दूसरे दिन मै शामजी भाई मौना के साथ रंगून की ओर रवाना हो गया।

यहाँ मुझे यह सूचित अवश्य करना चाहिए कि बम्बई के उस काम ने मुझे सदा के लिए लाभान्वित कर दिया था। एक

चपरासी अथवा प्यून का काम करने में मुझे छोटी-छोटी बातों का भी अनुभव मिला और नम्रता का गुण भी आ गया।

एक चित्रकार की पुत्री राजरानी बन गई, तथापि उसने अपने पुराने वस्त्र सम्हाल कर रख लिए थे और वह प्रतिदिन एकान्त मे उन्हे पहन कर अपने आप कहा करती थी कि—'तू आज भले ही राजरानी बन गई है, किन्तु तेरी उस मूल स्थिति को भूलना मत।' हम भी इस वृत्ति को ध्यान में रखें तो कितना अच्छा हो? पास में पैसा आ जाने के बाद मनुष्य अपनी मूल स्थिति को भूल जाता है और स्वयं एक समय गरीब अथवा साधारण स्थिति मे जो था उसे कहने मे भी लज्जा का अनुभव करता है। परन्तु मैं अपनी मूल स्थिति को भूला नही था। मैंने उसे सदा याद रखा है और उसी से गरीब तथा साधारण स्थिति के मनुष्यों के प्रति हमदर्दी बनी हुई है।

सेठ देवजी खेतशी की कम्पनी रगून में 'सेठ गांगजी प्रेमजी की कम्पनी' के नाम से काम करती थी। इसका नाम चावल के व्यापार में बहुत बड़ा था। इसके द्वारा बारह महीनो में लगभग एक लाख टन चावल का निर्यात होता था। इस काम के अनुरूप ही यहाँ काम करनेवालों की संख्या भी अधिक रहती।

यहाँ मुझे छोटे-बढ़े हिसाब रखने पड़ते थे, तथा कुछ फुटकर काम भी करने पड़ते थे। बाद मे धीरे-धीरे चावल की जाति पहचानना सीखा। यह कार्य वैसे तो देखने मे कठिन था, क्योंकि चावलों की अनेक जातियाँ होती हैं, परन्तु मेरे अध्यवसाय तथा सतत परिश्रम ने उसे सरल बना दिया।

अब मै वेतनभोगियों की श्रेणी में आ चुका था। पहले दो वर्षो का वेतन वार्षिक १२५ रुपया लिखा गया। यहाँ भोजन, आवास तथा धोबी का खर्च कम्पनी देती थी। इसलिए यह नकद वेतन था। कपड़े, तेल आदि का कुछ खर्च अपने पास से करना पड़ता था, किन्तु वह वर्ष भर मे २५ रुपये से अधिक नही होता था।

बम्बई में मेरा स्वास्थ्य जैसा अच्छा चाहिए वैसा नही रहता था। सप्ताह मे एकाध बार पित्त चढ़ आता और सिर मे दर्द होने लगता, किन्तु रगून में आने के बाद प्रात जल्दी उठकर घूमने जाना, दौड़ना और व्यायाम करना आरम्भ कर दिया। कभी-कभी तैरने भी जाता था। उससे छोटी-बड़ी शारीरिक व्याधियाँ दूर हो गई और आरोग्य भी बढ़ गया।

बाल्यकाल में पूज्य गांधीजी के साहित्य को पढने की जो लगन लगी थी, उसका यहाँ पोषण हुआ। प्रतिदिन दो घण्टे अथवा कभी-कभी तीन चार घण्टे का भी समय उसमें बीतता था। 'स्वदेशी धर्म' पढ़ते हुए खादी के प्रति पर्याप्त अनुराग हो गया, किन्तु रगून मे खादी नही मिलती थी। उसे बिहार आदि स्थानो से मगवाना पड़ता था। बाद में तो ब्रह्मदेश मे भी खादी मिलने लगी। रगून मे खादी-भण्डार खुल गया। उस समय ब्रह्मदेश भारत का ही एक भाग था। खादी की वेषभूषा मे जो सादापन और सात्विकता है वह अन्य वस्त्रों की पोशाक मे नही है। तथा खादी पहनने से देश के लाखों श्रमजीवी लोगों को अपनी आजीविका मिलती है। अत. पूज्य गांधीजी ने राष्ट्रीय

पोशाक के रूप में खादी को अपनाने का अनुरोध किया और उसको कांग्रेस तथा अन्य लाखों लोगों ने स्वीकार किया।

उस समय 'नवजीवन' का वाचन नियमित रूप से होता था। उससे राष्ट्रीय भावना प्रबल हुई और हरिजनों के प्रति अपने कर्तव्य का ज्ञान हुआ। इसी बीच श्रीमद् राजचन्द्रजी द्वारा रचित 'मोक्षमाला' का भी वाचन हुआ। उसके चिन्तन से सद्-विचारों को बहुत वेग मिला। यहाँ रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा टॉल्स्टाय की भी कतिपय पुस्तकें मेरे पढ़ने में आई।

सन् १९३१ मे मुझे प्रधान गणक का स्थान प्राप्त हुआ, उस समय मेरा वार्षिक वेतन ३०० रुपये कर दिया गया।

इसी वर्ष निर्यात होनेवाले माल की जाति पहचानना, उसका तोल करना तथा उसे स्टीमर में चढ़वाने का उत्तर-दायित्व भी मुझे सौपा गया और मैंने उसे स्वीकार किया। मेरी पन्द्रह वर्ष की आयु के हिसाब से यह काम बहुत अधिक था, तथापि मैंने उसे यथायोग्य सम्पन्न करना आरम्भ किया, उससे कम्पनी मे मेरी प्रतिष्ठा बढ़ गई।

बम्बई में एक वर्ष तक बिना वेतन के नौकरी करते समय भोजन खर्च के १२५ रुपये मेरे खाते में उधार लिखे गये थे तथा ४० रुपये मैंने रंगून आते समय लिए थे। इस प्रकार मेरे सिर पर १६५ रु. का कर्ज हो गया था। उसको तीन वर्ष के वेतन में से धीरे-धीरे लौटा दिया और मैं ऋणमुक्त हो गया। उस दिन मैंने जिस सन्तोष का अनुभव किया, वह आज भी याद आता है।

इस प्रकार सन् १९२८ से सन् १९३३ तक के छः वर्ष व्यापार की शिक्षा प्राप्त करने में व्यतीत हुए। उस समय मुझे जो अनुभव मिला वह बहुत ही मूल्यवान था और उत्तर-काल मे वह मुझे पर्याप्त लाभदायक सिद्ध हुआ।

यहाँ मुझे यह भी बतलाना चाहिए कि मेरा स्वभाव महत्त्वाकांक्षी था, अतः आगे कैसे बढ़ सकता हूँ, इसके सम्बन्ध में बार-बार विचार आते और उससे सम्बन्धित जो कोई अवसर मिलता उसे अपना लेता। इस प्रकार एक बार स्वतंत्र व्यापार करने का अवसर पाया जिससे लाभ भी अच्छा हुआ। किन्तु यह व्यापार मैने कम्पनी की सम्मति लेकर ही किया था। कम्पनी से गुप्त रख कर मुझे कोई भी काम नहीं करना है, ऐसा मेरा निर्णय था और इस निश्चय ने ही मुझको कम्पनी का विश्वासपात्र कार्यकर्ता बनाया था। जो नौकर सेठ का विश्वास प्राप्त नहीं कर सकता, वह कभी अपनी प्रगति नहीं कर सकता।

६

## लग्न-प्रसंग

मैं ढाई वर्ष का था, तब मेरे पिताजी के साथ परामर्श करके उमरशी बापा ने मेरी सगाई लाखापुर के निवासी श्री जगशी देव जी की पुत्री उमरबाई उपनाम-अमृतबाई के साथ कर दी थी। उस समय उसकी आयु एक वर्ष की ही थी।

लाखापुर पत्री से केवल तीन मील के अन्तर में था और जगशीभाई मेरे पिता के खास मित्र थे, और वे अनाज का व्यापार करते थे। उमरशी बापा भी अनाज के ही व्यापारी थे। सब जाना-पहचाना हुआ था और कुलीन कन्या के बारे मे कहना ही क्या होता है, इस मान्यता के कारण उन्होंने यह कार्य किया था।

उस समय जिनके लड़के-लड़कियों के सम्बन्ध पलने में हो जाते वे बहुत प्रतिष्ठित माने जाते थे, इसलिए इस प्रकार की प्रथा प्रचलित थी। परन्तु जब लोगों की समझ सुधरी और बालविवाह के बुरे परिणाम उनकी दृष्टि के समक्ष आये, तब

इस प्रथा पर पूर्ण प्रति-बन्ध रखा गया। आज तो समाज अथवा राज्य इस तरह के बाल-सम्बन्ध और बाल-विवाह को स्वीकार नही करता।

अब मैं सोलह वर्ष के निकट पहुँच रहा था इसलिए मेरे ससुर जी ने मेरे बड़े भाई के साथ विवाह की चर्चा आरम्भ की। मेरी माताजी ने भी यही इच्छा प्रगट की कि मैं इस विवाह को अपनी आँखों से देख लूँ तो अच्छा, क्यों कि वृद्धा-वस्था में शरीर का विश्वास नही रहता। इस प्रकार परस्पर विचारों में साम्य होने से विवाह की बात पक्की हो गई और मै कम्पनी के सेठों की अनुमति लेकर अपने गाँव आया।

जिसे मै सदा याद करता था उस प्यारी माँ के दर्शन किये, सगे-सम्बन्धियों से मिला और प्राणप्रिय मित्रों के साथ घूमने-फिरने का अवसर पाया, अत. आनन्द में कौन सी कमी रह सकती थी ?

संवत् १९८८ के पौष वदी ४ का दिन विवाह के लिए निश्चित हुआ और तदर्थ बड़ी तेजी से तैयारियाँ होने लगी। उस समय परिवार के बड़े सदस्यों ने कहा कि 'और सब तो ठीक है किन्तु लग्न के समय शुभमुहूर्त मे पोषाक कैसी पहनेगा ;' मैने कहा: 'खादी की। इसमे कोई परिवर्तन करना आवश्यक नहीं है।' उन्होने कहा:—'लग्न के समय सफेद टोपी सिर पर अच्छी नहीं लगती। यह तो एक प्रकार का अपशकुन माना जाता है।'

खादी के वस्त्रों पर यह एक बहुत बड़ी व्यंग्योक्ति थी। इसे मै कैसे सहन कर सकता था ? मैंने कहा—'शकुन अप-

शकुन की बात छोड़ो। ये सब एक प्रकार के वहम हैं। इसके लिए खादी जैसी एक पवित्र वस्तु को नही छोड़ा जा सकता। तथा रिवाज तो हमारे बदलने से बदल जाते हैं, ये कोई स्थिर वस्तु नही हैं। इसलिए मेरा तो यह अटल निर्णय है कि विवाह सम्बन्धी सभी क्रियाएँ खादी के वस्त्रों मे ही की जाएँ।"

मेरी माताजी को इस सम्बन्ध में कोई खास आपत्ति नही थी, किन्तु अन्य बड़े लोग तथा सगे-सम्बन्धियों में इस पर पर्याप्त चर्चा हो रही थी। अन्त में बड़े भाई उदार विचार वाले होने के कारण मेरे पक्ष मे आये और उन्होंने सभी को समझा कर मेरे निर्णय को मान्य करवाया।

आज तो सफ़ेद टोपी सबसे अधिक पवित्र और शकुनवाली मानी जाने लगी है तथा विवाहादि प्रसंगों पर इसका बेरोक टोक उपयोग होने लगा है।

निश्चित मुहूर्त पर मण्डप-निर्माण हुआ, स्थिति के अनुसार बरात जुड़ी और धूम-धाम से विवाह सम्पन्न हुआ।

इस मङ्गल-प्रसङ्ग के बाद हमारे परिवार मे एक और विवाह हुआ था; और ससुराल मे तीन विवाह हुए थे। इसके अतिरिक्त मेरी जँवाई के रूप मे मेहमानगीरी भी चालू थी, अतः खूब आनन्द-पूर्वक दिन बीतने लगे। मित्रो ने भी विविध प्रकार के विनोदों से मेरा मन खूब बहलाया।

मैंने पूज्य गाधीजी की 'नीतिनाश के मार्ग पर' पुस्तक दो-तीन बार पढ़ी थी, उससे मेरे मन पर ऐसी छाप पड़ी थी

कि वैवाहिक जीवन के लिए ठीक समय पुरुष के लिए बीस वर्ष के बाद और कन्या के लिए सोलह वर्ष की आयु के बाद आरम्भ होता है। जो इससे पूर्व वैवाहिक जीवन में प्रविष्ट होते है उनकी शारीरिक शक्ति क्षीण होती है और सन्तति भी दुर्बल होती है।

यह बात मेरे लिए बहुत विचारणीय थी, क्यों कि अभी मेरी आयु सोलह वर्ष ही की थी और अमृतबाई की चौदह वर्ष की थी। परन्तु इस सम्बन्ध मे क्या करना योग्य है मैने विचार कर लिया था।

विवाह के पश्चात् अमृतबाई के साथ प्रथम मिलन हुआ, तब मैंने उसको बड़े स्नेह से कहा—'कौटुम्बिक सयोगों के कारण हमारा विवाह अभी भले ही हो गया हो किन्तु वास्तविक विवाह के समय मे अभी चार-पाँच वर्ष का विलम्ब है। मै स्वयं तब तक के लिए संयम-पालन का इच्छुक हूँ।'

अमृतबाई गाँव मे पली हुई पूर्णतया सरल स्वभाव वाली बाला थी। उसने गुजराती की तीसरी कक्षा में उत्तीर्ण होकर चौथी कक्षा को अपूर्ण छोड़ दिया था। किन्तु गृहस्थी के कार्य तथा गाय भैसो की देखभाल का अनुभव बहुत अच्छा था। उसे अपने माता-पिता की ओर से नैतिक एव धार्मिक सस्कार अच्छे प्राप्त हुए थे। अतः वह यही माननेवाली थी कि 'जो पति ने कहा, वही प्रमाण है।' इससे वह मेरे विचारों से सहमत हो गई और मेरी एक बड़ी उलझन सुलझ गई।

यहाँ मुझे यह भी बता देना चाहिए कि अनेक पुस्तकों के पठन-मनन तथा मनोमन्थन के पश्चात् मैं इस निर्णय पर

पहुँचा था, जबकि अमृतबाई को उक्त निर्णय पर पहुँचने में कुछ मिनट अथवा कुछ छण ही लगे थे। फलतः मैंने उसकी सात्त्विकवृत्ति हृदय से बहुत प्रशसा की और उसके सम्बन्ध में मेरा अभिप्राय बहुत उच्च बन गया।

हमारे देश मे विवाह के बारे में बहुत गलत धारणाएं बनी हुई है। बहुत से तो यही मानते हैं कि विवाह एक प्रकार से विषयभोग का अनुमति पत्र है, अतः विवाह के पश्चात् विषय भोग के बारे में वे प्राय निरंकुश बन जाते हैं और थोड़े ही समय मे छोटे-बड़े रोगों के शिकार बन जाते हैं। वास्तव में लग्न एक प्रकार से संयम की शाला है। यह पुरुष और स्त्री दोनों की वासनाओं को नियन्त्रित करता है और उसे प्रेम के रूप में बदल देता है।

डॉ. राधाकृष्णन् ने कहा है कि—'पति-पत्नी को दोनों की भिन्न-भिन्न वृत्तियों ओर वासनाओं मे से प्रयत्नपूर्वक हृदय की एकता प्राप्त करनी चाहिए।'

विवाह के सबंध मे रूप रग कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु नही है; हृदय की एकता ही प्रमुख वस्तु है। जो मनुष्य केवल रूप रग पर मुग्ध होते है, उनकी स्थिति पतंगे के समान होती है। पतंगा रूप के मोह में पड़कर दीपक की लौ पर गिरता है किन्तु थोड़े ही समय मे वह जलकर राख हो जाता है। इसी प्रकार केवल रूप-रग पर मुग्ध बनकर अपने कुछ दिन तो आनन्द मे विताते है, किन्तु हृदय की एकता के

अभाव में शनैः शनैः पृथक् हो जाते हैं और परस्पर विरोधी स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

प्रसिद्ध तत्त्वचिन्तक श्रीकिशोरलाल मशरुवाला ने एक स्थान पर कहा है कि 'पति-पत्नी के मनमें अपनी प्रसन्नता के कारण अपने जीवन सहचर के रूप, रंग अथवा विद्वत्ता आदि गुणो के बारे में सामान्यत विचार ही नही उठते। प्रसन्नता का अनुभव न हो तथा प्रेम की भावना दुर्बल हो, तभी वे परस्त्री-पर-पुरुप के रूपरग आदि पर आकृष्ट होते है।'

यहाँ टॉल्स्टाय के वचन भी विचारणीय है। वे कहते है कि "वैवाहिक जीवन का अर्थ 'जीवन में सुख-सुविधा और आनन्द प्रमोद की वृद्धि समझा जाता है, किन्तु यह साधारण प्रचलित मान्यता मात्र है, जो सत्य से दूर है।" वस्तुतः वैवाहिक जीवन ऐसा है ही नही। वैवाहिक जीवन में तो सुख-सुविधा और आनन्द-प्रमोद पर कटौती तथा न्यूनता ही अपेक्षित है, क्यो कि इसमें पुरुप पर नये विषम कर्तव्यों को पूर्ण करने का भार आ पड़ता है।

विवाह की तिथि से चार मास के बाद अर्थात् सं. १९८८ की वैशाख बदी सप्तमी को हम पाँचो भाई अलग-अलग हो गये। बड़े भाई तो कुछ वर्प पहले ही माताजी से अलग हो गये थे और अब तो दूसरे भाइयों ने भी अपने-अपने घर बसा लिये थे किन्तु मेरे विवाह की प्रतीक्षा कर रहे थे। वह सानन्द सम्पन्न हो गया, अतः यह निर्णय लिया गया। अब सभी को अपना आर्थिक बोझ अपने आप को उठाना था और माताजी का

व्यय समान भाग में सभी को देना था। हमारी जाति के रिवाज के अनुसार भाई जब अलग अलग होते हैं तब माता अपने छोटे पुत्र के साथ रहती है। इस प्रकार माताजी को अब मेरे साथ रहना था, परन्तु मेरा पत्री में रहना बहुत कम होता था। इतना होने पर भी जब डेढ़ वर्ष में चार मास की छुट्टी मिलती, तब पत्री आकर माताजी के साथ रहता और उनकी यथाशक्ति सेवा करता। इस प्रकार अन्य भाइयों की अपेक्षा मुझे सेवा करने का अधिक अवसर मिला, इसे मैं अपना अहो भाग्य मानता हूँ।

अब छुट्टीके दिन पूरे होने आये थे, अतः मैंने रंगून जाने की तैयारी की, किन्तु यह प्रवास मुझे अकेले ही करना था। अमृतबाई को तो मैं पाँच वर्ष के बाद ही ब्रह्मदेश ले गया था। इतने समय वे अपने पिता के घर अथवा ससुराल में माताजी की सेवामें ही रहती थीं। केवल, जब मै अवकाश के दिनों में पत्री आता, तब उनके साथ कुछ दिन बिताता और इससे उन्हे पर्याप्त आनन्द होता।

७

# प्रगति के पथपर

•

विवाह के पश्चात् जब ब्रह्मदेश गया, तब सेठ गांगजी प्रेमजी कम्पनी का चावल निकासी का काम बड़ी मात्रा में चल रहा था। माल पास कराने, तोल करवाने, और उसे स्टीमर पर चढ़वाने का कार्य मेरे अधीन था।

व्यापार का मुख्य केन्द्र रंगून था, किन्तु उसके आसपास के अन्य व्यापारी-केन्द्र जैसे मोलमीन, बसीन, हेन्झाड़ा, चायला, पाणी लाइन आदि स्थानों पर भी मुझे चावल की खरीदी के लिए बार बार जाना होता था। मेरे सिर पर आये कार्य को मै निष्ठा और लगन से करता था तथा यथा सम्भव शीघ्रता से सम्पन्न कर लेता था, इससे कम्पनी के अधिकारीलोग सभी उत्तरदायित्यवाला कार्य मुझे ही सोंपते थे। उन कार्यो को जैसे जैसे मै करता गया, वैसे वैसे मेरा अनुभव बढता गया और मेरा पद भी बढता गया।

उन दिनों ब्रह्मदेश का प्रमुख निर्यात चावल तथा पेट्रोल था। इसके अतिरिक्त सागवान की लकड़ी जो कि पूरे विश्व

में 'वर्मा टीक' के नाम से प्रसिद्ध थी, उसका निर्यात भी भारत में अच्छी मात्रा में होता था। विशेषरूप से चावल, गुड़ और सुपारी भी यहीं से भारत में जाते थे। खनिजों में कच्चा लोहा तथा अन्य धातु जाते थे। सन् १९४७ के बाद उस स्थिति में परिवर्तन आया। आजकल तो ब्रह्मदेश में व्यापार का राष्ट्रीयकरण हो जाने से सारा व्यापार शासन के आधीन है और उसके द्वारा केवल चावल और अन्य कुछ वस्तुएँ भारत में आती हैं।

ब्रह्मदेश की एक विशेषता है कि यहां के सभी लोग बौद्ध धर्मानुयायी हैं, अतः इनमे जाति के हमारे जैसे भेद नहीं हैं और यही कारण है कि इनका सगठन भी अच्छा है, कतिपय प्रवासियों ने ब्रह्मदेश को पेगोडा का देश कहा है क्यों कि यहां स्थान स्थान पर पेगोड़ा अर्थात् बुद्ध के मन्दिर है। इनमे से कुछ मन्दिर तो बहुत ही विशाल है और उनमें बुद्ध की विशालकाय प्रतिमाएँ स्थापित हैं। तथा यहां मठों की संख्या भी बहुत है और उनमें हजारों फुंगी अर्थात् बौद्ध-साधु रहते है।

यहाँ स्त्रीजाति को बहुत स्वतन्त्रता है। अधिक स्पष्ट कहूँ तो पुरुषो की अपेक्षा भी स्त्रियों का स्थान ऊँचा है। व्यापार के प्रधान स्थलों पर स्त्रियाँ बैठती है, वे हजारों का व्यापार करती है और बाजार मे साख भी उनकी ही मानी जाती है। व्यापारी उनके नाम पर हजारों रुपये लिखते है जब कि पुरुष के नाम पर कुछ भी लिखना हो तो विचार करते हैं।

काका कालेलकरने ब्रह्मदेश के प्रवास मे यहाँ की संस्कृति आदि का जो वर्णन किया है, वह पढ़ने योग्य है।

कम्पनी के सेठ ने शहर से चार मील दूर रॉयल बैंक के पास एक बँगला ले रखा था और कम्पनी के व्यक्तियो को भी रहने के लिए वही बुलाया था। इस लिए हमारा काम का समय प्रात: प्राय: दस बजे से सायं छ: बजे तक ही रहता। यहाँ हम दस-पन्द्रह व्यक्ति साथ रहते थे। इनमें श्री हीरजी भाई हंसराज तथा मै समान रुचिवाले व्यक्ति थे। वे अंग्रेजी विभाग सम्हालते थे। उन दिनों ब्रह्मदेश में इस विभाग को सम्हालने वाले व्यक्ति को हमारे लोग 'मास्टर' कहते थे, अत: उनकी 'मास्टर' के रूप में प्रसिद्धि थी। वे भी सबेरे जल्दी उठते, घूमने जाते, व्यायाम करते, उत्तमोत्तम पुस्तकें पढ़ते और खादी के प्रति रुचि रखते थे, तथा स्वभाव से शान्त एवं सादेपन को माननेवाले थे। मेरी चाय-बीड़ी आदि पीने की जैसे आदत नही थी वैसे ही उनकी भी चाय-बीड़ी पीने की आदत नही थी। उन दिनों खाने पीने में चीनी छोड़ने की बात चल रही थी, तब हम दोनों ने चीनी और शक्कर से बनी सभी वस्तुएँ तथा मिष्टान्न एक साथ ही छोड़ दिये थे। संक्षेप मे हमें एक-दूसरे के सहवास से आनंद होता था और उच्च जीवन की भावना दृढ बन रही थी।

कम्पनी के मुख्य कार्यकर्ता श्रीमोणशी भाई वेरशी छोटे-बड़े सभी के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करते थे। उनका स्वभाव बडा दयालु था। वे प्रतिदिन दो घण्टे बगीचे में काम करते और दूसरों को श्रम-प्रतिष्ठा का पाठ पढाते थे। छोटा-बड़ा कोई भी काम करना होता तो तनिक भी संकोच का अनुभव नहीं करते थे। आवश्यकता पड़ने पर शाक-भाजी साफ करने भी बैठ जाते और किसी स्थान पर कूड़ा-कचरा पड़ा होता तो नौकर

को आज्ञा देने की अपेक्षा स्वयं झाडू उठा लेते। इसका परिणाम यह हुआ कि सभी अपने कर्तव्य की पूर्ति में बहुत सावधान रहते। यहाँ कुल मिला कर कौटुम्बिक भावना व्याप्त थी और इसमे मेरा मन बहुत प्रसन्न रहता था।

इस बंगले में रहते हुए एक व्यक्ति से मेरा परिचय हुआ। वे बहुत फेशनेबुल थे। विदेशी अप-टु-डेट वस्त्र पहनते, तथा चाय-बीड़ी का भी खुल कर उपयोग करते। उनकी कुछ और भी बुरी आदते थी। मैंने उन्हे सुधारने के लिए कुछ प्रयत्न किये; इससे उन्होंने बीड़ी पीना छोड़ दिया और खादी को अपना लिया, परन्तु इस प्रकार उनके विशेप सम्पर्क में आने से उनकी हस्तदोप की बुरी आदत मुझे लग गई। यह बात लिखते हुए मुझे सचमुच लज्जा हो रही है, किन्तु मै सचाई को छिपाना नहीं चाहता, क्योकि उम्र आयु में अनेक बालक इस कुत्सित आदत में फँस जाते है तथा लम्बे समय तक उसके चलते रहने से उनकी जिन्दगी बरबाद हो जाती है। उन्हें कुसङ्गति से बचाना बड़े लोगों का धर्म है। मेरा सौभाग्य था कि अच्छी पुस्तको के अध्ययन के कारण थोड़े ही समय में मैं जागृत हो गया और इस अपवित्र मित्र तथा बुरी आदत दोनों को सदा के लिए छोड़ दिया। उस समय मेरी उम्र १५-१६ वर्प की थी।

कुछ समय बाद पास के बँगले में रहने वाले श्री नानालाल भाई रायचन्द के साथ मित्रता हुई। वे संगीत, व्यायाम तथा स्वाध्याय के अनुरागी थे तथा लगभग मेरी ही आयु के थे। उनकी मित्रता से मुझे बहुत आनन्द हुआ।

यहाँ का वातावरण सब मिलकर उत्तम था और उसमें मेरा मन लगा रहता था, परन्तु मैं जन्मभूमि को नही भूला था। वहाँ के सार्वजनिक कार्यो मे यहाँ दूर बैठे हुए भी रुचि रखता था। वहाँ पहले मगनभाई ठक्कर हरिजनशाला चलाते थे। बाद में उनके स्थान पर दूसरे अध्यापक की नियुक्ति हुई। किन्तु उनके इस कार्य में किसी न किसी प्रकार की कठिनाई आती ही रहती थी। इस शाला को व्यवस्थित रूप देने के विचार से मैने रंगून में चन्दा एकत्र करना आरम्भ किया। किसी के पास से एक रुपया तो किसी से दो, किसी के पास से पाँच तो किसी के पास से दस-बीस। इस प्रकार अनेक मित्र और सम्बन्धियो के पास जाकर कुल ७३१ रुपये इकट्ठे किये और जब कच्छ गया तब पत्री में हरिजनशाला के मकान के लिये मैने इस फण्ड में से जमीन खरीदी।

अब उस जमीन पर मकान बनाने की आवश्यकता थी, किन्तु गाँव के राजपूत तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति इस कार्य को नहीं होने देते थे। उस समय श्री गोकुल भाई हमारे सहायक बने। सबने मिलकर जोरदार सामना किया और मकान बँधवाने का कार्य आरम्भ कर दिया, उसमे मैने यथाशक्ति सहायता दी। स्थानीय कार्य भाई कुँवरजी हेमराज तथा डॉ खीमजीभाई जेवत आदि ने सम्हाला। बाद मे पत्री सर्वोदय समाज ने इस काम को हाथ मे ले लिया और गांधी विद्यालय मे उच्चजाति के बालकों के साथ हरिजनो के बालकों को भी बिठाल दिया।

पूज्य श्री श्यामजी भाई कापड़िया अनेक बार ब्रह्मदेश मे आये थे। बाद मे वे बीमा कम्पनी मे लग गये, तब भी उनका

यहाँ आना चालू ही रहा। इससे मुझे उनका वात्सल्य पूर्ण संसर्ग मिलता रहा। वे मुझे अंग्रेजी का अधिक अभ्यास करने के लिए प्रेरित करते और उसके लिए स्वयं प्रतिदिन एक घण्टे का समय देने को तैयार थे, किन्तु मैंने अंग्रेजी सीखने में अधिक रुचि नही दिखाई। मुझे जो उसमे व्यावहारिक ज्ञान हो ही गया था, उसीसे संतुष्ट रहा। बाद मे मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि यदि मैंने उस अवसर का लाभ उठाया होता तो अच्छा रहता, किन्तु तब सीखने का समय बीत चुका था।

सन् १९३३ के अक्टूबर मास मे विशेष प्रगति के लिए मैं गांगजी प्रेमजी कम्पनी को छोड़ कर सेठ हासम प्रेमजी की कम्पनी में काम करने लगा जिसका ब्रह्मदेश मे सर्वप्रथम स्थान था; तथा जो एक वर्ष में डेढ लाख टन चावल का विश्व में निकास करती थी। यहाँ मुझे प्रधान गणक का काम एक मास के लिए सौंपा गया और बाद में ब्रह्मदेश के एक बन्दरगाह मोलमीन मे स्थित उनकी ऑफिस मे मैनेजर के रूप मे मेरी नियुक्ति की गई। उस समय मेरा नकद वेतन ६०० रुपये निश्चित किया गया। तदनन्तर उसमें वृद्धि करके १००० रुपये दिये जाते थे।

इस कम्पनी के मुख्य संचालक रायबहादुर सेठ बीरजी डायाभाई थे, जो कि व्यापार मे बहुत निपुण तथा सार्वजनिक कामों में अग्रणी रहते थे। समाज और सरकार दोनों में उनका मान-सम्मान बहुत था। वे मेरे रिश्तेदार भी थे (उनकी धर्मपत्नी वालबाई तीसरी पीढ़ी में मेरी बहन लगती थीं।) उनकी दृष्टि गत दो-तीन वर्ष से मुझ पर थी। मैं समझता हूँ कि वे मेरी कार्यपद्धति से आकृष्ट हुए थे। पत्थर में से पुतली की रचना जब

मोलमीन (वर्मा) में, ग्रन्थकर्ता अपनी धर्मपत्नी
श्रीमती अमृतबाई के साथ १९३७
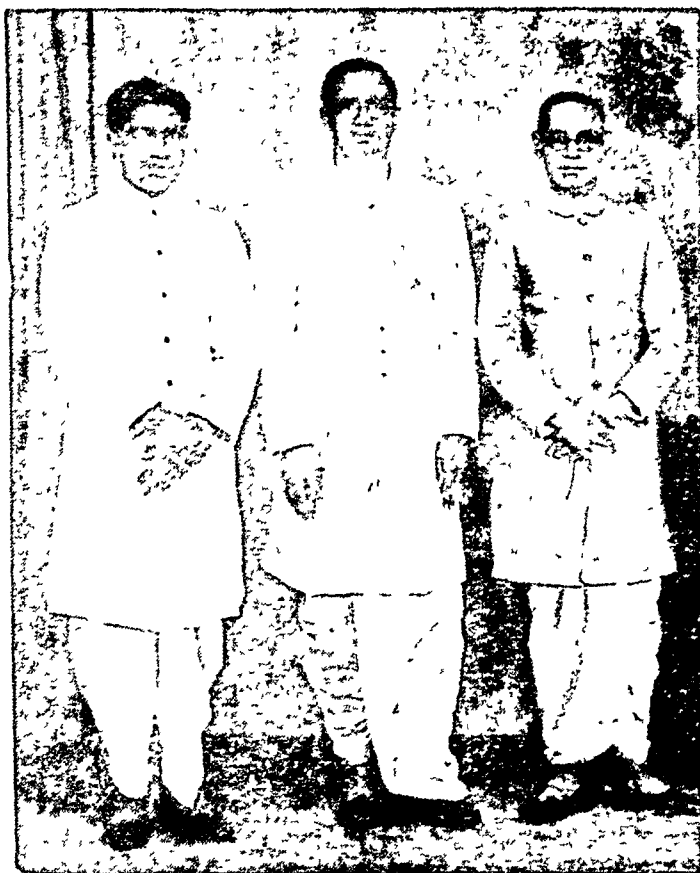
रंगून (वर्मा) में, १६३६

बाईं ओर से : श्री टोकर्शी लालजी कापड़िया, श्री हीरजी हंसराज(लेखक के ज्येष्ठभ्राता)श्री शामजी लालजी कापड़िया

हुई हो तो वह रास्ते मे पडी नही रहती। उसे कोई न कोई उठाने वाला रहता ही है, अतः मूल वात गढ कर तैयार होने की है।

मैंने मोलमीन बन्दरगाह पर जाकर अपना काम सम्हाला और कठिन परिश्रम करके एक ही वर्ष मे तीन लाख बोरे चावल की निकासी की। इससे पूर्व के वर्षो मे इस बन्दरगाह से अधिक से अधिक सवा दो लाख बोरे चावल का निर्यात हुआ था; इसलिए पहले वर्ष मे ही रायबहादुर सेठ वीरजीभाई को मेरे काम से सन्तोष हुआ। मेरे आत्मविश्वास में अधिक दृढता आयी।

यहाँ कम्पनी के काम की जिम्मेदारी सम्हालते हुए माल के क्रय-विक्रय पर भी ध्यान देना पडता था, अर्थ की व्यवस्था रखनी पड़ती और छोटे-वड़े प्रत्येक कार्य की देखरेख करनी पडती। इसमें रात्रि के बारह अथवा एक भी बज जाते, परन्तु इससे मैं तनिक भी घबराया नही। आवश्यक कार्य पूरा कर लेने के वाद ही सोता था। तव निद्रा भी खूब मीठी आती थी।

मेरी इस कार्य प्रणाली ने मुझे पर्याप्त यश दिया तथा व्यापारी वर्ग में मेरी प्रतिष्ठा को भी बढाया। 'काम काम को सिखलाता है।' इस न्याय से मुझे यहाँ व्यापार की विभिन्न शाखाओं के बारे में सीखने को भी खूब अवकाश मिला।

अब वाचन और व्यायाम आदि के लिए विशेष समय नही मिलता था। परन्तु इससे पूर्व मैंने जो सद्विचार पा लिए थे तथा आरोग्य सम्पादन किया था, उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं आई। खादी के प्रति मेरा प्रेम वैसा ही बना हुआ था और कोर-

कसर से व्यय करना भी मैंने चालू ही रखा था। मैं अपने रुपये पैसे के खर्च का हिसाब रखता था तथा यथासम्भव बचत करता था। मैंने कभी कम्पनी से पैसे उधार नहीं माँगे थे, क्योंकि मुझे उनकी आवश्यकता ही नही पड़ती थी।

कभी-कभी व्यापार में ध्यान जाता तो कम्पनी की अनुमती लेकर व्यापार कर लेता और उसमें दो पैसे की प्राप्ति भी अवश्य होतीं, परन्तु मैंने किसी दिन अनुचित मार्ग का अवलम्बन नहीं किया था। (अधिक स्पष्ट कहूँ तो मेरे व्यक्तिगत कार्य में नुकसान के बदले में डिपोजिट देने की व्यवस्था करके ही कम्पनी के मार्फत अथवा उसकी अनुमति लेकर) रंगून, बम्बई अथवा जहाँ मैं कपनी का उत्तरदायित्व-पूर्ण काम सम्हालता था, उससे भिन्न स्थान पर व्यापार करता था जिससे मेरे उत्तरदायित्व के प्रति तनिक भी शका न हो

यहाँ यह भी बतला दूँ कि कम्पनी जो धन्धा करती हो, वही धन्धा हम स्वतन्त्र-रूप में करे, तो कम्पनी के अधिकारियों को शंका उत्पन्न होतीहै और वे कभी भी हमें बड़ी जबावदारी का काम सौपेगे नही। इसके अलावा स्वतन्त्र व्यवसाय करते हुए कदाचित् हानि हुई हो तो उसे कम्पनी के खाते में डाल देने की कुबुद्धि जग जाए और उससे अनेक अनिष्ट उत्पन्न होंगे। अतः कम्पनी के अधिकारियो की सम्मति लेकर ही अपना कार्य करना बुद्धिमानी से पूर्ण मार्ग है।

कोई यह मानता हो कि सेठ लोग इस प्रकार स्वतंत्र कारोबार करने की अनुमति कर्मचारियों को नही देगे, तो यह

धारणा भ्रम पूर्ण है। जो लाखों-करोड़ों का व्यवसाय करते हों, वे मनुष्य के मन को समझ सकते है, तथा परिस्थिति के अनुसार चलने की वृत्ति भी रखते है, अतः वे योग्य प्रस्ताव को कभी ठुकराते नही।

मेरे कितने ही साथी गतिमान् रहे किन्तु प्रगतिमान् नही हुए, इसके कारणो पर जब मै विचार करता हूँ तो मुझे यह अवश्य लगता है कि उनके नैतिक विचार जैसे चाहिए वैसे निर्मित नही हुए थे और अपने विभाग के कार्य के प्रति जो आन्तरिक प्रेम और उत्साह चाहिए, वह उनमें बहुत कम था। साथ ही वे खर्च के मामले में सावधान नही थे और कर्ज करने में संकोच नही करते थे। इन सभी कारणों से उनकी प्रगति रुक गई थी।

कुछ लोग कहते है कि पुरुषार्थ के साथ भाग्य भी अच्छा चाहिए, परन्तु पुरुषार्थ किये बिना भाग्य जगता नही। जो केवल प्रारब्ध के भरोसे बैठे रहते है वे प्रमादी और आलसी बन जाते है और अन्त में सिर पकड़े रह जाते हैं। इसकी अपेक्षा प्रकृति ने हमे जो हाथ-पैर तथा मस्तक दिये है उनका सदुपयोग करना क्या अनुचित है ?

मनुष्य स्वयं ही अपने भाग्य का स्रष्टा है, यह कभी नहीं भूलना चाहिए।

८

# गृहस्थजीवन का आरम्भ

विवाह होने के बाद पाँच वर्ष तक संयम पालन करने का सङ्कल्प जो किया था, उसकी गम्भीरता मेरे ध्यान में थी। मैं अवकाश मिलने पर देश जाता, अमृतबाई के साथ कुटुम्ब-कबीले की तथा व्यापार-व्यवसाय की अनेक बातें करता, पर संयम का बाँध टूट न जाय, इसकी सावधानी रखता। अमृतबाई भी इस बारे में सावधान ही थी।

जैसे पौधा लगाने के बाद उसे विकसित करने के लिए पानी सींचना पड़ता है, वैसे ही संयम का सङ्कल्प करने के बाद उसे सिद्ध करने के लिए उत्तम विचारों का सिंचन करना पड़ता है। मैं पूज्य बापूजी, श्री राजचन्द्रजी आदि के लेखों को बारबार पढ़ता, जिससे मेरे संयम का संकल्प सद् विचारों से परिपुष्ट हुआ और अन्त में सिद्ध हुआ। श्रीमद् राजचन्द्र का निम्न लिखित दोहा मुझे सदा याद रहता इसका मनन मैं निरन्तर करता था—

निरखी ने नवयौवना, लेश न विषयनिदान।
गणे काष्ठनी पुतळी, ते भगवान समान॥

(नवयौवना स्त्री को देख कर जिसके मन में लेश मात्र भी विषय न जगे और जो उस स्त्री को काठ की पुतली के समान मानता है वह भगवान् के समान है।)

बीस वर्ष की आयु के बाद मेरा गृहस्थ-जीवन आरम्भ हुआ, दूसरे शब्दो में कहूँ तो मैंने विवाहित-जीवन में प्रवेश किया। आजकल 'विवाहित जीवन का आनन्द कैसे प्राप्त किया जाए–इस सम्बन्ध मे विविध प्रकार का साहित्य प्रकाशित होता है और उसे युवक-युवतियाँ अच्छी मात्रा में पढ़ती भी है, किन्तु उसमें मार्ग दर्शन की अपेक्षा अश्लीलता की मात्रा अधिक होती है और वह पाठकों की विषय-वासना को उभार देती है। विवाहित-जीवन का वास्तविक आनन्द तो पारस्परिक स्नेहपूर्ण व्यवहार मे निहित है। उसमे से मन और देह का ऐक्य होता है और सन्तान की उत्पत्ति होती है।

स्नेह रहित शारीरिक सम्बन्ध भी सन्तान की उत्पत्ति अवश्य कर सकता है, किन्तु उसमें से आनन्द का तत्व उड़ जाता है, अतः वैवाहिक जीवन का वास्तविक उद्देश्य पूर्ण नही होता।

कुछ लोग ऐसा मानते है कि यह भोग का साधन है, अतः इससे जितना भोग हो सके उतना भोग कर लेना चाहिये। परन्तु यह केवल भौतिकवाद है और वह मनुष्य को ऊर्ध्वगामी नहीं बनने देता। भारत के महर्षियों ने शरीर को धर्म का साधन कहा है, यह इसीलिए कि उससे जितना हो सके उतना धर्माचरण कर लेना चाहिए। धर्माचरण से मनुष्य का अभ्युदय होता है, यह निश्चित बात है।

गृहस्थ जीवन के प्रारम्भ में मैं देश मे ही था। वहाँ से लौटते समय मेरी धर्मपत्नी को मैं मोलमीन लेता आया! किन्तु रास्ते में जो कुछ हुआ, उसने मेरे धैर्य की बहुत परीक्षा ली।

हम कच्छ से बम्बई आये, तब अमृतबाई का स्वास्थ्य कुछ खराब था, किन्तु उसकी परवाह नही की गई। कुछ सादे उपचार करके प्रवास में आगे बढ़ गये। किन्तु जैसे ही कलकत्ता पहुँचे कि उसकी तबीयत बहुत बिगड़ गई। कै पर कै होते थे और पेट में पानी की बूंद भी नही टिकती थी, और बेचैनी भी बहुत अधिक थी। मैं घबराया, अब क्या किया जाय?

यहाँ हमारी कम्पनी की शाखा थी। उसके प्रमुख पदाधिकारी श्रीलखमशीभाई रायबहादुर वीरजी डायाभाई के सुपुत्र थे। वे स्वाभाव से अत्यन्त विनम्र, सरल तथा सेवाभावी थे। आत्मा बहुत उच्च थी। वे हिन्दुस्तान से ब्रह्मदेश जाने वाले कर्मचारियों को आग्रह पूर्वक कलकत्ता ठहराते और खाने-पीने की सुविधा करते। वे मेरे भानजे लगते थे। उन्होने मेरे इस संकट में बहुत सहायता की। उनकी सम्मति से मैंने बंगाल के एक सुप्रसिद्ध डॉक्टर को बुलाया। उसने अमृतबाई के रोग का निदान किया और पहले तो यही कहा—कि यदि इस युवती की जान बचानी हो तो इसके पेट में जो पिण्ड है, उसे निकाल देना पड़ेगा।

यह सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। मार्ग में ऐसी आपत्ति आ जाएगी–इसकी तो कल्पना ही नहीं थी। किन्तु बहुत सावधानी से उपचार करने पर दो ही दिन मे कुछ आराम दिखाई

दिया, इसलिए गर्भपात का वह विचार छोड़ दिया गया। वाद में तो पाँच-छे दिन के उपचारों से उसकी तवीयत विलकुल सुधर गई और वह हँसती-फिरती और खाती पीती दिखाई दी। इसके दो तीन दिन वाद हमने रगून की स्टीमर पकड़ी और वहाँ से रेल मार्ग से मौलमीन पहुँचे।

गृहस्थजीवन मे पहली आवश्यकता घर की होती है, इसके लिए मैने यहाँ एक घर किराये पर ले रखा था। वह अमृतवाई के आने से शोभित हो उठा। जैसे रात्रि की शोभा चाँदनी है और सरोवर की शोभा कमल है, वैसे ही घर की शोभा गृहिणी है। उसके हाथ का स्पर्श हुआ कि सव सुघड़ और स्वच्छ वन जाता है तथा जिस चीज-वस्तु की कमी हो, उसकी पूर्ति होने लगती है।

घर जम गया कि मित्र आते है, स्नेही-सम्बन्धी आते है और मेहमान आदि भी आने लगते हैं। सभी को वरावर सत्कार मिलना चाहिये अन्यथा गृहस्थाश्रम लज्जित होता है। मेरे पद के अनुरूप यहाँ मित्र, स्नेही-सम्वन्धी तथा मेहमान वरावर आते थे।

परन्तु आरम्भ के चार-पाँच मास तक अमृतवाई का स्वास्थ्य अच्छा नही रहता था, अतः उसके सभी कार्यो मे मै सहायता करता था। गृहस्थाश्रम की गाडी स्त्री और पुरुषरूपी दो वैलों से चलती है। अतः परस्पर एक दूसरे का पूरक वनना चाहिये।

सं. १९९४ के श्रावण शुक्ल १२ रविवार दि. ७-८-१९३८ को दोपहर के तीन वजे अमृतवाईने मिशन हॉस्पिटल में प्रथम पुत्र को जन्म दिया। सर्वप्रथम पुत्रके जन्म से हम सव को वहुत आनन्द हुआ, किन्तु उसका वजन केवल साढे पाँच पौण्ड था और मुँह कुम्हलाया हुआ था, अतः हमारे मनमें चिन्ता हुई और हम उसका वड़ी सावधानी से पालन-पोषण करने लगे। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य सुधर गया। वह शान्त स्वाभाव का था और जहाँ बिठाते वही वैठा रहता था, और अधिक रोना भी नही जानता था। उसका नाम हमने धीरजलाल रखा।

इसके दो वर्ष वाद दूसरे पुत्र का जन्म हुआ। उस का वजन ८ पौण्ड था और वह देखने में सुन्दर भी था। उसके जन्म के समय अमृतवाई का स्वास्थ्य वहुत अच्छा था। परन्तु छठी के दिन अचानक कुछ विकार हो जाने स वह शिशु केवल तीन घण्टे की विमारी मे हो हॉस्पीटल में मर गया। हम दोनों को वहुत दुख हुआ, किन्तु अमृतवाई को जो दुःख हुआ वह मेरी अपेक्षा कई गुना अधिक था। मै तो कामकाज मे लग कर कुछ दिनों के वाद दु.ख को भूल गया, किन्तु अमृतवाई लम्वे समय तक इसे भूल नही पाई। वस्तुतः माता का हृदय अपूर्व होता है। उसे अपनी संतान के प्रति जो वात्सल्य होता है, उसका वाणी में वर्णन नही किया जा सकता।

वि. सं. १९९८ कार्तिक मास मे दीपावली के दिन अमृत-वाई ने कच्छ मे प्रथम पुत्री को जन्म दिया। उसका नाम कान्ता रखा गया।

इसके पश्चात् लगभग पाँच वर्ष के वाद अर्थात् दि. २०-६-१९४७ को कीर्तिकुमार का जन्म हुआ और इसके अनन्तर प्राय: दस वर्ष के बाद दि. १०-९-'५७ को देवयानी ने जगत् का प्रथम प्रकाश देखा। ये दोनो सन्ताने हैदराबाद मे हुई।

आज मेरे धीरजलाल और कीर्तिकुमार नामक दो पुत्र है और कान्ता तथा देवयानी नामक दो पुत्रियाँ है। इनका विशेष परिचय मै आगे एक स्वतन्त्र प्रकरण में दूंगा।

ब्रह्मदेश में मेरा गृहस्थजीवन बहुत सुखी और संतोष पूर्ण रहा। वहाँ के विस्तृत कारोबार के कारण गुजराती, हिन्दी, पंजाबी, मारवाडी, बर्मी, चीनी, ज़रबादी*, जापानी तथा यूरोपियनों के सहवास में आना पड़ता था, इनमें से कुछ बर्मी और चीनियो के साथ तो कुटुम्ब जैसा सम्बन्ध जुड गया था।

सन् १९४१ के युद्ध में ब्रह्मदेश छोड़ा; उसके बाद पुन: सन् १९५५ के अप्रैल महीने मे मै और मेरी धर्मपत्नी ब्रह्मदेश की यात्रा करने आये, तब इन सब सम्बन्धियो ने २२ दिन तक हमारा प्रेमपूर्ण स्वागत किया और हमें आनन्द से सराबोर कर दिया था।

गृहस्थाश्रम में सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन तो सम्भव नहीं है। विजय सेठ और विजया सेठानी ने गृहस्थाश्रम में रह कर

*मुसलमान पुरुष और बर्मी स्त्री से उत्पन्न जाति को जरबादी कहते है।

भी सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य का जो पालन किया उसे एक उपवाद सम-झना चाहिये।* वैसे मनुष्य चाहे तो गृहस्थाश्रम मे मर्यादित ब्रह्म-चर्य का पालन कर सकता है और वह शरीर तथा मन दोनों के लिये हितकर सिद्ध होता है।

इस प्रकार के मर्यादित ब्रह्मचर्य के पालन के लिये पुरुप और स्त्री की शैय्या पृथक्-पृथक् होनी चाहिये। महीने के कुछ दिनों में स्त्रीगमन का त्याग करना चाहिये और दिवा-मैथुन का तो सर्वथा त्याग ही करना चाहिये। खूब मसालेदार तथा रस-वाला भोजन ब्रह्मचर्य के पालन में बाधक होता है, अतः इसका त्याग करना चाहिये और खान-पान यथा-सम्भव सादा रखना चाहिये।

बर्मा में रहते समय गुजराती 'राष्ट्रीय शाला' के साथ मेरा सम्बन्ध हो गया था, यह सद्‌विचारों के संरक्षण और संवर्धन में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। सत्संग में प्रातः पाँच बजे प्रार्थना होती थी और उसमें 'वैष्णव जन तो तेने कहिये, आदि भजन गाये जाते थे तदनन्तर श्रीमद् राजचन्द्र की मोक्षमाला आदि का पाठ होता था शाला के प्रधानाध्यापक श्रीखीमचन्दभाई अत्यन्त धार्मिक विचार के तथा सत्सङ्ग प्रिय थे। उनका कुछ लाभ मुझे भी मिला। श्रीछगनलाल भाईचन्द तथा श्रीफूलचन्द भाई आदि भी उच्च विचारक थे। संक्षेप में कहूँ तो यहाँ मुझे काम-काज की असाधारण व्यस्तता के बीच भी जीवन को जागृत रखने का सुन्दर अवसर मिल गया था।

*इसका उल्लेख जैन साहित्य मे मिलता है।

पू. गांधीजी की जयन्ती के अवसर पर यहाँ व्याख्यान होते थे। वाद में उनकी स्थायी स्मृति के लिये पुस्तकालय स्थापित करने का निर्णय हुआ और यह काम मैंने अपने हाथों में लिया। परन्तु उसका आरम्भ होने के थोड़े दिन बाद ही जापान की ओर से भय उत्पन्न हुआ और उसने हमारी इन सभी प्रवृत्तियो पर पानी फेर दिया।

गृहस्थजीवन में अच्छे-बुरे अनेक प्रसंग आते है। उस समय मनुष्य को परिस्थिति के अनुकूल बनकर व्यवहार करना चाहिये। 'सुख में उन्मत्त नहीं होना चाहिये और दुःख में साहस नहीं खोना चाहिये' यह हमारे ज्ञानवृद्ध पुरुषों की शिक्षा है और उसका अनुसरण करने में ही हमारा कल्याण है।

९

# युद्ध की लपेट में

एक भयंकर दावानल भभक उठा हो तो उसके लपेट' से जंगल का कौनसा भाग मुक्त रह सकता है? द्वितीय विश्वयुद्ध एक महान् दावानल के समान था और उसके प्रभाव से संसार का कोई भी हिस्सा बचा नहीं रह सका था।

इस विश्वयुद्ध ने हमारे यहाँ अनेक विकट प्रश्न खड़ा कर दिये थे। 'अब चावल का निर्यात संभव हो सकेगा अथवा नहीं?' 'उसके लिये स्टीमर मिल सकेंगे या नहीं!' 'यदि मिलेंगे तो कितने मिलेंगे?' "पनडुब्बियाँ उन्हें बीच समुद्र में डुबा देंगी तो क्या होगा?"—आदि आदि। इससे व्यापार में अनिश्चितता और अव्यवस्था व्याप्त होगयी थी।

यद्यपि इसके बाद दो तीन वर्ष स्टीमर मिलते रहे, किन्तु उनकी संख्या कम थी और उनके आने-जाने का समय भी निश्चित नहीं था। इतना होने पर भी जो लोग इन स्टीमरों में माल चढाते रहे, उन्हें कल्पनातीत

भारी लाभ होने लगे और उससे सब की दृष्टि लाभ प्राप्ति की ओर बढ़ने लगी।

बीमा कम्पनियों ने भी बीमा की दरें बढ़ा दी थीं, और स्टीमर कम्पनियों ने किराये में बहुत वृद्धि कर दी थी, परन्तु व्यापार में लाभ का हिस्सा बढ़ जाने से इन कठिनाइयों पर कोई ध्यान नही देता था।

एक ओर युद्ध का भय बढ़ रहा था, तब दूसरी ओर पैसा कमा लेने की वृत्ति जोर पकड़ रही थी। ऐसी मिश्रित मनोदशा के बीच सारा काम चल रहा था। इतने में जापान युद्ध में कूद पड़ा, जिसमें ब्रह्मदेश पर बड़ा संकट उपस्थित हो गया, और सभी अपने परिवारों को स्वदेश में भेजने लगे। मैंने भी अमृतबाई तथा धीरज को स्वदेश भेज दिया। सर्वनाश का प्रसग उपस्थित होने पर आधा बचा लेने वाला भी बुद्धिमान ही माना जाता है न ?

पहले तो जापान का युद्ध दूर-पर होता रहा किन्तु आठ-दस महीने बाद आर्थात् दिसम्बर १९४१ में उसका झपेटा ब्रह्मदेश पर भी भरपूर लग गया।

उन दिनों मैं 'न्यू एशियाटिक राइस मिल्स' का काम संभाल रहा था। यह मिल मोलमीन की बड़ी मिलों में से एक थी। यह प्रतिदिन १२५ टन से लेकर १५० टन तक चावल तैयार करती थी। मूलतः तो उसे जर्मनों ने स्थापित किया था, परन्तु सन् १९१४ में प्रथम विश्वयुद्ध फूट निकलने के बाद उसके

मालिक जर्मनी चले गये थे । तदन्तर इस मिल को एक यूरोपियन कम्पनी ने किराये पर ले रखा था, परन्तु जब द्वितीय विश्व-युद्ध के शोले जगत् पर बरसने लगे, तब उस कम्पनी ने भी इसे छोड़ दिया और सब संचालकों ने अपने देश की राह पकडी । इससे सेठ हासम प्रेमजी की कम्पनी ने सन् १९३९-४० में इस मिल को किराये पर चलाने के लिए लिया और उसकी देख-रेख का कार्य मुझे सौंप दिया ।

यह मिल जबसे आरम्भ हुई—तब से कोबाबा नामक एक चीनी भाई इञ्जिनियर बन कर काम करता था और इसकी आन्तरिक व्यवस्था भी सम्हालता था । हमारे समय में भी वह बना ही रहा । वह सवा छः फुट का पूरा लम्बा-जम्बा आदमी सदा हँसमुख रहता था । इस मिल के साथ उसकी आत्मीयता इतनी अधिक हो गई थी कि उसे कहीं अन्यत्र जाने की इच्छा ही नही होती थी, परन्तु दुर्भाग्यवश उसके प्राण-पखेरू इसी युद्ध में उड़ गये ।

मेरी इस चीनीभाई कोबाबा के साथ अच्छी मित्रता हो गई थी । कर्तव्य परायणता और स्वामि भक्ति पर मै मुग्ध हो गया था । आज भी उस चीनीभाई का हँसता हुआ चेहरा मेरे सामने आता है और मुझे जीवन की क्षणभंगुरता का स्मरण करा जाता है ।

हमारी कम्पनी के मुख्य अधिकारी रायबहादुर सेठ वीरजी डाया के छोटे भाई सेठ डुंगरशी डाया के सुपुत्र श्री पोपटभाई मेरी पत्नी अमृतबाई के सगे मामा और मेरे बहनोई होते थे ।

उनका स्वभाव बहुत अच्छा मिलनसार और प्रेमपूर्ण था। वे काम सीखने मे और काम करने में खूब सावधानी रखते थे। वे अपना अध्ययन पूर्ण करके मोलमीन आये और मेरे काम काज में सहयोग देने लगे। उन्होने थोड़े ही समय में अच्छी प्रगति की और मोलमीन की ऑफिस का काम सम्हालने लगे। इससे मेरे कार्य में वहुत सहायता मिली। कहा है कि 'एक की अपेक्षा दो भले।'

कुछ समय बाद उनकी पत्नी सुन्दर बहिन भी आई। वे भी तीसरी पीढी में मेरे बहिन लगती थी। वे भी स्वभाव से अत्यन्त मिलनसार थी, किन्तु थोडे ही समय के वाद ब्रह्मदेश पर युद्ध के वादल मँडराये, और ये पति-पत्नी स्वदेश लौट गये।

हमारी मिल जिसमें मैं रहता था और उसका काम सम्हालता था, सैनिक आरक्षित स्थान के एकदम पास थी, और उसके बारूद गोले का मगजन हमारे कम्पाउण्ड से विलकुल सटा हुआ था, इस लिये हम पर वम गिरने का भय सबसे अधिक था। इन सव कारणों से हमारे बहुत से कार्यकर्ता लोग चले गये थे, परन्तु इस स्थिति में मै मोलमीन छोड़ दूं तो उत्तरदायित्व निभानेवाला नही समझा जाऊँगा। किसी भी संकट मे कर्तव्य निभाने का मेरा दृढ संकल्प था, अत: युद्ध की इस भीषण स्थिति मे भी ईश्वर पर भरोसा रख कर मैने काम करते जाने का निश्चय किया और उसमें जुट गया।

हमारे द्वारा किसानो को अग्रिम द्रव्य देकर खरीदा गया धान अभी खेतों में ही था। उसे मोलमीन में इकट्ठा करें,

राइसमिल में लाकर चावल बनायें तथा स्टीमरों में चढ़ाएँ तभी हम उस नुकसान से बच सकते थे। अतः मेरे पास जो थोड़े से आदमी बचे थे, उन सब को खूब समझाया और खेतों में भेजकर धान इकट्ठा करना आरम्भ किया। सौभाग्य से उसमें शत प्रतिशत सफलता मिली।

बड़े जहाजों से तथा छोटी नौकाओं से धान मोलमीन आने लगा, परन्तु हमारी मिल अकेली यह काम पूरा कर सके ऐसी स्थिति में नहीं थी। अतः इसके लिये अन्य पाँच-छः मिलों का सहयोग लिया और वहाँ धान पहुँचाना आरम्भ किया। ये मिलें अलग-अलग आठ-नौ मील के फासले पर थीं अतः उन तक धान पहुँचाने में बड़ा परिश्रम करना पड़ा, किन्तु मनमें इसका दुःख न था। अब चावल तैयार होने लगा था अतः मन का भार कम होने लगा।

उस समय कैसी परिस्थिति रही थी उसका थोड़ा-सा विवरण दे देता हूँ। प्रतिदिन दो तीन बार पचास-साठ लड़ाकू विमान हमारे सिर पर से गुजरते और साइरन बजते। तब तो ऐसा ही लगता कि अब हमपर बम गिरे! पर जब वे लड़ाकू विमान निकल जाते तब सब के जी में जी आता और मुँह पर हँसी की रेखाएँ चमक उठतीं।

रात्रि में लड़ाकू विमान सर्चलाइट डालते, तब हमारे बँगले के प्रत्येक कमरे में उजाला फैल जाता। उस समय हमें ऐसा ही लगता कि ऊपर से दुश्मन हमें अच्छी तरह से देख रहे हैं और वे अभी हमें नष्ट कर डालेंगे। परन्तु भाग्यवश अब

तक हमारा बाल भी बॉका नही हुआ था। 'जाको राखै साइयाँ मारि न सक्कै कोय।'

हमारी मिल की जमीन में एक रक्षणस्थान (शेल्टर) बनाया हुआ था। उसमें ५०-६० मनुष्य छिप सके, ऐसी व्यवस्था थी। दूसरा एक रक्षणस्थान हमारी ऑफिस के लिए, हमारे एजन्ट सेठ पानाचन्द कालीदास ने भी बनाया था, उसमें ऑफिस के सभी आदमी समा जाएँ, ऐसी व्यवस्था थी। जब भय की सीटियाँ बजती, तब मिल का स्टाफ तथा अन्य व्यक्ति उन रक्षणस्थानों में चले जाते, किन्तु मै प्रायः नही जाता। उस समय भी अपने कार्य मे तल्लीन रहता।

एक दिन मै अपने कार्यालय मे काम कर रहा था, तब बहुत ही पास में बम्बार्डमेन्ट हुआ। उससे जेटी और उसके आसपास बहुत-से मनुष्यों की हानि हुई। तुरंत ही रक्षणस्थान मे पहुँचने का अवकाश भी नही था, अतः दफ्तर के निचले भाग मे चला गया। परन्तु निकट आये हुए मृत्युरूपी दैत्य ने मुझ पर अपना खूनी पंजा नही बढाया, बस इतनी ही प्रभु की कृपा थी!

मिल मे काम करने के लिए पर्याप्त आदमी नहीं थे, जितने थे वे भी बार-बार काम छोड़कर शेल्टरों में चले जाते और रात्रि में 'ब्लाक आउट' के कारण कुछ भी काम नही हो सकता था। तब भी मैं मन को मजबूत कर काम चलाता ही रहा। परिणाम यह हुआ कि दिसम्बर-जनवरी के एक महीने में हमारा सभी माल तैयार हो गया।

अब प्रश्न था स्टीमर का, किन्तु हमारे सौभाग्य से उसी समय मोलमीन में 'ब्रिटिश स्टीम नेवीगेशन कम्पनी' का 'फूल तला' नामक बहुत बड़ा स्टीमर आ गया और उसमें हमारी कम्पनी का सभी माल अर्थात् चावल के ५६००० बोरे चढ़ गये। दि. ४-१-१९४२ को वह स्टीमर रवाना हुआ। मैंने प्रभु का धन्यवाद किया और बार-बार प्रणाम किया। यदि प्रभुकृपा न होती तो इस सबका क्या होता! 'पुरुष का प्रयत्न और प्रभु की कृपा' यह सिद्धान्त सदा हृदय में जमकर रखना चाहिये। इससे पुरुषार्थ बढ़ता रहता है और ईश्वर के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है।

१०

# अन्त में ब्रह्मदेश छोड़ दिया

पूज्य बापूजी के वचनों का रटन करते हुए मेरे मन में यह बात पूर्णरूप से दृढ हो गई थी कि 'इन्सान डरपोक बनने के लिए पैदा नही हुआ है, उसे निर्भय होना चाहिए, और कैसी भी विषम परिस्थिति हो उस का सामना करना सीखना चाहिए।'

उन दिनों मोलमीन की परिस्थिति वास्तव मे विषम थी और वह प्रतिदिन अधिक विषम बनती जा रही थी। किन्तु उपर्युक्त मन्तव्य के कारण मेरे मनमे भय का कोई खास सञ्चार नही हुआ था।

दि· २३–१२–'४१ तथा दि. २५–१२–'४१ को रंगून पर हुई अन्धाधुन्ध बमवर्षा के कारण लगभग ४०००-५००० मनुष्य मारे गये थे। बाद मे २७–१२–'४१ के दिन वायुयान द्वारा मोलमीन पर पर्चे फेके गये, जिनमे लिखा गया था कि–'नगर-वासियो! शहर के पासवाले जगल मे चले जाओ, अब मोलमीन शहर पर बम गिराये जाएँगे।'

इससे शहर खाली हो गया था और हमारी मिल मे काम करनेवाले सभी लोगों को मैंने सलाह दी कि दौडभाग करने से तो काम विगड़ जाएगा, इस लिए अभी तो तुम मिलमें ही रहो और मिल के दरवाजे बन्द कर दो। इसके साथ ही उन्हें यह वता दिया था कि आवश्यकता पड़ने पर तुम्हारे जाने के लिए मोटर और वोट की व्यवस्था की जाएगी। इसलिए भागदौड़ रुक गाई थी और दूसरे दिन भी सदा की भाँति मिल चलती रही थी, परन्तु धमकी के अनुसार उस सप्ताह में वमवर्षा नहीं हुई।

युद्ध सदा अधर्म से ही नहीं होता, धर्मयुद्ध भी होते हैं। किन्तु यह युद्ध तो अधर्म की नींव पर ही हो रहा था। इसका उद्देश्य मानवजाति पर स्वयं का आधिपत्य स्थापित करने का था। इसके लिए जापानने गत ६० वर्ष से "ब्लेकड्रेगोन" नामक संस्था के माध्यम से गुप्तरूप में तैयारियाँ कीं थीं।

ब्रिटिश स्टीम नेविगेशन कम्पनी के स्टीमरों में रंगून-मोलमीन से सबसे अधिक माल चढ़ाने वाली सेठ हासम प्रेमजी की कम्पनी थी। उस कम्पनी की मोलमीन ऑफिस के मैनेजर मि. मेथसन थे, अतः उनके साथ हमारा निकट का सम्बन्ध हो, यह स्वाभाविक था। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें युद्ध की मारकाट के कारण सेना के मेजर का काम दिया था।

'फूलतला' स्टीमर दि॰ ४-१-'४२ के रवाना होने के वाद उन्होंने दि. ६-१-'४२ को हमसे कहा कि—'अव मोलमीन बन्दरगाह में प्रवेश का मार्ग बन्द हो जाएगा, अतः आप मेरे परिवार

को लेकर भारत जाएँ।' मैंने अपना विचार बतलाया कि 'दि. १२-१-'४२ को स्टीमर आनेवाला है, अतः माल की रवानगी के लिए मेरी रुकने की इच्छा है, किन्तु उन्होने सेना के एक उत्तरदायित्वपूर्ण अधिकारी के रूप में स्पष्ट सलाह दी कि 'अव आपको अपनी सुरक्षा की दृष्टि से शीघ्र ही चला जाना चाहिए।'

उस समय मि. मेथसन ने विशेष रूप से यह भी कहा कि मैंने अपने परिवार को भारत जाने के लिए दि. २३-१२-'४१ को रगून भेज दिया था, किन्तु उसी दिन वहाँ अन्धाधुन्ध बम वर्षा होने से घवरा कर वह वापस मोलमीन आ गया है। अब मै ऐसी स्थिति मे कर्तव्य पर आरुढ होने से ब्रह्मदेश छोड़ नही सकता हूँ, अतः यह काम आपको सौंप रहा हूँ। आपको मित्र के रूप मे यह कार्य करना है।

यह सलाह मुझे उचित प्रतीत हुई, तथा कम्पनी का काम भी पूरा हो चुका था, इसलिए दि. ७-१-'४२ को मैं मि. मेथसन की पत्नी तथा चार बच्चों को लेकर रगून जाने को रवाना हुआ। तब मोलमीन से जहाज के छूटने का स्थान (जेटी) तथा सामने वाले किनारे के जेटी और उसके पासवाले मार्टावान रेल्वे स्टेशन ये सब बमबारी के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो चुके थे। बम वर्षा के कारण मारे गये लोगों के शव जहाँ-तहाँ पड़े हुए थे। ओह! कैसा था वह करुण दृश्य! हमने एक सम्पान छोटी नौका किराये पर की और सामने वाले किनारे के जेटी से कुछ दूर एक पुल था, उसके नीचे कुछ समय बैठे रहे। रेल्वे स्टेशन

के नष्ट हो जाने पर भी रेल तो आती ही थी, पर वह दूर खड़ी रहती थी। पैदल चल कर हम वहाँ पहुँच गये और रेल पकड़ कर रगून पहुँचे।

उन दिनों रायबहादुर सेठ वीरजी डाया ने रंगून के तिनांजो नामक मुहल्ले में एक मकान किराये पर ले रखा था और स्टाफ के लोग भी वहीं रहने के लिये चले गये थे। सेठ वीरजी डाया के बड़े पुत्र श्री नानजीभाई को समाचार मिलने से वे हमें लेने के लिए स्टेशन पर आये थे। वे बहुत साहसी और निर्भीक थे। तथा मेरी बहिन बालबाई (रायबहादुर की धर्म पत्नी) का साहस भी आश्चर्यजनक था। जब वहाँ रहनेवाले अच्छे अच्छे लोगों को भय लगता था, तब भी वे बिना किसी घबराहट के अपना कर्तव्य निभाती और सभी का उचित आदर-सत्कार करती हुई हिम्मत बँधाती थी।

यहाँ प्रतिदिन एरोड्रोम तथा सैनिक आवासों पर दो-तीन बार बमबारी होती थी तब पृथ्वी काँप उठती थी, मानो कोई बड़ा भूकम्प हुआ हो, ऐसा ही लगता था। स्पष्ट कहूँ तो हमारे और मृत्यु के बीच दो कदम का ही अन्तर प्रतीत होता था।

सर्वत्र घबराहट का वातावरण फैल गया था। लगभग सभी भारतीय स्वदेशी जाने के लिए बेचैन थे, किन्तु उसके लिए स्टीमरों की व्यवस्था नही थी। भारत सरकार को टेली-ग्राम पर टेलीग्राम जाते कि हमारे लिए रक्षणवाले स्टीमर भेजो; किन्तु उसका कोई व्यवस्थित उत्तर नही मिलता था।

ऐसी स्थिति में हजारों भारतीय अपने पास जो कुछ महत्वपूर्ण वस्तुएँ थी, उन्हें लेकर पैदल रास्ते से भारत पहुँच जाने के लिए मणिपुर का मार्ग पकड़ रहे थे। मैने भी यही रास्ता अपनाने का विचार किया था और तदर्थ खाने-पहनने की आवश्यक सामग्री वाला एक थैला तैयार कर लिया था, जो मुझ से उठाया जा सके। परन्तु इतने मे ही एक साथ तीन स्टीमरों के कलकत्ता जाने के समाचार मिले और हमे उनके टिकट भी मिल गये।

उस समय बड़े से बड़े लोगों को भी तीसरी श्रेणी का भी टिकिट मिलना कठिन था, परन्तु हमारी कम्पनी रायल शिप्पर होने के कारण स्टीमर कम्पनी ने रात्रि के समय राय-बहादुर सेठ वीरजी डाया के पास ३०० टिकिट भेज दिये थे। यहाँ रात्रि में पूर्ण अँधेरा रहता था। तथापि जिन्हे बहुत आवश्यकता थी, उन्हें बुला-बुलाकर हमने सारी रात टिकिट दिये। जिन्हे टिकिट मिले उन्होने हमारा बहुत बहुत आभार माना और सदा सुखी रहने के आशीर्वाद दिए।

दूसरे दिन प्रातः एक ही साथ तीन स्टीमर रवाना होनेवाले थे, अत. हजारो प्रवासी जेटी पर एकत्रित हुए। ठीक उसी समय जापान के लड़ाकू विमानों ने प्रदर्शन किया और सभी काँप उठे। कुछ लोगो ने ईश्वर से हार्दिक प्रार्थना की कि—हे नाथ ! आपने गज को बन्धन से छुड़ाया और द्रौपदी की लाज बचाई तो हमें इन राक्षसों के पंजे में से क्यों नही बचाते ? इन दुष्टों को तनिक भी दया नही है। ये छोटे-बड़े को भी नहीं

देखते है। यदि ये अभी बमबारी करेंगे तो हमारी शतायु यहीं पूरी हो जाएगी! अथवा हमारे स्टीमर में बैठने के बाद बमबारी करके स्टीमर को डुबा देंगे, तो हे प्रभो! हम बुरी मौत मारे जाएँगे। हमारे शरीर को भीषण जलचर फाड़ कर खा जाएँगे! प्रभो! दया करो, हमें बचाओ, बचाओ।''

मानो इस प्रार्थना को ईश्वर ने सुन लिया हो और उसने जापानियों को 'रुक जाओ' का आदेश दिया हो, इस तरह जापानी फाइटरों ने उस समय बमबारी नहीं की और हमारे स्टीमरों को उनके मार्ग पर आगे बढने दिया।

११

# स्मरण और संवेदन

स्टीमर अपना मार्ग काटने लगे और मेरे मन में विचारों की प्रचण्ड तरगें उछलने लगी। 'मैं यहाँ कैसी स्थिति में आया था ? क्रमशः किस तरह आगे बढा ? और भविष्य के लिए कैसे कैसे स्वप्न देखे ?' और ये विचार भी आने लगे कि 'क्या यह ब्रह्मदेश इस संकट से उन्मुक्त हो सकेगा ? और कदाचित बच भी जाए तो यहाँ व्यापार-व्यवसाय का पहले जैसा आनन्द क्या रह सकेगा ? क्या ब्रह्मदेश को यह आखरी सलाम तो नही है ?"

इस अवसर पर मुझे ब्रह्मदेश का अपना तेरह वर्षो का निवास स्मरण हो आया और उसी बीच जिस जिस के साथ मित्रता अथवा स्नेह-सम्बन्ध होगया था उनके स्मरण ताजा होने लगे। यदि उन सबको मै यहाँ लिखने बैठूँ तो उसका पार नही पाऊँगा। शायद २०० पृष्ठ भर जाऍगे ! उसमे किसका नाम लिखूँ और किसका नही ? भारतीय, बर्मी, चीनवासी, जापानी, यूरोपियन आदि अनेकों के साथ निकट सम्पर्क होगया था और

उनके जीवन से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला था। जब तक हम दूसरों के सम्पर्क-सहवास में नहीं आते, तब तक हमारी स्थिति कूप-मण्डूक जैसी ही रहती है।

कूप-मण्डूक का अर्थ है कुएँ में रहने वाला मेंढ़क। उसकी बात अवश्य ध्यान में रखने योग्य है।

एक कुएँ में एक मेंढ़क रहता था। वह कभी कुएँ को छोड़ कर किसी दूसरे स्थान पर नहीं गया था। उसका सारा जीवन उसी कुएँ मे बीता था।

एक बार पानी का पूर आने से सरोवर का एक मेंढ़क उस कुएँ में आ गया। उसे देखकर कुएँ के मेंढ़क ने कहा—'भाई! तुम कहाँ से आये हो?''

उसने कहा—'सरोवर में से आया हूँ।'

कुएँ के मेंढक ने पूछा--'सरोवर से क्या तात्पर्य है?'

आगन्तुक मेंढ़क ने कहा—'पानी का बड़ा समुदाय?'

कूप-मण्डूक ने कहा—'बड़ा? कितना बड़ा? क्या इस कुएँ का चौथा भाग जितना?'

आगन्तुक ने कहा—'नही इस से बहुत बड़ा।'

कूप-मण्डूक ने कहा—'तब क्या इस कुएं का आधाभाग जितना होगा?'

उसने कहा—'नहीं, इससे भी बहुत बड़ा।'

कूप-मण्डूक—'तब क्या, वह पानी का समुदाय इस कुएँ का पौना भाग जितना है ?'

आगन्तुक ने कहा—'नही इससे भी वहुत वड़ा।'

कूप-मण्डूक—'तब क्या पानी का वह समुदाय इस पूरे कुएँ का पानी जितना है ?'

दूसरे ने कहा—'नही, भाई नही, इससे भी बहुत वड़ा।'

तव कूप-मण्डूक ने कहा–'मै तेरी बात मानने को तैयार नहीं हूँ। मैने तो अपने सारे जीवन में इससे अधिक पानी का कोई वडा समुदाय देखा ही नही है।'

x x x

मोलमीन के प्राकृतिक सौन्दर्य के स्थल भी एक के बाद एक मेरे स्मृतिपट पर तैरने लगे ! रुक्मानन्द बाबू का बाग, छोटे-बड़े रमणीय तालाब, चाइखमी समुद्र का किनारा, अलौकिक बौद्धपीठ, कढो की ओर के गर्म जल के सोते, छोटे छोटे जल-पात ! इन सबने मुझे कितना निष्कलमष सात्त्विक आनन्द दिया था !

मोलमीन ब्रह्मदेश का एक सुन्दर दर्शनीय स्थल माना जाता था, इस लिये यहाँ प्रतिवर्ष अनेक प्रवासी आते और उनमें से कुछ हमारे मेहमान बनते थे। यहाँ हम परम्पर बड़े स्नेह से रहते थे, इसलिये एक का मेहमान दूसरे का भी मेहमान माना जाता। इस तरह भी मेहमानों की संख्या अच्छी रहती। हम इन मेहमानों की सुन्दर आवभगत करने के पश्चात् उन्हे पास के और

दूर के स्थल दिखाने ले जाते, तब कितना सुन्दर वातावरण बनता था ! कभी लॉच द्वारा नदियों के टेढे-मेढे प्रवाहों को लाँघते, तो कभी हाथ में लकड़ी पकड़े ऊँचे-नीचे पहाड़ों पर चढ़ते ! अकसर मोटर पर जंगलों के दूर-दूर के भागो में चले जाते; कई बार पैदल चलकर भी सौन्दर्यपूर्ण स्थानों की यात्रा करते।

वह नदी किनारेवाला स्थान (कढा) जहाँ कि मैं प्रतिदिन मित्रों के साथ घूमने जाता और विविध प्रकार की बातें करके मन को बहलाता, वह तो दृष्टि के सामने से हटता ही नही था। चावल की मिलें जो कि इस नदी के किनारे पर आठ-दस मील के विस्तार में फैली हुई थी और जहाँ मेरा प्रतिदिन जाना होता था, वे सब मानो मेरी आँखों के सामने खड़ी हो गई थीं; और ठहाका मार कर हँसती हुई मेरा उपहास कर रही थी; 'अरे तू कहाँ जा रहा है? क्या तुझे हमारे बिना अच्छा लगेगा? प्रीति बाँधी तो उसे निभाना भी जानना चाहिए। किन्तु स्वार्थी मनुष्य अपना स्वार्थ सधा की नहीं, घर की राह पकड़ता है ! तू भी बड़ा स्वार्थी निकला ?'

मोलमीन में चावल भी कैसे आते थे ! एकरीन, मीगलोन, याहीन, पटायाहीन, जया, एकरे और कावची। सभी मेरी स्मृति में आने लगे और मानो कहने लगे कि हमारी परीक्षा करो, हमें बारदाने मे बिठाओ, हमें स्टीमर की यात्रा कराओ !

मोलमीन के फल ! दुरियन (दुयंटी), मोगस्तान (मेगोदी) और लीचु (चे माउदी) ! सभी मेरे सामने नृत्य कर रहे थे और मेरे मन मे एक प्रकार का सवेदन जगा जाते थे !

वहाँ के अनन्नास, अमरूद, आम तथा केले भी कैसे भूले जा सकते थे ?

मोलमीन में सामाजिक तथा व्यापारिक सम्बन्धों के अतिरिक्त सत्सङ्ग भी होता रहता था। श्रीखीमचन्द भाई मास्टर, श्रीछगनभाई, श्रीपोपटभाई झवेरी, श्री फूलचन्दभाई ये सब सामने बैठे हों ऐसा लगता था। वहाँ प्रार्थना के समय ही वातावरण जमता था। मेल-जोल से सम्बन्धित चर्चा-विचारणा मे जो तर्क-वितर्क होते तथा श्रीखीमचन्दभाई आदि अपने अनुभवों का जो प्रकाश डालते, वे चाहने पर भी भुलाये नही जाते थे ! यद्यपि मैं इस प्रार्थना में नियमित रूप से उपस्थित नही हो सकता था, किन्तु अनेकबार जाता अवश्य था।

मोलमीन में वर्मी लोगों का सहवास भी बहुत हो चुका था। उनका भला और भोला स्वभाव, उनका आनन्दमय जीवन तथा उनकी धर्मश्रद्धा मेरे मन पर अनेक नये नये चित्र खडा कर रही थी। विगत पाँच वर्षो में मै वर्मी भाषा भी सीख गया था, इसलिए मेरे सामने वर्मी लोग खडे हो और मै उनके साथ वार्तालाप कर रहा हूँ, ऐसा ही लगता रहता।

उस समय मुझे रंगून, वसीन, हेजाण्डा आदि स्थान भी याद आ रहे थे। इन सभी स्थानो पर व्यापार के निमित्त मैंने कई वार प्रवास किया था। रगून का 'रायल लेक' जिसका फैलाव चार मील से भी अधिक है, वह तो मुझे लगता है कि मेरी स्मृति में से कभी नही उतर सकेगा। हमारा निवास स्थान उसके पास ही था, अतः प्रतिदिन प्रात मैं वहाँ भ्रमण के लिये जाता, और

उमका निर्मल जल तथा उसमे क्रीडा करती हुई मछलियों को देखता रहता। मुझे कई वार ऐसा लगता कि--इन प्राणियों को है क्या कोई चिन्ता ? ये तो निरन्तर क्रीडा ही करते रहते है ! और मनुष्य जो कि प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ माना जाता है, उसके मुह पर से विषाद की रेखाएँ हटती ही नहीं। वस्तुतः, मानव प्रकृति से वहुत दूर चला गया है और इसीसे स्वाभाविक आनन्द खो वैठा है।

इस जगत् के स्मरण और संवेदनों का अनुभव करता हुआ मैं भी मेथ्यसन के परिवार के साथ कलकत्ता पहुँचा, तव समाचार मिला कि मोलमीन पर वमवारी हुई थी, जिसमें हमारी एशियाटिक मिल जहाँ कि मैं रहता था और उसके पासवाला वारूद का संग्रहस्थल भी आगये थे तथा हमारी मिल के १००-१५० मजदूर भी मारे गये थे !

हमारी मिल में मजदूरी का काम मुख्य रूप से वर्मी वहिने ही करती थी और वे मिल के आसपास के भागों मे ही रहती थी, अतः मिल वन्द हो जाने पर भी वे वही रहती थी और वमवारी का शिकार वन गई थी। दक्षिण भारतीय कुछ तमिल मजदूर भी उसमें मारे गये थे।

इस प्रकार हमारी मिल के टूट जाने और मोलमीन पर जापानियों के अधिकार हो जाने के समाचार जव मिले, तव मन मे कैसे विचार आये होंगे, यह अनुमान करने का काम मैं पाठकों पर छोड़ता हूँ।

रंगून पर होने वाले आक्रमणों का भय बहुत बढ रहा था। परन्तु शेष बचे हुए कंपनी के लोग स्टीमर द्वारा बीस-बाईस दिन बाद सुरक्षित रूप से भारत में आ पहुँचे थे, इन्ही में रायबहादुर सेठ वीरजी डायाभाई आदि भी सम्मिलित थे।

इतना होने पर भी बहुत से भारतीय ब्रह्मदेश में रह गये थे और उन्हे अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उठानी पड़ी थी। उनमे से कुछ सुभाषचन्द्र बोस की आजाद हिन्द फ़ौज में सम्मिलित हो गये थे।

जो लोग मणिपुर के रास्ते से गये थे, उनमे से कुछ भूख और बीमारी के कारण बेहाल हो गये थे, और कुछ इस संकट को न सह सकने के कारण मर चुके थे। उनमें से कुछ लोग जो बुरी स्थिति में भी भारत सुरक्षित रूप में आ गये थे, वे वास्तव में भाग्यशाली थे।

इस उथल-पुथल में बहुत से भाइयों पर तीव्र मानसिक प्रभाव भी पड़ा था तथा स्वास्थ्य को भारी धक्का भी लगा था। मेरे बडे भाई शामजी भाई को रंगून पर हुए दि. २३-१२-'४१ तथा २५-१२-'४१ के प्रथम हवाई आक्रमण के समय घबराहट के कारण हृदय पर हलका धक्का पहुँचा। वे उसके बाद शीघ्र ही भारत चले आये थे। किन्तु इस बीमारी ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। अन्त में वह प्राण घातक सिद्ध हुई।

ऐसे विचित्र और विषम परिस्थितियों में मैं बाल-बाल बच गया और भारत आ सका, एतदर्थ मैने प्रभु से बार-बार

प्रार्थना की। आर्य महर्षियों ने कहा है कि—'जब तक मनुष्य की पुण्य रेखा प्रबल रहती है, तब तक उसे कोई भी विपत्ति कष्ट नही पहुँचा सकती।' अनुभव करने पर मुझे यह कथन पूर्ण सत्य प्रतीत होता है।

१२

# कलकत्ता से कच्छ

मनुष्य के बुद्धिचातुर्य को विकसित करने वाली जो चार पॉच बाते है उनमें प्रवास अथवा पर्यटन का स्थान प्रथम है। इससे नये-नये प्रदेश देखने को मिलते है, नई-नई भाषाएँ सुनने को मिलती है और नये-नये रीति-रिवाजों का ज्ञान मिलता है। मनुष्यों ने अपनी विशिष्ट सृजनशक्ति का जो उपयोग किया है, उसके भी दर्शन होते है।

अब तक मैं कच्छ से बम्बई, बम्बई से कलकत्ता और वहाँ से रंगून-मोलमीन गया था और वहाँ के आसपास के गाँवों में घूमा था, परन्तु भारत के दर्शनीय स्थान मैंने नही देखे थे। इस के लिये जितना समय और शान्ति अपेक्षित थी अब तक प्राप्त नही हुई।

अब कुछ समय मिलने पर मैंने इस इरादे को पूरा करने का विचार किया और उसका आरम्भ कलकत्ते से किया।

कलकत्ता एक महानगरी है और यह मीलों तक फैली हुई है। पहले यह भारत की राजधानी थी, आज केवल पश्चिम बगाल

की राजधानी है, परन्तु आबादी की दृष्टि से भारत में इसका स्थान प्रथम है। यह हुगली नदी के किनारे पर स्थित है और बन्दरगाह के रूप में उत्तम सुविधाओं से पूर्ण है। यहाँ व्यापार की डोर अधिकांश में मारवाड़ी वर्ग के हाथ में है।

मैंने यहाँ बद्रीदास जैन टेम्पल, बेलूड़ मठ, विक्टोरिया मेमोरियलसंग्रहालय, बोटानिकल गार्डन आदि स्थान देखे। बाजार-मार्केट आदि तो पहले ही देख चुका था।

कलकत्ते से मैं बोलपुर गया, जहाँ श्री रवीन्द्रनाथ ठैगोर द्वारा स्थापित शन्तिनिकेतन नामक विद्यापीठ है। उस समय वहाँ भाई खीमजी काराणी अध्ययन करते थे। उन्होंने दो दिन मुझे साथ रख कर सभी प्रवृत्तियों से परिचित कराया, जिससे मन बहुत प्रसन्न हुआ। यदि जीवन को प्रवुद्ध रखना हो तो ऐसे स्थानों में आकर कुछ दिन रहना चाहिए।

शान्ति निकेतन वस्तुतः शान्ति का ही घर है और इसी कारण संसार के अनेक शिष्ट एव संस्कार सम्पन्न स्त्री-पुरुष इसे देखने आते हैं। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी इकलौती पुत्री इन्दिरा को विशेष शिक्षण के लिए यहाँ भेजा था।

भाई खीमजी काराणी इस विद्यापीठ के स्नातक बनने पर मेरी कम्पनी के काम में लग गये थे। वे नृत्य और संगीत में प्रवीण थे, अतः उसका लाभ वे 'हैदराबाद-गुजराती प्रगति समाज' को भी देते थे। अब वे हैदराबाद में स्वतंत्र रूप से काम करते हैं तथा सामाजिक कार्यों में भी भाग लेते हैं।

शान्तिनिकेतन छोड़ने के बाद मैंने सीधा दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। वहाॅ कुतुबमीनार, अशोक की लाट, लालकिला, जुम्मामस्जिद, हुमायूं का मकबरा तथा जन्तर-मन्तर (वेधशाला) आदि देखे और मेरी आॅखों के सामने प्राचीन इतिहास उभर आया। लोकसभा, राजभवन तथा नई दिल्ली के विशाल मार्गो ने उसकी भव्यता का मुझ पर गहरा प्रभाव डाल दिया।

वहाॅ से आगरा गया। दिल्ली और आगरा के नाम साथ-साथ लिये जाते है, किन्तु उन दोनों के बीच सौ मील से अधिक दूरी का अन्तर है। यहाॅ का प्रसिद्ध निर्माण ताजमहल है जिसकी समानता करनेवाला भवन विश्व में दूसरा दिखाई नही देता। उसे देखने का वास्तविक आनन्द पूर्णिमा की रात्रि में आता है, किन्तु वह सुयोग मुझे नही मिला। मैं तो यह मानता हूँ कि ताजमहल को जब चाहो देखो वह भव्य ही लगता है। उसकी भव्यता में कभी कमी नहीं आती।

यहाॅ का लालकिला भी देखा जहाँ दीवाने-आम और दीवाने खास बने हुए हैं। उसकी समृद्धि तो लुट चुकी है, किन्तु स्मृति रह गई। यहाॅ एक महल में एक छोटा सा काॅच देखा जिसमे सुदूर में स्थित ताजमहल का पूरा प्रतिविम्ब पड़ता है। ऐसा कहा जाता है कि शाहजहाॅ बादशाह जब कैद मे था, तब उस काॅच में अपनी प्रियतमा मुमताज की स्मृति में निर्मित ताजमहल की प्रतिकृति देखता रहता था। उस समय उसके मन मे कैसे विचार उठते होगे? यह कहना कठिन है, किन्तु मोटे तौर पर विषाद ही होता होगा। ऐसे भव्य स्मृति-भवन का निर्माता अपने पुत्र के हाथो बन्दी बनाया जाय और उसे

पराधीन जीवन विताना पडे, उसमें आनन्द का अनुभव कैसे हो सकता है? यहीं दयालबाग की संस्था भी देखी, जो कि एक आदर्श शैक्षणिक संस्था मानी जाती है। प्रमुखरूप से उसका औद्योगिक शिक्षण विशेष महत्त्व का है।

ये सब ऐतिहासिक स्थान हमें यह कहते है, कि 'मानव! तू सम्हल कर चलना, किसी बात का गर्व मत करना। जिसकी मूँछपर नींबू ठहरते थे, वे युद्ध में मारे गये और जिसकी सिद्धि-समृद्धि का पार नहीं था, वह एक दिन भिखारी बन गया। केवल जिन्होंने उत्तम कार्य किये, उनके नाम स्थिर रहे। तू भी ऐसा कुछ अच्छा कार्य कर जिससे संसार तुझे याद रखे।'

आगरा से मैं आबू गया और वहाँ दिलवाड़े के मन्दिर देखे। यह कैसी कारीगरी? और कैसा शिल्प? मानों सब मोम के साँचें में ढाले गये हों! कहा जाता है कि इस के शिल्पियों को संगमर्मर के पत्थरों को उत्कीर्ण करने में जितना बूरा गिरा, उतनी चाँदी तोल कर दे दी गई थी। इतनी उदारता और गुणज्ञता के विना इस कोटि की श्रेष्ट-कृति बन ही नही सकती। यहाँ पाँच मन्दिरों के समूह मे विमलशाह का और वस्तुपाल-तेजपाल का मन्दिर विशेष दर्शनीय है। अन्तिम मन्दिर देवरानी-जिठानी की गोखल मे अदभुत शिल्पकार्य किया हुआ है। यहाँ जैन भगवन्तों के दर्शन किये और चित्त को बहुत ही तृप्ति मिली।

यहाँ की नकी झील बहुत सुन्दर है। उन दिनों अत्यन्त शीत होने पर भी सवेरे ही वहाँ पहुँच कर उसमे स्नान करने का आनन्द प्राप्त किया।

वहाँ से मैं पालीताना गया और शत्रुञ्जय की यात्रा की। शत्रुञ्जय गिरि पर सैकडों जैनमन्दिर विराजमान है और वे स्वच्छता, पवित्रता तथा कला की दृष्टि से अपूर्व कहे जाने योग्य है। उन सब की देखभाल 'आनंदजी कल्याणजी' की सस्था करती है।

इस प्रकार प्रवास और यात्रा करने के बाद मैं पत्री पहुँचा और पूज्य माताजी, धर्मपत्नी अमृतबाई, पूज्य बड़े भ्राता शामजी भाई, अन्य कुटुम्बी जन तथा मित्र आदि से मिला, उस समय उनक आनन्द का पार नही था। वे सभी युद्ध के कारण चिन्तातुर थे। मैने भी उनके मिलन से अतीव आनन्द पाया।

यहाँ फरवरी से एप्रिल तक क तीन महीनो की स्थिरता मे मेरी साली साकरबाई के विवाह मे सम्मिलित हुआ तथा सार्वजनिक कार्यो मे भाग लिया और चरखा चलाने की प्रवृत्ति आरम्भ की। इसके लिये १२-१३ चर्खे इकट्ठे किये और पूनियाँ देन की व्यवस्था की। परन्तु 'इसमे क्या मिलता है?' ऐसा कह कर लोग उसकी उपेक्षा करने लगे। बहुत समझाने पर भी उसका अर्थशास्त्र उनके गले नही उतरा। केवल बूढी औरतों ने जो घर से बाहर नही जा सकती थी, उसमे रुचि दिखलाई और कताई चलने लगी। किन्तु कुछ समय के बाद उसमे भी कुछ कठिनाइयाँ आई और योग्य कार्यकर्ताओ के अभाव मे उसे बन्द करना पड़ा। यहाँ इतना स्मरणीय है कि इस कार्य में मेरे परममित्र श्री शिवजीभाई नथु-छेडा (जे. पी.) की धर्मपत्नी श्रीवेलबाई ने बहुत सहयोग दिया था।

हमारे गाँव से लगा हुआ १६ से १८ एकड़ विशाल एक मैदान था। उसे ग्यारह-बारह वर्ष की आयु में जब मैंने देखा मन में ऐसी भावना उत्पन्न हुई थी कि इस भूमि पर विद्यालय बने तो कितना अच्छा हो! वह भूमि तथा गाँव के बीच में स्थित दो मकान मैंने खरीद लिए। वे दोनों मेरी भावना को पूर्ण करने में बहुत उपयोगी सिद्ध हुए। बाद में उसी खेत का आधा भाग मैंने 'पत्री सर्वोदय समाज' को अर्पित किया। उस पर लाख-सवा लाख रुपये के खर्च से गांधी विद्यालय (खेती-बाड़ी सहित हाई स्कूल) का भव्य भवन खड़ा किया गया है। उसके साथ अशोकवाड़ी बनी, अनेक कुएँ बने, खेल-कूद के समान जमाये गये, और बाद में १ लाख व ६० हज़ार रुपये के व्यय से पृथक छात्रावास भी बना।

गाँव के बीच में जो दो मकान लिये थे उनमें से एक में सर्वोदय समाज का कार्यालय तथा वाचनालय बने तथा पासवाला दूसरा मकान समाज को भेंट स्वरूप दे दिया गया।

यहाँ इतना और लिखना उचित होगा कि गाँव में प्रवेश करने का प्रमुख मार्ग जो कि मेरी भूमि के पास से निकलता था, वह बहुत सँकड़ा था अत. उसे चौड़ा बनाने के लिए १००-२०० लोगों को काम पर लगाया था और उसका खर्च मैंने ही उठाया था। इस मार्ग को गाँव के निवासियों ने 'कापड़िया रोड' नाम दिया है और वहीं पास में बस का जो अड्डा है, वह हमारे कुटुम्बियों द्वारा बँधाया हुआ होने से 'मातृछाया' के नाम से पहचाना जाता है।

१३

## नये क्षेत्र में नया काम

एप्रिल मास के अन्त में मैं बम्बई गया। वहाँ हासम प्रेमजी की कम्पनी के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने मुझे आदेश दिया कि 'तुम्हे हैदराबाद स्टेट में स्थित हमारा काम सम्हालना है।'

कम्पनी की ओर से दो स्थानों पर चावल के अतिरिक्त दाल, तिलहन तथा कपास की खरीदी का काम आरम्भ किया गया था और वह माल बम्बई और अन्य स्थलों पर भेजा जाता था। यह काम 'नया घोड़ा नई लगाम' जैसा था। अर्थात् क्षेत्र भी नया था और काम भी नया। इतना होने पर भी मैने कम्पनी के आदेश को शिरोधार्य करने में तनिक भी आनाकानी नही की; क्योंकि मुझे आत्मविश्वास था कि थोड़े ही दिनों में वहाँ की स्थिति व्यवस्थित कर लूँगा।

एमर्सन ने कहा है कि 'आत्मविश्वास सफलता का रहस्य है।'

महात्मा टॉल्स्टाय का कथन है कि—'विश्वास ही जीवन की प्रेरकशक्ति है।'

सुप्रसिद्ध आंग्ल कवि टेनिसन ने ऐसा अभिप्राय व्यक्त किया कि–'आत्मविश्वास, आत्मज्ञान तथा आत्मसंयम ये तीन वस्तुएँ ही जीवन को परम शक्ति सम्पन्न वनाती हैं।''

स्वामी विवेकानन्द वार-वार कहते थे कि–'जिसे आत्म-विश्वास नहीं है उसे अन्य किस वस्तु पर विश्वास होगा ?'

मैं कुछ ही दिनों के वाद हैदरावाद आ पहुँचा।

अभी सारे भारत में लोकशाही समवायतन्त्र चल रहा है, परन्तु उस समय भारत के एक तिहाई क्षेत्र में ६०० के करीव देशी राजाओं का शासन था और उनमें निजाम की गणना सर्व-प्रथम होती थी।

निजाम का राज्य ९०२ मील लम्वे और ६७२ मील चौड़े विस्तार पर फैला हुआ था। उसका क्षेत्रफल ८२६९८ वर्ग मील था और उसमें १६ छोटी-छोटी जागीरें थी। इस राज्य में महा-राष्ट्र, तेलगाना और कर्णाटक नामक तीन भाषाई विभाग थे। उनमें पश्चिम की ओर का भाग महाराष्ट्र माना जाता था और वहाँ मुख्यरूप से मराठी भाषा वोली जाती थी; आग्नेयकोण का भाग तेलगाना कहा जाता था और वहाँ तेलुगुभाषा वोली जाती थी; जव कि नैऋत्य की ओर का भाग कर्णाटक कह-लाता था और उसमें प्रधान रूप से कन्नड़भाषा का व्य-वहार था।

यहाँ के शासक मुसलमान होने से उनके आश्रय मे वाहर के अनेक मुसलमान आकर वस गये थे, तथा यहाँ के स्थानीय

लोगों में से भी कुछ ;मुसलमान बन गये थे। वे सब उर्दूभाषा भाषी थे। यहाँ गुजरात से बनियाँ, वोहरे, पारसी आदि लगभग पन्द्रह हज़ार लोग व्यापार के लिये आ बसे थे। आज उनकी आवादी २५-३० हजार है। वे मेलजोल के व्यवहार में गुज-राती बोलते है और स्थानीय लोगों के साथ उनकी भाषा में बात चीत करते है। यहाँ की आबादी का कुछ भाग तमिल भाषी भी था, इस तरह इस प्रदेश में विविध भाषा-भाषी लोग एकत्र हुए और वे विविध धर्मो को माननेवाले थे।

निजाम का प्रदेश बहुत सुन्दर माना जाता है, क्योंकि इस मे सुन्दर पर्वत हैं, जल से परिपूर्ण सरिताएँ है और छोटे-बड़े तालाबो की तो गिनती ही नहीं! जहाँ देखो वहीं हरियाली दिखाई देती है। यहाँ वर्षा भी बहुत अच्छी होती है, इसलिए चावल, दाल, अन्न, कपास, ज्वार, बाजरा तथा तिलहन कीं फसले बहुत होती है और ये सारे अनाज बाहर भेजे जाते है। यही कारण है कि अनाज तथा तिलहन का बड़े पैमाने पर व्यापार करनेवाली बम्बई की कम्पनियाँ, अपनी शाखाएँ यहाँ रखती है। सेठ हासमजी प्रेमजी की कम्पनी ने ब्रह्मदेश का काम बन्द हो जाने पर निजाम तथा विजयवाड़ा का काम एजेन्टों द्वारा आरम्भ किया था।

यहाँ की जमीन से पत्थर, सोना, हीरा तथा अभ्रक निक-लते है। प्रसिद्ध कोहेनूर हीरा यहाँ की खान से निकला था।

उन दिनों यहाँ कपड़ा, चावल तथा तेल की कुछ मिले काम करती थी तथा चीनी, चमड़ा, सिमेन्ट, रासायनिक खाद,

कॉच, वर्तन आदि से सम्बन्धित कुछ उद्योग स्थापित हो चुके थे।

हैदराबाद ऐसे एक समृद्ध राज्य की राजधानी शहर था, अतः एक अलबेली नगरी जैसा लगता था। यहाँ कुतुबशाही वंश के बादशाहों ने अनेक भव्य भवनो का निर्माण किया और उसके बाद निजामों ने उसमें अच्छी वृद्धि भी की थी। पहले यह नगर चन्द्रभागा उपनाम मूसी नदी के एक किनारे पर ही बसा हुआ था, पर बाद में इसका विस्तार होने से दोनों किनारों पर बस गया और अब तो बेगमबाजार, कारवान, अफजलगंज, मुशीराबाद, चान्द्रायणगुट्टा आदि इसके मुहल्ले भी अच्छे विकसित होने लगे है इसके साथ सिकन्दराबाद और सैफाबाद नामक दो उपनगर भी जुट गये है।

पहले निजाम की राजधानी यहाँ से कुछ दूर स्थित गोलकोंडा में थी, किन्तु सन् १६८७ के बाद, पहले निजाम ने अपने राज्य को मुगलो के अङ्कुश से मुक्त किया और अपनी राजधानी हैदराबाद में बसायी।

यहाँ कोर्ट, कचहरी, विश्वविद्यालय, महाविद्यालय तथा विद्यालयो के अनेक भवन, हिन्दू तथा जैन मन्दिर, रोमन कथोलिक का बड़ा चर्च आदि बने हुए और चारमीनार, मक्कामस्जिद, बागे-आम, हाईकोर्ट, हॉस्पीटल, घुड़दौड़ का मैदान, निजाम का राजमहल आदि प्रमुख दर्शनीय स्थान माने जाते हैं।

यहाँ का रेसीडेन्सी का भाग व्यापार का मुख्य मुहल्ला माना जाता है। उसमें अनेक प्रकार के बाज़ार और बेक है तथा

बाहर की अनेक प्रसिद्ध कम्पनियों की शाखाएँ खुल गई गुजरातियो का अधिकाश भाग इसी मुहल्ले में बसा हुआ है ओर व्यापार-व्यवसाय में तल्लीन है।

मैने हैदराबाद में जब प्रवेश किया तब तो ऐसी कल्पना भी नहीं थी कि भविष्य में मै इसी शहर में स्थिर हो जाऊँगा और यहाँ मेरा स्थायी निवास होगा; परन्तु हमारी कल्पना में नही आनेवाला कार्य भी बहुत-से हो जाते है और इस सम्वन्ध मे भी ऐसा ही हुआ।

मैंने यहाँ की सारी परिस्थिति ठीक तरह से समझ ली, आँकडों का अभ्यास कर लिया और काम में जुट गया। प्रारम्भ में कुछ दिन तो सब नया-नया लगा, किन्तु बाद में अनुकूलता होने लगी और काम आगे बढने लगा। असली बात तो यह है कि कोई भी नया कार्य हाथ मे ले तो हमारा मन उसमें बराबर लगना चाहिये। उसके सम्बन्ध में नया-नया प्रकाश मिलता ही रहता है। जो कार्य हमारे दिल-दिमाग को स्पर्श नही करता, उसमें प्रगति नही हो सकती।

१४

## सेवाग्राम में एक सप्ताह

सन् १९४२ के अगस्त में मै हासम प्रेमजी की कम्पनी के काम से निजाम राज्य में प्रवास कर रहा था, तब मेरे मन में बहुत मन्थन चल रहा था। 'जीवन किस मार्ग पर बहना चाहिये ?' इस सम्बन्ध में मेरी स्थिति दुहरी होगई थी। एक ओर पूज्य गांधीजी के सिद्धान्त आकृष्ट कर रहे थे और दूसरी ओर व्यापार तथा व्यवसाय का सारा भार मुझे उठाना था। कुछ समझ में नही आरहा था कि वस्तुतः मुझे क्या करना चाहिये ?

इस प्रसंग पर मन में यही निश्चय हो गया कि इन दिनों पूज्य गाधीजी सेवाग्राम में विराजमान है, वहाॅ पहुँच जाऊँ तो उनके दर्शन और समागम का लाभ मिलेगा तथा मेरा मन भी हलका हो जाएगा।

यहाँ यह बतलाना भी आवश्यक है कि पूज्य गाँधीजी लन्दन में आयोजित गोलमेज परिषद् मे भाग लेकर जब वापस लौटे, तब बम्बई मे जहाज से उतरते समय उनके दर्शन हुए थे। बाद मे स्वतन्त्रता की चहल-पहल के समय बम्बई के आजाद मैदान में

व्याख्यान के समय दर्शन किये थे, किन्तु वह दूर से और कुछ अस्पष्ट रूप से। उसके बाद जब वे जूहू में ठहरे हुए थे तब वे प्रतिदिन समुद्र के किनारे घूमने जाते थे, तब भी दूर से उन्हें प्रणाम करके कृतार्थता का अनुभव किया था। किन्तु सर्वथा निकट परिचय में आने का अवसर नही आया था। अत. मन में ऐसी इच्छा तो बनी ही रहती थी कि एक बार उनके निकट परिचय में आऊँ तो उत्तम रहे। किन्तु समय आये विना कोई कार्य नही वनता। अव उसका समय आ गया था, इसलिये मन में इस तरह की भावना प्रबलरूप से जगी और मै नांदेड़ से वस पकड़ कर आकोला गया और वहाँ से वर्धा होकर सेवाग्राम पहुँचा। वर्धा से सेवाग्राम लगभग चार मील दूर पर है !

पूज्य गांधीजी ने अहमदाबाद का सत्याग्रह आश्रम छोड़ने के वाद सन् १९३६ मे श्रीजमनालाल वजाज आदि की प्रार्थना पर यहाँ आश्रम आरम्भ किया था और उनका मुख्यत: निवास यही रहता था। उन दिनों आश्रम तथा चरखासंघ के कार्यकर्ता सब मिलकर छोटे-वड़े प्राय: १५० व्यक्ति यहाँ रहते थे और वे आश्रम के नियमानुसार अपना जीवन बिताते थे। श्रीमहादेव-भाई, श्रीप्यारेलाल आदि पूज्य गाँधीजी के शिबिर की व्यवस्था करते थे जव कि गांधीजी के भतीजे श्रीमगनभाई चरखा सघ के पड़ाव की व्यवस्था सम्हालते थे।

जब मैं सेवाग्राम पहुँचा उसी दिन दोपहर मे आश्रमवासी तथा कांग्रेस के करीब ३०० नैष्ठिक सदस्यों की सभा हुई थी। पूज्य गाधीजी उसमे पधारे थे। उन दिनों ब्रह्मदेश का पतन हो

चुका था और श्री सुभाषचन्द्र बोस की आजाद हिन्द सेना भारत को विदेशी पजे से मुक्ति दिलाने के लिये पूर्वी सीमा पर चढ़ाई करेगी, ऐसी बाते चल रही थी। इस से सरकार को भय होगया था कि यदि ऐसा हुआ तो सीमा पर रहनेवाले बंगाली उसमें अवश्य मिल जाएँगे। अत: उन्हें शिथिल बनाने के लिये सरकार ने दमनचक्र चलाना आरम्भ किया और उससे ग्रामवासियों की दशा बहुत ही दयनीय बन गई थी। इस समाचार से गांधीजी को बहुत दुख हुआ और पूरी सभा पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा था। फलत: उसमे जोशीले भाषण हुए थें। उसी समय पूज्य गांधीजी ने 'करो या मरो'—का नारा दिया और व्यक्तिगत सत्याग्रह की अनुमति दी।

शाम को प्रार्थना हुई। उसमें पूज्य गांधीजी ने अपनी अन्तरात्मा की आवाज के अनुसार अत्यन्त वेदनापूर्ण स्वरों में अंग्रेजों को लक्ष्य करके कहा कि—'अब तुम भारत छोड़ दो।' तब से 'क्विट इण्डिया' का नारा चल निकला जिसने आगे चलकर स्वतन्त्रता-संग्राम में बहुत महत्त्वपूर्ण योग्य दिया।

उसके बाद चौथे दिन पूज्य गांधीजी सेवाग्राम आश्रम से विदा हुए उस समय हम सब वर्धा स्टेशन पर उन्हें विदा करने गये थे। तदनन्तर वे बम्बई गये, जहाँ महासभा की अखिल भारतीय स्थायी समिति की बैठक आयोजित हुई थी। वहाँ 'भारत छोड़ो' अर्थात् 'क्विट इण्डिया' का प्रस्ताव पास हुआ और तदनन्तर पूज्य गाधीजी तथा सभी नेताओं को सरकार ने गिरफ्तार कर लिया।

बीच के तीन दिन मुझे उनके साथ प्रतिदिन दो बार प्रार्थना करने तथा घूमने जाने का अवसर मिल गया था। उस समय कुछ सामान्य बाते हुई थी।

आश्रमवासी प्रतिदिन प्रातः साढे चार बजे उठ जाते और स्थ.न स्वच्छ करने, धान्य पीसने, खेतों में जाकर ईधन तथा कण्डे ले आने आदि कामो में लग जाते। ठीक पाँच बजे प्रार्थना होती, उसमे सभी आश्रमवासी अवश्य उपस्थित रहते और पूज्य गांधीजी भी उपस्थित रहते। वे प्रार्थना के बाद कुछ न कुछ प्रवचन करते जिससे आश्रमवासियों को आदर्श-जीवन बिताने के लिये उद्‌बोधन मिलता।

इसके बाद नहा-धोकर सभी चरखा कातने के काम मे लग जाते। जिसके हिस्से मे रसोई का काम आता वे रसोई बनाते। प्राय. १२ बजे भोजन होता। भोजन में मिर्च-मसाले के बिना केवल उबाला हुआ शाक तथा ज्वार या बाजरे की बड़ी-बड़ी रोटियाँ परोसी जाती। उनपर घी नही लगाया जाता। शाम को भी ऐसा ही भोजन मिलता। यदा-कदा चावल की खिचड़ी भी बनती, किन्तु बहुत कम। साँझ-सबेरे एक-एक प्याला दूध दिया जाता। यहाँ चाय-कॉफी तो उबलती ही क्यों ? गांधीजी इन दोनो वस्तुओ को हानिकारक मानते थे।

बहुत से लोग समझते है कि ऐसा रूखा-सूखा भोजन किस तरह खाया जा सकता है ? परन्तु मैंने अनुभव किया है कि स्वयं परिश्रम करनेवाले को रूखी-सूखी रोटी भी खूब मीठी

लगती है, जब कि बेकार बैठे हुए लोगों को मेवा-मिठाई में भी स्वाद नहीं आता। मुझे स्वयं यहाँ का भोजन करते हुए तनिक भी अरुचि नहीं हुई थी। क्योंकि यहाँ आकर मैं आश्रमवासियों के समान ही ब्रह्ममुहूर्त में उठ कर शारीरिक श्रम करने लगता, जिससे खूब भूख लगती। भूख तो जैसा भी भोजन मिले मीठा ही लगता है।

शाम को प्रार्थना होती, उसके बाद वाचन आदि होना और नौ बजे शयन की घण्टी बजती।

गांधी जी के सेवाग्राम से रवाना होने के बाद भी मैं तीन दिन वहाँ रहा, और इस प्रकार पूरा एक सप्ताह वहाँ व्यतीत किया था।

यहाँ मैंने श्रीमगन भाई तथा कतिपय अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं के सामने अपनी कठिनाइयों के सम्बन्ध में कुछ चर्चाएँ की। मैंने उनको स्पष्ट बतला दिया कि हरिजन सेवा और खादी प्रचार के प्रति मेरा पूर्ण अनुराग है तथा गांधी जी द्वारा दिये गये उपदेश और अन्य सिद्धान्तों पर भी पूर्ण आदर भाव है। मेरे मन में यही होता है कि अपना समस्त जीवन इसी कार्य में अर्पित कर दूँ, किन्तु दूसरी ओर मेरे परिवार का मुझ पर उत्तरदायित्व है। एक बड़े भाई मस्तिष्क की अस्थिरता का अनुभव कर रहे है, उन्हें सम्हालना है और माता की सेवा करना भी मेरे लिए आवश्यक है। मेरे हाथ में यदि कोई उत्तम व्यवसाय न हो तो मै इन दायित्वों को पूर्ण कर सकने की स्थिति में नही रहूँगा, क्यों कि मुझे स्वावलम्बन से ही जीना है। ऐसी परिस्थिति में मुझे क्या करना अच्छा होगा ?

मेरे इस प्रश्न के उत्तर में कार्यकर्ताओं ने कहा कि 'आपको अपनी परिस्थिति के अनुकूल जो व्यवसाय अथवा कामकाज मिला है, उसे सुखपूर्वक चलाइये। किन्तु प्रवृत्ति सेवा भाव की रखिए। जब भी अवसर मिले तन-मन-धन से सेवा कीजिए। ऐसा करने से आप अपना हित कर सकेंगे और समाज का भी हित कर सकेगे। यदि परिस्थिति के प्रतिकूल जा कर व्यवसाय अथवा काम-काज छोड़ देगे तो जीविका चलाने में बहुत कठिनाइयाँ आयेंगी और उनका प्रभाव आपकी सेवा वृत्ति पर भी पड़ेगा। मान लीजिए कि अभी आप सारा व्यवसाय या कारोबार छोड़ कर यहाँ आजाएँगे अथवा अन्यत्र किसी स्थान पर बैठ जायेगे, पर उसमें आपका मन तल्लीन नही हो सका। अथवा किसी अन्य कारणवश वृत्ति में परिवर्तन हुआ तो गया हुआ व्यवसाय या कारोबार हाथ में वापस नहीं आ सकेगा। ऐसे संयोगों में आपकी स्थिति विपरीत हो जाएगी।

सम्पूर्ण समर्पण तो विरले स्त्री-पुरुष ही कर सकते है। उतनी तैयारी न हो, प्राप्त कर्तव्य मे आनन्द मानना और संयोगों के अनुसार समाज तथा देश की सेवा करते रहना चाहिए।

इस स्पष्टीकरण से मेरे मन को उचित समाधान हुआ और उसका भार हल्का हुआ।

वहाँ से पूज्य विनोवा के दर्शनार्थ सुरग्राम तथा पौनार गया। वहाँ उनके दर्शन हुए और तीन-चार मिनट वात हुई। उस समय वे इन दोनों गाँवों को आदर्श बनाने के लिए कुछ

प्रयोग कर रहे थे। तब मुझे यह ज्ञात नहीं था कि एक दिन उनके निकट-संपर्क में आना पड़ेगा। वहाँ का सारा काम मैं एक मूक प्रेक्षक की भांति देखता रहा, उसका प्रभाव मुझ पर कुल मिला कर अच्छा ही पड़ा।

वहाँ से मै हैदराबाद वापस आया।

१५

# गांधीवाद

मैंने पिछले प्रकरणों में पू गांधी जी तथा उनके विचारों के सम्बन्ध में अनेक बार उल्लेख किया है, तथापि उनकी भावना और विचारों का पाठकों को स्पष्टरूप में परिचय प्राप्त हो--इस दृष्टि से मुख्य रूप से यह प्रकरण लिख रहा हूँ।

पूज्य गांधी जी के मन में जो भावनाएँ रम रही थी उन का प्रतिबिंब उन्हों ने नरसिंह मेहता के निम्नलिखित भजन में दिखला दिया था। इसी से वे कई बार इसका रटन करते और आश्रम की प्रातः कालीन प्रार्थना में भी वह अधिकतर गाया जाता था।

## पूज्य गांधीजी का प्रिय भजन

वैष्णवजन तो तेने कहिये, जे पीड पराई जाणे रे।
पर दु.खे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे ॥१॥

सकल लोकमां सहुने वन्दे, निन्दा न करे केनी रे।
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन धन जननी तेनी रे ॥२॥

समदृष्टि ने तृष्णात्यागी, परस्त्री जेने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे ॥३॥

मोहमाया व्यापे नहिं जेने, दृढ वैराग्य जेना मनमां रे।
रामनामशुं ताली लागी, सकल तीरथ तेना तनमां रे ॥४॥

वणलोभी ने कपट रहित जे, काम क्रोध निवार्या रे।
भणे नरसैयो तेनु दरशन करतां, कुल एकोत्तेर तार्या रे ॥५॥

यह भजन मैंने भी बाल्यकाल से ही कण्ठस्थ कर लिया था। इसमें बात तो वैष्णवजन की है, किन्तु वह किसी भी धर्म-परायण मनुष्य के लिये एक जैसी लागू होती है।

पूज्य गाधी जी ने आश्रम वासियों के लिए नीचे लिखे एकादश व्रत पसन्द किये थे और वे प्रार्थना में रोज बोले जाते थे, जिससे प्रत्येक आश्रमवासी को उसका ध्यान बना रहे। यहाँ उनका संक्षिप्त परिचय देता हूँ।

## एकादश व्रत

१. सत्य—सत्य ही परमेश्वर है। सत्य-आग्रह, सत्य-विचार, सत्य-वाणी और सत्य-कर्म ये सब इसके अङ्ग हैं। जहाँ सत्य है वहीं शुद्ध ज्ञान है, जहाँ शुद्ध ज्ञान है, वहाँ आनन्द ही हो सकता है।

२. अहिंसा—सत्य ही परमेश्वर है। उसके साक्षात्कार का एक मात्र मार्ग अहिंसा है। अहिंसा के बिना सत्य की खोज असम्भव है।

३. **ब्रह्मचर्य**–ब्रह्मचर्य का अर्थ है, ब्रह्म के-सत्य के अन्वेपण की चर्या, अर्थात् उससे सम्बन्ध रखनेवाला आचरण। इस मूल अर्थ में से सर्वेन्द्रिय-संयम का विशेष अर्थ निकलता है। केवल जननेन्द्रिय-संयम का अपूर्ण अर्थ हमें भूल जाना चाहिए।

४. **अस्वाद**–मनुष्य जहाँ तक जिह्वा के रसों को नहीं जीतता है, तब तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन अत्यन्त कठिन है। भोजन केवल शरीर पोषण के लिए ही होता है, स्वाद अथवा भोग के लिए नही।

५. **अस्तेय**–(चोरी न करना)—दूसरे की वस्तु उसकी आज्ञा के बिना ले लेना तो चोरी ही है, परन्तु मनुष्य अपनी कम-स-कम आवश्यकता से आधिक जो कुछ लेता है, वह भी चोरी ही है।

६ **अपरिग्रह**–सच्चे सुधार की निशानी परिग्रह की वृद्धि नही है, अपितु विचार और इच्छापूर्वक परिग्रह कम करना है। जैसे-जैसे परिग्रह कम होता जाता है, वैसे-वैसे सुख और सन्तोष बढ़ता है, सेवा की शक्ति भी बढ़ती है।

७. **अभय**–जो सत्यपरायण रहना चाहता है, वह न तो जाति-बिरादरी स डरे, न सरकार से डरे, और न बीमारी अथवा मृत्यु से न किसी के बुरा मानने से डरे।

८. **अस्पृश्यता निवारण**–छुआ-छूत हिन्दू धर्म का अंग नही है। इतना हीं नही, एक प्रकार की सडाँध है, बहम है, पाप है। अत. इसका निवारण करना प्रत्येक हिन्दू का धर्म है।

९. शरीरश्रम–जिनका शरीर काम करता है, ऐसे स्त्री-पुरुषों को अपने दैनिक सभी काम, जो स्वयं करने योग्य हों, स्वयं कर लेना चाहिये और विना कारण दूसरे की सेवा नहीं लेनी चाहिये। जो स्वयं परिश्रम नही करता उसे खाने का अधिकार ही क्या है ?

१०. सर्वधर्मसमभाव–हम जितना आदर अपने धर्म का करते हैं, उतना ही आदर अन्य धर्म का भी करना चाहिये। जहाँ ऐसी वृत्ति हो वहाँ एक-दूसरे का विरोध उत्पन्न नहीं हो सकता अथवा परधर्मी को अपने धर्म में लाने का प्रयत्न हो नहीं सकता। वल्कि सदा प्रार्थना ही ऐसी करनी चाहिये जो सव धर्मों में प्रविष्ट दोषों को दूर करे।

११ स्वदेशी–अपने आसपास रहने वालों की सेवा में ओत-प्रोत हो जाना ही स्वदेशी-व्रत है। जो निकट रहनेवालों की सेवा को छोडकर दूर रहनेवालों की सेवा करने के लिए दौड़ते है, वे स्वदेशी-व्रत का उल्लङ्घन करते है।

रचनात्मक कार्यक्रम के लिये पू. गांधीजी ने १९ सिद्धान्त प्रस्तुत किये है, उन्हें उनकी ही भाषा में यहाँ उपस्थित करता हूँ।

## रचनात्मक–कार्यक्रम

१. जातीय एकता–एकता का अर्थ केवल राजनैतिक एकता नही है। इसका सच्चा अर्थ है–'हृदय की मित्रता' जो कि

तोड़ने पर भी नही टूटे। ऐसी एकता उत्पन्न करने के लिये सबसे पहली आवश्यकता इस बात की है कि कॉंग्रेस का आदमी तथा किसी भी धर्म का माननेवाला, अपने को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी सभी जाति का समझे।

२ **अस्पृश्यता-निवारण** हरिजनों के सम्बन्ध में प्रत्येक हिन्दू को यह समझना चाहिये कि हरिजनों का काम अपना ही काम है।

३. **मद्यनिषेध**-अफीम, शराब आदि चीजों के दुर्व्यसन में फँसे हुए अपने करोडो भाई-बहनों को भविष्य की सरकार की अनुकम्पा पर अथवा इच्छा पर नही छोड़ा जा सकता है। इस व्यसन के पंजे से उन्हें छुडाने के उपाय ढूढना ही चाहिये।

४ **खादी**-खादी का अर्थ है देश के सभी लोगों की आर्थिक स्वतन्त्रता और समानता का आरम्भ। खादी में जो वस्तुएँ निहित है, उन सब को खादी के साथ अपनाना चाहिये। खादी का एक अर्थ यह भी है कि हममें से प्रत्येक को सम्पूर्ण स्वदेशी की भावना को बढ़ाना और स्थिर बनाना चाहिये।

५. **ग्रामोद्योग**-स्वयं दलना, स्वयं कूटना, स्वयं पटकना, साबुन बनाना, कागज बनाना, दिया सलाइयॉ बनाना, चमड़ा कमाना, तैल निकालना आदि सामाजिक जीवन के लिये आवश्यक और महत्त्वपूर्ण उद्योगों को बढ़ाये बिना ग्रामों की आर्थिक रचना नही हो सकती।

६. **ग्रामों की सफ़ाई**—देश में स्थान-स्थान पर सुन्दर और मनोहर छोटे-छोटे गाँवों के स्थान पर गन्दगी के ढ़ेर जैसे गाँव देखने को मिलते है। हमारा कर्तव्य है कि इन गाँवों को हर प्रकार से सफ़ाई के नमूने के रूप में बनाएँ।

७. **बुनियादी शिक्षा**—बुनियादी शिक्षा हिन्दुस्तान के सभी बालकों को, वे गाँव के रहनेवाले हों अथवा शहरों के, हिन्दुस्तान के सभी श्रेष्ठतत्त्वों के साथ जोड़ देती है। यह शिक्षा बालक के मन और शरीर दोनों का विकास करती है।

८. **प्रौढ शिक्षण**—अपने बड़ी आयु के देशवासियों को मौखिक सीधी बात-चीत द्वारा सच्ची राजनीतिक शिक्षा देना।

९. **नारीसुधार**—स्त्री को अपना साथी मानने के स्थान पर पुरुष ने अपने को उसका स्वामी माना है। कॉंग्रेसवालों का यह प्रमुख कर्तव्य है कि वे गिरी हुई भारतीय महिलाओं का हाथ पकड़कर खड़ा करे।

१०. **आरोग्य के नियमों की शिक्षा**—अन्य देशों की समानता में हमारे देश की अत्यधिक मृत्युसंख्या का प्रमुख कारण गरीबी है- जो कि देशवासियों के शरीर को कुरेद कर खा रही है। परन्तु यदि उन्हें आरोग्य के नियमों का उचित प्रकार का शिक्षण दिया जाय तो उसमें बहुत कमी की जा सकती है। जब बीमार पड़े तब अच्छा होने के लिये अपने साधनों की मर्यादा के अनुसार प्राकृतिक चिकित्सा करनी चाहिए।

११: **प्रान्तीय भाषा**–भारत की महान् भाषाओं का तिरस्कार करने के कारण भारत को जो असीम हानि हुई है उसका हम कोई अनुमान नही लगा सकते है। जब तक जनसाधारण को उसकी बोली में लड़ाई की प्रत्येक सीढ़ी को अच्छे ढंग से नही समझायेंगे तब तक हम किस तरह आशा कर सकते है कि वह उसमें भाग लेगा।

१२. **राष्ट्रभाषा**–समस्त हिन्दुस्तान के साथ व्यवहार करने के लिये हमे भारतीय भाषाओं में से एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे आज अधिक से अधिक मात्रा में लोग जानते और बाकी लोग जिसे शीघ्र सीख सके। वह भाषा हिन्दी ही हो सकती है।

१३ **आर्थिक समानता**–आर्थिक समानता के लिये काम करने का अर्थ यह है कि पूजी और मजदूरो के बीच होनेवाले झगडे को सदा के लिये मिटा देना। यदि धनवान् लोग अपने धन और उसके द्वारा मिलनेवाली सत्ता को स्वय ही स्वेच्छा से छोड दे और सर्वकल्याण के लिये सब के साथ मिलकर काम करने तैयार न हों तो यह समझना चाहिए कि हमारे देश में हिसक और खूनी क्रान्ति हुए बिना नही रहेगी।

१४. **किसान**–स्वराज्य का भवन एक महत्त्वपूर्ण वस्तु है; इसे बनाना अस्सी करोड़ हाथों का काम है। इन निर्माताओं में किसानों की शक्ति सब से बड़ी है। सत्य तो यह है कि स्वराज्य का भवन खड़ा करनेवालों में अधिकांश (८० प्रतिशत)

वे ही लोग हैं, अतः वास्तव में किसान ही कांग्रेस है, ऐसी स्थिति पैदा करनी चाहिए।

१५. **मजदूर**—अहमदाबाद के मजदूर-संघ का उदाहरण समस्त हिन्दुस्तान के लिये अनुकरणीय है, क्यों कि वह विशुद्ध अहिंसा के मूल पर खड़ा है। मेरी चले तो मैं हिन्दुस्तान की सभी मजदूर संस्थाओं का संचालन अहमदाबाद मजदूर-संघ की नीति पर करूँ।

१६. **आदिवासी**—आदिवासियों की सेवा भी रचनात्मक कार्यक्रम का एक अंग है। सारे भारत में आदिवासियो की सख्या दो करोड़ है। उनके लिये कितने ही सेवक काम कर रहे है। तथापि उनकी संख्या पर्याप्त नही है।

१७. **कुष्ठरोगी**—यह एक बदनाम शब्द है। तथापि जो हममें से श्रेष्ठ अथवा आगे बढे हुए है, उनके समान कुष्ठरोगी भी हमारे समाज क अंग है। परन्तु वास्तविकता यह है कि जिन कुष्ठ रोगियो की देखभाल की अधिक आवश्यकता है, उनकी हमारे यहाँ जान-बूझकर उपेक्षा की जाती है।

१८. **विद्यार्थी**—विद्यार्थी भविष्य की आशा है। इन नौजवान स्त्री और पुरुषों मे से ही तो राष्ट्र के भावी नेता तैयार होनेवाले है। विद्यार्थियों को दलबन्दीवाली एक पक्षीय राज-नीति मे कदापि भाग नही लेना चाहिए। उन्हे राजनैतिक हडतालें नही करनी चाहिए। सभी विद्यार्थियो को सेवा के लिये शास्त्रीय पद्धति से कातना चाहिए। अपने पहनने ओढ़ने के लिए सदा खादी का उपयोग करे।

१९. **गोसेवा**–गोरक्षा मुझे बहुत प्रिय है। मुझें कोई पूछे कि हिन्दूधर्म का सबसे बड़ा बाह्य स्वरूप क्या है? तो मैं उसे गोरक्षा बताऊँगा। मुझे वर्षो से दिखाई दे रहा है कि हम यह धर्म भूल गये हैं। संसार में मैं ने ऐसा कोई देश नहीं देखा है जहाँ गोवंश की हिन्दुस्तान जैसी दयनीय दशा है।

गाधीवाद को अधिक स्पष्टता से समझने के लिये नवजीवन कार्यालय–अहमदाबाद से प्रकाशित साहित्य पढ़ना चाहिये।

१६

## व्यवसाय का विकास

सितम्बर माह में मेरे बड़े भाई शामजी भाई की तबीयत अधिक बिगड़ गई। हृदयरोग के आक्रमण बार-बार होने लगे, अत. मैंने देश (कच्छ) में जाकर उनकी सेवा करना उचित समझा। मैं ब्रह्मदेश मे जब वापस आया तब दो मास उनके साथ रहा था और उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा; तभी बम्बई होकर हैदराबाद आया था। किन्तु बाद में तबीयत सुधरने की अपेक्षा बिगड़ने लगी। उपचार भी बहुत किये, किन्तु उसमें सफलता नही मिली थी। किसी ने ठीक ही कहा है कि 'हे मनुष्य ! रोग, जरा और मृत्यु ये तीन महान शत्रु तेरे पीछे लगे हुए है। इसलिये तुझसे बन सके उतना सुकृत कर ले। यदि गफलत में रहा तो पछताएगा।'

मेरे आने के बाद कुछ अच्छा लगने लगा। इसी बीच रायबहादुर सेठ वीरजी डायाभाई का तार मिला कि 'मैंने स्वतन्त्र पेढी आरम्भ की है, तुम्हें दीवाली से उसमें सम्बद्ध होना है, अतः बम्बई आओ।' तीन दिन बाद पुनः वैसा ही तार मिला।

उस समय शामजीभाई ने कहा कि 'अब मेरा स्वास्थ्य कुछ ठीक है ऐसा मुझे लगता है, अतः तू बम्बई जा।' मेरा मन नहीं मानता था, परन्तु उन्होंने बहुत ही आग्रह किया, अतः मैं बम्बई गया और सेठ श्रीवीरजी डायाभाई से मिला। बाद में उनकी सूचना के अनुसार निजाम राज्य का काम करने के लिये हैदराबाद वापस गया। उधर थोड़े ही दिनों में श्रीशामजीभाई के स्वर्गवास के दुःखद समाचार तार द्वारा प्राप्त हुए।

उन्होने संस्कारपूर्ण एवं सेवाभावी जीवन से बहुत ही सुवास फैलाई थी, इसलिये सभी को अत्यन्त दुख हुआ और मुझे तो सबसे अधिक। क्योंकि उन्होंने मुझ पर बहुत उपकार किये थे।

रायबहादुर सेठ वीरजी डायाभाई ने हासम प्रेमजी की कम्पनी से प्रथक् होकर हैदराबाद मे शाह भीमशी डुगरशी के नाम से कार्यारम्भ किया था। इस कम्पनी से सम्वद्ध होने के बाद शीघ्र ही उसकी व्यवस्था का काम मैने हाथ में लिया और भारत के भिन्न-भिन्न भागों में तथा निजाम के ही जिले मे चावल, अनाज, दाले, तिलहन आदि का निर्यात करना आरम्भ किया। इनमे चावल को छोड़ शेष सभी काम मेरे लिये तथा कम्पनी के लिये भी नये थे। नया क्षेत्र, नयी रीति, माल की जात पहचानना, उसकी तेजी-मन्दी समझना, व्यापारी सम्बन्ध वढाना आदि कारणों से मुझे यहाँ बहुत ही परिश्रम करना पड़ता था। मेरे मन मे एक वात पूर्णतया बैठी हुई थी कि 'परिश्रम की रोटी मे जो मजा है, वह अन्य किसी मे नही।'

इस पेढ़ी का काम मेरे उत्तरदायित्व मे आगे बढ़ा और कई बार तो उसे सौ वर्ष की पुरानी पेढ़ी से भी अच्छा काम करके

जो लोग छोटे कामों को तुच्छ समझ कर उनके प्रति उपेक्षाभाव रखते हैं, वे बड़े काम करने की योग्यता प्राप्त नही कर सकते तथा उसके फलस्वरूप प्रगति अथवा विकास नही कर सकते।

धनाढच लोग भी अपने पुत्रों को शिक्षित बनाने के लिये पहले छोटे कार्यो में लगाते हैं, उनका अनुभव पा लेने के बाद ही बड़े काम सौपते हैं। यदि अनुभव के बिना ही बड़े काम सौप दिए जाएँ तो अव्यवस्था और बहुत नुकसान होता है। अकुशल मनुष्यों के हाथ में कार्य-भार आ जाने के कारण पेढियों के उठ जाने के अनेक उदाहरण हमारी आँखों के सामने आते ही रहते हैं।

शाह भीमशी डुगरशी की कम्पनी में काम करते हुए भी लछमनदास गुप्ता बी ए., एल-एल. बी. के साथ मेरा परिचय हुआ और वह मित्रता में परिणत हुआ। ऐसे तो वे बीमा का काम करते थे, किन्तु राज्य के अधिकारी वर्ग में अच्छा मेल-जोल रखते थे और यहाँ के श्रीमन्त व्यापारियों से जान पहचान भी अच्छी थी।

अन्य महत्त्वपूर्ण परिचय सेठ बेंकटलाल बद्रुका से हुआ जो कि रायसाहब रामदयाल गासीराम की पेढ़ी के प्रमुख कार्यकर्ता थे! यह पेढी सौ-सवा सौ वर्ष पुरानी थी और स्टेट बेंक के 'गारण्टीड ब्रोकर' का काम करती थी। श्री बेंकटलाल बद्रुका खादी पहनते, कांग्रेस क कार्यो में भाग लेते और मारवाड़ी समाज में बहुत प्रतिष्ठापूर्ण स्थान रखते थे। बम्बई में वे गोपीलाल
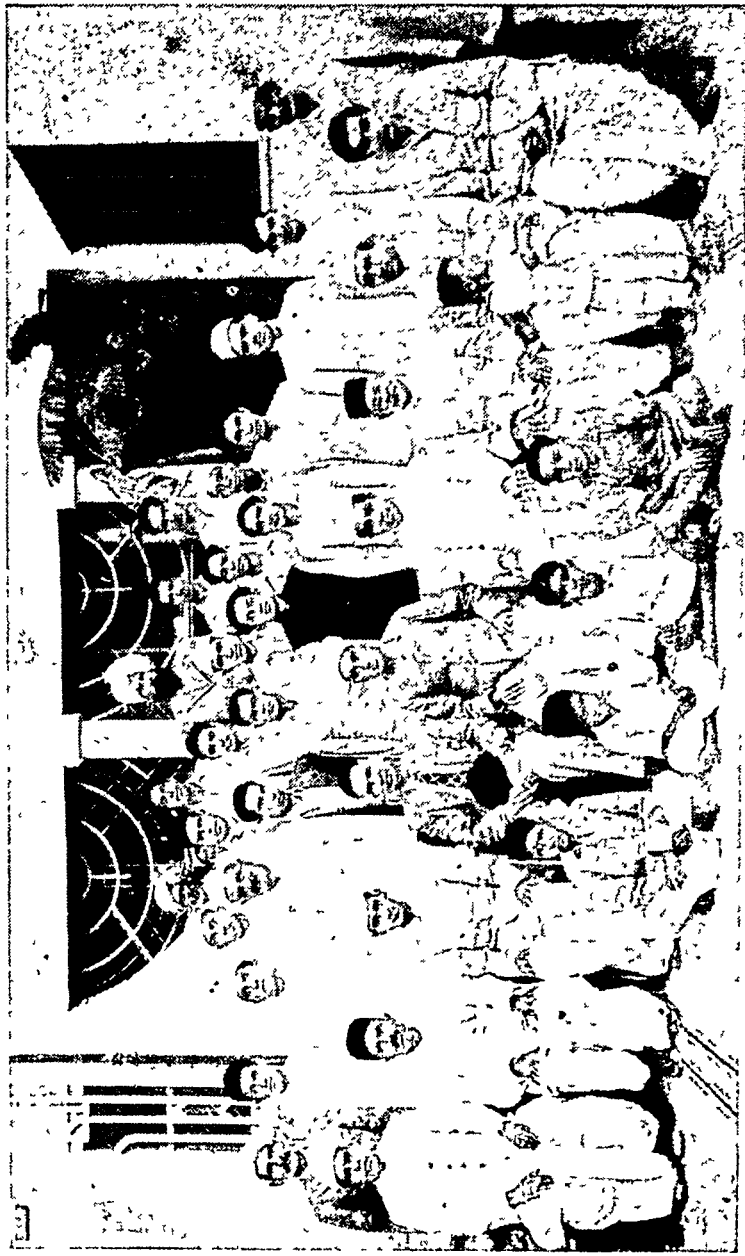
**बद्रुका-कापडिया कंपेनी के कार्यकर्ता वर्ग- १९४८**

बैठे हुए, बाईं ओर से ४ थे, और ५ वें ६ठे क्रमश:-श्री एल. डि. गुप्ता, श्री बंकटलालजी बद्रुका, श्री टोकर्शी लालजी कापडिया.
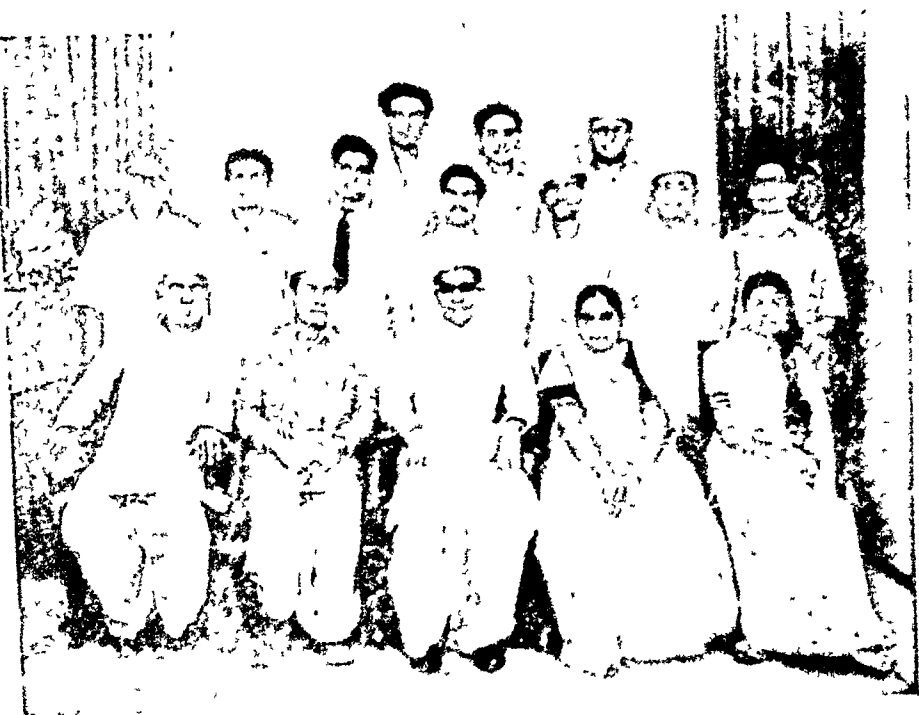
हैदराबाद, बंबई तथा परली की पेढ़ियों के कार्यकर्ताओं के साथ लेखक

बेकटलाल क नाम से अनाज, तिलहन सर्राफी तथा नमक तैयार करने की ज़मीन का काम करते थे।

मेरा सेठ बंकटलाल बद्रुका से बार-बार मिलना होता था; क्योंकि जिस व्यापार में मैं संलग्न था, वैसा ही व्यापार वे भी करते थे। एक बार उन्होंने हमारी पेढ़ी के साथ मिल कर कपास की निकास का बड़ा 'कोटा' लेने का निश्चय किया, किंतु वह कोटा सयोगवश मिल नही पाया। सामाजिक कार्यो के प्रसङ्ग में भी हम अनेक बार मिलते थे। एक बार श्री लच्छमनदास गुप्त ने मुझ से कहा कि यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो सेठ बेकटलाल जी हिस्सेदारी में काम करने को तैयार है। इससे सन् १९४४ को दशहरे के दिन हम तीनो व्यक्तियों ने साझे में 'बद्रुका कम्पनी' के नाम से काम चालू करने का निश्चय किया।

शाह भीमशी डुंगरशी की कम्पनी में मुझे पारिश्रमिक अच्छा मिलता था, किन्तु मै उस कम्पनी का विधिपूर्वक हिस्से दार नही था। इसलिए स्वतत्र हिस्सेदारी का काम मिलने पर, तथा दूसरी शर्ते भी अनुकूल मिलने पर मैने हिस्सेदार के रूप में सम्बद्ध होने का निश्चय कर लिया। यहाँ भी शाह भीमशी डुंगरशी कम्पनी के समान ही व्यवस्था का सारा दायित्व मुझे ही सौपा गया।

इस कारण मैंने शाह भीमशी डुगरशी कम्पनी से पृथक हो कर उसका काम उन्ही को सौंपा। उन्होंने उस कम्पनी का अच्छा विकास किया।

सं. २००१ की कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को श्री बद्रुका कम्पनी का काम प्रारंभ किया गया और वह तेजी से आगे बढ़ने लगा। इस कम्पनी का सारा कार्यभार मुझ पर था, इसलिये खरीदी-बिक्री, आर्थिक स्थिति, नये एजेंटों की नियुक्ति आदि पर मुख्यरूप से ध्यान देना पड़ता था।

श्री गुप्ता सरकार तथा रेल्वे का काम सम्हालते तथा अंग्रेजी पत्र-व्यवहार पर ध्यान देते थे।

श्रीबंकटलाल तो केवल पूंजी लगानेवाले हिस्सेदार थे, अतः उनके सिर पर कोई उत्तरदायित्व नहीं था। वे अपनी इच्छा से पेढ़ी पर आते और सामान्य जानकारी प्राप्त करके सन्तोष व्यक्त करते।

हमने पहले वर्ष में ही अनाज, दालें तथा तेलहन की अच्छी मात्रा में निकासी कर ली और वह काम उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया।

सं. २००४ की कार्तिक शुक्ला १ को श्रीबंकटलालजी बद्रुका के भाई भी इस काम में हिस्सेदार के रूप में सम्मिलित हुए। उस समय कम्पनी का नाम 'बद्रुका कापड़िया कम्पनी' कर दिया गया। अब इस कम्पनी का काम वार्षिक लगभग डेढ़ दो करोड़ रुपये तक पहुँच गया था और हैदराबाद राज्य के सभी स्टेशनों से हमारी कम्पनी का माल बाहरीगाँवों के लिये चढ़ता था।

इस कम्पनी ने माल की बाहरगाँव निकासी करने के अतिरिक्त कुछ तेल की मिले तथा चावल की मिलें भी किराये

पर लेकर चलाने का काम आरम्भ किया था। इस प्रकार ताण्डूर में 'चगोल आइल मिल' घनपुर मे 'घनपुर आइल मिल' आदि चलाई थी किन्तु मुख्य कार्य तो माल बाहर भेजने का ही रखा था।

सं. २००४ में बम्बई में 'मदनलाल धीरजलालनी कम्पनी' के नाम से एक पेढ़ी चालू की गई थी, मदनलाल बंकटलाल सेठ के पुत्र का नाम था और धीरजलाल मेरे पुत्र का नाम था। यह पेढ़ी बम्बई पहुँचने वाले हमारे माल को बेचती थी। लगभग पाँच वर्ष के बाद मैंने स्वतन्त्र रूप से काम आरम्भ करके उस कम्पनी को 'धीरजलाल टोकरशीनी' कम्पनी के नाम पर बदल दिया।

उस समय हमसे सामाजिक कार्य भी अच्छी मात्रा में चलाये जाते थे जिनका परिचय अगले-प्रकरणों में दिया गया है।

१७

## गांधीजी का महाप्रयाण

सन् १९४२ में गांधीजी द्वारा प्रवर्तित 'भारत छोड़ो' सूत्र अन्त में सफल हुआ। अंग्रेजों ने सभी परिस्थितियों का विचार करके सन् १९४७ के अगस्त मास की १४ तारीख की रात्रि को बारह बजे सत्ता के सूत्र नीचे रख दिये। किन्तु कुटिल राजनीतिक प्रवीणता का प्रयोग करके भारत का विभाजन कर दिया और पाकिस्तान खड़ा किया।

दि १५ अगस्त को दिल्ली के लाल किले पर पण्डित जवाहरलाल नेहरू के हाथों तिरंगा झण्डा फहराया गया और भारत ने स्वतन्त्रता का उत्सव मनाया, किन्तु उसका आनन्द अधिक समय तक नहीं रह सका। पाकिस्तान में हिन्दुओं की भयंकर खून खराबी हुई और भारत की सीमा पर स्थित लोगों ने उसके प्रतीकार के रूम में अनेक मुसलमानों की हत्या कर दी।

पूज्य गांधीजी ने जीवन भर जातीय एकता का प्रचार किया था। उनकी ऐसी दृढ मान्यता थी कि स्वराज्य तो आयेगा

ही किन्तु हम में यदि जातीय एकता नहीं होगी, तो हम उस स्वराज्य का लाभ उठा नही पायेगे। भारत का विभाजन हो, यह बात तो उन्हे असह्य ही थी, किन्तु भवितव्यता ऐसी निर्मित हुई थी, अतः अन्ततोगत्वा भारत का विभाजन हुआ और इस प्रकार जातीय विरोध का दावानल भभक उठा।

गांधी जी ने उस दावानल को दबाने की चेष्टा की तो नाथूराम गोडसे नामक एक हिन्दू भाई ने भावावेश मे आकर दिल्ली में उन पर गोली चलाई। इस आकस्मिक आक्रमण से वे बच नही सकते थे। उन्होंने 'हे राम!' कह कर प्राण त्याग दिये।

यह समाचार शीघ्र ही रेडियो द्वारा सर्वत्र फैल गया और देश मे हा हाकार मच गया। जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन देश के चरणो मे अर्पित किया और उसकी स्थायी स्वतन्त्रता के लिए अनेक प्रकार की यातनाएँ सहन की, उसका इतनी जल्दी और इस तरह महा प्रयाण होगा, ऐसी कल्पना तो किसी ने भी नहीं की।

उस समय मैं एक विवाह में भाग लेने बम्बई गया था और भोज में सम्मिलित होने की तैयारी कर रहा था। इतने में मुझे यह समाचार सुनाई दिया। मुझे बिजली से भी अधिक झटका लगा मेरा हृदय शून्य हो गया। कुटुम्ब अथवा संसार के सभी व्यक्तिओं की अपेक्षा गांधी जी का स्थान मेरे हृदय में अधिक उन्नत था।

मैंने शीघ्र ही प्लेन द्वारा दिल्ली पहुँच जाने का विचार किया, जिससे उनकी श्मशान यात्रा में भाग ले सकूँ किन्तु मेरा दुर्भाग्य था कि मुझे प्लेन का टिकट नहीं मिला।

उसी रात्रि में रेडियो पर सारा वृत्तान्त सुना। अन्तःकरण में अत्यन्त व्यथा उत्पन्न हुई। बापू जी ने भारत तथा विश्व को मानवता के साथ निर्भीकता सिखलाई। मेरे व्यक्तिगत जीवन में तो वे महान् प्रेरणात्मक बलस्वरूप थे, तथा आध्यात्मिक जीवन में प्राण सींचते थे। ऐसे प्राणप्रिय बापू जी की विषम विदा के बाद देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य और प्रमुख रूप से उनके निकट संपर्क में आनेवाले तथा उनके प्रति श्रद्धा रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य हो जाता है कि वह बापू जी द्वारा प्रदर्शित मार्ग में कुछ कर दिखावे, उनके अधूरे कार्यो को पूरा करे। बापू जी का शरीर गया, किन्तु वे अमर थे। युग-युग तक भारत एवं विश्व उन्हें नही भूल सकता। पण्डित नेहरू तथा सरदार ने यही सन्देश दिया। मैने पूज्य बापू जी को अन्तर से बार-बार श्रद्धाञ्जलि दी और दुखित मन से हैदराबाद की राह ली।

यहाँ मैं कांग्रेस के सेवक के रूप मे प्रकाश में नही आया था, किन्तु उस प्रवृत्ति मे अपना विनम्र योग देता रहता था। इससे अनेक कार्यकर्ताओ के सम्पर्क मे आया और उनके साथ मित्रता हो गई थी। खादी सम्बन्धी कार्य में श्रीरामकृष्ण जी धूत मेरे खास मित्र हो गये थे।

पूज्य गांधी जी के अस्थिविमर्जन की क्रिया दि. १२-२-४८ को इलाहाबाद के त्रिवेणी संगम पर होने वाली थी, उसमे हम

सब मित्रों ने भाग लेने का निश्चय किया तथा उसके लिए खास प्लेन रिझर्व करा लिया। दि. ११-२-४८ को हम बीस व्यक्ति इलाहाबाद पहुँचे।

उन दिनों उत्तर प्रदेश की राज्यपाल श्री सरोजिनी नायडू थी। उनकी पुत्री लीलामणि भी हमारे साथ ही वायुयान में थी। यहाँ इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि श्री सरोजिनी देवी का निवास स्थान हैदराबाद में ही था और उनके परिवार के लोग यही रहते थे।

उसी दिन शाम को सभी नेता दिल्ली से तथा अन्य स्थानों से विशेष वायुयान से इलाहाबाद आ गये थे। लोगो का तो पूछना ही क्या ? अभी अभी कुम्भमेला पूरा हुआ था उससे भी अधिक भीड़ इकट्ठी हुई थी। लगभग २०–२५ लाख जन समह इस अवसर पर भाग लेने उमड़ा था।

शाम को साढे पाँच बजे हम लोग श्री सरोजिनी देवी से मिलने गये, वहाँ सरदार पटेल से भेट हुई। उन्होंने हैदराबाद के समाचार पूछे। उस समय निजाम राज्य मे रजाकारो का उपद्रव तेजी से चल रहा था।

हम में से प्रत्येक ने हैदराबाद राज्य की स्थिति के बारे में समाचार दिये। उनमें कुछ लोगो का विचार ऐसा था कि भारत सरकार जब आगे बढ़ेगी, तब निजाम राज्य में अधिकमात्रा में परेशानी बढेगी। मैने इस सम्बन्ध मे अपने विचार व्यक्त किये कि निजामराज्य की शक्ति भारत सरकार की तुलना में कुछ भी नही है।

सरदार ने सबका कथन सुन लेने के बाद कहा कि 'हैदराबाद के हिन्दुओं से कहना कि वे घबराएँ नहीं और अपना व्यवसाय छोड़े नहीं। निजाम राज्य तो भारत का उदरभाग है। इस पेट का फोड़ा पक जाने पर मैं उसका सफल आपरेशन (शस्त्र चिकित्सा) करूँगा। उसमें किसी को परेशानी नहीं होगी। तुम सब पूर्ण रूप से साहस रखना।'

दूसरे दिन बापू जी की अस्थि का कलश लेकर स्पेशल ट्रेन आ पहुँची। बापू जी के सभी अन्तेवासी भजन की धुन मचाते हुए उसके साथ ही आये थे।

नेहरू जी, सरदार पटेल तथा अन्य नेताओं ने अस्थिकलश को अपने हाथों से नीचे उतारा और अत्यन्त कलापूर्ण ढंग से तैयार किये गय स्तूप में सजाया। उस स्तूप को उठाकर वे स्टेशन से बाहर लाये और उसे सजाये हुए वाहन पर रखा। वहाँ से त्रिवेणीसंगम की ओर सात मील की यात्रा आरम्भ हुई। वह दृश्य अपने जीवन में मैं कभी नही भूल सकूँगा।

श्रीराम जब वनवास के लिये चले उस समय का वर्णन कवियों ने किया है। उसमें मनुष्य पशुपक्षी तथा वृक्षों को भी अत्यन्त रुदन करते हुए बताया गया है। वह प्रसंग आज मैंने प्रत्यक्ष देखा।

मार्ग के दोनों ओर लोगों की भीड़ जमा थी। मकानों के जाली-झरोखे भी मनुष्यों से खचाखच भरे थे। अरे! मकान के छप्पर और वृक्षों पर भी लोगों ने अपनी बैठकें जमाई थी।

देश विदेश के अनेक व्यक्ति भी इस यात्रा में सम्मिलित हुए थे।

वायुयान आकाश से बार-बार अस्थिकलश पर पुष्पवृष्टि कर रहे थे और सरकारी सैनिक टुकड़ियाँ सैनिक-पद्धति से आखरी सलामी दे रही थी। भजन मण्डलियाँ शान्त मधुर स्वरों में भजन गा रही थी और बीच-बीच में 'महात्मा गांधी की जय' के गगन भेदी नारे लग रहे थे। सभी की आँखों से प्रेमाश्रुओं का प्रवाह बह रहा था।

त्रिवेणीसंगम पर एक सुन्दर कलामय नौका तैयार की गई थी, उस पर अस्थिकलश विराजमान किया गया। देश के नेतागण दूसरी नौकाओं में बैठकर उसके साथ गये और जहाँ गगा, यमुना और अंतर्वाहिनी सरस्वती इन तीनों पवित्र नदियो का संगम था, वहाँ उस अस्थिकलश का विसर्जन किया गया।

देश के नेता किनारे पर वापस लौटे और उन्होने पूज्य गाधी जी को भावपूर्ण श्रद्धाञ्जलियाँ समर्पित कीं। तथा उनके अपूर्ण कार्य को हाथ में लेने का संकल्प किया। साथ ही साथ जनता से भी उसमे पूरा सहयोग देने के लिए निवेदन किया।

तीसरे दिन हम हैदराबाद के लिये रवाना हुए; तब श्री सरोजिनी देवी हवाई अड्डे पर हमें विदा देने आई। उस समय उन्होंने हैदराबाद राज्य के गांधी स्मारक निधि के लिये हम सब को दान देने के लिये कहा। मेरे साथ मुझसे भी अधिक समृद्ध बहुत से मित्र भी थे, अतः मेरे मन में जो भाव उठे उन्हें प्रकट नही किया, किन्तु उसी समय मनमें संकल्प किया कि पूज्य

बापूजी की पुण्य स्मृति के निमित्त उनके द्वारा प्रदर्शित रचनात्मक कार्यों के लिये तन–मन–धन से यथाशक्ति कार्य करूँ और इसके लिये सवा लाख रुपये का व्यय तो अवश्य करूँ। मुझे यह बताते हुए आनन्द होता है कि मेरी इस भावना को पूर्ण करने के प्रसंग थोड़े ही समय में उपस्थित हुए जिनका वर्णन मैंने आने वाले प्रकरणों में किया है।

अस्थिविसर्जन के पश्चात् थोड़े ही समय में हैदराबाद में एक विशाल सभा हुई और उसमें गांधीस्मारक निधि का काम आगे बढ़ाने का निश्चय हुआ। उसमें समस्त राज्य के मन्त्री के रूप में श्री रामकृष्ण जी धूत नियुक्त हुए और शहर समिति के मन्त्रित्व का कार्य मुझे दिया गया।

मैं सब काम छोड़ कर इस काम के पीछे लगा और दूकान-दूकान पर घूमने लगा। उसमे सभी ने अपनी-अपनी श्रद्धा और शक्ति के अनुरूप सहयोग दिया। गरीब और धनवान् सब कोई इस निधि में द्रव्य दें ऐसी मेरी भावना थी, इस लिय सामान्य दूकानदारों के पास जाने में भी मै सङ्कोच नही करता था। जिसने एक रुपया दिया, उसको भी मैने धन्यवाद दिया।

यह काम चार महीने तक तेजी से चला, उसमें आरम्भ के डेढ़ मास में तो रात-दिन भी भेद नहीं देखा था।

इस फण्ड का कार्यालय मेरी दूकान के सामने ही था, अतः मुझे काम करने में अधिक सुविधा हुई थी। ऐसा एक पवित्र काम करते हुए जो आत्मसंतोष हुआ था, उसका वर्णन शब्दों में नही हो सकता।

१८

# रजाकारों की हलचल तथा निजाम राज्य की विमुक्ति

सन् १९०६ में मुसलमानों के हितों की रक्षा करने के लिए 'मुस्लिम लीग' नामक सस्था भारत में स्थापित की गई थी। उसने कुछ वर्षो तक तो राष्ट्रीय महासभा अर्थात् काग्रेस के साथ मिल कर काम किया, किन्तु वाद में उसके मुख्य कार्यकर्ता सारे राष्ट्र की दृष्टि से नही, अपितु अपनी जाति की दृष्टि से विचार करने लगे और देश में जातीय विरोध के विषैले वीज वो दिये गये। पाकिस्तान का विभाजन उसी के निरन्तर आन्दोलन का परिणाम था।

निजाम राज्य में इत्तिहादुल मुस्लमीन नामक संस्था इसी दृष्टि से काम करने लगी थी। उसके अध्यक्ष कासिम रज्वी नामक एक गृहस्थ थे, जो कि लातूर--उस्मानावाद जिले में वकालत करते थे। उनकी वकील के रूप में कीर्ति तो सामान्य कोटि की थी किन्तु जातीय आवेश के कारण वे मुस्लिम समाज मे अग्रणी वन गये थे। उनको किसी वात मे समाधान ठीक नहीं

लगता था, 'लड़ कर लेना' यह उनका निश्चित मत था और उसके लिये चाहे जैसा गुण्डापन करना पड़े उसके लिय भी वे तैयार रहते थे।

सन् १९४६–४७ में इत्तिहादुल मुसल्मीन को यह वात ध्यान में आ गई कि भारत के स्वतंत्र होते ही देशी राज्यों का विलीनीकरण होगा और तदनुसार निजाम राज्य को भी उसमें मिल जाना पड़ेगा। इसलिये उसने स्वतंत्र मुस्लिम राज्य की स्थापना के लिए रजाकार हलचल आरम्भ की। रजाकार का अर्थ है: वह स्वयसेवक, जो मुस्लिम राज्य की किसी न किसी रूप में सेवा करता हो।

इस समय हैदरावाद के निजाम माननीय मीर उसमान अलीखान थे। उन्होने जातीय संकुचित दृष्टि के कारण इत्तिहादुल मुस्लिमीन को राजकीय प्रश्रय दिया और रजाकारों को अपने हितैषी मानकर उन्हें प्रोत्साहन दिया। इससे रजाकार खूब जोश में आ गये और इस प्रकार व्यवहार करने लगे कि मानों राज-सत्ता अपने ही हाथ आगई हो।

मर्कट हो और वह मदिरा पिये, फिर उत्पात मचाने मे क्या शेष रहता है ? यही स्थिति रजाकारों की हुई। वे मदमत्त होकर कांग्रेस को गालियाँ देने लगे तथा उसे सहायता देने वाले हिन्दू समाज को अनेक रूप से सताने लगे। वे लाठी, भाला तलवार और वन्दूक आदि लेकर टोलियों में वाहर निकल पड़ते और मारपीट भी करते। कुछ स्थानों में तो उन्होने आगे वढ़

कर हिन्दुओं का खून भी कर डाला था और उनकी सम्पत्ति लूट ली थी। इससे चारों ओर घबराहट और भय का वातावरण फैल गया था और अनेक हिंदू निजाम राज्य छोड़ कर बाहर चले गये थे।

सन् १९४७ के अगस्त मास में भारत स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् थोडे ही समय में भारत के लौहपुरुष के रूप में ख्याति-प्राप्त सरदार वल्लभभाई पटेल ने ७०० देशी राज्यों के विलीनीकरण का काम हाथ में लिया और उसमें आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की थी। जूनागढ जैसे किसी-किसी रियासत ने उनके समक्ष सिर उठाया था, तो उन्हें या तो रातों रात भागना पडा अथवा जेल के दरवाजे देखने पड़े थे।

अब निजाम का ही प्रश्न शेप रहा गया था। वे भारत के समवायतन्त्र में मिलने को तैयार नही थे। कासिम रजवी तथा अन्य रजाकारों के प्रमुख कार्यकर्ताओ ने उनको ऐसी सलाह दी थी कि अपने पास बहुत बड़ी सेना है और हमारी लड़ने की शक्ति भी बहुत ऊँची है, अतः भारत की सरकार हमारा वाल भी बॉका नही कर सकती। यदि भारत हम पर आक्रमण करेगा तो भारत में स्थित छह करोड़ मुसलमान, पाकिस्तान तथा पोर्चुगल आदि हमारी सहायता करेंगे, अतः भारत की मॉग को स्वीकार न करे। किसी ने ठीक ही कहा है कि 'जब मनुष्य का विनाश होनेवाला हो, तब उसकी बुद्धि विपरीत हो जाती है।'

भारत सरकार निजाम राज्य की परिस्थिति पर सूक्ष्म दृष्टि लगाये हुई थी और वहाँ वस्तुतः क्या चल रहा है? इस के

विश्वस्त समाचार प्राप्त कर रही थी। फलस्वरूप उसने निजाम राज्य में कतिपय सामग्रियों के प्रवेश का निषेध कर दिया। उस आदेश के निकलते ही वस्त्र, औषधि तथा अन्य अनेक वस्तुओं की कमी का अनुभव होने लगा और उन वस्तुओं के भाव बढने लगे। मुझे स्मरण है कि हम उस समय ३०-४० रुपयों मे एक गैलन पेट्रोल प्राप्त करते थे।

उन दिनों निजामराज्य के मुख्यमन्त्री लायकअली नामक व्यक्ति थे। लोग तार द्वारा उनसे प्रार्थना करते थे कि रजाकारों के संकट से हमें बचाओ। व्यापारी मण्डल के सदस्यों के साथ मैं भी उनसे चार-पाँच बार मिला था, किन्तु वे कोई प्रभावोत्पादक मार्ग नहीं निकाल सके थे। सच्ची बात तो यह थी कि वे भी मुस्लिम लीग के समर्थक थे, इसलिये रजाकारों को कठोर शब्दों में कह सकने की स्थिति में नही थे और कदाचित् वे कहते तब भी रजाकार इतने सिर पर चढ़े हुए थे कि वे उनकी बात मानने को तैयार नही होते। सारांश यह है कि निजाम राज्य की परिस्थिति प्रतिदिन बिगड़ रही थी और किसी को अपने जान-माल की सुरक्षा पर विश्वास नही था।

अब मैं अपनी व्यक्तिगत बात कहता हूँ। उस समय 'बद्रुका-कापडिया' कम्पनी का काम विशाल पैमाने पर चल रहा था, इसलिये स्थान-स्थान पर हमारे द्वारा खरीदे गये माल के ढेर पड़े हुए थे। अनुमानतः उसका मूल्य ३० से ३५ लाख रुपये का होगा। यह माल सुरक्षित रहे, रेल में चढ़े, और भारत में पहुँचे तभी इतनी रकम कम्पनी को वसूल हो सकती थी, परन्तु

यहाँ तो 'जो' और 'तो' की कठिनाइयों के विशाल पहाड़ रास्ते में खड हुए थे।

सबसे पहले तो कार्यकर्ताओं की कमी थी, इसलिये प्रदेश के भीतरी भाग में कौन जाए और सुरक्षित रूप से माल को कौन चढाये? इधर बीमा कम्पनी ने भी माल का बीमा करना बन्द कर दिया था। दूसरी बात यह थी कि रेल्वे के वेगन यथासमय नही मिलते थे। पूछने पर 'शोर्टेज' का ही उत्तर मिलता था। माल चढने के बाद भी मालगाडियाँ लूटी नही जाएँगी अथवा उनकी दुर्दशा नही होगी, इसका भी निश्चय नही था।

वस्तुत वह समय हमारे लिये कठिन परीक्षा का था किन्तु हम तनिक भी निराश नही हुए। मैने तो ब्रह्मदेश का युद्ध अपनी आँखों से देखा था और बमबारी के बीच मे भी काम किया था, अत: रजाकारों की लाठी, तलवार अथवा बन्दूकों से किञ्चित् भी नही डरता था।

हमने बडे साहस से काम लिया और माल को रेल में चढाना आरम्भ किया। उस समय भारत से निजाम राज्य में माल नही आता था, किन्तु निजाम राज्य से भारत मे माल भेजने की छूट थी।

एक बार भारत सरकार ने यहाँ से निकास होनेवाले माल पर भी प्रतिबन्ध लगाया था, किन्तु उस समय हम श्रीकन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी से मिले जो कि यहाँ भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में कार्य कर रहे थे। उनको हमने परिचित कराया

कि इस समय डेढ़ दो करोड़ के तिलहन, दालें आदि निजाम राज्य में है, यह सब रकम माल आयात करनेवाले भारतवासियों की है और भारत में इस माल की आवश्यकता भी है। यह सम्भव नही है कि इस रकम का उपयोग भारत के विरुद्ध हो। यह बात मुन्शीजी की समझ में आ गई और उन्होंने निजामराज्य से निकास होनेवाले माल पर से प्रतिबन्ध उठा देने के लिये भारत सरकार से सिफारिश की। उसका परिणाम अच्छा ही निकला। श्रीमुन्शी जी को समझाने में मैने प्रमुख रूप से भाग लिया था, इतना स्पष्ट कहूँ तो मेरा अविनय नही माना जाएगा।

हम छोटी अथवा बड़ी कैसी भी प्रवृत्ति आरम्भ करे, उस-में कुछ न कुछ विघ्न तो आते ही हैं और वे हमारे धैर्य तथा बुद्धिपटुता की परीक्षा करते हैं। यदि हम उससे डर गये तो सारा किया-कराया धूल में मिल जाता है और यदि सफल हुए तो अधिक वेग से विकास होने लगता है। अनुभवी पुरुषों ने कहा है कि 'विघ्नों के द्वारा बार-बार आहत होने पर भी हाथ मे लिये हुए कार्य को जो पूर्ण करता है उसे ही उत्तम पुरुष समझना चाहिए।''

मुझे भारी कारोबार सम्हालने के अतिरिक्त सार्वजनिक कार्यों मे भी अभिरुचि होने के कारण उस दिशा में भी कुछ आव-श्यक कर्तव्य निभाने थे। इस अवसर पर यहाँ के बहुत से कांग्रेसी नेता जेल मे थे और शेष नेता राज्य छोड़ बाहर चले गये थे। वहाँ उन्होने कांग्रेस-नेताओ की एक 'ऐक्शन-कमेटी' बनाई थी जो भारत सरकार का सहयोग पाकर कार्य करने लग गई थी।

श्रीरामकिशनजी धूत, मै और हमारे कुछ साथी कांग्रेस के सक्रिय सदस्य नहीं थे, अतः हम पर गिरफ्तारी के वारण्ट नही निकले थे; अधिक स्पष्ट कहूँ तो हमें गिरफ्तार करने के लिये निजाम सरकार के पास कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं था, अतः हम अपना काम करते जा रहे थे।

इस समय २८ वर्ष के सोयवुल्लाखाँ नामक एक नवयुवक 'इमरोज' नामक एक दैनिक पत्र निकाल रहे थे। इलाहावाद में गाँधी जयन्ती के दिन उनका जन्म हुआ था अतः सभी उन्हे गाँधी कहकर पुकारते थे। वे न्यायपरायण और सत्यप्रिय थे, अतः अपने पत्र में प्रजा की आवाज को यथार्थ रूप में स्थान देते थे, और भारत के साथ निजाम के सम्वद्ध होने की स्पष्ट रूप से पुष्टि करते थ।

श्रीरामकिशन राव ने जो कि निजाम राज्य मे कांग्रेस के अग्रणी नेता थे, अपने यहाँ से एक कमरा दे दिया था, इस प्रकार सोयवुल्लाखाँ को सहारा मिला था। किन्तु वाद मे वे आर्थिक कठिनाई में फँस गये और रजाकारों ने ऐसा षडयत्र रचा कि उनके पत्र के लिये अपेक्षित कागज न मिल सके। उस समय श्रीरामकिशनजी धूत और हमारे कुछ मित्रों ने मिलकर दस हजार रुपये इकट्ठे किये जिससे उन्हे कागज तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ मिलती रहें।

इस प्रकार रजाकार जब 'इमरोज' पत्र को वन्द कराने में असफल रहे, तव उन्होने सोयवुल्लाखां की क्रूरता से हत्या कर

डाली और उनके हाथ, पैर तथा शरीर के अनेक टुकड़े कर दिये। इससे हम सब को अत्यन्त आघात पहुँचा, जिसने भी सुना, उसे असह्य व्यथा हुई।

बाद में हमने सोयबुल्लाखाँ की स्मृति बनाये रखने के लिए उस्मानिया विश्व विद्यालय को वह धनराशि दे दी जिससे सर्वोत्तम पत्रकार को प्रतिवर्ष उनके नाम से एक पदक दिया जाता रहे। इस व्यवस्था के अनुसार प्रतिवर्ष एक उत्तम पत्रकार को नियमित रूप से पदक दिया जाता है।

उनकी धर्मपत्नी तथा दो बालकों को बाद में भारत सरकार की ओर से नियमित मासिक सहायता मिलने लगी थी, उससे पूर्व हमने कुछ मित्रों से चन्दा इकट्ठा करके उनकी कुछ सहायता की थी।

निजाम राज्य से बाहर जो 'ऍक्शन' कमिटि बनी थी, उसके अध्यक्ष श्रीदिगम्बरराव बिन्दु थे। मैं उनकी यथाशक्ति सहायता करता था और आवश्यक समाचार भी पहुँचाता था। इसके अतिरिक्त जो नेता सीमा पर रहते थे और जिनके साथ स्वय सेवको के जत्थे थे, उनके क्षेमकुशल की भी चिन्ता करता था। यह व्यवस्था मैं जब दो-चार दिन के लिये बम्बई जाता था, तब वहाँ से स्वतन्त्ररूप से होती थी।

यहाँ मुझे इतना और स्पष्ट कर देना चाहिए कि जिस प्रकार शक्ति, साहस तथा कुशलता के कारण मेरे व्यवसाय का विकास हो रहा था, उसी प्रकार सार्वजनिक कार्यो में निःस्वार्थ

भाव से शक्ति भर सहयोग देने की प्रवृत्ति के कारण कांग्रेस के अग्रणी नेताओं के साथ मेरे सम्बन्धों का विकास भी हो रहा था ।

सरदार पटेल को जब ऐसा लगा कि अब फोड़ा पक गया है, तो उसकी शल्यक्रिया करने के लिये तैयार हुए और उन्होंने दि. १७–९'–४८ को 'पोलिस ऍक्शन' सैनिक कार्यवाही आरम्भ की ।

भारतीय सैनिक, टैंक तथा विमानों ने निजामराज्य में पाँच स्थानो से प्रवेश किया । निजाम की सेना तथा रजाकारों ने उनका सामना किया, किन्तु 'कहाँ राजा भोज और कहाँ भोजुआ तेली ?' भारत के शक्तिसम्पन्न तथा प्रशिक्षित सैनिक और उनकी विशाल शस्त्रास्त्रों के समक्ष इनकी क्या चल सकती थी ? केवल तीन दिनों में ही इनका सामना टूट गया और निजाम ने शरणागति स्वीकृत की । इसके वाद कुछ दिन जिलो में यत्र-तत्र लड़ाई चालू रही थी, किन्तु उसका कोई महत्त्व नही था । इस युद्ध में वहुत से रजाकार मारे गये अथवा भाग खडे हुए । मिथ्या साम्प्रदायिक मोह तथा अविचारित कार्य करने का अन्तिम परिणाम क्या होता है, यह इससे समझा जा सकता है ।

निजाम राज्य में सैनिक कार्यवाही होने के चार दिन पूर्व मैं वम्बई गया था, इसलिये यहाँ की परिस्थिति के सम्वन्ध में चिन्ता थी, उसमें भी अनेक प्रकार की अफवाहे आती थी, इस लियें मन में चिन्ता वनी रही । किन्तु हृदय में इतना विश्वास

अवश्य था कि सरदार पटेल केसरी सिंह हैं, उनका पंजा कभी खाली नहीं जायेगा। वे इस युद्ध में अवश्य विजय प्राप्त करेंगे, और निजाम की बुद्धि ठिकाने ले आएँगे।

सैनिक कार्यवाही समाप्त हुई; तब से प्रतिदिन मैं श्रीमती लीलावती मुन्शी को उनके निवास स्थान पर टेलीफोन करता और वे मुझे हैदराबाद के ताजा समाचार देती। वे जब हैदराबाद में रहती थी तब उनके साथ तथा उनके कुटुम्बियों के साथ मेरा अच्छा परिचय हो गया था।

निजाम की शरणागति के बाद सरदार पटेल ने श्रीमती लीलावती मुन्शी तथा उनके परिवार को विशेष विमान द्वारा हैदराबाद जाने की अनुमति दी और श्रीलीलावती मुन्शी ने उसी विमान में मुझे भी साथ आने का आमन्त्रण दिया। इस आमन्त्रण से मुझे पर्याप्त आनन्द हुआ और मैंने विमानयात्रा की तैयारी की। उस समय कुछ पुष्पहार तथा कुछ पुष्प भी साथ ले लिये थे।

अभी जिलों में लड़ाई चल रही थी, और इस विमान का मार्ग निरापद बनाने के लिये सेना के अधिकारियों को मुख्यरूप से सूचना दी गई थी और इस व्यवस्था के कारण हमारा विमान दो घण्टे विलम्ब से उड़ा था।

मैंने विमान द्वारा अनेक प्रयाण किये हैं, किन्तु इस प्रयाण में जिस आनन्द और उल्लास का अनुभव किया, वह और किसी में नहीं किया था।

बम्बई में मैंने सुना था कि मुन्शी जी को सैनिक कार्यवाही के अवसर पर निजाम सरकार ने गिरफ्तार कर लिया और उन पर अत्याचार किया, और जब उन्हे गिरफ्तार किया गया तब उन्हें बुखार था। मुन्शी जी ने भारत सरकार के दूत के रूप मे वरमाला पहनी और इस विजय से सम्बन्धित अपूर्व दृश्य देखने मे आये।

जब हम हैदराबाद मे उतरे तब हवाई अड्डा सुनसान था, क्यों कि भारतीय सेना अभी हैदराबाद में नही पहुँची थी। अब से ३–३।। घण्टे बाद सेना प्रविष्ट होने वाली थी। किन्तु युद्ध के प्रभाव मे हमारा सत्कार हुआ। वहाँ से हम बोलारम दक्षिण-सदन मे गये जहाँ मुन्शी जी का भारत सरकार के एजेंट के रूप में आवास स्थान था। हैदराबाद स्टट कांग्रस के अध्यक्ष स्वामी रामानन्द तीर्थ उसी दिन जेल से छूट कर आये थे, वे भी वही थे। हमने उनका पुष्पहारों से स्वागत कर हृदय से अभिनन्दन किया।

उसके बाद मै मुन्शी जी की ही मोटर लेकर अपनी आफिस जाने के लिये निकला। उस समय दोपहर को ३ बजने वाले थे और मोटर मे मै अकेला ही था। उस मोटर पर मुन्शीजी का भारत झण्डा लहरा रहा था। इसी समय भारत की सेना का शहर मे प्रवेश निश्चित था, अतः रास्ते के दोनों ओर लोगों की भारी भीड़ लगी हुई थी। उन्होंने समझा कि दिल्ली से किसी नेता का इस प्रसग पर आगमन हुआ है, (मेरा पहनावा राष्ट्रीय था इससे भी कोई नेता समझा जा सकता था ) और वे यहाँ से

गुजर रहे हैं। इस भूम के कारण लोग 'भारत माता की जय' का नाद करने लगे और मेरी मोटरकार पर फूलों की वर्षा करने लगे। मैं तो बिल्कुल छोटा आदमी ठहरा, मेरा इस प्रकार स्वागत हो नही सकता, किन्तु संयोग ऐसा ही हुआ कि ऐतिहासिक प्रवेश महोत्सव के समय मेरा भी इस प्रकार सुन्दर स्वागत हुआ।

ऑफिस पहुँचने के बाद में सिकन्दराबाद जाने के लिए रवाना हुआ जहाँ से भारतसरकार की सेना का प्रवेश होने वाला था। मैंने बंबई से अपने साथ लाये हुए फूल के करंडियों का इस अवसर पर उपयोग किया। लगभग तीन चार मील तक के रास्ते में मैं पुष्प बिखेरता गया।

प्राय ३-३० बजे लम्बी-लम्बी कतारो में भारतसरकार की विजयी सेना शस्त्रास्त्र सहित सिकन्दराबाद मे प्रविष्ट हुई, उस समय जनता ने जो हर्षनाद किया जो पुष्प वर्षा की तथा उल्लासपूर्ण दृश्य उपस्थित किये वे कदापि भूले नही जा सकेंगे। आज भी मेरे स्मृतिपट पर वे सभी दृश्य यथावत् अङ्कित हैं।

१९

# किसान सम्मेलन तथा गांधी विद्यालय

भारत कृषिप्रधान देश होने पर भी विदेशी शासन ने कृषि के विषय मे उपेक्षा ही दिखाई, आवश्यक लक्ष्य नहीं दिया। स्वतंत्र होने के बाद देश की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए आयोग बिठा कर विचार किया गया। कच्छ मे मुदरा तहसील के किसानों के प्रश्नों पर राज्य का ध्यान आकर्षित करने तथा कृषि सम्बन्धी सुधारो की चर्चा करने के लिए एक कच्छ-प्रदेशीय किसान सम्मेलन करने का विचार कुछ मित्रो ने किया।

यह सम्मेलन कहाँ किया जाय ? इसके सम्बन्ध मे निर्णय करने के लिए मै कच्छ मे गया, तब मुदरा के डाक्टर श्रीवाघजी भाई सोलकी के साथ चर्चा हुई। हम दोनों ने कृषि के विकास के लिए यहा ट्रेक्टर रखकर नवीन पद्धति से खेती करने का निश्चय किया। बाद मे डा० खीमजी भाई धरोड़ भी इस विचार से सहमत हो गये और हम तीनों ने मिल कर 'कच्छ खेती विकास कम्पनी' के नाम से कार्य आरम्भ किया।

इन दिनों कच्छ कांग्रेस के अध्यक्ष श्रीभवानजी अरजण खीमजी थे, उनके शुभ हस्त से मुंदरा शहर के एक प्लेन में कंपनी का उद्घाटन करवाया और समस्त जनता के सामने ही वह ट्रैक्टर चालू किया गया। इस प्रयोग के समय कृषि सुधार के जो विचार मन में उठते उन्हें हम कच्छ तथा भारत की जनता के समक्ष रखना चाहते थे। इस प्रकार किसान सम्मेलन को मूर्तरूप दिया गया और तभी मैंने उक्त सम्मेलन पत्री में करने का आमन्त्रण दिया। तदनन्तर उसके लिये विधिवत् समितियों का सगठन हुआ और उन्होंने स्वागताध्यक्ष के रूप में मुझे चुना।

यहाँ इतना स्पष्ट कर दूं कि मुंदरा तथा पत्री गांवो में ट्रैक्टर से किसानों की जमीन जोती गई और उसमें ड्योढी उपज हुई फिर भी ट्रैक्टर का विशेष उपयोग यहाँ नहीं चला। बाद को उस मार्शल ४० हार्स पावर ट्रैक्टर को मैंने बोधन में 'भारत कृषि कम्पनी लि०' के लिये मँगवा लिया था। बोधन का विशेष विवरण इक्कीसवे प्रकरण में दिया गया है।

किसान सम्मेलन के अध्यक्ष का गौरवपद समाघोघानिवासी रायबहादुर सेठ श्रीवीरजी डायाभाई को दिया गया। श्रीशिवजी नथुभाई छेड़ा, श्री खीमजी जेवत धरोड, जाड़ेजा रघुवीरसिंह भगवत सिंह, डॉ. वाघजीभाई सोलंकी तथा श्रीमार्कण्डराय महेता इनको मंत्रिमडल के लिए चुना गया। ये सब समाज के चुने हुए कार्यकर्ता थे और लोकप्रियता प्राप्त कर चुके थे।

मैंने पहले गांव के बीच जो जमीन खरीद रखी थी, उसके पास में सम्मेलन आयोजित किया गया। उसका उद्घाटन उस
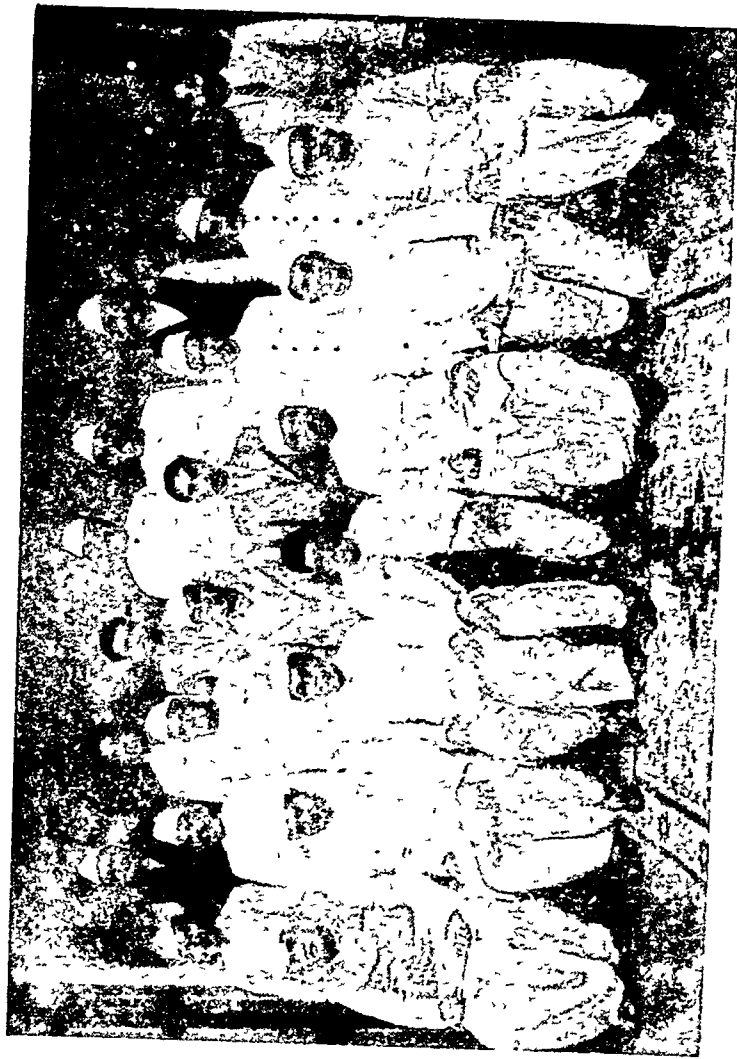
श्री पत्री सर्वोदय समाज, कच्छ, के कार्यकर्ताओं के साथ लेखक १९४९–५०
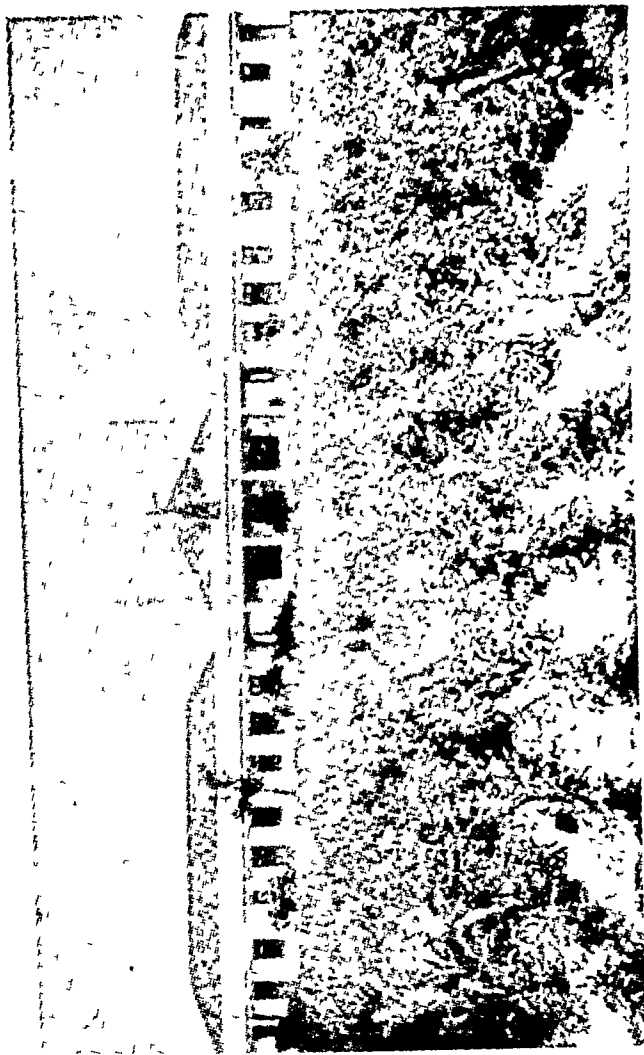
श्री गान्धी विद्यालय, पत्री, कच्छ का मनोहर दृश्य

समय गुजरात कांग्रेस के अध्यक्ष श्रीकन्हैयालाल देसाई के वरद हस्त से करवाया गया। उनका तथा सम्मेलन के अध्यक्ष सेठ श्रीवीरजी डायाभाई का स्वागत बहुत ही धूमधाम से किया गया। इस अवसर पर पधारे हुए समस्त मेहमानों की सेवा-शुश्रूषा का प्रबंध 'पत्री वीशा ओसवाल हितवर्धक समाज' तथा गाँव के महाजनों ने बडे उत्साह से किया।

इस सम्मेलन का कार्य दो-तीन दिन तक चला। उसमें मैंने 'जो बोये उसी की जमीन' का प्रस्ताव रखा था। उस पर खूब गरमागरम बहस हुई थी। सारी रात भाषण होने के बाद सबेरे के पाँच बजे वह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था।

इस अवसर पर आसपास के गाँवों से बहुत-से ओसवाल बन्धु आये थे, अतः मेरी माता जी की ऐसी इच्छा हुई कि 'हम अपनी ओर से इन सभी धर्मबन्धुओं को भोजन कराएँ' तब मैंने कहा कि 'हम ७००–८०० धर्मबन्धुओं को भोजन कराएँ इसकी अपेक्षा सभी की मेहमानी करे तो क्या बुरा है? ये भी हमारे भाई ही है?' और तब सम्मेलन की समाप्ति के दिन ग्रामवासी, हरिजन तथा सम्मेलन के भाइयो को कुल मिलाकर ४००० मनुष्यों के लिए प्रीतिभोज का प्रबंध किया गया। इससे मेरी माताजी हमारे अन्य कुटुम्बी जनों को वहुत संतोष हुआ।

कुल मिलाकर यह किसान सम्मेलन सफल हुआ और पारस्परिक भाईचारा बढाने में उपयोगी सिद्ध हुआ। इसके साथ ही पत्री का नाम कच्छ से वाहर भी उज्ज्वल हुआ।

यहाँ दूसरी बात यह भी कह दूँ कि पूज्य गांधीजी की पुण्य स्मृति के निमित्त मैंने जो रकम व्यय करने का सङ्कल्प किया था, उसे शीघ्रता से पूर्ण करने का निश्चय किया। कल कैसा होगा, इसकी किसको खबर ? यदि शरीर अस्वस्थ हुआ, संयोग बदल गये अथवा अन्य कोई कठिनाई उपस्थित होगई तो मन की मन में ही रह जाए। आज का काम कल पर छोड़ देना, यह वस्तुत: एक प्रकार की भूल है; क्यों कि उसमें अतर्कित एवं अकल्पित अनेक कठिनाइयों का आ जाना सम्भव है और उनके कारण जिस रूप में कार्य को सम्पन्न करने का विचार किया होता है उस रूप में वह नही हो पाता, अथवा संकल्प ही छोड़ देना पड़ता है।

साथ ही द्रव्य खर्च करना हो तो उसे सोच-विचार कर खर्च करना चाहिये, ऐसा मेरा आग्रह था, अतः उस सम्बन्ध में सोच-विचार बहुत किया गया। शिवरामपल्ली में सर्वोदय ट्रस्ट स्थापित करने तथा ग्राम सेवा केन्द्र स्थापित करने का पूज्य विनोबाजी की प्रेरणा से मैं निर्णय कर चुका था। (इसका विवरण अगले प्रकरण में दिया गया है।) इसके अतिरिक्त मेरी दृष्टि जन्मभूमि पर भी पड़ी जहाँ बाल्यावस्था में मैंने अनेक प्रकार के सपने सँजोये थे। वहाँ १९२९ में 'श्री पत्री वीसा ओसवाल हितवर्धक समाज' के नाम से एक संस्था स्थापित हो चुकी थी, जहाँ बीमारों की सेवा, पुस्तकालय, विनयमन्दिर आदि सेवा-कार्य चलते थे। उसमें विनयमन्दिर के लिये पर्याप्त स्थान नहीं था, तथा आर्थिक कठिनाई के कारण उसका अपेक्षानुकूल विकास भी नही हो रहा था। इसलिये मैंने उक्त समाज को सूचित किया

कि "यदि आप इस समाज का जातीय स्वरूप बदल कर उसे 'श्री पत्री सर्वोदय समाज' के नाम से सार्वजनिक संस्था बनाएँ और उसमें समस्त जातियों के मनुष्यों को सदस्य वनने की सुविधा दे ओर यदि विनयमन्दिर का नाम बदल कर उसे 'गाधी विद्यालय' नाम दे और उसमें हरिजन बालकों को भी प्रविष्ट करे तो मैं अपनी विनम्र सेवा के साथ आर्थिक सहायता करने को तैयार हूँ।"

ये शर्ते एक सांप्रदायिक संस्था के सभी कार्यकर्ताओं को मान्य तो हो नही सकती, यह स्पष्ट है। परन्तु मैंने प्रत्यक्ष में उन सदस्यों को समझाया कि "अब हम अपनी सेवा सारे गॉव को लक्ष्य में रखकर करेगे तो वह अधिक उज्ज्वल बन सकेगी। मैं प्रारम्भ से ही इस मण्डल के साथ हूँ, इसमें मेरी कोई व्यक्तिगत शर्त नहीं है। दस हजार रुपये देनेवाले दाता का नाम इस शाला के साथ लगाने की घोषणा तो मण्डल ने पहले से ही कर रखी है, तथापि मैं अपना नाम उसके साथ जोड़ना नही चाहता अथवा मेरा किसी प्रकार का व्यक्तिगत प्रभाव रहे ऐसी शर्त भी मै रख नही रहा हूँ। मेरी भावना तो केवल इतनी ही है कि पूज्य गाँधी जी के सिद्धान्तों के अनुसार हमें जीवन विताने की प्रेरणा इस संस्था से मिलती रहे। पूरे गॉव का भला हो, इस तरह हम काम करे।"

इतना समझाने के पश्चात् मेरी शर्ते सर्वसम्मति से स्वीकृत हुई और सं. २००६ की कार्तिक शुक्ला अमावस्या (दि. २०-११-'४९) के दिन से पूज्य गाँधीजी द्वारा प्रतिपादित सर्वोदय

मार्ग को अपना कर उस संस्था ने अपना कायापलट कर लिया। तब से 'श्री पत्री सर्वोदय समाज' काम करने लगा।

इस संस्था को तीन-चार किश्तो में मैने लगभग ५३०००) रुपयों का दान दिया था। गाँव के निकट ही मेरी १६ एकड़ की जो जमीन थी, उसमें एक भाग उस समय के कांग्रेस प्रमुख श्री गुलावशङ्कर घोलकिया की अध्यक्षता में आयोजित एक सभा में विधिपूर्वक अर्पित किया। 'पत्री सर्वोदय समाज' की विधिपूर्वक प्रतिष्ठा करके सभी पत्री निवासी जनों को सदस्य बनाया। इस प्रकार मेरे प्रयत्न से गॉव की सांप्रदायिक सस्था ने सर्वोदय का सार्वजनिक रूप धारण किया और उसकी पाठशाला में हरिजन बालकों को प्रवेश मिल गया। यह उदाहरण कच्छ-गुजरात में सर्वप्रथम था।

इस संस्था के कार्यकर्ताओं का मैंने समय-समय पर अपने विचारो से अवगत कराया और उनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि हम केवल धन का दान देनेवाले दाताओ को ही सम्मान न दे वल्कि जो तन ओर मन से सस्था का काम करते है, उनको भी उतना ही सम्मान और महत्त्व दें। कोई पेट को महत्त्व दे और हाथ पैरों की उपेक्षा करे तो उसका शरीर कैसा लगेगा ? अथवा कोई माली बड़े-बड़े वृक्षों पर ही दृष्टि रखे और छोटे पोधे ओर लताओ की अवहेलना करे तो बगीचे की दशा कैसी हो ?

इसके वाद लोगो में बहुत उत्साह जगा, उन्होने ७५००० रुपये लाटरी, नाटक तथा दाताओं के दान से प्राप्त किये। आज

पत्री का 'गांधी विद्यालय' कच्छ के गाँवों में सबसे अधिक विशाल और भव्य भवनवाला है। उसका उद्‌घाटन बाद में गुजरात के महान् लोक सेवक श्री रविशंकर महाराज के करकमलों से हुआ था। उस समय की स्थिति कुछ इस प्रकार की थीं—

दृष्टि के समक्ष है सर्वोदय की भावना,
भ्रातृभाव की वृद्धि है जिसका ध्येय।
जात पॉत या धर्मभाव का भेद न कर,
सकल मनुज का सदा प्रेम से साधे श्रेय॥

× × × ×

बापू दर्शित पथ पर सर्वजन हो जहाँ गतिमान,
सवर्ण अन्त्यज भी बन जाएँ अब मिलकर मित्र समान।
सर्वोदय सिद्धान्तों का लेकर मंगल आलम्बन,
मेलजोल से आपस के हम लाएँ सुराज्य को महिमान॥

गांधी विद्यालय के साथ ही अशोकवाड़ी है। उसकी जमीन भी मैंने भेट में दे दी। समाज ने इस भूमि पर खेती-बाड़ी करना आरम्भ किया। सं. २००६ में उसका नामकरण उस समय के कच्छ जिलाधीश श्रीतुलसीदास सेठ के हाथों करवाया गया।

'गांधीविद्यालय' को पत्री सर्वोदय समाज चलाता था। बाद को सरकार खेती-बाड़ी की भूमि के साथ एक हाईस्कूल कच्छ के गाँवों को देने का निश्चय किया। उसकी सूचना मिलते ही हमने सरकार को लिखकर बतलाया कि 'यदि आप गांधी विद्यालय के

नाम से ही हाईस्कूल चलाये तो हम गाधी विद्यालय का विशाल भवन अशोकवाड़ी के साथ आपको देने के लिये तैयार हैं।'

परन्तु सरकार ने प्रश्न उठाया कि—'पत्री गाँव छोटा है, इसलिये हाई स्कूल के लिये उच्च वर्ग के बालक पर्याप्त संख्या में नहीं मिल पाएँगे। ऐसी स्थिति मे उसे हाईस्कूल कैसे दिया जाए ? दूसरे गाँवों ने भी इस सम्बन्ध मे माँग की है, अतः सरकार इस सम्बन्ध मे विचार करेगी।'

इतना होने पर भी हमने अपनी माँग चालू रखी और विशेपरूप से गाँधी विद्यालय के पास में विशाल भूमि पर छात्रा-वास आरम्भ करने की भी स्वीकृति दी, जिससे वाहर गाँव के विद्यार्थी भी वहाँ पढ़ने के लिए आ सके। हमारी इस माँग को स्वीकृत करने के लिए तत्कालीन कच्छ राज्य के सलाहकार श्री प्रेमजी भाई भवानजी ठक्कर तथा श्री जमियत रामभाई ने खास सिफारिश की और उसके बाद उसकी व्यवस्था का भार सरकार ने उठाया।

वाद में जनता ने वहुत परिश्रम करके १४०,००० एक लाख चालीस हजार रुपये के व्यय से छात्रालय बनवाया, इस कार्य में मैंने भी सहयोग दिया और अपनी वाड़ी में से थोड़ी जमीन भी दे दी।

इस विद्यालय में सभी जाति के बालकों को जीवन विकास के अच्छे संस्कार मिलते है, और पत्री गाँव शिक्षा का केन्द्र वन जाने पर उसका विकास और भी अच्छी तरह हो रहा है।

२०

## शिवरामपल्ली में ग्रामसेवा केन्द्र

१९४८ में पूज्य विनोबा हैदराबाद आये। उनका निवास प्रतापगिरि कोठी में रखा गया जो कि मेरी पेढी के सामने ही था। इस लिए उनके दर्शन-समागम का मुझे ठीक-ठीक लाभ मिला, इतना ही नही अपितु उनके साथ जो बारह-पन्द्रह साथी थे, उनका आतिथ्य करने का अवसर भी मुझे प्राप्त हुआ।

हैदराबाद में सैनिक कार्यवाही के पश्चात् गाँवों के मुस्लिमो की ओर से ऐसी शिकायते आती थी, कि हमें अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। इसलिए पूज्य विनोबा जी प्रतिदिन प्रातः मोटरकार से घूमने जाते और दस-पन्द्रह मील की यात्रा करके गाँवों का परिचय प्राप्त करते। 'कानो से सुनी और आँखों से देखी' हुई में बडा अन्तर होता है। अतः किसी भी बात की प्रामाणिक जानकारी लेनी हो तो स्वयं जाकर खोज-बीन करना चाहिए और बात की गहराई में उतरना चाहिए।

वहाँ से लौटते समय वे प्राय: पाँच-छ मील पैदल चलते। इस प्रवास में कई बार मैं भी साथ जाता। इस प्रकार पूज्य विनोबा के साथ मेरा सम्पर्क बढ़ा और उनके कार्य के प्रति मेरे मन में बड़ा आदर उत्पन्न हुआ।

हैदराबाद में कार्यकर्ताओं से श्री विनोवा ने कहा कि 'तुम शहर छोड़ कर गाँवों में जाओ और वहाँ रचनात्मक कार्य करो' उस समय मैंने प्रस्ताव रखा कि 'यहाँ के किसी पास वाले गाँव में इसी कार्य के लिए एक आश्रम की स्थापना की जाये तो मैं आवश्यक आर्थिक सहायता करने को तैयार हूँ।'

यह काम श्री रामकृष्ण जी धूत ने अपने हाथों में लिया। वे पच्चीस वर्ष से अपना व्यवसाय छोड़कर सेवा के कार्य में लगे हुए थे और स्टेट कांग्रेस के मुख्य मंत्री के रूप मे बीस वर्ष पूर्व जेल की यात्रा भी कर चुके थे। उनकी रचनात्मक कार्य में विशेष प्रीति थी, अत: वे खादी-केंन्द्रों का काम सम्हालते थे।

उन्होंने कहा कि 'यदि इस कार्य के लिए आश्रम की स्थापना की जाती हो तो उसका उत्तरदायित्व मैं सम्हाल लूंगा।'

इसी समय मैंने अपनी 'बद्रुका-कापड़िया' कम्पनी की ओर से ३०००० तीस हजार रुपये इस कार्य के लिये देने की इच्छा प्रकट की और तत्सम्बन्धी आवश्यक ट्रस्ट रजिस्टर्ड करा कर श्रीरामकृष्ण जी धूत को मेनेजिंग ट्रस्टी के रूप में सत्ता सौंप दी। इस प्रसंग के अनुसन्धान में कार्यकर्ताओं ने कहा कि दान देने वाले दाता का नाम संस्था के साथ जोड़ने में कोई हानि नहीं है,
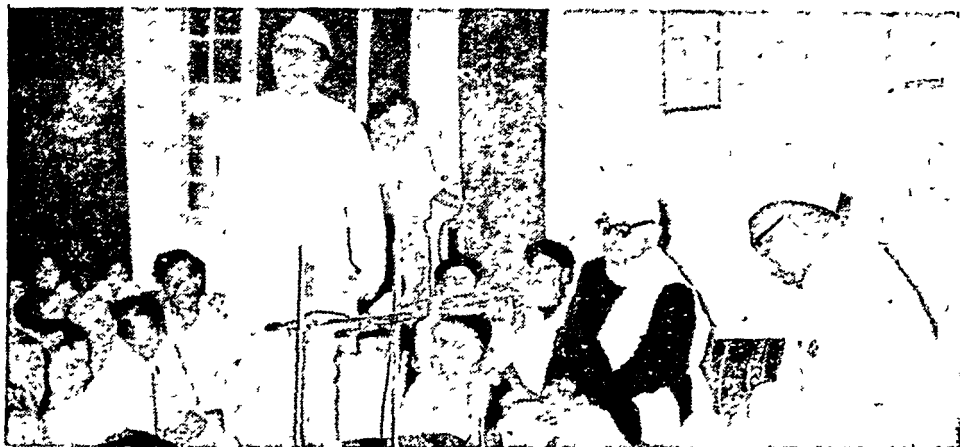
हैदराबाद के सर्वोदय कार्यकर्ताओं के बीच में राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद

शिवरामपल्ली ग्रामसेवा केन्द्र में श्री बाबू राजेन्द्र प्रसाद

शिवरामपल्ली ग्रामसेवा केन्द्र में प्रकृति-चिकित्सा विभाग के
कार्ययर्ताओं के वीच सर्वोदय ट्रस्ट के मैनेजिंग ट्रस्टी
श्री टोकर्शीलालजी कापडिया।

शिवरामपल्ली ग्राम सेवा केन्द्र में अखिल भारत सर्वसेवा संघ का
अधिवेशन हुआ। सर्वोदय ट्रस्ट के मैनेजिंग डैरेक्टर श्री कापडिया
(लेखक) आगतो का स्वागत कर रहे है। मंच पर
श्री जयप्रकाश नारायण तथा श्री थेबार बैठे है।

श्री रविशंकरजी महाराज, पत्री गान्धी विद्यालय के उद्‌घाटन समारोह में प्रवचन कर रहे है।

लेखक की मातुश्री वेजबाई की स्मृति में कुटुवीजनों के द्वारा पत्री (कच्छ) में निर्मित "मातृछाया" वस स्टाण्ड ।

किन्तु मुझे अपना नाम उसके साथ जोड़ना अच्छा न लगा। मैंने कोई कीर्ति उपार्जित करने के लिए यह दान नही किया था। मुझे तो एक पवित्र सङ्कल्प की सिद्धि करनी थी, अतः ट्रस्ट का नाम—'सर्वोदय ट्रस्ट' ही रखा और उसका कार्य 'ग्राम सेवा केन्द्र-शिवरामपल्ली' के रूप में आरम्भ किया जाय यह निश्चित किया गया।

एतदर्थ हैदरावाद से केवल पाँच मील की ही दूरी पर स्थित काटेदन नामक गाँव के आगे शिवरामपल्ली की २६ एकड़ भूमि, ६ कुँए, वगीचा तथा भूमि आदि १४०० रुपये मे खरीदे गये।

बाद में अतिथि निवास के लिए मैंने ७००० रुपये का विशेष दान दिया। इस संस्था को जनता तथा सरकार से आर्थिक सहायता मिलती रही और वह वट वृक्ष की तरह खूब फली फूली। आज तो वह एक ऐतिहासिक स्थान बन गया है। उससे सम्बन्धित जानने योग्य कुछ बाते यहाँ प्रस्तुत करूँ तो अनुचित न होगा।

आश्रम की स्थापना होने के पश्चात् दूसरे ही वर्ष अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन गुजरात में बुलाने का निश्चय हुआ, परन्तु अन्तिम समय किसी कारणवश उसने आमन्त्रण वापस ले लिया। यह समाचार मिलते ही हैदराबाद के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने एक सभा बुलाई और शिवरामपल्ली आश्रम में सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया हमने विधिपूर्वक इसका आम-

न्त्रण भज दिया तथा हमारी ओर से प्रतिनिधि पूज्य विनोवा जी से मिलने गये।

तब उन्होंने किसी भी जगह पैदल-यात्रा हीं करने का निर्णय कर लिया था, किंतु सेवाग्राम से यहाँ तक पैदल आना कठिन था, अतः उन्होंने यहाँ पधारने के लिये विशेष उत्साह नहीं दिखाया; किन्तु यहाँ के प्रतिनिधियों ने उनसे साग्रह निवेदन किया कि यदि आप पधारेंगे तभी हम उत्साहित होंगे, और प्रमवश वे सहमत हो गये। तदनन्तर पैदल यात्रा करके वे यहाँ पधारे थे। इस अवसर पर मुझे आठ दिन उनकी सेवा का अवसर मिला।

इस सर्वोदय सम्मेलन में पूज्य विनोवा ने पञ्चविध कार्य-क्रम का एक सूत्र प्रतिपादित किया—"अन्तःशुद्धि, वहिःशुद्धि, श्रम, शान्ति, समर्पणम्" अर्थात् अपनी स्वयं की शुद्धि, आसपास की स्वच्छता, परिश्रमी जीवन, शान्ति और तदर्थ जीवन समर्पित करने का प्रण।

यहाँ से वे पैदल यात्रा करते हुए तेलंगाना के साम्यवादी प्रदेशों में गय, जहाँ साम्यवादी कार्यकर्ता हिंसक पद्धति से भूमि का वितरण करके समानता स्थापित करना चाहते थे। चीन में साम्यवादियों ने उत्तर के येनान प्रान्त में जैसा किया, उसी प्रकार तेलंगाना में अपनी पद्धति को सफल दिखाकर सारे हिन्दुस्तान में साम्यवादी क्रान्ति का झण्डा फहराने का उनका विचार था, किन्तु जनता उनकी इस प्रक्रिया से त्राहि त्राहि कर उठी। यह

सब देखकर पूज्य विनोबा ने सोचा कि यदि स्वेच्छा से भूदान किया जाय तभी इसका समाधान निकल सकता है। उन्होंने यहाँ से २७ मील दूर पर पोचमपल्ली पहुँच कर सार्वजनिक सभा में भूमि की माँग की। श्रीरामचन्द्र रेड्डी ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी १२५ एकड़ भूमि का सर्वप्रथम दान किया और भूमिहीन लोगों को वह भूमि बाँट दी गई।

इसके बाद ग्रामदान, जीवनदान, श्रमदान, सम्पत्तिदान, आदि की योजनाएँ बनाकर श्री विनोबा सामाजिक क्रान्ति लाने के दृढ प्रयत्न करने लगे। उनकी इन्ही प्रवृत्तियों की पूर्ति केलिए 'ग्रामसेवा केन्द्र-शिवरामपल्ली' बना। यह बात उन्होंने अनेक वार सभाओं में अपने मुँह से प्रकट की थी।

आज इस आश्रम मे सभी कार्यकर्ता रचनात्मक कार्यो में लगे हुए हैं; विशेषरूप से प्राकृतिक चिकित्सालय, कृषिसुधार तथा ग्रामोद्योग के कार्य चला रहे है। कताई, बुनाई, तेल की घानी, हाथ-कुटा चावल, चटाई बनाने का कार्य, हाथ के बने कागज, कुम्हारी, लुहारी, खाद, हड्डियों का चूर्ण आदि के कार्य इसमें समाविष्ट है। इनमें से हस्त-उद्योग कुछ शिथिल हो गया है क्योंकि बड़े बड़े मिलों की प्रतिस्पर्धा में खड़ा रहना कठिन है। इतना होने पर भी उससे ऊँच-नीच के भेदभाव के बिना ३०-४० व्यक्तियों का पोपण हो रहा है।

भारत के अग्रणी नेता बहुधा हैदराबाद आते है, वे इस ग्राम-सेवा केन्द्र को देखकर प्रसन्न होते हैं और उसे नये नये कार्यो

ी प्रेरणा देते रहते हैं। बीच में राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसादजी हाँ पधारे थे। वे बहुत ही प्रसन्न हुए और ऐसा अभिप्राय न्होंने व्यक्त किया कि ऐसा कार्य गाँव गाँव में चले तभी स्वत-त्रता का वास्तविक आनन्द लिया जा सकेगा। उस अवसर र १२०० फीट लम्बी न्यूजरील भारत सरकार के न्यूज रीलीज विभाग की ओर से ली गई थी।

धीरे धीरे आश्रम के पास ३५ एकड़ जमीन हो गई; किन्तु उसमें ८ एकड़ भूमि बेकार थी। उसे हरी भरी बनाने का श्रम भी अब सफल हो गया है। विशेषता यह है कि सरकार की ओर से पशुपालन के लिए ५० एकड़ घासवाली चरागाह भूमि भी मिल गई है।

ऐसे कार्यों में जब समय बिताता हूँ, तब मेरी आत्मा विशेषरूप से जाग उठती है, और अपूर्व आनन्द का अनुभव करती है।

दस वर्ष ग्राम सेवा केन्द्र में रहने के पश्चात् श्री रामकृष्ण-जी धूत ने आश्रम छोड़ा, परन्तु वे मेनेजिंग ट्रस्टी के रूप में तो थे ही। इसके छः महीने के बाद यहाँ श्री प्रभाकर जी आये जो कि सेवाग्राम-वर्धा में पूज्य बापूजी के साथ वर्षों तक रहे थे। उन्हें भूदान-ग्रामदान कार्य के लिये विनोबा जी ने अपने प्रतिनिधि के रूप में आन्ध्र में भेजा था। उनके आने के बाद आन्ध्र में भूदान-ग्रामदान के लिये एक विशिष्ट सर्वोदय मण्डल का निर्माण हुआ और उसके अध्यक्ष पद का दायित्व उन्हें सौंपा गया। उनका जन्म आन्ध्र में ही हुआ था। बाल ब्रह्मचारी,

शान्त, गम्भीर और विद्वान् होने के कारण उन से शिवरामपल्ली आश्रम को बहुत बल तथा मार्गदर्शन मिला। वे शिवरामपल्ली ग्रामसेवाकेन्द्र मे ही रहते है और सर्वोदय के निमित्त आन्ध्रराज्य तथा अन्य स्थलो पर यात्रा करते रहते है।

श्रीप्रभाकरजी ने आश्रम की प्रवृत्ति में सतत तन्मयता दिखाई और उसका सुन्दर विकास किया है। उनकी प्रेरणा से यहाँ 'ग्राम स्वराज्य विद्यालय' का आरम्भ हुआ है और उसमें ग्रामसेवक तैयार किये जाते हैं। उसके साथ बालकों को शिक्षण देने के लिये बालवाड़ी, महिलाओं को शिक्षण देने के लिये महिलामण्डल आदि प्रवृत्तियाँ आरम्भ की गई है। इसके अतिरिक्त 'पञ्चायत राज्य तालीम केन्द्र' भी आरम्भ हुआ है और उसमे सरपचों को शिक्षा दी जाती है।

दि ७-७-६५ को श्रीरामकृष्णजी धूत अपनी वृद्धावस्था तथा धर्मपत्नी की अस्वस्थता के कारण मेनेजिग ट्रस्टी के उत्तर दायित्व से मुक्त हुए। तब हम सभी ने उनका बहुत बहुत आभार माना और उसके बाद सभा में निश्चय हुआ कि भार मुझे उठाना चाहिये। श्रीरघुनाथ धोत्रेजी जो कि इस ट्रस्ट के एक ट्रस्टी है तथा पूज्य बापूजी के बहुत पुराने साथी है और अखिल भारतीय गाँधी स्मारक निधि मे मुख्यमन्त्री के रूप में काम कर चुके है, उन्होने सभा मे उपस्थित हो कर मुख्य रूप से मार्ग दर्शन दिया था। सर्वसेवा संघ के मुख्यमन्त्री श्री राधाकिशन जी भी इस सभा मे उपस्थित थे।

इस प्रकार दि. ७-७-६५ से इस कार्य का उत्तरदायित्व मै यथाशक्ति सम्हाल रहा हूँ। यहाँ अब भी बहुत से कार्य करने

२१

# सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट

वैदिक ऋषियों ने 'सर्वे वै सुखिनः सन्तु'– सभी सुखी हों ! इन शब्दों में सबके कल्याण की भावना प्रकट की है। भगवान महावीर ने भी 'मित्ती भूएसु कप्पए'– सब जीवो के साथ मैत्री रखनी चाहिए, इन शब्दों के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार रखने की घोषणा की है। भारत के अन्यान्य सन्त भी 'सब का भला हो' यह भावना भिन्न भिन्न रूप में व्यक्त करते ही रहे है।

वर्तमान युग के सभी संयोगों का विचार करके रस्किन ने कहा है कि –'जो मनुष्य सबसे नीचे है, उसे ऊपर लाने का प्रयत्न करना चाहिये। पहला प्रयत्न यही हो।

पूज्य बापूजी को यह विचार बहुत प्रिय लगा। मनोमंन्थन करने के बाद उन्होंने अपने जीवन की सारभूत शिक्षा के रूप मे 'सर्वोदय' शब्द का प्रयोग किया। 'सर्वोदय' शब्द का अर्थ है: सब का उदय, सब की भलाई। यह जाति तथा संप्रदाय

भेद का उन्मूलन करता है और रचनात्मक कार्य द्वारा वर्गहीन समाज निर्माण का प्रयत्न करता है।

पूज्य गांधीजी के महाप्रयाण के एक वर्ष पश्चात् सेवाग्राम मे उनके अनुयायियो का एक वृहत् सम्मेलन हुआ। उसमे श्री जवाहर लाल नेहरु भी पधारे थे। वहाँ पूज्य विनोबा जी की प्रेरणा से सर्वोदय समाज की स्थापना हुई। तब से सर्वोदय की भावना का विशेष प्रचार होने लगा। मुझे स्वयं सर्वोदय का विचार बहुत ही अच्छा लगा, और 'यदि मै उसके प्रचार में तनिक भी योग दे सकूं तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा'– ऐसा मै मानने लगा।

तदनन्तर पूज्य विनोबा द्वारा तेलुगु भाषा में भूदान के प्रचार के लिए एक पत्रिका प्रकाशित करने की प्रेरणा मिली तब मुझे 'सर्वोदय विचार-प्रचार ट्रस्ट' का विचार सूझा और तीस हजार ३००००) रुपये 'बालाजी शिव नारायण एण्ड टीकमशी लालजी जाइण्ट कम्पनी' की ओर से उसके लिये अलग से निकाल कर स्वतंत्र ट्रस्ट बनाया।

उसका मुख्य उद्देश्य रखा गया –"हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भाषणों, लेखों तथा पुस्तकों द्वारा जो विचार प्रस्तुत किये हैं, उनका प्रचार करना। साथ ही उनके द्वारा संचालित रचनात्मक कार्य करने की भी व्यवस्था ट्रस्ट के उद्देश्यों में की गई।

इस ट्रस्ट का उद्घाटन दि. १६-५-१६५६ को हैदराबाद राजभवन में तत्कालीन मुख्य मन्त्री श्री रामकिशन राव के

पल्ली रेल्वे स्टेशन में सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट की पुस्तक विक्रयशाला का प्रारंभ, १५-८-१९६५

ाई ओर सेः डा० वेकटराव २. श्री रामकिशनजी घूत (दिया जलाते हुए) ३ लेखक ४ श्रीमती अमृतबाई कापडिया
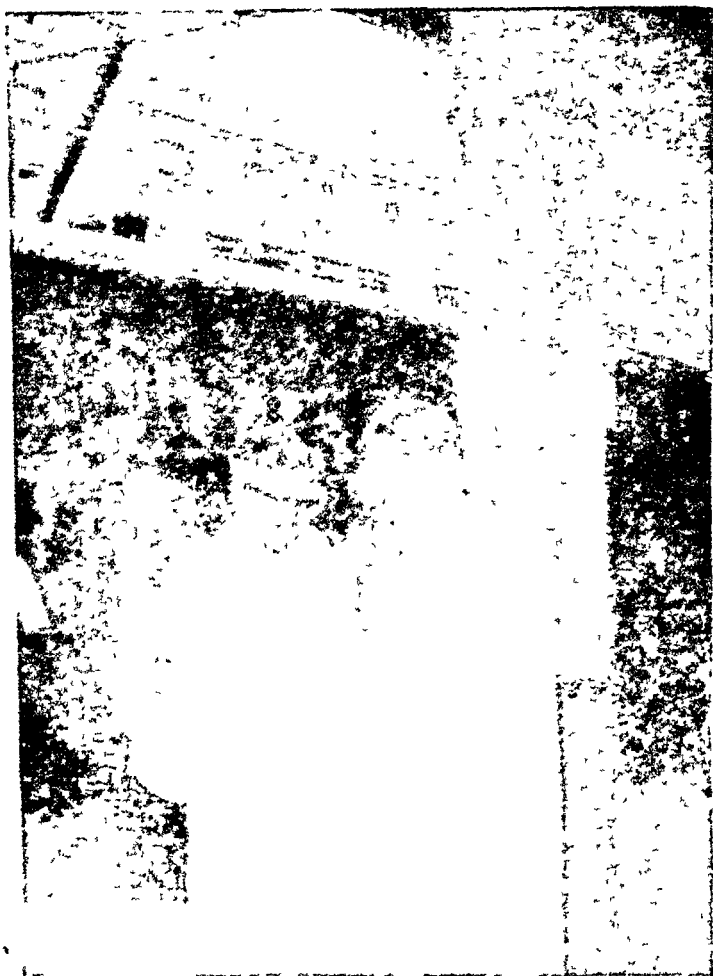
आन्ध्र प्रदेश अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन (१९६३-६४) के
अवसर पर
श्री टोकर्शी लालजी कापड़िया श्री जयप्रकाश नारायण को
पुष्पहार पहना रहे हैं ।

करकमलों से हुआ इससे कार्यकर्ताओं मे उत्साह का अच्छा संचार हुआ। इस ट्रस्ट की ओर से तेलुगु भाषा में 'भूदान-पत्रिका' आरम्भ करने के लिये उस सम्बन्ध मे निर्मित समिति को ६५००) रु दिये गये। यह पत्र आज भी चल रहा है।

इसके बाद गांधीभवन के संचालकों की ओर से पाँच कमरे दिये गये जहाँ उस समय के राज्यपाल श्री चन्दूलाल त्रिवेदी के वरद हस्त से 'गांधी ज्ञानमन्दिर' का उद्घाटन किया गया। उसमें पूज्य बापूजी के संबंध में लिखित हर भाषा की पुस्तकें तथा सर्वोदय से सम्बन्धित साहित्य संग्रहीत है और एक वाचनालय भी उसके साथ लगा हुआ है।

इस ट्रस्ट की ओर से पूज्य बापूजी द्वारा लिखित 'नई तालीम' तथा 'रचनात्मक कार्यक्रम' नामक दो पुस्तकों के तेलुगु अनुवाद प्रकाशित हुए है जिनका विमोचन राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र-बाबू के वरद हस्त से हुआ था।

इसके पश्चात् सर्वोदय से सम्बन्धित साहित्य का विक्रय करने का कार्य हाथ में लिया गया और उसकी जिम्मेदारी श्री-बिरधीचन्द चौधरी को सोंपी गई। वे एक कुशल व्यवस्थापक है, अतः यह कार्य अच्छी तरह से चलने लगा। आजकल इस ट्रस्ट की ओर से खादी भण्डार सलारजंग म्यूझियम, रवीन्द्र-भारती, बागेयाम (पब्लिक गार्डेन्स), ताजमहल होटल, तथा रेलवे स्टेशनों पर के बिक्री केन्द्रों (स्टाल) द्वारा पुस्तकें बेचने का काम चल रहा है। वह निकट भविष्य में ही बहुत अच्छा विकास प्राप्त करेगा ऐसी मेरी धारणा है।

इस ट्रस्ट को प्राप्त हुए कमरों में पूज्य विनोबाजी द्वारा प्रेरित सर्वोदय मण्डल को भी स्थान दिया गया है, जिसके अध्यक्ष श्रीप्रभाकरजी हैं। वे यहाँ से सर्वोदयमण्डल से सम्बन्धित अनेक प्रवृत्तियों को जैसे कि-भूदान, ग्रामदान, सम्पत्तिदान आदि-गतिमान करते हैं। विशेषतः यहाँ अनेक महत्त्वपूर्ण सभाएँ होती है और आन्ध्र में आनेवाले प्रायः प्रत्येक सम्मानित व्यक्ति यहाँ अवश्य पधारते हैं।

मेरे द्वारा लगाये गये एक छोटे से बीज में से इस प्रकार की सुन्दर प्रवृत्तियों का एक उत्तम वृक्ष उगा और वह दिन पर दिन विकसित हो रहा है, यह देखकर मेरी आत्मा को बहुत सुख मिलता है।

भौतिकवाद की चकाचौंध से घिरे हुए युवक-युवती आज गन्दा साहित्य पढ़ने के लिये आकृष्ट हो रहे है और उसका परिणाम हमारे घरों में तथा समाज में स्पष्ट दिखाई दे रहा है। परन्तु आनन्द की बात यह है कि भारतीय संस्कृति की जड़ बहुत गहरी होने से आज भी हमारा जीवन, हमारा मानस, आध्यात्मिक परम्पराओं से विमुख नहीं हुआ है। आज के वैज्ञानिक युग में यदि हम आध्यात्मिक विचारों को सच्चे स्वरूप में उपस्थित कर सके तो विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय हो सकेगा, जो कि मानव जाति के लिए बहुत उपकारक होगा।

यह प्रयत्न सर्वसंघ की ओर से अखिल भारतीय स्तर पर हो रहा है और आन्ध्र में उसका काम सर्वोदय विचार ट्रस्ट को सौंपा गया है। इस ट्रस्ट ने यह निर्णय किया है कि—सन् १९६९

की गाधी शताब्दी से पूर्व निम्नलिखित योजना को कार्यान्वित किया जाय।

(१) शहर के मध्यभाग में सत्साहित्य का एक विशाल भण्डार खोलना और उसके लिये सरकार द्वारा जमीन प्राप्त करना। एतदर्थ प्रयत्न चालू है।

(२) शहर के भिन्न-भिन्न स्थानों पर साहित्य विक्रय के कई केन्द्र खोलना।

(३) आन्ध्र-प्रदेश के वड़े-बड़े शहरों में भी इसी प्रकार के साहित्य-विक्रय केन्द्र खोलना।

(४) मुख्य-मुख्य रेल्वे स्टेशनों, धार्मिक स्थानों, एवं सार्वजनिक स्थलो पर भी साहित्य-विक्रय केन्द्र खोलना।

इन सब कार्यो के लिये एक लाख रुपयों की आवश्यकता होगी। उसमें सर्वोदय विचार ट्रस्ट ने अपनी ओर से १००००, रुपये देने का निश्चय किया है और शेष रकम सर्वसाधारण जनता से प्राप्त करनी है। तदर्थ कतिपय योजनाएँ बनाई गई हैं। जैसे

(१) दान में रकम प्राप्त करना।

(२) सहायक सदस्य बनाना तथा उनसे १०१, रु. जमानिधि के रूप मे प्राप्त करना।

(३) १०००, रुपये विना व्याज के प्राप्त करना और उसका २०% भाग प्रतिवर्ष वापस देना आदि।

आशा तो ऐसी है कि यह योजना कार्यान्वित हो जाएगी और इसके द्वारा सर्वोदय साहित्य का विक्रय बहुत अधिक मात्रा में होने लगेगा।

हैदराबाद शहर में 'समन्वय आश्रम' नाम से एक संस्था काम कर रही थी। इस संस्था को स्थगित करने का निर्णय हो जाने पर उसकी लगभग १५०००) रु. की जायदाद के साथ पाँच एकड़ जमीन, मकान आदि इस ट्रस्ट को प्राप्त हुए; जो कि हुसेनसागर के किनारे हुसेनसागर स्टेशन से लगे हुए स्थित हैं। इस स्थान को 'शान्तिधाम' नाम दिया गया है। वहाँ आज सर्वोदय साहित्य विभाग का केन्द्रीय कार्यालय काम कर रहा है, तथा अमीरपेट नेचरक्यूर हॉस्पीटल (प्राकृतिक चिकित्सालय) में अध्ययन करने वाले छात्रों को रहने का आवास भी दिया जा रहा है। इस ट्रस्ट का एक उद्देश्य आरम्भ से ही प्राकृतिक चिकित्सा को बल देना भी रहा है। इस ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करता हूँ।

तालाब के किनारे पर होने से तथा वहाँ सुन्दर घेरा बँधा हुआ होने से यह स्थान बहुत रमणीय लगता है और वहाँ आने-वालों को अनेक प्रकार के सद्विचार सूझें तथा आध्यात्मिक प्रेरणा प्राप्त हो यह बहुत सम्भव है। यहाँ सर्वोदय विचार-प्रचार ट्रस्ट के ट्रस्टी तथा सर्वोदय साहित्य प्रचार समिति के सञ्चालक श्री बिरधीचन्दजी चौधरी पचास वर्ष की आयु हो जाने पर व्यवसाय से निवृत्त हो कर रहने के लिये आ गये है, अतः भविष्य मे यहाँ संस्था के अनेक मनोरथ साकार होंगे, ऐसी आशा बनी हुई है।

यह प्रकरण समाप्त करते हुए इतना स्पष्ट कर दूं कि सर्वोदय साहित्य में हमने पूज्य गांधीजी और पूज्य विनोबा के अतिरिक्त स्वामी रामतीर्थ, श्रीरामकृष्ण परमहंस, श्रीविवेकानन्द आदि महापुरुषों का तथा राष्ट्रोन्नति से सम्बन्धित अन्य साहित्य भी बेचने की व्यवस्था की है।

इस ट्रस्ट के मेनेजिग ट्रस्टी के रूप में काम करने का मुझे अवसर मिला, उसे मैं अपना भाग्य मानता हूँ, क्योंकि इससे मुझे अनेक सत्पुरुषों का समागम होता है और जीवन में जागृति के लिये मैने अब तक जो कामना की है, उनको ठीक-ठीक बल मिलता रहता है।

यह ट्रस्ट उत्तरोत्तर विकसित हो, ऐसी मेरी हार्दिक भावना है तथा उस दिशा मे मेरा यथाशक्ति प्रयास भी जारी है।

जिम्मेदारियाँ भी मुझ पर थीं, परन्तु भारत के एक नागरिक के नाते मुझे कुछ करना चाहिये, ऐसा विचार कर मैंने खेती की ओर ध्यान दिया और उसके लिये अनुकूल भूमि खोज निकालने का प्रयत्न आरम्भ किया।

इस सम्बन्ध में मुझे हैदराबाद के आसपास वाले बहुत-से स्थानों को देखना पड़ा, अन्त में हैदराबाद-मनमाड़ रेल्वे लाइन पर स्थित बोधन स्टेशन से ६ मील की दूरी पर १५५ एकड़ जमीन का एक विशाल भाग मेरी दृष्टि में जम गया और उसे उसके मालिक से योग्य शर्तों पर खरीद लिया। इस भूमि के मालिक एक नवाब थे और वे प्राचीन पद्धति द्वारा किसानों से खती करवाते थे। उसमें मुख्य रूप से ईख गन्ना तथा चावल बोये जाते थे।

यहाँ खेती का उचित विकास हो, एतदर्थ मैंने 'भारत कृषि प्रायवेट लिमिटेड' के नाम से कार्य आरम्भ किया। जब तक जमीन को अच्छी जुताई न हो तथा उसमें अपेक्षित खाद न डाली जाए और फसल के अनुरूप पानी नहीं दिया जाय, तब तक खतो का विकास नहीं हो सकता। इसलिये हमने ट्रेक्टर किराये से लाकर जमीन की १२ से १५ इंच गहरी जुताई आरम्भ की और उसमें अच्छी खाद देना आरम्भ किया। साथ ही पानी की पूर्ति के लिये दो ऑइल इंजिन लगा दिये।

यहाँ इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि हमने ट्रैक्टर से जमीन की जुताई आरम्भ की, तथापि बैल तथा पाड़ों की सदा बारह जोड़ियाँ भी रखी ही थीं जो कि लोहे के हलके हलों से

श्री रविशंकर महाराज के साथ लेखक हैदराबाद में वार्तालाप कर रहे हैं। १९६५.

र में डा० शान्ताबाई क्लिनिक का उद्घाटन करते हुए लेखक १५-३-१९६५

युनैटेड कर्माशियल बैंक की शाखा का उद्घाटन करते समय
आन्ध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री के ब्रह्मानंद रेड्डी के साथ लेखक

ज़मीन ज़ोतने में तथा खाद आदि ले जाने के काम में आती थीं। उस समय काम करनेवाले मनुष्यों की संख्या ७०-८० थी, वह धीरे धीरे बढ़ने लगी और आज तो १२५ से १५० तक लोग इस खेत पर काम करके आनन्दपूर्वक अपना जीवन-निर्वाह कर रहे हैं। जमीन भी १५५ से बढ़ा कर २१५ एकड़ कर दी हैं।

प्रारम्भ के दो वर्ष तक तो इस जमीन में नुकसान हुआ था, किन्तु उसके बाद क्रमशः उपज बढ़ जाने पर उसका योग्य प्रतिफ़ल मिलने लगा और आज तो प्रायः सवा दो लाख रुपये की वार्षिक उपज होती है, जो अगले वर्ष तीन लाख रुपये की हो जाना सम्भव है।

यहाँ अभी ईख, चावल तथा मूगफली बोई जाती है। इनमें गन्ना फी एकड़ ५०-६० टन उपजता है। यह गन्ना सरकार द्वारा संचालित 'निजाम शुगर फेक्ट्री' को बेच दिया जाता है जो कि प्रतिदिन ४००० बोरे चीनी तैयार करती है। एशिया मे चीनी के जो बड़े कारखाने माने जाते है उनमें यह एक है।

यह जमीन हैदराबाद से १३० मील दूरी पर स्थित है और प्राय. पॉच घण्टे की यात्रा के बाद वहॉ पहुँच सकते हैं। वहॉ लोगो के रहने के लिये मकान बने हुए है, तथा हमारे लिये भी विशेष भवन बनवाया हुआ है। हम छुट्टी के दिनों मे वहाँ जाते हैं, तब ताजी हवा, ताजा दूध और ताजी सब्जी खाने को मिलती है और प्रकृति की गोद में बैठकर उसे खाने में अपूर्व आनन्द आता है। उस समय प्रायः मित्रमण्डली हमारे साथ होती है, अतः उस आनन्द मे वृद्धि होती है, और कई दिन तक यहाँ डेरा

डाले रहें-ऐसा विचार आये बिना नही रहता। परन्तु जीवन का जंजाल वापस हमें शहर में खींच लाता है और वहाँ कृत्रिम जीवन का जो जाल फैला हुआ है, उसमें पुन. फँस जाना पड़ता है।

यहाँ यह बता देना भी आवश्यक है कि 'भारत कृषि प्राइवेट लिमिटेड' के नाम से पहले कार्य आरम्भ किया था, परन्तु 'आन्ध्र लेण्ड रिफार्म एक्ट' लागू होने पर सभी हिस्से-दारो को उनके हिस्से की जमीन दे दी गई थी। आज यह कार्य 'आन्ध्र कृपि कम्पनी' के नाम से चल रहा है। यह कम्पनी जब लिमिटेड थी, तब मैं मेनेजिग डायरेक्टर का काम सम्हालता था, किन्तु अब मेरे परिवार वाले इस कार्य को सम्हाल रहे हैं।

२३

# हैदराबाद राज्य में प्रथम निर्वाचन

सन् १९४८ के सितम्बर मास की २१वी तारीख को हैदराबाद राज्य पर पूरा अधिकार कर लेने के बाद भारत सरकार की ओर से जनरल चौधरी मिलिटरी एडमिनिस्ट्रेटर नियुक्त हुए। तदनन्तर उनके स्थान पर श्री वेलोड़ी आये और चार व्यक्तियों की एक समिति बनी। उसके बाद जनता के प्रतिनिधियो को सत्ता सौपने का निश्चय हो जाने पर चुनाव आया। हैदराबाद राज्य में यह पहला चुनाव था और उसमे मैंने एक कार्यकर्ता के रूप में भाग लिया था. अतः यहाँ उसका कुछ विवरण प्रस्तुत करता हूँ।

चुनाव लड़ने के लिये पैसा चाहिए, इस लिए कॉग्रेस के अग्रणी कार्यकर्ताओंने एक लाख रुपये का फण्ड एकत्र करने का निश्चय किया और उस फण्ड का तत्कालीन कांग्रेस के अध्यक्ष पण्डित श्री जवाहरलाल नेहरू के नाम पर 'श्री नेहरू पर्स फण्ड' नाम रखा गया; परन्तु बहुत प्रयास करने पर भी इस पर्स में केवल ५५,००० रुपये ही इकट्ठे हुए। पौने दो करोड की आबादी वाले राज्य के लिए यह बात सामान्य थी, परन्तु उस

समय तक जनता को कांग्रेस राज्य की नीति में पूरा विश्वास नही जम पाया था।

बापूजी जब कांग्रेस में थे तब उन्होंने असाधारण प्रयत्न करके कांग्रेस को लोकप्रिय बनाया था, इस लिए मेरा इस संस्था के प्रति प्रारम्भ से ही अनुराग था। मैं व्यवसाय के निमित्त हैदराबाद आया और सार्वजनिक कार्यो में भाग लेने लगा, तब भी मेरा आकर्षण कांग्रेस के प्रति वैसा ही था, और इसी लिए उसके कार्यो में जितना बन सकता उतना सहयोग करने से नहीं चूकता, इससे कांग्रेस के अनेक कार्यकर्ता तथा नेताओं के परिचय में आया था और उनका मेरे प्रति सद्भाव बना हुआ था। चुनाव के प्रश्नों पर भी वे मुझ से सलाह मशिविरा करते थे।

अब चुनाव में केवल चार दिन ही शेष रहे थे और साम्यवादी विजयी हो जाएँगे ऐसा वातावरण बन गया था। वस्तुतः परिस्थिति बहुत विकट थी। यदि साम्यवादियों के हाथ में सत्ता आजाये तो क्या करें और क्या न करे? यह एक गम्भीर समस्या थी। कांग्रेस में कतिपय बुराइयों के आ जाने पर भी अभी उसमें बहुत-से योग्य व्यक्ति थे और उनके विजयी होने में देश का कल्याण था, अतः उसके लिये पर्याप्त प्रयास करना आवश्यक हो गया था।

उन दिनों कांग्रेस के अध्यक्ष श्री दिगम्बर राव जी थे। उन्होंने तथा सुप्रसिद्ध कांग्रेस के नेता श्री रामकिशनराव आदि ने मेरे साथ अन्तिम परिस्थिति की चर्चा की और तात्कालिक सभा बुलाकर द्रव्य इकट्ठा करने का निश्चय किया।

रात को बिन्दुजी आदि की उपस्थिति में सभा हुई और उसमें नगर के अग्रणी व्यापारी भी उपस्थित हुए। उस समय तात्कालिक रूप से ३०,००० रुपये देने की मांग उनके समक्ष रखी गई, किन्तु उनकी ओर से उत्तर नही मिला। तब इतनी ही रकम का ऋण देने की माँग की गई, किन्तु उसके लिए भी कोई तैयार नही हुआ। अपितु गत एक वर्ष से यहाँ चल रहे कॉग्रेस के शासन मे व्यापारियों के साथ जो बर्ताव हुआ, उसकी जोरदार टीका हुई। नेताओं ने कहा कि 'जो दोष होंगे उन्हें अब आगे सुधारेंगे किन्तु अभी तो इस कार्य को पूरा करो।' किन्तु कोई मार्ग निकला नहीं।

अन्त में अनाज एवं तिलहन के व्यापार से मेरा सबध था, अतः उन व्यापारियों की ओर से १०,००० रुपये इकट्टे करने का कार्य मुझे सौंपा गया। इससे पूर्व ५५,००० रुपये जो इकट्टे हुए थे, उसमें मैंने तथा अनाज एव तिलहन के व्यापारियो ने योग्य सहयोग दिया था, तथापि कांग्रेस के प्रति ममत्व होने के कारण मैंने उत्तरदायित्व सम्हाला। शेष २०,००० रुपये इकट्टे करने का कार्य अन्य व्यापारियों को सौंपा गया, किन्तु इसका परिणाम क्या निकलेगा, यह मेरी कल्पना से बाहर नही था।

दूसरे दिन श्री दिगम्बर राव तथा श्री रामकिशन राव आदि से मिल कर परिस्थिति पर गहराई से चर्चा की। उस समय मेरा मन तो मेरी पेढी में से पूरे तीस हजार रुपये उन्हे दे देने का था, किन्तु व्यापार में लगाई रकम तत्काल निकलती नही, इसलिये जी. रघुनाथमल बेक से ३०००० रुपये कर्ज लिये और वह रकम शीघ्र ही कांग्रेस के कार्यकर्ताओ को पहुँचा दी।

आवश्यकतानुसार सैनिक टुकड़ी के आ जाने से सेना में जिस प्रकार अपूर्व उत्साह जाग उठता है, वैसे ही धनराशि आ जाने पर कांग्रेस के कार्यकर्ताओं में अपूर्व उत्साह आ गया और उन्होंने अन्त के चार दिनों में जी-जान से प्रयत्न करके कांग्रेस को विजय दिलाई। परन्तु जिन्होंने २०००० रुपये की जिम्मेदारी ली थी, उनमें से किसी ने उसके लिए परिश्रम नहीं किया, और अपने पास से भी कुछ नहीं दिया। मैंने अपनी जिम्मेदारी के ६००० रुपये इकट्ठे किये और उनमें एक हजार अपनी ओर से मिलाकर स्वीकृत उत्तरदायित्व पूरा किया। इस प्रकार २०००० रुपये बैंक लोन में शेष रहे, किन्तु बाद में उसके बारे में किसी ने ध्यान नहीं दिया।

यह बात मैंने आत्मश्लाघा के लिए प्रस्तुत नहीं की है किन्तु सार्वजनिक जीवन में कार्य करते हुए कैसे-कैसे अनुभव होते हैं और कार्यकर्ताओं को उनके माध्यम से कैसी शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, यह जताने के लिए ही लिखा है।

चुनाव के बाद हैदराबाद राज्य के विभाजन के बारे में जो हलचल आरम्भ हुई उसके बारे में भी दो शब्द लिख दूँ तो उचित ही होगा।

निर्वाचन हो जाने के बाद हैदराबाद स्टेट कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में स्वामी रमानन्द तीर्थ निर्वाचित हुए। वे हैदराबाद राज्य के विभाजन के पक्ष में थे अर्थात् हैदराबाद राज्य के जो जिले तेलुगु बोलनेवाले थे, उन्हें आन्ध्र राज्य में मिला देना और जो कन्नड़ बोलनेवाले थे उन्हे मैसूर राज्य में मिला देना और जो

मराठी बोलनेवाले थे उन्हें महाराष्ट्र राज्य मे मिला देना इस प्रकार हैदराबाद राज्य का विघटन हो जाए तो फिर से वह एक देशी राज्य के रूप में सिर न उठा सके यह उनका अंतरग भाव था और उसमें वहुत तथ्य भी समाया हुआ था। समझदार लोगों ने उनके इस विचार की पुष्टि की थी मै भी इस सम्वन्ध में उनका समर्थक ही रहा था।

एक वार हैदरावाद शहर में इसके वारे में एक विशाल सभा हुई थी, उसमें व्यापारी, उद्योगपति, सामाजिक कार्यकर्ता तथा राजकीय अधिकारी भी उपस्थित हुए थे। इस सभा का अध्यक्ष पद मेरे सिर पर आया, मैंने उसे उचित रीति से सम्हाला था। इस सभा ने विभाजन प्रस्ताव का पूरा समर्थन किया था और विशाल-आन्ध्र राज्य की कल्पना को सराहा।

विभाजन की यह हलचल सफल हुई और निजामाबाद, वरगल, नल्लगोंडा, महबूवनगर, हैदराबाद, करीमनगर, मेदक और आदिलाबाद ये आठ तेलुगु भाषा-भाषी जिले आन्ध्र राज्य में मिला दिये गये। इसी प्रकार गुलवर्गा, बीदर और रायचूर ये तीन कन्नड़ भाषाभाषी जिले कर्णाटक अर्थात् मैसूर राज्य में मिला दिए गए और उसमानाबाद, भीड, औरंगावाद, परभणी तथा नादेड जिले जहाँ मुख्य रूप से मराठी भाषा वोली जाती थी, उन्हे महाराष्ट्र राज्य में मिला दिया था। इस प्रकार पुराने हैदराबाद राज्य का सम्पूर्ण विभाजन हो गया था।

सम्मिलित मद्रास में से आन्ध्र राज्य कैसे अलग हुआ यह इतिहास प्रसिद्ध है। उस समय आन्ध्र की राजधानी कर्नूल

(रायन्न सीमा) में थी, परन्तु बाद में वह बदल कर हैदराबाद में लाई गई और इस प्रकार यह शहर एक समय निजाम राज्य की राजधानी था, यह अब आन्ध्र प्रदेश की राजधानी नगर बन गया।

प्रसंगवश यहाँ यह भी बता दूं कि मेरी रचनात्मक कार्य में विशेष प्रीति रही है अतः जहाँ तक, मुझसे सम्भव हुआ मैंने पद-ग्रहण करने की बात को टाला है। मैं हैदराबाद शहर समिति-बी वार्ड का कुछ समय तक उपाध्यक्ष रहा था, पर उसे अपवादरूप समझना चाहिये। मेरी ऑफिस इसी मुहल्ले में थी, इस लिए मुझे यह पद स्वीकार करना पड़ा था।

मैंने हैदराबाद स्टेट कांग्रेस के खजांची के रूप में वर्षों तक काम किया है, किन्तु उससे सम्बन्धित और कोई पद ग्रहण नहीं किया। स्वामी रामानन्द तीर्थ तथा अन्य मित्रों ने अनेकवार अनेक प्रकार के पद देने की तथा नगरपालिका के चुनाव में कांग्रेस की ओर से टिकट देने की तथा लोक सभा में प्रतिनिधि के रूप में भेजने की सूचना की, किन्तु उनमें से किसी को मैंने स्वीकार नहीं किया।

पूज्य विनोबा राजनीति से दूर रहकर विविध प्रकार से समाज की सेवा कर रहे हैं, उनका अनुसरण करते हुए मुझे अपने व्यवसाय में रहकर सामाजिक सेवा करना विशेष प्रिय लगा है और अनुभव से मैंने जान लिया है कि जिसे समाज की सच्ची सेवा करनी हो, उसे जहाँ तक सम्भव हो पद-प्रतिष्ठा से दूर रहना चाहिये।

अखिल भारतीय कांग्रेस महासभा का हैदराबाद अधिवेशन, बैठे हुए बाईं ओर से : १ बि. रामकिशन राव (मुख्यमंत्री), २. श्री जवाहर लाल नेहरू ३. श्री रामा नन्द तीर्थ ( स्टेट कांग्रेस के अध्यक्ष ) ४ श्री पन्नालालजी पित्ती, ५. श्री अक्बर अलीखान, (एम पि.)

खडे हुए : १. कोत्तूरि सीतय्य गुप्ता २. एरंम सत्यनारायण (अध्यक्ष : सिटी कांग्रेस), ३. श्री एग्बोटे ( शिक्षामंत्री ) ४ श्री बंकटलालजी बद्रुका, ५. लेखक ६. श्री डी डी. इटालिया (एम. पि.)

कांग्रेस महासभा के हैदराबाद के अधिवेशन में पधारे हुए कच्छ के प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ता १९५३
बाईं ओर से बैठे हुए-दूसरे : लेखक; तीसरे: श्री भवानजी. ए. खीमजी,
चौथे: श्री प्रेमजी भवानजी ठक्कर.

२४

# महासभा के अधिवेशन आदि

सन् १९४८ से १९५२ के बीच मेरे व्यवसाय के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए, तथा सामाजिक सेवा के सम्बन्ध में भी कुछ उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया, किन्तु उन सब का वर्णन प्रसंगानुकूल होगा। यहाँ तो महासभा के अठावनवे अधिवेशन जो सन् १९५३ के आरम्भ में हैदराबाद में हुआ था तथा तीन वर्ष बाद आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक जो हुई, उनके सम्बन्ध में कुछ विवरण प्रस्तुत करूँगा।

प्रारम्भ में कांग्रेस महासभा के अधिवेशनो में ६००–७०० शिक्षित लोग एकत्र होते थे जिनमें अधिकांश लोग बैरिस्टर आदि होते थे। वे 'होमरूल' के बारे में चर्चा करते और अपने विचारो को प्रस्ताव के रूप में भारत के वायसराय तथा पार्लियामेन्ट के सदस्य आदि के पास भेज देते थे। उसके अधिवेशन के लिए टाउनहाल, थियेटर अथवा ऐसे ही अन्य स्थान पर्याप्त थे। परन्तु धीरे-धीरे महासभा में अन्य लोगों ने भी भागलेना आरम्भ किया। मुख्यरूप से पूज्य गाधीजी के उसमें आजाने के बाद उसका स्व-

रूप ही वदल गया। इससे महासभा के अधिवेशनों के लिए खुले मैदान में बड़े-बड़े विशाल मण्डप बंधवाने को आवश्यकता हुई, तथा भागलेने वालों के निवास के लिये भी बड़े पैमाने पर प्रवन्ध करने की आवश्यकता हुई। उसके वाद स्वतन्त्रता का युद्ध छिड़जानें पर महासभा के अधिवेशनों में लोगों की भारी उपस्थिति होने लगी और आज भी यह स्थिति चल रही है। इस लिए जिस प्रान्त में महासभा का अधिवेशन वुलाना हो, उसे अच्छी तैयारी करनी पड़ती है।

हैदरावाद प्रदेश कांग्रेस को ऐसा लगा कि यदि अपने आँगन में महासभा का एक अधिवेशन हो जाय तो लोगो की मनोवृत्ति में पर्याप्त परिवर्तन होगा और राजनीतिक दृष्टि से आन्ध्र-प्रान्त को अच्छी प्रतिष्ठा मिल जाएगी। अतएव उसके कार्यकर्ताओं ने साहस करके महासभा के अठावनवे अधिवेशन के लिए आमन्त्रण दिया और वह दिल्ली में स्वीकृत होगया! इसके वाद शीघ्र ही स्वागत समिति का निर्माण हुआ, स्वामी रामानन्द तीर्थ अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

लगभग चार महीने पूर्व से ही तैयारियाँ होने लगी। उसमें माल और खरीदी (Stores and Purchases) कार्य जो कि अन्य किसी भी विभाग से अधिक महत्त्वपूर्ण तथा जिम्मेदारी का था, मुझे सौपा गया। कार्यकर्ताओं को मेरी व्यवस्थाशक्ति तथा मेरी निष्ठा में विश्वास था, उसी का यह परिणाम था। मैंने भी हैदरावाद प्रदेश काग्रेस द्वारा चलाये जानेवाले कार्य में यथाशक्ति सहयोग देने की भावना से यह जवावदारी अपने ऊपर ली।

इस अधिवेशन की आर्थिक समिति के अध्यक्ष की जवाबदारी यहाँ के प्रसिद्ध उद्योगपति श्री पन्नालाल पित्ती को सौपी गई थी और बिलो के परीक्षण आदि का कार्य श्रीवासुदेव नायक को दिया गया था। श्रीनायक कांग्रेस के पुराने कार्यकर्ता, सिटी कांग्रेस के अध्यक्ष तथा तत्कालीन विधानसभा क उपाध्यक्ष थे। वे अर्थसमिति के मन्त्री नियुक्त हुए। साथ ही उसी समिति का मैं सहमन्त्री नियुक्त हुआ। इससे नायकजी इस कार्य मे मेरी सम्मति-सूचना लेते थे। इस प्रकार मुझे थोड़ा समय उसमे भी देना पड़ा था।

इन दिनों कांग्रेस महासभा के मुख्यमन्त्री श्री बलवन्तराय मेहता थे। वे अधिवेशन की तैयारी के सबन्ध में बार-बार यहाँ आते और हमें अनेक प्रकार को सूचनाएँ देते थे। उन्होने हमें एक सूचना यह दी कि श्रीनेहरू आदि प्रमुख नेताओं का स्वागत-सत्कार यहाँ के गुजराती भाई करे और उसका जो व्यय हो, उसे भी वे ही वहन करे। इससे गुजरातियो और गुजरात की शोभा बढेगी।

उस समय राज्य के मन्त्रीमण्डल में एक मात्र गुजराती श्री फूलचन्द गाँधी थे। उनके साथ श्री बलवन्तराय भाई ने कुछ परामर्श किया और बाद में हैदराबाद–सिकन्दराबाद के गुजराती भाइयों की एक सभा बुला कर उपर्युक्त प्रस्ताव उनके सामने रखा। सभी ने उसे सहर्ष स्वीकार किया।

इस विभाग में १०४ नेताओं के आने का अंदाजा था, जिनमें प्रधाममन्त्री तथा दिल्ली के मन्त्रीमण्डल के मुख्य व्यक्ति

आदि सम्मिलित थे इन नेताओं के साथ उनके सचिव आदि स्टाफ भी यहीं रहनेवाला था, अतः कुल चार-पाँच सौ व्यक्तियों की व्यवस्था करनी थी और उसके लिए स्वयं सेवक आदि भी हमें ही नियुक्त करना था।

इन महानुभावो के निवास के लिए नीलोफर हॉस्पीटल पसन्द किया गया जिसका नया आलीशान भवन अभी-अभी बन-कर तैयार हुआ था और उसका उद्‌घाटन अभी शेष था। इस कार्य में भी मुझे भाग लेना ही पड़ा, क्योंकि कुछ लोगों का ऐसा आग्रह था कि 'तुम नही तो हम नहीं।' रात-दिन साथ काम करनेवालों को नाराज भी कैसे किया जा सकता है? फलतः यहाँ के छोटे-बड़े गुजराती भाई-बहनो ने जो उत्तम व्यवस्था की थी, उससे देश के नेता बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि 'महासभा के किसी भी अधिवेशन में इतनी सुन्दर व्यवस्था और सत्कार नही हुआ था।'

मेरे सिर पर आई हुई जवाबदारी बहुत बड़ी थी। उसे यदि मुझे सफलता-पूर्वक निभाना हो, तो उसके प्रत्येक विभाग के सम्बन्ध मे गहरा विचार करना चाहिए, तथा प्रत्येक सामग्री का सूक्ष्मता से ब्यौरा तैयार करके, वह कहाँ पर किफायत से मिल सकेगी, उसका निर्णय लेना चाहिए। परन्तु यह सब कार्य तभी हो सकता था जब मै अपना पूरा समय इस कार्य के पीछे लगा दूँ, इस लिए मैने पेढी पर जाना छोड़ दिया और केवल इसी कार्य मे मन लगाया। किसी भी कार्य मे चित्त एकाग्र हुए बिना सिद्धि नही मिलती यह एक प्रकट सत्य है। फिर भी कितने

व्यक्ति ऐसे है जो स्वीकृत कार्य मे अपना चित्त एकाग्र करते है ?

इस काम पर रात-दिन चिन्तन करते हुए पहला विचार यह आया कि गत वर्ष नासिक में अधिवेशन हुआ था और उसके स्वागताध्यक्ष बम्बई के रेवेन्यू मिनिस्टर 'भाउ साहेब हीरे थे, उनसे मिल कर सारी आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। इस दृष्टि से दि २७-९-५२ को मैने हैदराबाद प्रदेश काग्रेस के मुख्य मन्त्री श्री प्राणेशाचार्य द्वारा भाउ साहब हीरे को अर्जेण्ट तार दिलाया कि—"श्री टोकरशी लालजी कापड़िया कल सवेरे काग्रेस के अठावनवे अधिवेशन की तैयारी के बारे से जानकारी प्राप्त करने के लिए आपसे मिलने आ रहे है, अतः कृपा करके उन्हें यथासम्भव जानकारी प्रदान करें।"

मै दूसरे दिन बम्बई पहुँचा और भाउसाहब से मिला। उन्होने मेरे द्वारा पूछे गये सभी प्रश्नों का यथोचित उत्तर दिया और उससे मुझे बहुत मार्ग दर्शन मिला। गुजराती भाषा में कहावत है कि 'पूछता नर पण्डिता'—अर्थात् जो मनुष्य बुद्धिमान् मनुष्यो से पूछता रहता है, वह अन्त में स्वय पण्डित बन जाता है।

इस अधिवेशन के लिए सबसे अधिक आवश्यकता लोहे की चद्दरों की थी। उनकी ८-१० वेगने ताता कम्पनी से उचित दर पर ली गई। इन चद्दरो का उपयोग हो जाने के बाद उन्हे वापस देना था। पहले के अधिवेशनो में इसी तरह की व्यवस्था की गई थी, किन्तु नासिक के अधिवेशन में चद्दरे वापस

देने के बाद ६०,००० रुपये की हानि सहन करनी पड़ी थी, जब कि मेरे द्वारा संचालित इस कार्य में केवल १०,००० रुपये के नुकसान से ही काम चल गया।

मुझे छोटी-बड़ी सैकड़ों वस्तुएँ खरीदनी थी, उन्हें मैं जितनी बन सके उतनी किफ़ायत से खरीदता था। मेरा व्यापारी अनुभव मुझे इस सम्बन्ध में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ, परन्तु सबसे महत्त्व की बात तो निष्ठा की थी। यदि किसी कार्य को निष्ठा से करना हो तो उसके लिये सभी मार्ग खुल जाते हैं और प्रकृति भी उसमें सहयोग करती है।

अधिवेशन के प्रबन्ध से सम्बद्ध एक प्रश्न पाँच लाख लोगों के बैठने के लिए चटाइयों का था। यदि वे नई खरीदी जाँय तो खर्च बहुत होता था, इससे मैंने अपने परिचय का तथा व्यापारिक-सम्बन्ध का उपयोग करके बड़ी-बड़ी दरियाँ मुफ्त में प्राप्त की। यह एक नवाबी शहर था, अतः अनेक स्थानों से बड़ी-बड़ी दरियों के मिलने की सहूलियत थी। इसके अतिरिक्त बारदाना बेचनेवाले भाइयों से सम्पर्क साधकर मामूली नुकसान भर देने की शर्त पर टाट प्राप्त किये थे और उन्हें सीकर बिछाने लायक बनाकर उनसे काम चलाया था।

यहाँ यह भी बता देना आवश्यक है कि बरतन आदि बहुत-सी चीजे मित्रों तथा संस्थाओं से लेकर अथवा सामान्य नुकसान भर देने की शर्त पर प्राप्त की थी। लोहे के पलंग, टेबुल, कुर्सियाँ, गादी-तकिये आदि सामान मिलिट्री संस्थान से,

अच्छी स्थिति में वापस लौटाने की शर्त पर प्राप्त किये। ऐसे सार्वजनिक सम्मेलनों मे दूसरे की वस्तुएँ माँग कर लाएँ तो उनके टूट-फूट जाने अथवा चोरी मे चले जाने का भय बना ही रहता है, अत उसके बारे में पूरी सावधानी रखना आवश्यक है। यहाँ तो साम्यवादियो का भी कुछ भय बना रहा कि कही वे किसी तरह का गोलमाल न मचावे।

इस अधिवेशन के लिए हैदराबाद से कुछ दूर विशाल मैदान में 'नानलनगर' बसाया गया था। वहाँ पुलिस का पूरा प्रबन्ध था तथा सी आई डी. के कुशल व्यक्ति अपने कर्तव्य के पालन मे सन्नद्ध थे। मैने अपने साथियों को माल की पूरी देख-रेख करने की विशेष सूचना दे रखी थी, जिससे चोरी आदि की कोई बडी दुर्घटना नही हो पाई थी।

इस प्रकार कृपणता, सावधानी और व्यवस्था का पूरा अवलम्बन करने से हैदराबाद अधिवेशन का व्यय पाँच लाख के अन्दर आया था, जब कि इससे पूर्व नासिक के अधिवेशन का खर्च पौने सात लाख तथा उससे भी पूर्व जयपुर अधिवेशन का खर्च तीस लाख रुपये का हुआ था।

इस अधिवेशन के अवसर पर कच्छ काग्रेस के कार्यकर्ता तथा सलाहकार मन्त्री आदि मेरे यहाँ उतरे थे। उनके लिये मैने अपनी पेढी को निवास स्थान के रूप मे बदल दिया था। मेरे स्टाफ को उनकी सेवा शुश्रूषा के लिए रख दिया था और मेरी पत्नी ने उनके भोजन आदि की व्यवस्था सम्हाली थी। सक्षेप

में यही कि मैंने उनको सम्मानित मेहमान मान कर यथाशक्ति
उनका स्वागत-सत्कार किया था।

इस अधिवेशन के अध्यक्ष पं जवाहरलाल नेहरू थे जो वि
अपनी निःस्वार्थ सेवाओं तथा सहृदयता के कारण लोकप्रियता के
शिखर पर विराजमान हो गये थे। वे चाहे जैसे विकट प्रश्न
खड़े हों अपनी विलक्षण वुद्धि तथा अद्भुत व्यक्तित्व के वल
उनका समाधान कर देते थे।

अधिवेशन पूरा होने के वाद सारा काम समेटने में लगभग
एक महीना लगा था। इस प्रकार मेरे कुल चार मास इस कार्य
में लगे थे और मेरा व्यक्तिगत खर्च भी तीन हजार रुपये से
अधिक हुआ था।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि राजनीतिक कार्य
में पक्ष-विपक्ष होते है और यही कारण है कि कितना ही अच्छा
कार्य क्यों न करे फिर भी विरुद्ध पक्ष के लोग गलत अफवाहें
उडाते ही रहते है और यदि अवसर मिला तो हमे गिरा देने में
तनिक भी संकोच नहीं करते। अतः ऐसे प्रयोजनों के लिये कार्य करने
में पूरी प्रामाणिकता के साथ धैर्य, शान्ति और सहनशीलता भी
पर्याप्त मात्रा में रखनी चाहिए।

सन् १९५६ के अक्टूबर मास में ऑल इण्डिया कांग्रेस
कमेटी की वैठक यहाॅ पर हुई थी, तव कांग्रेस छावनी की
व्यवस्था का कार्य मुझे सौंपा गया था और मैने वड़े उत्साहपूर्वक
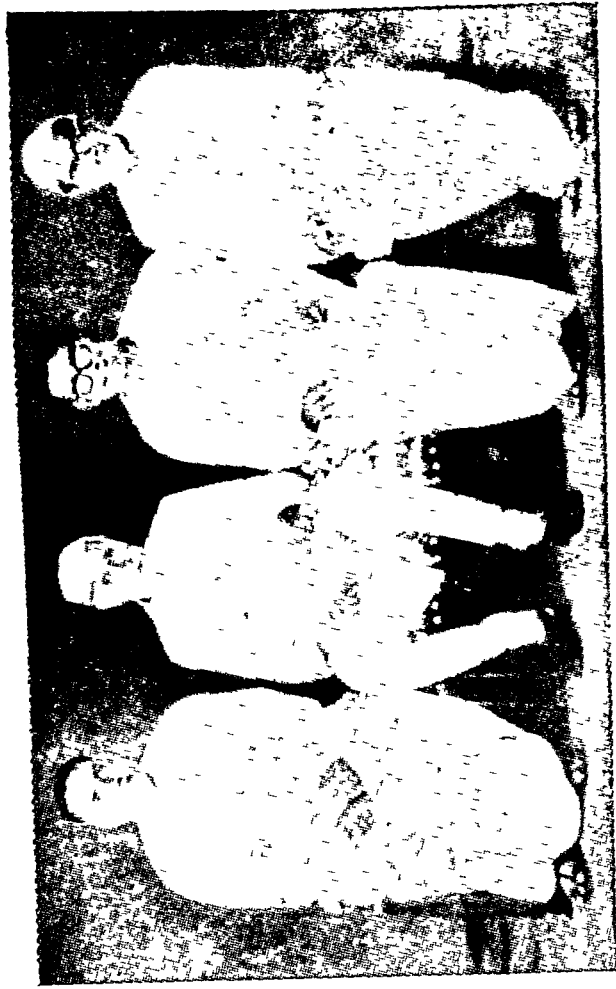
आल इण्डिया कांग्रेस कमिटि का अधिवेशन, हैदराबाद–१९५६

बाईं ओर से : १ पि. रगारेड्डी (आन्ध्रप्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष), २. श्री जवाहरलाल नेहरू (भारत प्रधान मन्त्री), ३. डा० एन. सजीवरेड्डा (मुख्यमन्त्रीः आन्ध्र प्रदेश), ४. लेखक

पूज्य बापूजी की समाधि पर, लेखक गाँधीघाट, दिल्ली।

वह कार्य भी सम्हाला था। उस समय कांग्रेस के अध्यक्ष श्री **उछरंगराय ढेवर** थे। उसके कुछ समय बाद कांग्रेस कार्यकर्ताओं की बैठक हुई, तब भी व्यवस्था का कार्य मेरे ही अधीन था।

इस प्रकार महासभा के अधिवेशन आदि में कार्य करते हुए मुझे बहुत कुछ जानकारी मिली और मन को यह सन्तोष हुआ कि मै प्राप्त अवसर का सदुपयोग कर सका हूँ।

यहाँ यह भी बतला दूँ कि इससे पूर्व महासभा के अधिवेशनो में मैने एक प्रतिनिधि के रूप में ही भाग लिया था और बाद को प्रेक्षक के रूप मे भाग लेता रहा।

२५

# गुजराती प्रगति समाज

पर्वत की तलहटी से निकला हुआ छोटा-सा झरना आगे बढ़ते हुए नदी का रूप धारण कर लेता है और लोकमाता का काम करता है। अथवा छोटे से बीज में से अंकुर निकलता है और कालान्तर में बड़ा वृक्ष बन जाता है और अनेक पशु, पक्षी तथा मनुष्यों को शीतल छाया तथा मधुर फल दे कर महान् उपकार करता है। कुछ ऐसा ही हैदराबाद के 'गुजराती प्रगति समाज' के बारे में कहा जा सकता है।

कुछ वर्ष पहले थोड़े से गुजराती भाइयो ने इकठ्टे हो कर व्यापार रोजगार के अतिरिक्त समाजहित पर भी विचार विनिमय किया था। इसमे से सन १९३८ में 'नवयुवक मण्डल' की स्थापना हुई और उसने पुस्तकालय स्थापना का काम हाथ में लिया। यह वैसे तो सामान्य कार्य माना जाता है, किन्तु उसके व्यवस्थापकों ने उसे विशिष्टरूप दिया और पाच वर्ष के अन्तर में बाल-मण्डल, स्त्रीमण्डल, वक्तृत्वसभा, हस्तलिखित त्रैमासिक, प्रसिद्ध व्यक्तियों की मृत्यु के सम्बन्ध मे शोकसभा, सार्वजनिक सम्मान, स्नेह-

सम्मेलन, रोगियों की देखभाल तथा दुष्काल के समय पर सहायता फण्ड आदि योजनाएँ कार्यान्वित कर के गुजराती समाज मे अच्छी जागृति उत्पन्न की और समाज सेवा के प्रति उत्साह वढाया।

इस समय कुछ भाइयो की ऐसी इच्छा हुई कि हमारी ओर से जो एक गुजराती फ्री स्कूल चला रहा था और जो दूसरा यह नवयुवक मण्डल चल रहा था—इन दोनों को मिला दिया जाय तो गुजराती समाज की अधिक उत्तम सेवा होगी। यहाँ गुजराती फ्री स्कूल सन् १९३० में स्थापित हुआ था और उसकी व्यवस्था गुजराती भाइयो की एक समिति द्वारा की जाती थी।

यह विचार वहुतो को पसन्द आया, अतः दोनो का एकीकरण हुआ और उसके लिए एक मकान बनाने का निर्णय भी हुआ। सस्था का अपना निजी भवन होने पर उस की जड मजबूत होती है और वहाँ अनेकविध प्रवृत्तियाँ आरम्भ की जा सकती है—ऐसा मेरा मन्तव्य है और मै मानता हूँ कि इससे सभी पाठक सहमत होगे।

हमारे प्राचीन महापुरुपो ने कहा है कि—'यादृशी भावना तादृशी सिद्धिः' अर्थात् जैसी भावना होती है वैसी सिद्धि होती है अग्रेजी भाषा में भी इसी से मिलती जुलती एक कहावत है 'जहाँ दृढ सकल्प होता है, वहाँ मार्ग अवश्य मिल जाता है।' यहाँ सभी की भावना थी, दृढ सकल्प था, अतः मार्ग भी निकल आया।

'राजा भगवानदास हरिदास एण्ड सन्स' के संचालकों की ओर से मकान वनाने के लिए कुछ जमीन तथा ५००१) रुपये का दान दिया गया और दि. १३–११–१९४३ को अर्थात् वि. सं. २००० की कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा शनिवार को उस भवन का शिलान्यास वम्वई के व्यापार-चक्रवर्ती श्रीमान् पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के वरद हस्त से सम्पन्न हुआ।

इस समय गुजराती समाज में अनेक प्रकार की प्रगति करने की भावना से 'गुजराती फ्री स्कूल तथा नवयुवक मण्डल' का नाम वदल कर '**गुजराती प्रगति समाज**' रखा गया था।

तदनन्तर इस समाज को रजिस्टर्ड संस्था वनाने में, विधान बनाकर पास कराने मे, नियमानुसार ट्रस्टी नियुक्त कर ट्रस्ट डीड करने मे तथा मकान से सम्वन्धित आवश्क चन्दा इकठ्टा करने आदि मे कुछ समय व्यतीत हुआ।

वाद मे मकान की नीव खुदाकर वँधवाने का समय आया, तव तो निजाम राज्य मे रजाकारों की हलचल प्रारम्भ हो गई। उसके कारण हैदरावाद के अनेक गुजराती परिवार हैदरावाद छोड़कर स्वदेश चले गए और इसी कारण शाला तथा पुस्तकालय का यत्न मन्द पड़ गया।

वर्षाऋतु के चन्द्रमा को जैसे छोटे-वड़े अनेक वादलों मे से होकर जाना पड़ता है, वैसे ही सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक सस्थाओं को भी छोटी-वड़ी अनेक आपत्तियों मे से गुजरना पड़ता है। जो संस्थाएँ आपत्तियों को पार कर जाती

है, उनका भविष्य उज्ज्वल बनता है। शेष सस्थाओ की आयु कम हो जाती है और उनके संचालको को अपयश का भागी बनना पड़ता है।

फिर तो हैदराबाद राज्य निजाम की सत्ता से मुक्त हुआ और वह स्वतन्त्र भारत का एक भाग बन गया। उसने सभी के हृदय मे नूतन आशा का संचार किया और गुजराती प्रगति समाज को प्रवृत्ति पूर्ववत् चलने लगी।

सन् १९४९ की बात है, कि मुझे हैदराबाद आये हुए प्राय. सात वर्ष बीत चुके थे और मै हैदराबाद के गुजराती समाज का एक विशिष्ट अग वन गया था। इतना ही नहीं, अपितु उसका मेरे साथ ममत्व भी हो गया था। अतः दि २४-७-१९४९ को गुजराती प्रगति समाज की कार्यवाहक समिति ने मुझे उसके सम्मान्य मन्त्री के रूप में चुन लिया। उसके बाद मेनेजिग ट्रस्टी के रूप में भी मेरा चुनाव हुआ था।

गुजराती प्रगति समाज का विकास देखने के लिए मैं प्रतीक्षा कर रहा था, तथा उसके लिए कुछ न कुछ करना मैं अपना कर्तव्य समझता था। अतः इस नियुक्ति का मैने सम्मान रखा तथा समाज के मन्त्री पद का दायित्व सम्हाल लिया।

उस समय समाज का मुख्य प्रयास प्रायः ८० विद्यार्थियों की प्राथमिक शाला और पुस्तकालय तक समित थी और रजा-कारों की हलचल के वाद उसमें भी कुछ शिथिलता आ गई थी। साथ ही आपस मे विचारों का जैसा चाहिए वैसा मेल नही था,

इससे कार्य मे इच्छित वेग नहीं आ सकता था। इस परिस्थिति मे मुझे पहला कर्तव्य यह सूझा कि सभी को स्नेहबन्धन में लाऊँ। और उसके लिए मैंने 'श्रीगुजराती विद्यार्थियों की 'मूकयाचना' नाम से एक बुलेटिन आरम्भ की और उसका श्रीगणेश उसी वर्ष के अगस्तमास की पन्द्रहवीं तारीख से किया। उसकी नकल मैं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिससे उस समय की परिस्थिति का स्पष्ट-चित्र पाठकों के समक्ष आ जाए।

"श्रीगुजराती विद्यार्थियों की मूकयाचना"

## प्रगति

### पन्द्रह अगस्त १९४९ प्रथम स्वतन्त्रता दिवस

### सम्मान्य मन्त्री का सन्देश

"शाला का कई बार निरीक्षण करने के बाद गुजराती विद्यार्थियों की मूकयाचना क्या है, यह मुझे इस शुभ दिवस पर समाज के समक्ष रखना ही चाहिए। मैं यह समझ पाया हूँ कि उनके बैठने के लिए नये मकान का निर्माण-कार्य अपूर्ण है। उसमें पर्याप्त जगह नहीं है। अर्थाभाव के कारण अच्छे शिक्षक नहीं है। तथा बालमन्दिर नही है; खेल-कूद-व्यायाम आदि के लिए मैदान नही है; उत्तम वाचनालय भी नही है। ये सब छात्रों की आवश्यकताएँ है।' हम इस शुभ दिवस पर निर्णय करके कार्यारंभ करे। इनकी माँगे हमें अर्थात् अभिभावकों को ही पूरी करनी है।

हैदराबाद मे बसे हुए गुजराती सामाजिक भावना से प्रेरित हो कर जिस उत्साह से तथा स्नेह से 'श्रीगुजराती प्रगति समाज' द्वारा जो कार्य कर रहे है, वह प्रशसनीय है, तथापि उसमें और विकास अपेक्षित है :

कार्यकारिणी मे मैंने कहा था कि यदि समाज के सभी भाइयों को उत्साह तथा प्रेम से अपने साथ मिला लें तो हमारे सभी कार्य पूर्ण हो सकते है। वार्षिक चुनाव की बैठक मे पाँच भाइयों की उपस्थिति थी और कार्यकारिणी मे कम से कम पन्द्रह व्यक्तियों का चयन अपेक्षित था। इससे हमारे समाज के प्रति होरही उदासीनता की कल्पना की जा सकती है।

यह उदासीनता क्यों है ? समाज के कार्य मे उदासीनत का अर्थ है स्वय के प्रति उदासीनता। समाज के कार्य मे मता भेद हो तो यह सहज है, और आवश्यक भी है। परन्तु समाज क कार्य के पीछे प्रेम हो तो हमारे भिन्न-भिन्न विचार भी स्वागत के योग्य बन जाते है। भिन्न विचारों मे से नया कार्य और नया मार्ग ढूँढा जा सकता है। हम गुजरातियों की समृद्धि हमारी सामाजिक सस्थाओं की प्रगति से ही आँकी जा सकती है। यदि हम अपने समाज पर ध्यान दे तो हर तरह से प्रगति कर सकेंगे।

भाइयो तथा बहनो! प्रत्येक गुजराती के पास अपना सन्देश पहुँचा सके इसके लिए शीघ्र ही एक पाक्षिक अथवा मासिक पत्र प्रकाशित करना आवश्यक है। उसमे प्रकाशनार्थ आप सब अपने

विचार नीचे लिखे पते पर भेजने का कष्ट करें। एक-दूसरे के विचार जानकर, एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझेंगे तो मुझे आशा है कि विद्यार्थियों की अनबोली माँगों को, जिन्हें उनके अभिभावओं को ही पूर्ण करना है, हमारा समृद्ध समाज सरलता से पूर्ण कर सकेगा। सभी गुजराती भाइयों से मेरी प्रार्थना है कि इस समाज को व्यक्तिगत सम्पत्ति और वैयक्तिक समृद्धि मानकर उदासीनता छोड़ दें; इसके सदस्य बन कर इसके कार्य में पूरा-पूरा भाग लें। स्वातन्त्र्य दिवस की बधाई।'

आपका

टोकरशी लाल जी कापड़िया

अवैतनिक मन्त्री

## गुजराती प्रगति समाज

इस प्रकार समय समय पर सूचना पत्र प्रकाशित करता रहा। फलतः सभा में अच्छी उपस्थिति होने लगी और एक के बाद एक प्रश्न का समाधान होने लगा। चार-चार मील चलते रहें तो, लम्बा रास्ता भी कट जाता है और जहाँ पहुँचने का लक्ष्य हो वहाँ पहुँचा जा सकता है।

गुजराती प्रगति समाज ने गत १७ वर्षों में जो प्रगति की है उसका अनुमान सम्प्रति चल रही निम्न लिखित प्रवृत्तियों से हो सकेगा।

गुजराती प्रगति समाज, हैदराबाद, १६६२
भारत के वित्तमंत्री श्री मोरारजी देशाई के साथ लेखक।

गुजराती प्रगति समाज के अध्यक्ष श्री छबीलदास मेहता
लेखक का परिचय श्री हितेन्द्र देशाई से करा रहे हैं।

श्री कन्हैयालाल मुन्शी तथा श्रीमती लीलावती मुन्शी गुजराती प्रगति समाज के कार्यकर्ताओं के साथ ।

१. **शिक्षण समिति** :—इस समिति की देखरेख में शाला का सञ्चालन होता है। श्री गुजराती विद्यामन्दिर (शाला का बाद मे रखा गया नाम) में इस समय ७२५ विद्यार्थी—(बालक बालिकाएँ) अध्ययन करते हैं। प्राथमिक अध्ययन गुजराती भाषा में और इसके बाद अंग्रेजी तथा हिन्दी के माध्यम से मैट्रिक तक की कक्षाएँ चलती है।

२. **विद्यार्थी विकास समिति** :—यह समिति कॉलेज में पढ़ने वाले गरीब विद्यार्थी भाई-बहिनों को छात्र-वृत्ति और पाठ्य-पुस्तकें देती है।

३. **प्रकाशन समिति** :—यह समिति प्रति मास 'प्रगति' नामक मासिक पत्र साइक्लोस्टाइल से प्रकाशित करती है। उसमें समाज की विविध प्रवृत्तियों के समाचार दिये जाते है। समाज के सभी सदस्यों को यह बिना मूल्य दिया जाता है।

४. **गुजरातीवाड़ी और अतिथिगृह समिति** :—यह समिति समाज द्वारा निर्मित भवन और अतिथिगृह की व्यवस्था सम्हालती है। गुजराती भवन का विवाह के अवसर पर सदुपयोग होता है। गद्द, पंखे आदि की उत्तम व्यवस्था है। अतिथि गृह प्रवासी भाइयों के लिए ठहरने का एक सुविधापूर्ण सुन्दर स्थान है।

५. **कार्यक्रम समिति** :—यह समिति वर्ष के अन्तर्गत आने-वाले त्यौहारों के दिनों का कार्यक्रम बना लेती है तथा मनोरजन क कार्यक्रम आयोजित करके समाज के लिए चन्दा इकठ्टा करती है। तथा यहाँ आनेवाले अतिथियों का सम्मान करती है।

६. **साधन सहायक समिति** :—यह समिति विवाह जैसे शुभ अवसरों पर किये जानेवाले भोज समारम्भ में आवश्यक बरतन आदि की व्यवस्था करती है। यहाँ जो बरतन रखे गये है, उनका लाभ नियत किराया देकर कोई भी ले सकता है।

७. **प्रगति पुस्तकालय** :—इसमें ४००० पुस्तकें है। दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक कुल मिलकर ३१ पत्रपत्रिकाएँ आती हैं। वाचनालय का हॉल सुन्दर बना हुआ है।

८. **भवन-निर्माण समिति** :—समाज का भवन, शाला का भवन, अतिथिगृह तथा अन्य स्थान पर जहाँ निर्माण कार्य की आवश्यकता होती है, वहाँ इस समिति द्वारा निर्माण कार्य होता है।

९. **बालमन्दिर** :—समाज के अन्तर्गत भगिनी समाज चलता है। वही इस बालमन्दिर का संचालन करता है। उसकी योजना और व्यवस्था आदर्शरूप है।

१०. **कलामण्डल** :—विविध प्रकार की कलाओं को प्रोत्साहन देता है।

समाज के अन्तर्गत चलनेवाला 'गुजराती सेवा मण्डल' निम्नलिखत प्रवृत्तियों को सम्हालता है :—

१. शिक्षण-स्वास्थ्य, २. सेवादल-स्वयंसेवक, ३. साहित्य, ४. सङ्गीत, ५ क्लब, ६. समूहभोज-पर्यटन, ७. मनोरंजन, ८. गूर्जर बालमण्डल, ९. सहायक फण्ड।

समाज के अन्तर्गत चलनेवाला श्री गुजराती भगिनी-मण्डल निम्नलिखित प्रवृत्तियों को सम्हालता है :—

१. नृत्यकला वर्ग, २. सिलाईकला वर्ग, ३. ड्रगबेंक, ४. प्राथमिक उपचार वर्ग, ५. पर्यटन, ६. मनोरञ्जन ।

इन प्रवृत्तियों के अतिरिक्त कोई भी नेता जब हैदराबाद पधारें तब उनके स्वागत-सत्कार की प्रवृत्ति भी रखी गई है और उसमें मैंने प्रमुख रूप से अभिरुचि दिखाई है । इस प्रकार गुजरात के मुख्य मन्त्री श्री जीवराज महेता, श्री बलवन्तराय महेता, श्री हितेन्द्र देसाई तथा गुजरातके राज्यपाल श्री मेंहदी नवाज जंग और अन्य मन्त्रियों का सत्कार हुआ है । उनके तथा भारत के अन्य अनेक महान व्यक्तियों के अनुभवपूर्ण भाषण सुनने का लाभ समाज को मिला है ।

सन् १९६४ में पूज्य श्री रविशंकर महाराज हैदराबाद पधारे, तब समाज की ओर से उनका भावपूर्ण स्वागत हुआ था और उनकी शुद्ध, निर्मल वाणी सभी ने एकाग्र मन से सुनी थी ।

इसके अतिरिक्त शाला के नये भवन के उद्घाटन के लिए भारत के उस समय के वित्तमन्त्री श्री मुरारजी देसाई को आमन्त्रित किया गया, तब उनके विचार सुनने का अवसर मिला था । उस समय आन्ध्र प्रदेश के मुख्य मन्त्री, तथा कुछ अन्य मन्त्रीगण भी पधारे थे और उन्होने गुजराती प्रगति समाज की प्रवृत्तियों की प्रशसा की थी । इसके बाद भारत के उद्योग मन्त्री श्री मनु-

भाई शाह पधारे, तब भी समाज ने उनका हार्दिक स्वागत किया और उनके उद्‌बोधन से लाभान्वित हुआ।

पुस्तकालय को पच्चीस वर्ष पूर्ण हुए; उसके निमित्त दि. ७-२-६५ को उसका रजत महोत्सव मनाया गया, तब सौराष्ट्र के प्रधान उद्योगपति सेठ नानजीभाई कालिदास मुख्य अतिथि के रूप मे पधारे थे। उस समय नये भवन के लिए तीन लाख रुपये एकत्र करने का संकल्प किया गया था, और उसके बाद मित्रों के साथ प्रतिदिन उगाही के लिए जाकर मैंने सवा दो लाख रुपये इकट्‌ठे किए थे। इसके निमित्त हमारे पुराने स्नेही गुजरात के राज्यपाल मेहंदी नवाज जंग के आमन्त्रण पर समाज के अध्यक्ष श्री प्रेमजीभाई लालजी, उपाध्यक्ष श्री छबीलदास महेता, मेनेजिंग ट्रस्टी श्री वल्लभदास भाई तथा निर्माणकार्य समिति के अध्यक्ष श्री चंदूलाल भाई डंगोरिया आदि के साथ मैं अहमदाबाद गया था। वहाँ हमारा अच्छा सत्कार हुआ और भवन-निर्माण फण्ड में बीस हजार के करीब रकम प्राप्त हुई। आज तक सम्पत्ति एव साधन-सामग्री को मिला कर आठ लाख रुपये से अधिक राशि समाज के सेवाकार्यो के लिए प्राप्त हुई है।

यहा नम्रतापूर्वक इतना स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि उपर्युक्त समितियाँ समाज के सभी कार्यो के लिए बनी हुई हैं और इनके सञ्चालक इनमें अच्छी लगन से कार्य करते है। अतः सम्मान्य मन्त्री को एकता का माध्यम बनकर प्रबुद्ध सेवक की भाँति कर्तव्य निभाना पड़ता है।

आज तो प्रगति समाज मेरे जीवन से जुड़ गया है और सदा उसकी प्रगति के ही विचार मन मे उठते है। जब से मैने इस

संस्था का मन्त्री पद सम्हाला है, तब से बीच के दो वर्षों को छोड़ कर मैं इस पद पर स्थिर रहा हूँ। बीच में कार्यकारिणी ने इस समाज के अध्यक्ष के रूप में मेरा दो बार चयन किया, किन्तु मैंने यह मान कर कि अग्रणी बनने की अपेक्षा सिपाही बनने से ही कर्तव्य का अधिक पालन हो सकेगा, उसे स्वीकार नहीं किया।

विगत १६-१७ वर्षों में समाज के लिए मैं जो कुछ कर सका; उसमें अनेक व्यक्तियों का साथ और सहयोग मिला था, तथा उनके साथ मेरे व्यक्तिगत सम्बन्ध हो गये थे। जैसे कि— श्री प्रेमजीभाई लालजी, श्रीवल्लभदास भाई, श्री चन्दूलाल भाई डगोरिया, श्रीछवीलदास भाई महेता, श्रीगोविन्ददास भाई महेता, श्री बालाकिशन भाई तथा उनके बन्धुगण, श्रीभीमशी भाई डुंगरशी, श्री भाणजीभाई खेराज, श्री डी. आर. देसाई, श्री लक्ष्मीशंकर बी. भट्ट, श्री रामदासभाई जे. शाह, श्रीविष्णुप्रसाद, श्रीनवीनभाई, श्रीधीरुभाई, श्रीवसन्तभाई पारेख, श्री नटवरलाल-कोठारी, श्रीलक्ष्मीचन्द केणीआ, श्री प्रफुल्लभाई देसाई, श्रीप्रबोधभाई उदाणी, श्रीमती कुमुदबहिन नायक, श्रीमती नन्दिनी बहिन गाँधी आदि आदि।

आज 'गुजराती प्रगति समाज' हैदराबाद के गुजराती समाज का प्रतिनिधित्व करनेवाली एक अत्यन्त उपयोगी संस्था बन गई है और उसका भविष्य उज्ज्वल है।

२६

## दि हैदराबाद चिल्ड्रन्स ऐड सोसायटी

सन् १९४८–४९ में हैदरावाद जिला के कलेक्टर मि. रिवेलो के साथ श्री रामकृष्णजी धूत का एक महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुआ। उसका सार यह था कि–जो बालक किसी कारण से बचपन से ही अपराध करने के अभ्यस्त बन गये हैं और जिन्हें जेल में रहने का दण्ड दिया गया है, वे वहाँ सुधरने की अपेक्षा विगड़ते हैं और जेल से छूटने के वाद प्रायः वैसे ही अपराध करते रहते हैं। अपराध करने की उनकी आदत-सी पड़ जाती है और हमेशा के लिए वे समाज विरोधी वन जाते है। इस समय उन्हें बड़ी उम्र के कैदियों के साथ ही रखा जाता है। उन्हें पृथक से अच्छे वातावरण में रखने की दृष्टि से 'चिल्ड्रन ऐड सोसायटी' जैसी एक संस्था खड़ी करनी चाहिए जो कि ऐसे बालकों को अपने अधिकार में लेकर उनका घरेलू वातावरण में पोषण करे और अच्छी शिक्षा देकर आदर्श नागरिक बनाये।

इसके बाद रामकृष्णजी धूत ने यह बात जव मेरे सामने रखी तब मैंने उसका समर्थन किया और 'धर्म के कार्य में शिथिलता

नही करनी चाहिए' इस सूत्र को सामने रखकर इसकी शीघ्र स्थापना कर देने पर बल दिया। उस सोसायटी को चलाने के लिए १०००० दस हजार रुपये की आवश्यकता होगी, अत हमने यह रकम वसूल करने के लिए कुछ आजीवन सदस्य, तथा वार्षिक सदस्य बनाने की व्यवस्था कर दी। किन्तु यह कार्य विशाल था और सोसायटी की नीव मजबूत हो तभी ध्येय पूर्ण हो सकता था, इसलिए हमने कुछ अधिकारियों तथा मन्त्रियो से सम्पर्क किया, इससे यह ज्ञात हो गया कि ऐसी सस्था का वे स्वागत करेगे और उसे शासन की ओर से उचित मात्रा में अनुदान (ग्राट) दिला कर सहायता करेग। उसकी तैयारी के लिए कलेक्टर मि. रीबेलो, श्रीधूतजी तथा अन्य मित्रो के साथ मेरे कार्यालय मे बार-बार सभाएँ होती थी।

बाद में तो हैदराबाद स्टेट में 'चिल्ड्रन्स एँक्ट' पास हुआ और उस समय के चीफ़ एडमिनिस्ट्रेटर श्री वेल्लोडी की धर्मपत्नी श्रीमती कुट्टी बेल्लोडी की अध्यक्षता में 'दि हैदराबाद चिल्ड्रन ऐड सोसायटी' की स्थापना हुई। साथ ही इस सस्था के सञ्चालन के लिए व्यापक समिति बनाई गई। हैदराबाद जिले के कलेक्टर, कारागारों के इन्सपेक्टर जनरल, पुलिस कमीशनर, चिकित्साविभाग के निदेशक, स्वास्थ्यविभाग के निदेशक आदि एक्स अफिशियो (पदेन सदस्य) बनाए गये। मुझे उसका कोषाध्यक्ष पद दिया गया और मैने उसे सहर्ष स्वीकार किया।

यह सन् १९५० की घटना है। उस समय कारागार में बड़ी आयु के कैदियों के साथ ६ से १८ वर्ष तक के अपराधी

बालक लगभग ६७ थे। उन्हें सरकार ने चिल्ड्रन ऐड सोसायटी को सौंप दिये। इन बालकों को पढ़ाने तथा उनके अपराधी मन का सुधार करने के लिए एक घरेलू उपचार केन्द्र आरम्भ किया गया और उसका नाम 'श्रीमती कुट्टी वेल्लोडी चिल्ड्रन होम' रखा गया। बाद में सरकार ने उस होम को अपने अधीन में ले लिया।

धीरे धीरे 'चिल्ड्रन ऐड सोसायटी' का विकास होने लगा और वह बालकों के आशीर्वाद प्राप्त करने लगी। इस समय उसमें ६०० से अधिक बालक हैं।

सन् १९५३-५४ में हैदराबाद राज्य के गृह मन्त्री श्रीदिगम्बरराव बिन्दुजी इस संस्था के अध्यक्ष थे। उस समय व्यवस्थापक-समिति में मैने प्रस्ताव रखा कि—"जो वालक किसी कारणवश मातापिता के कहने में न रह कर आवारा बन गये हों, जो भीख माँगते हों, माता-पिता की मृत्यु हो जाने से अथवा जेल आदि में जाने से जो निराधार बन गये हों तथा माता-पिता के मानसिक रोगों के शिकार बन जाने के कारण जो कठिन परिस्थिति में पड़ गये हों, उन सबको हमें अपना लेना चाहिए और उनके लिए एक छात्रावास अर्थात् बालनिवास बनाना चाहिए।" इस शुभ कार्य के आरम्भ के लिए मैने १०,००० दस हजार रुपये भेंट देने की इच्छा भी व्यक्त की।

यह प्रस्ताव सभी को उचित प्रतीत हुआ और बालनिवास आरम्भ करने का निश्चय उसी सभा में किया गया। दि. २-१०-५४

गुजराती प्रगति समाज में श्री मोरारजी देशाई, कु॰ मणिबहिन पटेल, डा॰ एन॰ संजीवरेड्डी, श्री श्रीमन्नारायण, श्री ब्रह्मानन्द रेड्डी अदि के साथ लेखक।

गुजराती प्रगति समाज हैदराबाद - की कार्य-कारिणि समिति
१९६४-६५
लेखक बाईं ओर तीसरे बैठे हैं।

गुजरात के मुख्य मंत्री श्री जीवराज मेहता के साथ लेखक और गुजराती प्रगति समाज के सदस्य.

को आनन्द तथा उत्साहपूर्ण वातावरण में उसका शुभारम्भ हुआ। उस वालनिवास के लिये एक आन्तरिक समिति का निर्माण हुआ और उसका अध्यक्ष मुझे ही वनाया गया। उस कार्य के उत्तरदायित्व को भी मैंने सहर्ष स्वीकार किया।

इसके पश्चात् उस बालनिवास के साथ नाम जोड़ने का प्रश्न उठा और उसमें मेरा नाम लगाने का प्रस्ताव आया; किन्तु मैंने उसे सविनय अस्वीकृत कर दिया। मेरे जीवन में अनेक संस्थाओं को निर्मित करने का अवसर मिला है; तथा छोटे-वड़े दान देने का भी सुअवसर मिला है; किन्तु उसमे मेरा अपना नाम जोड़ने के विचार से मैं दूर ही रहा हूँ। अन्य लोगों के विचार अथवा अनुभव चाहे जो हो, किन्तु मुझे अपने ऐसे प्रसंगों पर अपना कर्तव्य समझकर शुद्ध भावना से कार्य करने में ही अधिक आनन्द मिला है और उससे आत्मा को सन्तोष मिला है।

पाँच वर्ष वाद उपर्युक्त वालनिवास के लिए मेरी माता श्री वेजबाई का नाम जोड़ने का प्रस्ताव आया। मेरे परिवार के व्यक्ति भी ऐसा विचार करते थे कि पूज्य माता जी श्री वेजवाई की स्मृति मे हमें कुछ करना चाहिए। सस्था के उत्साही मन्त्री श्री वी· के· धगे तथा अन्य-कार्यकर्ताओं ने उनके इस विचार को दृढता से पुष्ट किया, अत: अन्त में मुझे अपनी सम्मति देनी पड़ी और उसी समय हमारे कुटुम्बीजनो की ओर से इस सस्था को कुछ किस्तों में २०,००० बीस हजार रुपये का दान दिया गया।

दि. ३१-७-६० को भारत के राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र बाबू के कर कमलों से इस बालनिवास का विधिवत् 'वेजबाई, वालनिवास'

का नामकरण किया गया। उस समय एक भव्य समारोह आयोजित किया गया था और उसमें हैदराबाद राज्य के मन्त्री, अधिकारी तथा अन्य प्रमुख नागरिक बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित हुए थे। डॉ. राजेन्द्र प्रसादजी ने इस सस्था की उपयोगिता के बारे में सुन्दर भापण दिया और कार्यकर्ताओं को धन्यवाद दिया था।

इस संस्था के साथ मेरी पूज्य माताजी का नाम जोड़ा गया, यह तो ठीक है, किन्तु मेरी ऐसी इच्छा थी कि इस संस्था के बालकों पर पूज्य गांधीजी के जीवन की गहरी छाप पड़े, तदर्थ उनके कुछ चित्र बनवा कर यहाँ लगाये जाएँ। इसके लिये मैंने पूज्य गाँधी जी के पौत्र श्री कनुगांधी से सम्पर्क किया जो उत्तम कोटि के कलाकार हैं। उन्होंने गांधीजी के जीवन का दिग्दर्शन कराने वाले चित्रों का 'एन्लार्ज' प्रतियाँ तैयार कर दी, जिनका उद्‌घाटन इस अवसर पर 'गांधी दर्शन' के नाम से डॉ राजेन्द्रप्रसाद जी के शुभहस्त से किया गया था।

यहाँ प्रसंगवश यह भी बतला दूं कि यह चित्र संग्रह बहुत आकर्षक बन गया है और यहाँ आनेवाले प्रायः प्रत्येक नेता ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। स्व॰ श्री लालबहादुर शास्त्री जब इस संस्था में पधारे, उस समय उन्होंने इन चित्रों को देख कर प्रसन्नता व्यक्त की थी, और उत्तर प्रदेश में स्थापित एक आश्रम के लिए इसके समान ही एक और चित्र संग्रह तैयार करवा देने की माँग की थी। इससे इस चित्र संग्रह का महत्त्व समझा जा सकता है।

'वेजबाई बालनिवास' नानलनगर में बना हुआ है। उसका हवा, प्रकाश और अन्य सुविधाओं से सम्पन्न अपना भवन है। अभी ११० विद्यार्थियों को शासकीय विद्यालयों में भेजा जाता है और शेष समय में कुछ औद्योगिक शिक्षा दी जाती है। बालनिवास में पू॰ गाँधीजी की पुस्तकें तथा अन्य बालोपयोगी उत्तम साहित्य संग्रहीत है। पू गाधीजी द्वारा स्वीकृत प्रार्थना बालक प्रतिदिन करते रहते है।

इस बालनिवास में रह कर जो छात्र तैयार हुए है, उनमे से कुछ शासकीय सेवा कर रहे है और कुछ स्वतन्त्र नौकरियाँ। थोड़े से बालकों ने छोटे पैमाने पर स्वतत्र व्यवसाय आरम्भ किया है। यहाँ के छात्रों के चरित्र के बारे में तथा अध्ययन की योग्यता के बारे में शाला के अधिकारियों के अभिप्राय बहुत ही अच्छे आये है।

इस सस्था का वार्षिक व्यय लगभग ४७,००० रुपये है। इसके लिए हैदराबाद राज्य की ओर से प्राय: १४००० रुपये तथा सेन्ट्रल सोशल वेलफेर बोर्ड द्वारा ५००० के करीब अनुदान मिलता है। शेष रकम क्लब, व्यापारी पेढियों तथा दाताओ की ओर से उपलब्ध होती हैं।

'चिल्ड्रन ऐड सोसायटी' की तरफ़ से तीन और सेवा कार्यो का सचालन हो रहा है, उनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :

इनमें पहला हैं 'राधाकिशन होम' जहाँ संयोगवश गर्भवती बनी हुई कुमारियों के लिए गुप्त रूप से प्रसूति की व्यवस्था की

जाती है और वे जिन बच्चों को जन्म देती हैं उन्हें प्रशिक्षित धात्रियों की देखरेख में पाला पोसा जाता है। विशेषत: जिन सन्तति-विहीन गृहस्थों को बालकों की आवश्यकता हो, उन्हें ये बालक कुछ शर्तो पर दिये जाते है और शेष बालकों को पाँच-छ: वर्ष तक यही रख कर उनका पालन पोषण किया जाता है। बाद में शिक्षण आदि के लिए 'बेजबाई बालनिवास' अथवा 'राधाकिशन बालिका होम' में भेज दिया जाता है।

समाज की एक विशेष प्रकार की रचना, कतिपय कुरीतियाँ, विलासी वातावरण, धार्मिक तथा नैतिक संस्कारों की अवहेलना आदि कारणों से कुछ कुमारियाँ गर्भवती बनती हैं। वे अपनी इज्जत बचाने के लिए आत्महत्या कर लेती हैं, अथवा गर्भपात का आसरा लेती है, अथवा प्रसूति के पश्चात् बालकों को मृत अथवा जीवित अवस्था में कहीं भी छोड़ देती है। जिन बालकों को देव-प्रदत्त मानकर स्नेहपूर्वक पालन करना चाहिए, उनकी ऐसी करुण दशा देखकर किसे कष्ट न होगा ? तात्पर्य यह कि बालकों के प्रति ममत्व की भावना से यह प्रवृत्ति आरम्भ की गई है और इसे देश के नेताओं तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के आशीर्वाद प्राप्त हुए है।

इस सस्था का मकान बेजबाई बालनिवास के निकट मुनीर-बाग 'टोली चौकी' पर स्थित है, अत: वहाँ आनेवालों की गुप्तता पूर्णरूप से बनी रही है।

संस्था के उत्साही मन्त्री श्री वी. के. धगे ने इस प्रवृत्ति को आरम्भ करने के लिए प्राथमिक दान के रूप में १०,००० दस हजार रुपये का दान दिया था। उनकी माता का नाम

राधा और पिता का नाम किशन था, उसी आधार पर इस संस्था का नाम 'राधा किशन होम' कर दिया गया।

इस राधाकिशन होम का उद्‌घाटन दि. ६-१-५५ को भारत के उपराष्ट्रपति डॉ. एस. राधाकृष्णन् के हाथों हुआ था। इसका वार्षिक व्यय लगभग ४०,००० रु है। इसके लिये आन्ध्र-प्रदेश राज्य सरकार ८३०० रु० का तथा सेन्ट्रल सोशल वेल्फेयर बोर्ड ४६०० रुपये का वार्षिक अनुदान देते हैं। शेष द्रव्य समाज की ओर से प्राप्त होता है। वर्तमान में यह संस्था लगभग ४५ बालकों का लालन पालन कर रही है।

वर्ष में १५-२० कुमारिकाएँ इस विभाग से रक्षा पाती हैं। संस्था के अधिकारी उन कुमारियो का परिचय आदि नही ले सकते हैं। उनकी इज्जत बची रहे तदर्थ पूरी सावधानी रखी जाती है।

तीन प्रवृत्तियों में दूसरी प्रवृत्ति **'राधाकिशन बालिका भवन'** है, जहाँ निराधार बालिकाओं को आश्रय दिया जाता है और उन्हे उचित शिक्षा-सस्कार देकर जीवन-यात्रा के लिये तैयार किया जाता है। श्री वी. के. धगेजी की ओर से इस प्रवृत्ति का आरम्भ करने के लिए १०,००० दस हजार रुपये का प्राथमिक दान मिला था।

इस विभाग का उद्‌घाटन दि, ४-२-६१ को भारत के महामान्य प्रधानमन्त्री पं. श्री जवाहरलाल नेहरू के हाथों करवाने का निर्णय हुआ, तब मैं बम्बई में था। वहाँ मुझे श्री धगेजी की

ओर से एक अर्जेन्ट तार मिला कि 'मुझे किसी भी तरह दि. ४–२–६१ को प्रातः कालीन प्लेन से हैदराबाद पहुँचना चाहिए। पं. जवाहरलाल पहले वेजबाई बालनिवास में पधारेंगे। उन्हें सारी स्थिति आपको समझानी है।'

यह सन्देश मिलते ही मैं दि. ४-२-६१ को वायुयान से हैदराबाद पहुँचा। पण्डित जी भी सुबह के वायुयान में दिल्ली से हैदराबाद आये और विमान स्थल से सीधे वेजबाई बालनिवास में पधारे। साथ में आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल, मुख्य मन्त्री तथा अन्य अग्रगण्य नेता भी थे। उन्होंने संस्था में भ्रमण करके सब कुछ देखा और कुछ सूक्ष्मता से भरे हुए प्रश्न पूछे। मैंने उन सबके यथोचित उत्तर दिये। तदनन्तर वे पितृवात्सल्य से बालकों से मिले। इससे बालकों को पर्याप्त आनन्द हुआ।

सन् १९३७ में ब्रह्मदेश के मोलमीन में पण्डितजी पधारे थे। साथ में उनकी पुत्री इन्दिरा भी थी। तब उनकी व्यक्तिगत व्यवस्था देखने के लिए मैं भी नियुक्त था, फलतः उनके साथ वार्तालाप करने तथा उनकी सेवा करने का लाभ प्राप्त हुआ था। पुनः १९५३ मे हैदराबाद में महासभा का अधिवेशन जब हुआ था, तब तथा सन् १९५८ में हैदराबाद में ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की सभा हुई तब व्यवस्था का भार मेरे हाथों में था, अतः उनके निकट परिचय का लाभ मिला था। सन् १९६२ में उन्होंने पुनः पधार कर सालारजंग म्यूजियम के नये भवन का उद्घाटन किया, तब पुनः दर्शन हुए। उस समय उनकी शारीरिक और मानसिक स्थिति देखकर मैं अत्यन्त दुखी हुआ। चीन

ने मित्रता मे अचानक धोखा देकर जो क्रूर आक्रमण किया था, उसके बाद पण्डितजी का हृदय टूट गया था और शरीर की स्थिति बिगड़ती गई। गत ३० वर्षो से मैं उनका जोश देखता आया था। उनकी स्फूर्ति जवानों को भी लज्जित करनेवाली थी, किन्तु आज वह क्षीण हो रही थी। दि. २७-५-६४ को वे जगत को छोड़ कर चले जाएँगे ऐसी तो कल्पना भी कैसे की जा सकती थी ? परन्तु भवितव्यता के कारण ऐसा हुआ और सारा देश शोक मे डूब गया।

इस विभाग का मकान वेजबाई बालनिवास के पास ही नानलनगर में है। उसका वार्षिक व्यय लगभग ३०,०००) रु॰ होता है। इस व्यय के लिए आन्ध्र-प्रदेश स्टेट गवर्नमेन्ट की ओर से ८१००, रु. तथा सेन्ट्रल सोशल वेल्फेर बोर्ड द्वारा ५०००, रुपये का अनुदान मिलता है।

उपर्युक्त तीन प्रवृत्तियों में तीसरी प्रवृत्ति राधाकिशन बाल चिकित्सालय की है। इस विभाग में जो बालक दीर्घकालीन बीमारी से ग्रस्त हों और जिनका कोई अन्य आधार न हो, उन्हें यहाँ रखकर उनकी योग्य औषधोपचार आदि से देख-रेख की जाती है।

श्री वी॰ के. धगे एन्सेस्ट्रल ट्रस्ट की ओर से प्राप्त ७०००) रुपये की प्राथमिक सहायता से यह विभाग दि. २-१०-१९६२ से आरम्भ किया गया था और इसका उद्घाटन दि. १५-१०-६४ को भारत के राष्ट्रपति डॉ॰ एस. राधाकृष्णन् के वरद हस्त से किया गया था।

इस विभाग का अपना स्वतन्त्र भवन है और २० रोगियों को एक साथ लाभ पहुँचाने की व्यवस्था है। इसका वार्षिक व्यय १३,०००) रु० होता है। व्यय के लिये आन्ध्र-प्रदेश स्टेट गवर्नमेन्ट ४८०० रु० का वार्षिक अनुदान देती है। विशेष अनुदान प्राप्ति के प्रयत्न चालू हैं।

हैदराबाद शहर में समाज-कल्याण की जो प्रवृत्तियाँ चल रही है, उनमें यह संस्था अधिक ध्यान आकृष्ट करनेवाली है। अब तक डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, डॉ० एस० राधाकृष्णन् श्री जवाहरलाल नेहरू, श्री लालबहादुर शास्त्री, श्री मुरारजी देसाई, डॉ. बी० रामकृष्ण राव, श्री मेहदी नवाज जंग, मिसेस वायोलेट आल्वा, श्री वी० के. आर. वी. राव. आदि तथा श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख, श्रीमती अच्चम्मा मथाई, श्रीताहेरा अली बग, श्रीमती श्यामादेवी आदि अग्रगण्य सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी इस संस्था का साक्षात्कार किया है और सस्था के कार्य की प्रशंसा की है।

यहाँ जब श्रीचन्दूलाल त्रिवेदी राज्यपाल थे, तब उनकी पत्नी श्रीकुसुम त्रिवेदी इस संस्था की अध्यक्षा थी, तदन्तर गत पाँच वर्षो से डॉ० एन. संजीव रेड्डी—जो कि केन्द्र सरकार के मन्त्रीमण्डल में वाहनव्यवहार तथा विमान -विभाग में मन्त्री है, वे संस्था का अध्यक्षपद सम्हाल रहे हैं। इस संस्था के पाँच उपाध्यक्ष हैं, जिनमें मेरा नाम गत सात-आठ वर्ष से चुनकर आता रहा है। इसके मन्त्री श्री वी. के० धगे हैं और सहायक मन्त्रियों में श्रीमती तहेमीनाबाई धगे तथा डॉ. ए० के. शाह है। श्री वी० के. धगे तथा मिसेस तहैमीना बहिन धगे दोनों इस संस्था

प० जवाहरलाल नेहरू के वेजबाई बालनिवास का निरीक्षण करते समय श्रीमती ललिता सच्चर (गवर्नर की पत्नी) और लेखक उन्हें गाँधीदर्शन कक्ष दिखा रहे है। १९६२.

५१ वें वर्षगांठ के अवसर पर चिल्ड्रेन्स ऐड सोसाइटी के
बालकों के बीच में लेखक १९६६.
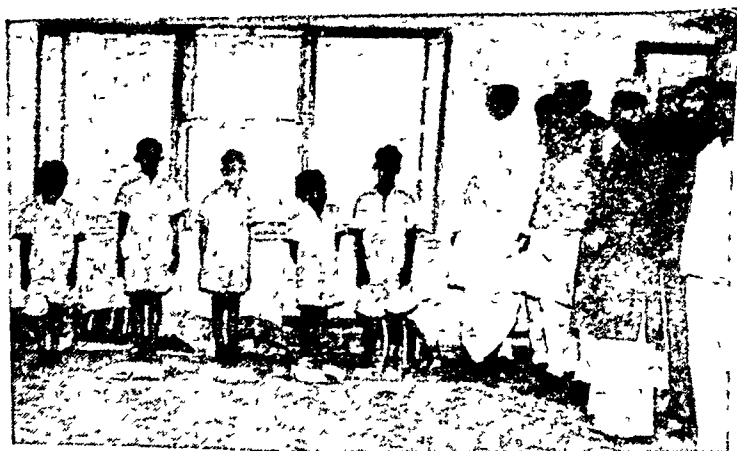
श्री मोरारजी देशाई वेजबाई बालनिवास, हैदराबाद का
निरीक्षण कर रहे हैं।

प० जवाहरलाल नेहरू के वेजबाई बालनिवास का निरीक्षण करते समय श्रीमती ललिता सच्चर (गवर्नर की पत्नी) और लेखक उन्हें गाँधीदर्शन कक्ष दिखा रहे है। १९६२.

५१ वें वर्षगांठ के अवसर पर चिल्ड्रेन्स ऐड सोसाइटी के बालकों के बीच में लेखक १९६६.

श्री मोरारजी देशाई वेजबाई बालनिवास, हैदराबाद का निरीक्षण कर रहे हैं।

वेजबाई बालनिवास में पण्डित जवाहरलाल नेहरू के साथ लेखक वार्तालाप कर रहें है। १९६१

राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन 'हैदराबाद चिलड्रनस ऐंड सोसाइटी' द्वारा संचालित राधाकिषन होम का निरीक्षण कर रहे हैं। लेखक दाहिनी तरफ़ आखिर में खड़े हैं।

के प्राण है। ये बालकों को अपना ही मानकर इस संस्था को तन-मन-धन समर्पित कर रहे है।

जिस वृक्ष का आरोपण अपने हाथ से किया गया हो, वह कालान्तर में बड़ा हो और मधुर फल देने लगे, तव उसे देखकर हमारी आत्मा का प्रसन्न होना स्वाभाविक है।

यह सस्था अभी और विकसित होगी और समस्त भारत की एक आदर्श सस्था वनेगी, ऐसी मेरी आन्तरिक अभि-लापा है।

यह प्रकरण समाप्त करने से पूर्व यह भी बतला दूँ कि जेल में १८ वर्ष तक के वालक इन दिनों ६०० के करीब है। उनके लिये 'गवर्नमेन्ट सर्टिफाइड स्कूल' भी चलता है। उसकी समिति में आन्ध्र-प्रदेश सरकार आरम्भ से अव तक मुझे चुनती है। इस समिति के अतिरिक्त 'प्रिजनर ऐड सोसायटी' की कार्यकारिणी समिति में भी वर्पों से कार्य कर रहा हूँ वह सोसायटि आन्ध्र के सभी जेलों से छूटे हुए छोटे-बड़े कैदियो को उत्तम चाल चलन सिखाने पुन॰ काम-काज पर लगाने का काम करती है। उसकी ओर से प्रशिक्षित प्रतिनिधियों को पूरे वेतन पर इस कार्य के लिए नियुक्त किया हुआ है। इस कार्य में रुचि लेता रहा हूँ अतः वड़ी जेल में भी जेल के सुपरिन्टेण्डेट के साथ कई वार जाना हुआ है।

इस प्रकार समाज सेवा में सवसे उच्च माने जाने वाले मानवता कार्य से मैं सम्वद्ध रहा हूं, उसका सारा अनुभव इस छोटे-से ग्रन्थ में किस प्रकार लिखा जा सकता है?

२७

# व्यापारी मण्डल आदि

राष्ट्रीय, शैक्षणिक तथा सामाजिक प्रवृत्तियों के साथ मैं किस प्रकार घुलता-मिलता गया, इसका वर्णन पिछले प्रकरणो में किया है। अब प्रस्तुत प्रकरण में व्यापारियों का हित करनेवाली सस्थाओं के सम्बन्ध में मैंने जो कार्य किये, उनका दिग्दर्शन कराऊँगा।

सन् १९४२ में जब मैं हैदराबाद आया, तब अनाज, तिलहन आदि के व्यापारी एक साथ मिलकर कार्य करे-ऐसी व्यवस्था नही थी। इसके फलस्वरूप अनेक बातों में कठिनाई होती और इच्छानुसार खुले रूप में व्यापार नही हो सकता था। इस परिस्थिति से निपटने के लिये सन् १९४४-४५ में 'दी हैदराबाद स्टेट ग्रैन एण्ड सीड्स मर्चेन्ट एसोसिएशन' की स्थापना की गई। उसमे मुख्य भाग लेनेवाले श्रीलछमनदास गुप्ता बी. ए., एल-एल. बी, श्री भीमशीभाई डुगरशी तथा मैं इस प्रकार तीन व्यक्ति थे। उसका कार्यालय पहले हमारी बद्रुका-कापड़िया कम्पनी की ऑफिस में ही रखा गया था और बाद में भीमशी

डुगरशी की पेढी के पास में मकान किराये पर लेकर वहाँ ले जाया गया। सन् १९५७-५८ में उसका कार्यालय उसमानगज में गया, तब तक मैं उसका मन्त्री अथवा अध्यक्ष रहा था।

सन् १९५७ के बाद हैदराबाद स्टेट के स्थान पर आन्ध्र-प्रदेश नाम जोड़ा गया और इस एसोसिएशन ने पूरे प्रदेश की फेडरेशन जैसा रूप धारण किया। अब तो शासन द्वारा नियुक्त की जानेवाली भिन्न-भिन्न महत्त्वपूर्ण समितियो में उसके प्रतिनिधियों को मुख्य स्थान दिया जाता है तथा रेल विभाग में भी उसका बहुत प्रभाव पड़ता है।

सन् १९४९-५० में तिलहन के वायदे के काम-काज के सम्बन्ध मे 'हैदराबाद ऑइल ट्रेड एसोसिएशन' की स्थापना हुई, उसमें प्रारम्भ से ही मैने दिलचस्पी दिखलाई थी। अधिक स्पष्ट कहूँ तो उसे खड़ा करने के लिये कितने ही दिनों तक कठोर परिश्रम किया था। उसका अध्यक्ष पद श्रीबंकटलाल बद्रुका ने शोभित किया था और मन्त्री पद का उत्तरदायित्व मैने सम्हाला था।

यह उत्तरदायित्व सामान्य नही था, क्योंकि प्रतिदिन लाखों का लेन-देन होता था। उसके क्लियरिग पर ध्यान रखना पड़ता था तथा सौदे से सम्बन्धित जो विवाद खड़े होते थे उन्हें निपटाना पड़ता था। उसमे बहुत समय बीत जाता था।

इस व्यापारिक तथा अन्य प्रवृत्तियो के कारण, भोजन की अनियमितता, क्षमता से अधिक परिश्रम आदि कारणों से मुझे आंवइस्त का रोग होगया और स्वास्थ्य-सुधार के लिए महाबले-

श्वर जाना पड़ा। वहाँ एक मास रहने के इरादे से परिवार सहित गया था किन्तु मेरी अनुपस्थिति सभी को सालने लगी और लेन-देन को निपटाने के बारे में वहाँ पत्र और तार आने लगे। अन्ततः मुझे थोड़े ही दिनों में महाबलेश्वर की शीतल छाया छोड़ कर हैदराबाद वापस आना पड़ा। सामाजिक कार्यों का उत्तरदायित्व एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है और उसे निभाने के लिये शरीर, समय तथा धन इन तीनों का पूरा भोग देना पड़ता है।

हैदराबाद आने के बाद एक अनुभवी वैद्यराज की देख रेख में 'दूधकल्प' आरम्भ किया, अर्थात् अन्न, फल, पानी आदि बन्द करके केवल दूध पर ही रहना चालू किया। साथ में कुछ दवा भी लेता था। वैद्यराज की सूचना ऐसी थी कि मुझे इस समय पूर्णरूप से आराम करना चाहिए तथा अधिक बोलना नहीं चाहिए। परन्तु उपर्युक्त एसोशिएशन का कार्य इतना अधिक बढ़ गया था कि प्रति चौथे दिन मुझे वहाँ उसकी सभा बुलानी ही पड़ती और विविध प्रश्नों की चर्चा-विचारणा के सम्बन्ध में मुझे बहुत बोलना पड़ता था। इन सभी परेशानियों के कारण ४० दिन के दूधकल्प का जो फ़ायदा होना चाहिए था वह हुआ नहीं। तात्पर्य यह कि दस्तों का कुछ असर रह गया और जब खाने-पीने में कुछ अनियमितता रहती तो रोग का आक्रमण फिर से होने लगता था। बाद में मुख्य रूप से चिकित्सा करने पर वह रोग समाप्त हो चुका था।

'जो अधिक है वह थोड़े के लिये है' यह कहावत अनेक अनुभवो के बाद प्रचलित हुई है। इसके बारे मे मुझे भी ऐसा

ही अनुभव हुआ। वायदे का कार्य बहुत बढ जाने से तथा कुछ अंशों मे शक्ति से बाहर हो जाने पर केन्द्रीय सरकार की ओर से खास कमीशन बिठाया गया और उसने यहाँ की परिस्थिति का अध्ययन करने के बाद वायदे का काम बन्द करने की सलाह दी जिससे यह एसोसिएशन बन्द हो गया।

इसके बाद 'दि हैदराबाद ऑइल एण्ड सीड्स एसोसियेशन्स लिमिटेड' नामक दूसरी संस्था बम्बई के स्तर पर आरम्भ की गई जो आज तक चल रही है। इसमें पहले मै डायरेक्टर नियुक्त हुआ था और बाद में सभापति के रूप में चुना गया। गत सात-आठ वर्षो से अध्यक्षपद का भार मित्रगण मुझ पर डालते चले आ रहे हैं और मै उसके अनुरूप कर्तव्य निभाता रहा हूँ।

'हैदराबाद स्टेट फेडरेशन ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज' से बहुत-सी व्यापारी सस्थाएँ सम्बद्ध थी। बाद में वह 'फेडरेशन ऑफ आन्ध्र-प्रदेश चेम्बर ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज' बन गई। उसकी कार्यकारिणी समिति में सन् १९४८ से १९६३ तक और १९६६-६७ के लिए सदस्य रहने का अवसर आया है और उसके द्वारा निर्मित भिन्न-भिन्न उपसमितियों मे कभी सयोजक के रूप में तो कभी सदस्य के रूप में मैने अपने कर्तव्य का यथाशक्ति पालन किया है।

'हैदराबाद स्टेट ऑइल मिल ओनर्स एसोसिएशन' भी एक महत्त्वपूर्ण संस्था मानी जाती है। सरकार ने इसे मान्यता दे

रखी थी और सन् १९४९–५० में उसकी सलाह के अनुसार तेल तथा खली के खरीद फरोख्त के परमिट दिये जाते थे। श्रीवेंकट-लाल बद्रुका बहुत वर्षो तक इसके अध्यक्ष रहे थे। सन् १९६०-६१ से श्रीदडु बालनरसय्या इस संस्था के अध्यक्ष के रूपमें और मैं मन्त्री के रूप मे अपना कर्तव्य निभा रहा हूँ। यह संस्था तेल के व्यापार से सम्बद्ध नीति, निर्धारित करती है तथा रेल के वेगन आदि की जो कठिनाइयाँ हों, उन्हें दूर करने का प्रयास करती है। अभी सरकार के साथ उसका काम कम हो गया है।

अब मैं व्यापारी जीवन के एक रोमांचकारी प्रकरणपर आता हूँ। यहाँ की म्युनिसिपालिटी ने हैदराबाद शहर में आनेवाली अनेक वस्तुओं पर 'ऑक्ट्राय ड्यूटी' लगाने का निर्णय करने के कारण से हैदराबाद शहर के व्यापार के अन्यत्र चले जाने की परिस्थिति उपस्थित हुई। म्युन्सिपालिटी ने 'प्रोफेशन टेक्स' भी लगाया था। यह बहुत ही बे-ढंगा था। किसी के पास से यह अधिक लिया जाता तो किसी से यह बहुत ही कम लिया जाता और कोई इससे बिलकुल ही बच जाता। ये दोनो बातें व्यापारिक दृष्टि से अवांछनीय थी, अतः उनका विरोध करने के लिए शहर की ९१ एसोसिएशन तथा फेडरेशन आदि ने मिलकर 'आन्ध्रप्रदेश ऑक्ट्राय एण्ड प्रोफेशन टेक्स प्रोटेस्ट कमेटी' बनायी। उसका मै संयोजक नियुक्त हुआ। बाद मे अध्यक्ष चुनने का प्रश्न आया, तब सभी ने मेरी ओर निर्देश किया। किन्तु वह पद पारसी गृहस्थ श्री डी. डी. इटालिया को देकर मै उपाध्यक्ष बना, बाद में अध्यक्ष पद का दायित्व भी मुझे ही सम्हालना पड़ा।

इन प्रश्नों के बारे में सभाएँ करना, प्रचार करना, हड़तालें करना, शासकीय अधिकारियों से मिलना तथा उनके साथ चर्चा करना आदि प्रवृत्तियाँ तेजी से चली। हड़ताल में उद्योग, धन्धे, होटल तथा पान की दूकानो वाले सभी सम्मिलित हुए थे। फलत: म्युनिसिपालिटी को मॉडर्न शेड्यूल पर अमल करना सदा के लिए स्थगित करना पड़ा जिसमें प्राय: २०० वस्तुओं पर ऑक्ट्राय ड्यूटी लगाने का प्रस्ताव था। जिन थोड़ी सी वस्तुओ पर ऑक्ट्राय ड्यूटी रह गई थी, उन्हे भी अव सन् १९६५ में पूर्ण रूप से मुक्त कर दिया गया है।

इसी प्रकार फेडरेशन टेक्स में भी वहुत सुधार ला कर हमारी मांग को पूर्ण करना पड़ा। न्यायपूर्ण तथा सगठित, विरोध किया जाय तो आज के प्रजातन्त्रीय राज्य में सफलता मिल सकती है। इसके लिए हमें भी पूरी तैयारी करनी पड़ती है।

यह कमेटी सन् १९६१ तक चालू रही। वाद में इसका काम फेडरेशन तथा अन्य एसोसिएशनों ने सम्हाला।

भारत सरकार के कृपि-विभाग की ओर से 'दि सेन्ट्रल ऑइल सीड कमेटी' वनाई गई। उसका मुख्य कार्य तिलहन की उपज को वढाना, सशोधन का कार्य करना, वीजो की नयी उत्तम जातियाँ तैयार करना, प्रयोग करना, उसके आयात और निर्यात के लिए तथा उसके वाजार और भाव नियन्त्रण के लिए सरकार को सलाह देना आदि था। इसमें सभी राज्यो के डायरेक्टर ऑफ एग्रीकल्चर, भारत सरकार के विशेपज्ञ, लोकसभा के सदस्य तथा

तेल उद्योग और व्यापार के प्रतिनिधि मिल कर कुल ६७ सदस्यों की नियुक्ति हुई थी। इस कमेटी में 'ग्रैन एण्ड सीड्स' के आन्ध्र प्रदेश के प्रतिनिधि के रूप में सन १९६०-६१ से मुझे चुन लिया।

तत्पश्चात् भारत सरकार ने उसकी आर्थिक समिति में भी मुझे रखा था और उसके मन्त्री के साथ संयुक्त रूप से हस्ताक्षर करने का अधिकार भी दिया था। इस समिति का वार्षिक लेनदेन करोड़ सवा करोड़ रुपये का है। इसका प्रमुख कार्यालय हैदराबाद शहर में है। उसके कर्मचारी तथा कार्यालय आदि के लिए पन्द्रह लाख रुपये के मकान बने हुए है। आज भी मैं उस कमेटी का सदस्य हूँ।

सन् १९५९–६० से 'दि युनाइटेड कमर्शियल बैंक लिमिटेड' की हैदराबाद–सिकन्दरावाद की स्थानीय सलाहकार समिति का सदस्य निर्वाचित हुआ हूँ।

इसके अतिरिक्त ऑल इण्डिया 'फुड-ग्रैन-फडरेशन' की कार्यकारिणी कमेटी में आन्ध्रप्रदेश के प्रतिनिधि के रूप में रहने का अवसर भी आया है, तथा रेल्वे 'एडवाइजरी कमेटी', 'पोस्ट एण्ड टेलिग्राम एडवाइजरी कमेटी', 'सेलस टैक्स-एडवाइजरी कमेटी' आदि में भी सदस्य के रूप में कार्य कर चुका हूँ।

संक्षेप में मैंने हैदराबाद शहर और आन्ध्र राज्य में व्यापार सम्बन्धी जो महत्त्व की संस्थाएँ स्थापित हुई, उनकी प्रवृत्तियों में यथासम्भव भाग लिया है और मेरे हिस्से में जो जो कार्य आये, उन्हें विनम्र-भाव से किन्तु उत्साह से निभाया है।
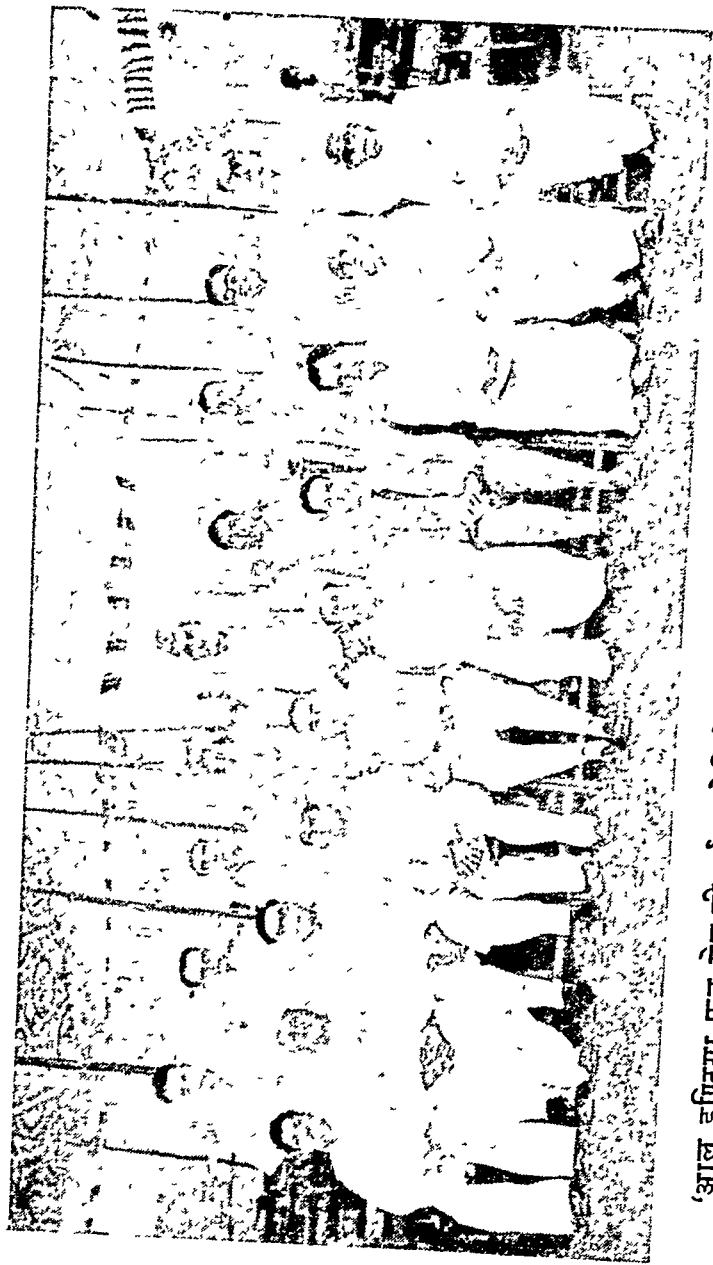
'आल इण्टिया फुड ग्रेन डीलर्स एसोसियेशन' की कार्यकारिणी की बैठक, १९६३. दिल्ली, लेखक दहिनी ओर दूसरे खडे हैं।
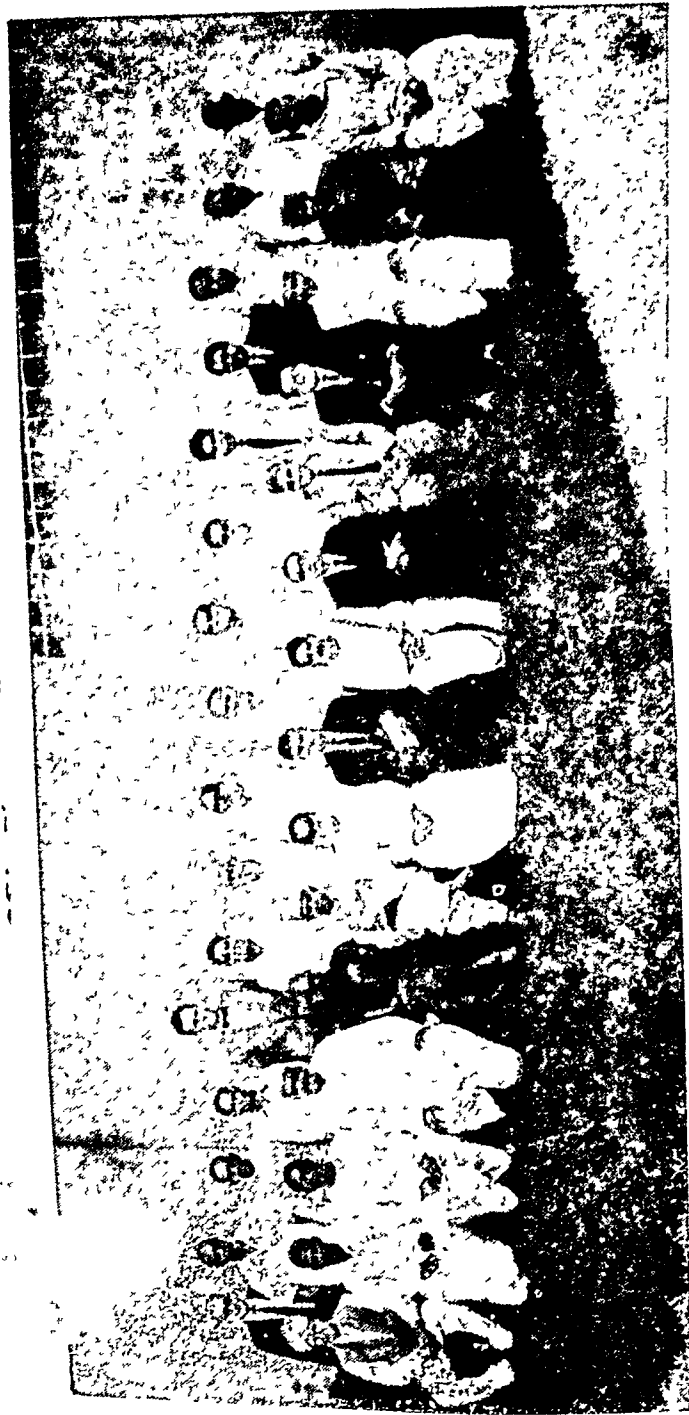
सेंट्रल आयिल सीड्स कमिटि की बैठक, ८-१०-१९६४ को हैदराबाद में हुई।
दाहिनी ओर से तीसरे स्थान में लेखक बैठे हुए हैं।

यहाँ इतना बता देना उचित समझता हूँ कि शरीर क
अपनी मर्यादा होती है। उससे शक्ति के बाहर का काम लिय
जाय तो स्वास्थ्य बिगड़ जाता है और वह शीघ्र सुधरता नही
इसलिये प्रवृत्तियों का विकास इतना तो नही करना चाहिए वि
जो शारीरिक मर्यादाओं को लांघ जायँ। मैंने इस सम्बन्ध
जो जो भूले कीं, उनके कारण मुझे बहुत सहन करना पड़ा है।

व्यापारी जीवन पैसे कमाने का क्षेत्र होता है। उस
चाहे जितना उपयोगी काम किया जाय दूसरों को शंका होती ह
है कि यह अपना स्वार्थ साधता होगा। कुछ विरोधी व्यक्ति
उसके बारे में आक्षेप भी करते है। अतः उसमें सर्वहित क
दृष्टि रखकर बहुत सावधानी से कार्य करने की आवश्यकता है

सच्चा रुपया अन्त में खरा ही प्रमाणित होता है औ
खोटे रुपये को व्यवहार में से निकल जाना पड़ता है, यह अनुभ
किसको नही है ?

२८

# व्यापार के सम्बन्ध में विशेष कथन

मैं अपने व्यवसाय के सम्बन्ध में सं. २००४ (सन् १९४८-४९) तक का विवरण सोलहवे प्रकरण में दे चुका हूँ। इसके बाद का विशेष विवरण इस प्रकरण में देना चाहता हूँ।

सं. २००५ की दीपावली पर बद्रुका-कापड़िया कम्पनी से श्री लछमनदास गुप्ता स्वेच्छा से पृथक् हो गये। उसका मुख्य कारण यह था कि उन्हे इस हिस्सेदारी में अपेक्षित द्रव्य मिल चुका था और वे कोई बड़ी जोखिम उठाने को तैयार नही थे।

उन्होने कम्पनी से अलग होने के बाद, भिण्ड की ओर 'प्रोजेक्ट—कॉन्ट्रेक्ट' का काम किया। वहाँ वे किसी किसी दिन जाते थे। इसी बीच मार्ग में मोटर का एक्सीडेण्ट हुआ। पंजाबी जवान, मजबूत शरीर फिर भी कुछ ही घंटों में उनका प्राण पखेरू उड़ गया। वस्तुत. ! मृत्यु का बुलावा जब आता है, तब वह स्थान, समय अथवा परिस्थिति की ओर दृष्टि नही डालती।

२२५ मील की दूरी से उनका शव हैदराबाद लाया गया ।
स समय उनकी पत्नी सुशीलादेवी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर
हर के एक हास्पीटल में दमा का उपचार करवा रही थी ।
सी भाग्य की विडम्बना ! उनके छोटे भाई बम्बई से आये,
था उनके मित्र तथा सम्बन्धियो ने मिल कर उनका अग्नि-
स्कार किया और उनके सद्व्यवहार के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ दी ।

श्री लछमनदास के पृथक् होने के बाद बद्रुका-कापड़िया
म्पनी का काम दो वर्ष तक चला, किन्तु व्यापार के अवकाश
लट चुके थे । कन्ट्रोल के हट जाने से भाव में मन्दी आ गई
ी और लाभ की मात्रा बहुत कम हो गई थी । इतना होने
र भी हमने सं. २००६ के साल में तीन-चार लाख रुपये का
नाफा कमाया था, किन्तु वह सब ऑफिस खर्च और बहुत सारे
टाफ के निर्वाह मे ही व्यय हो गया ।

"तेते पाँव पसारिए जेती लाँबी सौर" यह अनुभवियो का
हना है । जो इस ओर ध्यान नही देते अथवा उपेक्षा करते
, उन्हे बहुत हानि उठानी पड़ती है ।

मैने इस परिस्थिति से सावधान होकर सं, २००६ के
न्त में श्री बकटलाल जी से कहा कि "अभी व्यापार की स्थिति
च्छी नही है अतः हम कम्पनी का कार्य समेट ले ।"

परन्तु श्रीबकटलाल जी का मन मानता नही था । उन्होने
हा कि "स्टाफ कम कर दो और धन्धा खूब सीमित करो, किन्तु
पनी हिस्सेदारी मे व्यापार चालू रखो ।"

जिसने विशाल सरोवर में विहार किया हो, उसे छोटा-सा पोखरा कैसे अच्छा लग सकता है ! अर्थात् मैंने करोड़ों का व्यापार किया था। अतः यह छोटा-सा धन्धा करने में मेरा मन लगा नहीं; परन्तु मुझ पर उन्हें अथाह प्रेम और विश्वास था, अतः उनके प्रस्ताव को ठुकरा नहीं सका।

सं. २००७ में स्टाफ घटाकर काम चालू रखा, किन्तु उसमें विशेष लाभ नही हुआ, किन्तु कोई नुकसान भी नहीं हुआ। इतने में दीपावली का समय निकट आया, तब मैंने वंकटलाल जी से कहा कि—"अभी व्यापार में नुकसान नहीं है, और आपस में प्रेम है, इस समय अलग हो जाएं तो ठीक है। अब मैं स्वतन्त्र व्यापार करना चाहता हूँ। उसे आप अपना ही समझें, यदि चाहें तो उसमें से भाग भी ले सकते हैं।"

तब वंकटलाल जी ने वद्रुका-कापड़िया कम्पनी को समेट लेने की सम्मति दी और हम राजी खुशी अलग हो गये। वस्तुतः संयोग और वियोग प्रकृति का नियम है। इसे आज तक कौन टाल सका है ?

सं. २००८ की कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा से अपना स्वतन्त्र कार्य 'टोकरशी लालजीनी कम्पनी' के नाम से आरम्भ किया, जो आज तक चल रहा है। यह कम्पनी मुख्य रूप से अनाज, दालें तिलहन तथा खली आदि का व्यापार करती है। इसकी ऑफिस सुलतान बाजार में है।

सन् १९५४-५५ में टोकरशी लालजी कम्पनी में मेरे ज्येष्ठ भ्राता—श्री शामजी भाई के पुत्र हीरालाल तथा मेरे

ज्येष्ठ पुत्र धीरजलाल को हिस्सेदार के रूप मे लिया है। यथा-सम्भव सगे सम्बन्धियों तथा स्टाफ के हितचिन्तक लोगों को हिस्सेदार बना कर काम करना मेरी नीति रही है। इससे उन्हे व्यापार के प्रति आत्मीयता रहती है और व्यापार मे वृद्धि होती है।

हैदराबाद के पास चान्द्रायणगुट्टा मे बद्रुका-कापड़िया कम्पनी की एरंड की खरीदी तथा ट्रान्सपोर्ट का काम वसप्पा नामक तेलुगु भाई सम्हालते थे। उसका हिसाब भी वे तेलुगु मे ही रखते थे और हैदराबाद के निकटस्थ ६० मील क्षेत्र के ३०-४० गाँवों मे एरंड खरीदने के लिए काँटा लगाते थे। वह काम टोकरशी लालजी कम्पनी के नाम से चान्द्रायणगुट्टा मे तेलुगु भाषा मे ही चालू रखा गया।

सं. २००८ मे बम्बई-दानाबन्दर पर मदनलाल धीरजलाल की कम्पनी के नाम से काम चलता था, उसमे मदनलाल श्रीबकटलालजी बद्रुका के सुपुत्र का नाम और धीरजलाल मेरे सुपुत्र का नाम था। इसे बदल कर 'धीरजलाल टोकरशी कम्पनी' के नाम से काम चलाया। यहाँ देशान्तर मे अनाज, तिलहन आदि माल बेचने का ही कार्य मुख्य था।

परली–वैजनाथ में भी सं २००८ मे इसी प्रकार 'टोकरशी लालजी कपनी' के नाम से काम चलता था। उसमें तिलहन की खरीदी तथा तेल की मिल किराये पर लेकर तिलहन का तेल निकालकर दूसरे देशों में भेजने का कार्य था, वह कार्य चालू रखा गया।

उपर्युक्त अन्तिम तीन कम्पनियों से बाद में मैं मुक्त हो गया। इससे सार्वजनिक कार्यों में पहले की अपेक्षा अधिक समय दे सका।

नीचे लिखे तीन कार्यों में अनुभव न होने के कारण नुकसान उठाकर अपनी जबाबदारी पूरी करके मुक्त हो गया हूँ:—

(१) सन् १९५२ में 'दि हैदराबाद ऑइल एण्ड सोप लिमिटेड' नामक बड़ी फेक्टरी ली और उसके मेनेजिग एजेन्ट के रूप में कार्य सम्हाला। उस समय यह फेक्टरी नुकसान में थी, किन्तु मुझे आशा थी कि थोड़े समय में ही मैं इसे ऊपर ला सकूँगा। इस दृष्टि से उत्साह पूर्वक कार्य आरम्भ किया और नहाने का सन्दल सोप (चन्दन का साबुन), धोने का साबुन तथा और भी कुछ विशेष प्रकार के साबुन तैयार किये, परन्तु वर्षों से ख्याति प्राप्त माल के सामने खड़ा रहना कठिन प्रतीत हुआ। जनता की मांग होने पर ही माल खप सकता है। इस बीच प्रचार-प्रसार आदि का भी पर्याप्त खर्च उठाना पड़ता है। तात्पर्य यह कि इस विभाग को सफल बनाने के लिये पर्याप्त समय चाहिए और बहुत-सा भोग देना पड़ेगा तदर्थ मैं तैयार नही था। इसलिए ८१००० रुपये का नुकसान उठा कर यह फेक्टरी बंद कर दी। आज भी उसके द्वारा बनाये हुए सन्दल सोप के लिए मागें आती है, किन्तु उसमें प्रसन्नता की बात क्या है?

(२) एक बार किसी से कुछ रकम लेनी थी; उसके बदले मे कच्छ-भुज मे 'मॉडर्न टाकीज प्रायवेट लिमिटेड के नाम से

सिनेमा की स्थापना करके उसका काम चलाया। उसमे लाभ की मात्रा पर्याप्त प्रतीत होने पर अन्यत्र तीन स्थानों में भी सिनेमा चालू करके कार्य का विस्तार किया। परन्तु इतने में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुई और लाभ के वदले हानि होने लगी। यह कोई मेरा खास व्यवसाय तो था नही, इसलिए अधिक स्पर्धा में न उतर कर जो नये सिनेमा चालू किये थे उन्हें बन्द कर दिया इस तरह मॉडर्न टाकीज प्रायवेट लिमिटेड बन्द हुई और मैंने अपनी जवाबदारी नुकसान सह कर पूरी की।

सिनेमा की मशीने तो पहले ही बेच दी थी और दूसरी मशीन किराये पर लेकर चलाने के बाद अन्त में एक भुज के सिनेमा शेअर होल्डर तथा मशीनरी के मालिक को सौप दिया गया, उसे अब उन्होंने किराये पर दे रखा है।

(३) एक बार मोटर रिपेअर करने तथा ड्राइविग सिखाने का कार्य 'कीर्ति ऑटो मोबाइल्स' के नाम से चालू किया, परन्तु उसमें सफलता न मिलने से एक वर्ष बाद बन्द कर दिया।

व्यवसाय मे जब भी अच्छा लाभ मिला है, तब उसका वड़ा हिस्सा सार्वजनिक प्रवृत्तियों मे तथा दीन-दुखियों की सहायता करने मे लगाया है। उसमे जात-पॉत का या छोटे-वड़े का भेद नही देखा। इस प्रकार जो द्रव्य उपयोग मे लाया गया वही मेरी सच्ची कमाई है।

व्यवसाय मे अच्छे-वुरे अवसर आते है। उस समय मन को वश मे रखकर चलना तथा इज्जत पर दाग नही लगने देना, यह बुद्धिमान्-समझदार मनुष्य का कर्तव्य है।

व्यवसाय में मुझे अनेक परिवर्तन करने पड़े हैं तथा बुद्धि, साहस और पुरुषार्थ आजमाने पर भी कुछ व्यवसायों में नुकसान ही उठाना पड़ा है। उसका दोष किसे दूँ? संयोगों को अथवा भाग्य को ? सभी परिस्थितियों पर अपना बस नहीं चलता और भाग्य की परीक्षा तो पुरुषार्थ करने पर ही होती है।

मेरे स्नेहीजन तथा कुटुम्ब के व्यक्ति नीचे लिखे अनुसार कारोबार चलाने का व्यवस्थित प्रयास कर रहे है, परन्तु एक शुभचिन्तक के रूप मे इतनी आशा रखता हूँ कि वे नैतिक तथा सार्वजनिक हित की रक्षा करते हुए सफलता प्राप्त करें और उसमें से होनेवाली आय का कुछ अंश सार्वजनिक हित के लिये खर्च करे।

हैदराबाद मे 'कापड़िया स्टोर्स' नामक पेढ़ी चालू की। उसमे दो कुटुम्बीजन तथा सात स्टाफ कार्यकर्ता साझेदार बने। यह स्टोर्स आजकल के सहकारी स्तर पर नही, परन्तु प्राय: उसके समान पद्धति से ही चलता है। मैनेजर, कैशियर, गोदाम कीपर, मिल विभाग, हिसाब खाता ये सब काम वे स्वयं ही सम्हालते है।

नाम से तो यह कोई जनरल स्टोर्स अथवा प्रोविजन स्टोर्स जैसा लगता है, किन्तु यह तिलहन, दाल, अनाज आदि का व्यापार करता है। एक समय ये बड़ी मील किराये पर लेकर रिफाइण्ड मूंगतेल बनाते थे। इसमे सात एक्सपेलर थे और लगभग चालीस-पचास लाख रुपये का तेल निकालते थे। अब

एक एक्सपेलर वाली छोटी मिल किराये पर लेकर चलाते है। कभी चावल की मिल किराये पर लेकर उसे भी चलाते है। इन दिनों चावल केवल स्टेट ट्रेडिग कम्पनी को ही बेचा जा सकता है। इसमें मुख्य कार्यकर्ता तथा साझेदार भाई प्रेमजी जगशी, भाई उमरशी कुँवरजी, भाई भाणजी मूलजी, भाई रमणीकलाल लखमशी, भाई चुनीलाल जगशी आदि है।

परली-वैजनाथ में 'कापड़िया इण्डस्ट्रीज' के नाम से, तथा 'कीर्तिकुमार कम्पनी' के नाम से कार्य आरम्भ किया। उसमें कुटुम्बी तथा मुख्य कार्यकर्ता-साझेदार भाई रतिलाल केशवजी तथा भाई देवजी धरमशी एवं भाई भोजराज चांपशी हैं। वहाँ पहले आइल मिल किराए पर लेकर, उसके बाद अपनी निजी मिल खोलकर तेल बनाते है और देश के भिन्न-भिन्न राज्यों में भेजते है। साथ ही वहाँ के स्थानीय लोक-जीवन के सुख-दुःख में भी भाई रतिलाल केशवजी अच्छा भाग लेते है।

पहले चान्द्रायणगुट्टा में बसप्पा काम करते थे, बाद में स्थान बदल कर सिद्दबर बाजार में कामकाज चलाने लगे है। यहाँ मेरे कुटुम्बियो के साथ कुछ स्थानीय तेलुगुभाई भी काम करते है। ये ३०-४० स्थानों से एरंड-खरीदते है और सारा व्यवहार तेलुगु-भाषा में ही चलाते है।

सनतनगर में मेरे बड़े पुत्र धीरजलाल तथा अन्य हिस्सेंदारों ने मिलकर 'आन्ध्र-रीरोलिग' नामक लोहे की सलियापट्टी तथा ऍंगल बनाने की मील खोली है। उसमें ३०० व्यक्तियों

को रोजी मिल रही है। दो वर्षों से यह साहसिक कार्य चलाया जा रहा है।

व्यवसाय के इन सभी कार्यों में वे सफल हों, यही शुभ कामना है।

२६

# मेरा मानसिक निर्माण

मैंने बाल्यावस्था में बारह-पन्द्रह वर्ष की आयु में आर्थिक कठिनाइयों से निपटने के लिए पुरुषार्थ का आश्रय लिया और उसे चपरासी जैसे कार्य से आरम्भ किया। 'सेठ गांगजी प्रेम-जी की कम्पनी' में जो कि लाख-सवालाख टन चावल बर्मा से एक वर्ष में निर्यात करती थी, प्रथम श्रेणी के कार्यकर्ता के रूप में स्थान प्राप्त करने में वह पुरुषार्थ काम आया।

ब्रह्मदेश के आन्तरिक केन्द्रों में खरीदी करने का काम पन्द्रह-सोलह वर्ष की आयु में ही सम्हाला था। उसमें काम के प्रति सावधानी, ईमानदारी तथा शीघ्रता से निर्णय लेने का स्व-भाव सहायक बने थे। बाद में सत्रह वर्ष की अवस्था में सेठ हासम प्रेमजी की कम्पनी में जो कि ब्रह्मदेश से विश्व के सभी भागों में लगभग डेढ लाख टन चावल का वार्षिक निर्यात करती थी, एक महीने तक चीफ एकाउन्टेंट के रूप मे काम किया था और उसके बाद शीघ्र ही ब्रह्मदेश के मोलमीन बन्दरगाह में उनकी कम्पनी के बड़े अधिकारी के रूपमे कार्यभार सम्हाला था।

वहाँ से वार्षिक निर्यात प्रायः दो लाख बोरे होता था, वह पहले वर्ष में ही मेरी कुशलता और परिश्रम के कारण तीन लाख बोरे पर पहुँचा और निर्यात के क्षेत्र में नाम कमाया। उसके बाद वहाँ उत्तरोत्तर मेरे कार्य की वृद्धि हुई। इसी प्रकार मिलों के काम में भी अविस्मरणीय विकास लाया। अन्त के सन् १६३८ से १६४१ तक के वर्षो में जापान द्वारा चलाया भीषण युद्ध देखा। बमबारी के समय भी काम चालू रखा। मृत्यु की परवाह किए बिना पतवार सम्हाली और विजय प्राप्त की।

ब्रह्मदेश से निकल कर भारत आने के बाद व्यापार एवं उद्योग के क्षेत्र में समय-समय पर मुझे तत्क्षण निर्णय करने पड़े हैं। यदि मैने इस प्रकार तेजी से निर्णय नही किए होते, तो व्यापार-व्यवसाय में जो उन्नति कर सका, वह कदाचित् नही हो पाती। यह बात मानने योग्य नही है कि जो निणय शीघ्रता से लिया जाय वह त्रुटिपूर्ण हो और जो धीरे-धीरे लिया जाय वह अच्छा हो, कई बार दो मिनट में ही किए गये निर्णय कई दिनों के विचार-विमर्श के पश्चात् किए गये निर्णयो की अपेक्षा अधिक लाभकारी सिद्ध हुए है।

मूल बात यह है कि निर्णय स्वस्थ मन से करना चाहिए और बाद मे उस पर दृढ़ता से स्थिर रहना चाहिए।

लाभ प्रतीत हो, वहाँ जुट जाना और नुकसान दिखाई दे वहाँ से शीघ्रता से पृथक हो जाना, इस नीति का मैंने सर्वांश में अनुसरण किया है, इससे कुल मिलाकर मुझे लाभ हुआ है और बड़े नुकसानों से बच गया हूँ।

व्यापार की व्यवस्था जमाने के लिए २०-३० ऑफिसें खोलनी हो, तो दूसरे लोग कई महीने लगा देते है, जब कि मैने ऐसे निर्णय् कुछ ही मिनटों में किए है और उनमे सफलता भी प्राप्त की है। इसी प्रकार चालू की हुई ऑफिसे बन्द करनी हों, तब बहुत-से लोग उसमे हिचकिचाहट का अनुभव करते हैं, और ऐसा विचार करते हैं कि लोग क्या कहेंगे ? मैने इस प्रकार के निर्णयों मे तनिक भी संकोच का अनुभव नही किया। आवश्यकता प्रतीत हुई, संयोग पलटे अथवा नुकसान होने लगा तो तत्क्षण उसके सम्बन्ध में तेजी से निर्णय किए हैं।

उद्योग मे अनेक बार तेल की तया चावल की मिले चलाने के लिए किराये पर ली और छोड़ भी दीं। हैदराबाद मे साबुन का कारखाना लिया और छोड़ भी दिया। मोटर-लॉरी के लिए सर्विस स्टेशन चालू किया तथा वेजीटेवल कारखाने का एक मास के लिये मेनेजमेन्ट लिया किन्तु नुकसान दिखाई देने पर थोड़े ही समय मे छोड दिया। एस्त्रेस्टाज तथा केमिकल फरटीलाइजर के वड़े काम को लेने मे महीनों तक परिश्रम किया, किन्तु मामूली से विपरीत परिस्थिति दिखाई पड़ने पर छोड़ दिया।

सत्ताईस-अठाईस वर्प की आयु मे हिस्सेदारी मे वहुत वड़ा काम करने का अवसर मिला, उसमे अपार कठिनाइयॉ थी। प्रथम तो अपेक्षित परमिट नही मिले, कदाचित परमिट मिल भी गए तो वेगन नही मिले, आदि। परन्तु धैर्य रखकर युक्तिपूर्वक उन कठिनाइयों से पार होकर तीन-चार वर्ष मे ही वेगनों से लाख-डेढ़ लाख टन माल भेजने का श्रेय पाया।

मैंने वर्षों तक २०–२५ ऑफिसें, तथा २०–२५ एजेन्टों को मिलाकर ५०–७५ स्थानों पर क्रय-विक्रय का काम सम्हाला तथा अर्थ-व्यवस्था का भी अकेले हाथों काम किया है। साथ ही हेजिंग अथवा वायदे के काम मे भी बहुत बड़ा साहस करने में पीछे नही रहा। इसीसे वर्षों तक प्रतिदिन अठारह घण्टे काम करना पड़ा है। भोजन करते समय भी फोन चलता रहता, बारह बजने से पहले कदाचित् ही सोने को मिलता। पुनः सवेरे पाँच-छः बजे काम चालू हो जाता।

इतने व्यवसायी जीवन में भी सामाजिक सेवा तथा राजकीय सेवा नियमित रूप से करता रहा हूँ। यदि स्पष्ट कहूँ तो मैंने इसे अपने व्यक्तिगत कारोबार के समान ही महत्त्व दिया है। सामाजिक कार्यों में मित्रों के साथ कार्य करने में आनन्द मिला है और उससे काम की थकावट उतर जाती थी। यद्यपि ऐसे प्रसगों पर मेरी अनुपस्थिति से व्यापार में नुकसान होने के भी अवसर आये हैं किन्तु मैंने उनकी परवाह नही की।

बाल्यकाल में ग्यारह-बारह वर्ष की अवस्था में सेवा-प्रवृत्ति आरम्भ की। उसमे उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही है। संयोगवश मेरा जीवन एक समान रहा नही, किन्तु जैसे व्यवसाय में और उद्योग मे अनेक प्रकार की जवाबदारियाँ उठाता रहा हूँ उसी प्रकार सामाजिक सेवा मे भी अनेकविध जवाबदारियाँ उठाता रहा हूँ। यदि मेरे हृदय में गहरी लगन, समझ, श्रद्धा, प्रेम, करुणा आदि तत्त्वो ने स्थान नहीं जमाया होता तो ऐसा कदाचित् ही हो पाता। आत्मा, मन और शरीर एक-दूसरे से मिल

जाने पर सभी क्रियाएँ स्वाभाविक बन जाती हैं, मेरे जीवन में ये सब बाते एकरूप बन जाने से ही सेवामय प्रवृत्ति स्वाभाविक बन पडी है।

चाहे जैसे नुकसान अथवा कठिनाई मे हो, घबराए बिना कुछ ही मिनटों मे जो समझ मे आया वह मार्ग निकाल कर स्वस्थ रहा हूँ। अन्य शब्दों में कहूँ तो दु ख के संयोगों को हँसते-हँसते सह लेने का अवसर मिला है। उसमें कभी रोना पसन्द नहीं किया। परन्तु सामाजिक सेवा के क्षणों में जब भी दुःख-दर्द देखने को मिले, तब अनेक बार अन्तर में रोया है। मजबूत आँखे जिनमें आँसू आना कठिन था, उनमें बड़ी सरलता से हृदय के निचोड़ के आँसू टपके है। आज भी मन की ऐसी ही स्थिति है।

संसार में मनुष्यों को अनेक प्रकार के दु:ख भोगने पड़ते है। हम कितनी ही इच्छा करे तो भी उनके वे दुःख सर्वांश में दूर नही हो सकते। कुछ दुःखों मे तो केवल सहानुभूति दिखलाकर ही सन्तोप करना पड़ता है।

यहाँ यह भी बतला दूँ कि मुझे तन-मन-धन की जो शक्ति मिली है, उसका बहुत थोडा अंश ही सेवा मे दे सका हूँ। अभी चाहूँ तो इसके बारे मे बहुत अधिक कर सकता हूँ, पर उतनी हिम्मत नही होती। उसमें व्यवहार भी बाधक ही रहा है।

कडुवे-मीठे अनेक प्रकार के अनुभव होने पर भी उत्तर-दायित्व से मुँह नही मोड़ना ऐसा लगता ही रहा है। प्रभु की

कृपा और संकेत हो तो काम में वृद्धि करना हमारा कर्तव्य है, यह विचार मन से निकलता ही नहीं, क्योंकि विस्तृत व्यवसाय हो तभी अनेक भाई-बहनों को उसके द्वारा धन्धा मिल सकता है और स्वयं को भी लाभ होता है। देश के प्रति भी हमारा यह कर्तव्य है कि उद्योग-धन्धे की वृद्धि करके उससे बेकारी का निवारण किया जाय। यदि हम माल का उत्पादन अधिक करेंगे तो देश सम्पन्न होगा। ऐसे विचारों से ही मैंने जमीन तथा कारखाने का उत्पादन बढ़ाने में रुचि दिखलाई है।

परन्तु मेरी धर्म पत्नी मेरे इन विचारों से सहमत नही होती। उसका कहना है कि 'कुदरत ने रोटी दी है, तो रात-दिन श्रम क्यों करना ? और इस व्यस्तता में शरीर की सुरक्षा भी नहीं सूझती। अत अब तो सन्तोष करके काम धन्धे से पूर्ण नहीं तो आधी निवृत्ति तो अवश्य ले लेनी चाहिए।'

पूज्य माताजी तो वर्षों हुए स्वर्गवासी हो गई हैं, किन्तु अपनी अन्तिम अवस्था में मुझे यह कहती गई कि—'तू गरीबी में से ऊँचा उठा है, अब हर तरह से सन्तोष ले सके ऐसी स्थिति है, अत· विशेष श्रम करना छोड़ दे :' परन्तु मेरा उत्तर यह था कि 'मैं विशेष काम कहाँ करता हूँ ? मजदूर और किसान गर्मी में, ठण्ढ में, वर्षा मे कितना अधिक काम करते हैं ? उन लोगों की अपेक्षा मै विशेष काम नहीं करता हूँ।' यदि मैं काम नही करूँ तो इतना सारा व्यवसाय कैसे चलेगा ? और काम यदि बिलकुल कम कर दूँगा तो मेरी मनोभावना कैसे पूर्ण होगी ?

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि समयानुसार मुझे बड़ी शीघ्रता से परिवर्तन करने पड़े हैं। परन्तु ऐसे परि-

बाई ओर से-धीरजलाल; कीर्तिकुमार; कान्ताबेन। १९४८.
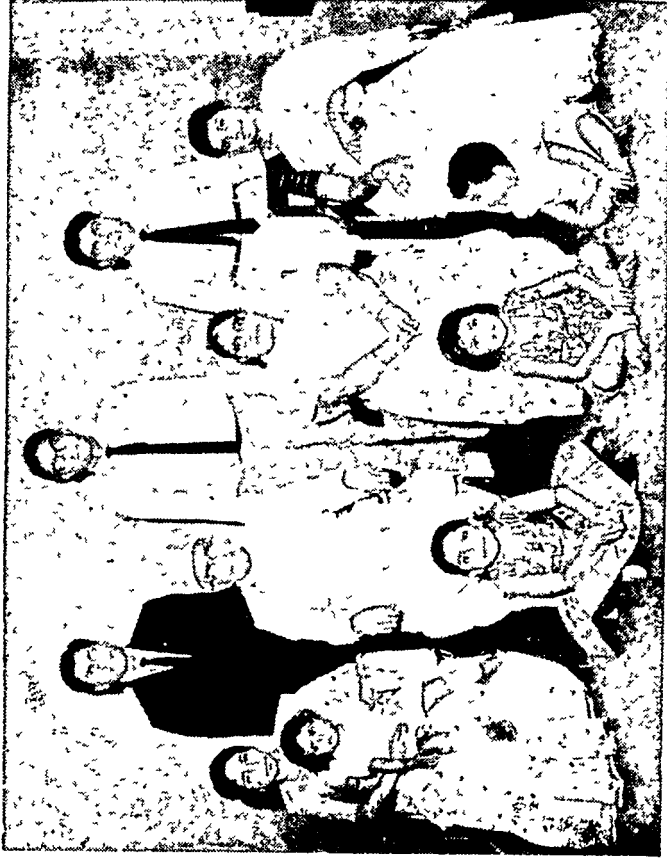
आत्मीय जनों के साथ, हैदराबाद, १९६५

खड़े-बाईं ओर से- धीरजलाल; सूर्यकान्त (दामाद); कीर्तिकुमार।

बैठे-बाईं ओर से-श्रीमती लीलम धीरजलाल और वर्षा; लेखक; उनकी पत्नी श्रीमती अमृतबाई; श्रीमती कान्ताबेन सूर्यकान्त (पुत्री);

नीचे बैठे-बाईं ओर से–देवयानी; स्मिता; पीयूष।
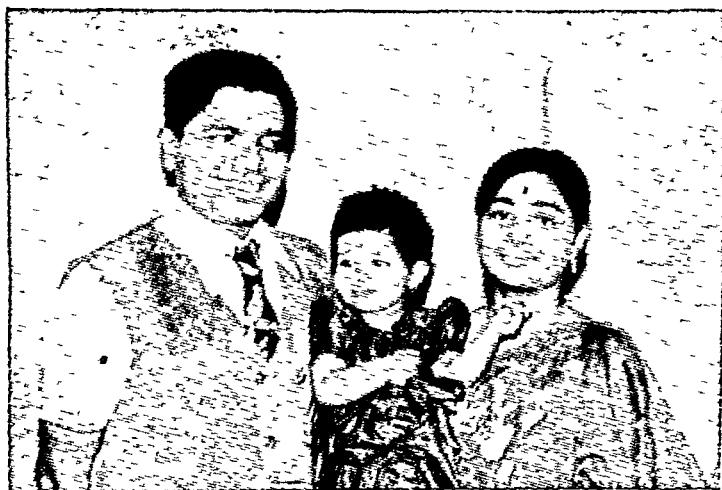
श्री कीर्ति कापड़िया तथा उनकी पत्नी श्रीमती विजया
अपनी वच्ची नीता के साथ

सूर्यकान्त की पुत्रीः मिलन तथा श्री धीरजलाल का
पुत्र सुशील.

वर्तन सभी के लिए लाभकारक नहीं हो सकते, क्योंकि प्रत्येक काम के परिवर्तन में काम की पद्धतियों का विचार करना पड़ता है, नये सिरे से सम्बन्ध जोड़ने पड़ते है। यह सब सभी के लिए सरल नहीं है। अपनी शक्ति और अपने समय का विचार करके कार्य करना चाहिए, यही उचित है।

३०

# सन्तान-परिचय

'गृहस्थ-जीवन का आरम्भ' शीर्षक प्रकरण में मैंने बतलाया था कि संतान का परिचय मैं आगे एक स्वतन्त्र प्रकरण में दूंगा, तदनुसार मेरी संतान का परिचय इस प्रकरण में दे रहा हूं।

इस प्रकरण को लिखने में कुछ संकोच तो होता ही है क्योंकि अपने मुंह से अपने पुत्र-पुत्रियों की प्रशंसा करूँ यह उचित नहीं। इसी प्रकार उनमें जो गुण हों, उनकी उपेक्षा करना भी ठीक नहीं है। इस विचार के अनुसार यथासम्भव लिखा जाय यह निर्णय लेकर मैं यहाँ कुछ शब्द लिख रहा हूं।

मेरा ज्येष्ठ पुत्र धीरजलाल मोलमीन (बर्मा) में दि· ७-८-१९३८ को उत्पन्न हुआ। उस समय उसका शरीर निर्बल था। पाँच वर्ष की अवस्था में उसने एक-दो बड़ी बीमारियां भी भोगी, परन्तु उसके बाद उसका शरीर ठीक-ठीक सुधर जाने से हम चिन्ता-मुक्त हुए।

उसका चौथी गुजराती कक्षा तक का अध्ययन हैदराबाद में गुजराती प्रगति समाज की ओर से चलाई जानेवाली पाठशाला में हुआ था। पाँचवी गुजराती छः मास भावनगर में और छः मास प्रीमियर स्कूल-माटुंगा (बम्बई) में पूरी की। इसके बाद श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी के परिचय में आने पर उनके सुझाव के अनुसार बम्बई-अन्धेरी के श्रीहंसराज मोरारजी हाई-स्कूल में माध्यमिक शिक्षण के लिए भेज दिया था। वहाँ वह बोर्डिंग में ही रहता था और अवकाश के दिनों में हैदराबाद आता था। अप्रेल १९५६ तक वहाँ रहा और मेट्रिक की परीक्षा में ५९% प्रतिशत अंक प्राप्त करके द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। पढ़ने में उसका लक्ष्य अच्छा था, अतः कक्षा में प्रायः ऊँचा स्थान प्राप्त करता था और छटी तथा दसवीं कक्षा में तो वह प्रथम आया ही था।

वहाँ उसने व्यायाम में अच्छी रुचि दिखलाई। घुडसवारी हॉकी आदि में अच्छी योग्यता प्राप्त कर साथ ही खेलकूद की सार्वजनिक प्रतियोगिताओं में उसने चेम्पियन-कप प्राप्त किया था। विशेषतः वह राइफल क्लब का सदस्य बना और 'नेशनल केडेट कोर' (N. C. C) में कमाण्डर नियुक्त हुआ था। इन सभी प्रवृत्तियों से उसका स्वास्थ्य बहुत सुधर गया।

तदनन्तर हैदराबाद आकर पी यु. सी (कॉमर्स) की शिक्षा बद्रुका कालेज तथा निजाम कॉलेज में प्राप्त की और सन् १९६० मे बी. कॉम. (व्यापार विद्या) का स्नातक हुआ। यहाँ बद्रुका कॉलेज के सार्वजनिक खेलकूद में चेम्पियन शिप प्राप्त की और

निजाम कालेज में खेलकूद में प्रथम रहा। वह रेल्वे स्पोर्ट्स-क्लव का सदस्य बना और वहुत परिश्रम करके आन्ध्र स्टेट की वेडमिटन खेल की चेम्पियन शिप प्राप्त की।

कॉलेज छोड़ने के वाद उसने 'आन्ध्र-रीरोलिंग मिल' की व्यवस्था का काम सम्हाला। इस मिल का उद्घाटन आन्ध्र प्रदेश के उद्योग मन्त्री डॉ. लक्ष्मी नरसैय्या के शुभ हस्तों से हुआ था।

उसका विवाह दि॰ २६–५–१९६२ को हुवली में श्रीमान् केशवजी देवजी झवेरी की पुत्री सौभाग्यवती लीलम के साथ हुआ। उसने कर्णाटक विश्वविद्यालय की वी. एस. सी, की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में तीसरा स्थान तथा अपने कॉलेज में पहला स्थान प्राप्त किया था। पिछली छः सात कक्षाओं में भी वह प्रथम ही रहती थी।

इस विवाह से हमारे समाज में कुछ सुधार हुआ। हम वीसा ओसवाल और सौ. लीलम का कुटुम्ब दशा ओसवाल कहलाते हैं। हमारे दोनों कुटुम्वों की सम्मति और शुभाशीर्वाद-पूर्वक यह नया सम्वन्ध संपन्न हुआ। वाद में समाज में ऐसे और भी वहुत से सम्वन्ध हो गये।

सौ· लीलम ने दि. ४–११–'६३ को पुत्री वर्षा को जन्म दिया, जिससे घर में आनन्द और सन्तोष फैल गया।

धीरजलाल सदा खादी पहनता है। चाय अथवा वीड़ी का व्यसन नहीं है। ये वातें उसने मेरी विरासत में पाई हैं।

सरलता, नम्रता और कलाप्रियता के कारण वह सगे सम्बन्धियों तथा परिचितों मे प्रिय बना हुआ है।

कान्ता का जन्म स. १९९८ के आश्विन कृष्णा ५ को कच्छ-पत्री में हुआ। नाम के अनुसार गुण बहुत थोड़े व्यक्तियों मे होता है, किन्तु मेरी पुत्री मे नाम के अनुसार ही गुण है अर्थात् वह वस्तुत: कान्तिमान है, उसका स्वास्थ्य भी अच्छा है। उसने हैदराबाद-गुजराती प्रगति समाज की शाला मे मेट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की है।

उसका विवाह बम्बई निवासी सूर्यकान्त के साथ हुआ। सूर्यकान्त के पिताजी डुगरशी रवजीभाई उच्चकोटि के पुरुष है। उन पर गांधीवाद का प्रभाव पूर्णरूप से व्याप्त है। इस समय वे अपना बहुतसा समय नि:स्वार्थ भाव से 'सर हरिकिशनदास हास्पिटल' मे बीमारो की सेवा मे देते है। उसमे 'आई बैंक' के लिए चक्षु प्राप्त करने का विशेष प्रयत्न करते है, जिससे अन्धे हुए मनुष्यों को पुन. दृष्टि प्राप्त होती है। वे ससार मे रहते हुए भी सन्त जैसा जीवन बिताते है। यह मै अनेक वर्षो के निकट सम्पर्क से जान सका हूँ। हमारे दोनो कुटुम्बों का सम्बन्ध जुड जाने से मुझे बहुत आनन्द हुआ।

श्री सूर्यकान्त ने इण्टर पास करके बी. ए. तक अध्ययन चालू रखा था, किन्तु उसके बाप मलाबार में रबर के बगीचे और लकड़ी के काम मे लगजाने से वह बी. ए. की परीक्षा नहीं दे पाया। अब वह हैदराबाद मे रहता है और मुख्यरूप से आन्ध्र

रीरोलिंग मिल में हिस्सेदार के रूप में कार्य सम्हालता है। वह विद्याप्रेमी, स्नेहशील और शान्त प्रकृति का है।

चि. कान्ता ने पहली पुत्री स्मिता को दि. ११-४-'६१ को जन्म दिया। बाद मे उसे दि. १६-१०-'६३ को पुत्र पीयूष का मुख देखने का भाग्य मिला। स्मिता जब बहुत छोटी थी तब असाधारण रूप के साथ ही शान्त, हँसमुख तथा मिलनसार होने से पड़ौसी तथा अन्य उसे प्रायः उठाये ही रहते थे। श्री शान्ता बहिन एम. एल. ए. सामने ही रहती थीं। उन्होने तो अपनी पुत्री से भी अधिक स्नेह दिखाया और आज तक दिखा रही हैं। पूर्व-जन्म के बन्धन के बिना ऐसा प्रायः नहीं होता है।

कीर्तिकुमार का जन्म हैदराबाद में दि. २०-६-१९४७ को हुआ। उसका स्वास्थ्य पहले से ही अच्छा था। उसने भी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षण हैदराबाद गुजराती प्रगति समाज की शाला मे ही प्राप्त किया है।

गत वर्ष वह मेट्रिक पास हुआ और उच्च शिक्षण के लिए 'न्यू साइन्स कॉलेज' में प्रविष्ट हुआ। अभी वह पहले वर्ष का अभ्यास कर रहा है। अभ्यास के लिए उसकी तीव्र रुचि दिखाई नही देती। जहाँ तक बन पडे, बिना परिश्रम के परीक्षा देता रहता है, और अधिकाँश तृतीय श्रेणी में, उत्तीर्ण होता है। परन्तु अन्य कार्यो मे उसकी रुचि बहुत अच्छी है। सम्मेलन आदि मे वह अकेला दो आदमियों का काम करता है। ऑफिस के प्रत्येक विभाग में काम करने की रुचि दिखाता है।

उसका स्वभाव स्नेहपूर्ण है और घर मे कोई मेहमान आए तो उसकी अच्छी सेवा-शुश्रूषा करता है। मेरे काम मे सदा सहायता करने की प्रवृत्ति रखता है। वह भी खादी पहनता है तथा चाय-बीड़ी के व्यसन से मुक्त है। परन्तु बड़े पुत्र जैसा शान्त नही है। उसे कई बार गुस्सा आ जाता है। मेरा स्वभाव भी कुछ उग्र तो है ही। सम्भवतः मेरा यह गुण उसमें उतरा हो! परन्तु थोड़े समय में पुनः शान्त हो जाता है। मनुष्य में प्रेम, नम्रता हो और वह मिष्टभाषी हो तभी कार्य मे सफलता मिलती है। स्वभाव को वश में रखना, यह एक प्रकार की तपश्चर्या है और यह हमे अवश्य सीखनी चाहिए।

छोटी पुत्री देवयानी हैदराबाद मे दि. १०–६–५७ को उत्पन्न हुई। अतः वह अभी ५ वर्ष की है। उसकी बुद्धि तीव्र है और अध्ययन मे अच्छी प्रगति कर रही है। हमारी यह अन्तिम सतान होने से उसे हम बहुत ही प्यार करते है और वह एक कुलदीपिका निकलेगी—ऐसी आशा रखते हैं।

कुल मिलाकर चारों संतान विनयी और सुशील होने से हमे सन्तोष मिलता है। हम परमात्मा से प्रार्थना करते रहते है कि वे भविष्य में स्वस्थ तथा सुखी रहें और अच्छे-अच्छे कार्य करे।

३१

## राष्ट्रभाषा–प्रचार

सामान्यतः बहुभाषी देश में उसकी एक राष्ट्रभाषा होती है, जिसके द्वारा उस देश के निवासी अपने विचारों का आदान-प्रदान कर अपनी उन्नति कर सकते हैं।

जिस देश की अपनी राष्ट्रभाषा न हो उसे पूर्ण स्वतन्त्र नहीं माना जा सकता। इसी लिए पूज्य गांधीजी ने रचनात्मक कार्यक्रमों की उन्नीस धाराओं में बारहवीं धारा राष्ट्रभाषा की भी रखी थी।

सन् १९१८ में इन्दौर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का आठवाँ अधिवेशन गाँधीजी की अध्यक्षता में हुआ, तब उन्होंने सारे भारत के लिए एक सामान्य भाषा की आवश्यकता प्रगट की थी और उसके लिए हिन्दी को उपयुक्त बतलाया था। उनके इस विचार को प्रस्ताव का रूप दिया गया था और वह प्रस्ताव उस अधिवेशन मे सर्वानुमति से पास हुआ था। बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन, श्रीजमनालाल बजाज, पण्डित रामनरेश त्रिपाठी आदि ने उस प्रस्ताव का जोरदार समर्थन किया था।
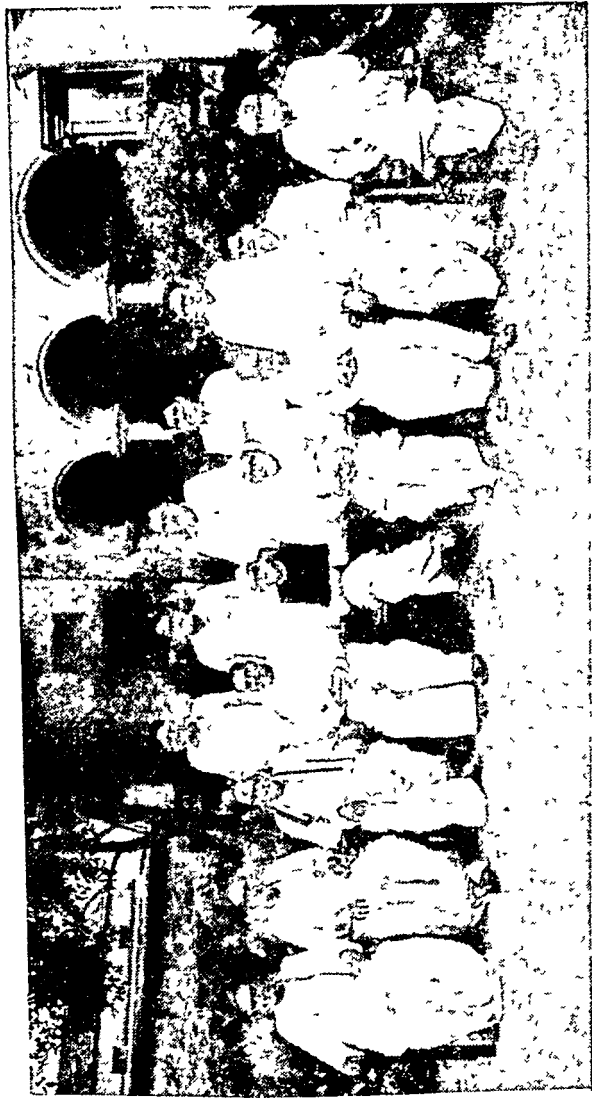
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा-आन्ध्र की कार्यकारिणी समिति १९६४–६५
बैठे हुए, बाईं ओर से ५ वे और ६ वे. श्री अय्यगारजी (अध्यक्ष),
श्री टोकर्शी लालजी कापडिया (कोशाध्यक्ष)
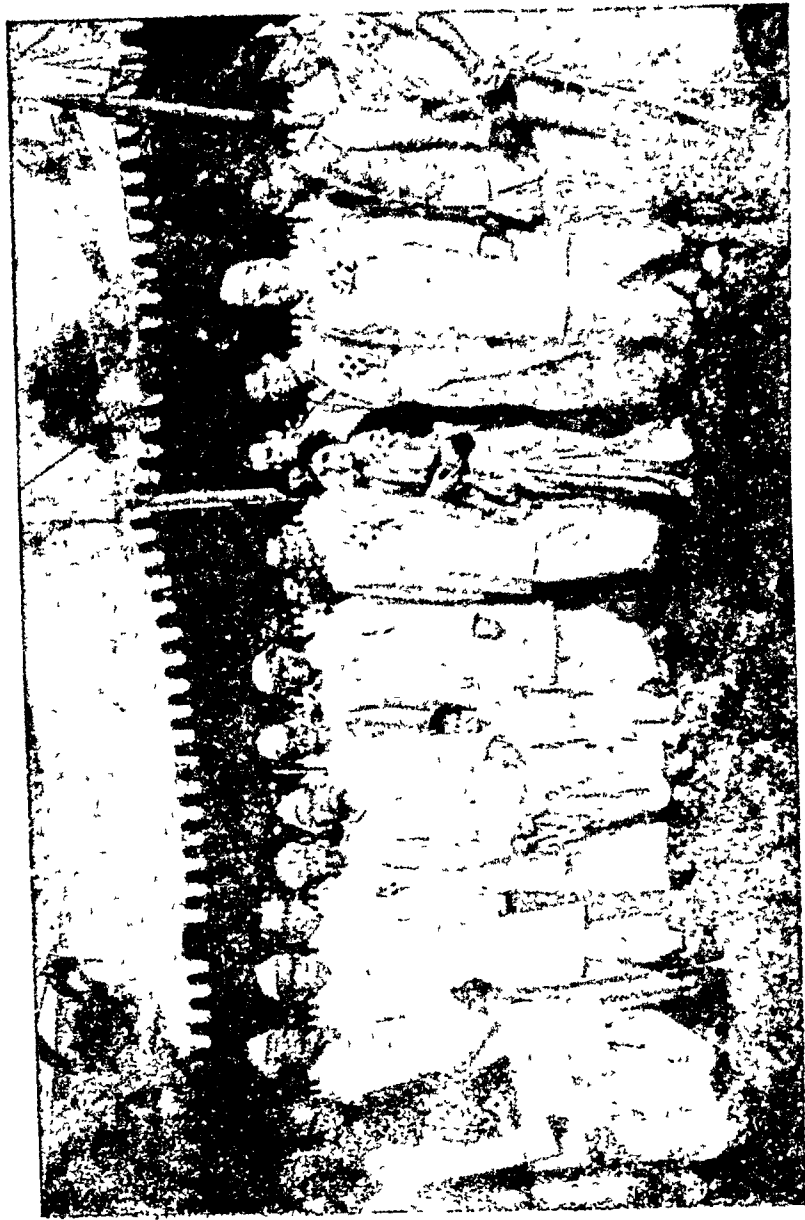
डा० एन० संजीवरेड्डी के द्वारा हिन्दी महाविद्यालय के शिलान्यास का समारोह।
लेखक बाईं से चौथे खड़े हैं।

पूज्य महात्माजी एक सुदक्ष और कर्मठ नेता थे, अतः उन्होंने इस निर्णय को तत्काल सक्रिय रूप देने का प्रयास किया था और दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार कार्य आरम्भ करने के लिए अपने सुपुत्र श्रीदेवदास गांधी को एक प्रचारक के रूप में मद्रास भेज दिया था। यहाँ 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रचार कार्यालय' आरम्भ किया गया। तदन्तर इस कार्य के लिए स्वामी सत्यदेव परिव्राजक को भेजा गया था। स्वामीजी ने मद्रास में हिन्दी की कक्षाएँ चलाने के अतिरिक्त पाठ्य-पुस्तकें भी तैयार की थी।

सन् १९२०-२१-२२ में असहयोग आन्दोलन सर्वत्र व्याप्त होगया था। उस समय राष्ट्रीय मनोवृत्ति वाले युवक-युवती हिन्दी भाषा की ओर अच्छी मात्रा में झुके। उसके बाद हिन्दी की परीक्षाएँ आरम्भ की गईं और प्रचारकों को शिक्षण देने के लिए राजमहेन्द्री और मद्रास मे विद्यालय चालू किए गये।

सन् १९२७ में पूज्य गांधीजी की सलाह से उक्त कार्यालय का नाम 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' रखा गया और उसका विधिवत् विधान तैयार किया गया। वे इस सभा के आजीवन अध्यक्ष रहे।

सन् १९३५ मे काका कालेलकर हिन्दी-प्रचार के निमित्त दक्षिण मे आये। उनकी सूचनानुसार सभा के नियमों मे कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए गए और आन्ध्र, तमिल, केरल तथा कर्णाटक प्रान्तों मे प्रान्तीय हिन्दी सभाएँ स्थापित की गई।

१९३६ में विजयवाड़ा मे 'आन्ध्र-राष्ट्र हिन्दी प्रचारसंघ' की स्थापना हुई और उसके द्वारा आन्ध्र प्रान्त मे हिन्दी का प्रचार अधिक तेजी से होने लगा।

जव भारत मे भाषावार प्रान्तों का पुनः संगठन हुआ, तव आन्ध्र-प्रदेश की स्थापना हुई और इस सभा का कार्यालय आन्ध्र-प्रदेश की राजधानी हैदरावाद में लाया गया। इससे पूर्व हैदरावाद मे हैदराबाद स्टेट से संवन्धित "हैदरावाद हिन्दी प्रचार संघ" के नाम से यही प्रवृत्ति चालू थी। उसका मैं तीन वर्ष कोषाध्यक्ष रहा था। परंतु आन्ध्र-प्रदेश वन जाने के वाद इन" दोनों को मिलाकर "दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा—आन्ध्र", रखा गया।

पूज्य गांधीजी की प्रवृत्तियों में मुझे पहले से ही रुचि थी, अतः इस प्रवृत्ति मे भी मैंने रुचि ली और सन् १९५६ मे इस सभा के कोषाध्यक्ष के रूप में मेरी विधिवत् नियुक्ति हुई। अनेक महानुभावों के सक्रिय सहयोग से इस सभा का कार्य उत्तरोत्तर विकसित होता गया।

पूज्य गांधीजी के महाप्रस्थान के वाद भारत के राष्ट्रपति श्रीराजेन्द्रवाबू इस सभा के अध्यक्ष हुए और उन्होंने सभा के कार्य मे वहुत अभिरुचि दिखलाई।

पं. जवाहरलाल नेहरू ने एक वार इस सभा की प्रवृत्तियों को लक्ष्य करके कहा था कि—

'हिन्दी का प्रचार कार्य महात्मा गांधी ने आरम्भ किया और उसे चालू रखना मै अपना कर्तव्य मानता हूँ ।'

'दक्षिणभारत की भाषाएँ प्राचीन और सुन्दर है । इन भाषाओं की इनके प्रदेशों में आवश्यकता है, किन्तु सारे भारत के लिए एक सामान्य राष्ट्रभाषा की भी आवश्यकता है ।

'मै मानता हूँ कि हिन्दी-प्रचार सभा का कार्य देश की एकता और दृढता की दृष्टि से स्थायी और लाभकारी कार्य है । यह देखकर मैं बहुत खुश हूँ कि हिन्दी प्रचारसभा ने वहुत काम किया है और अभी भी पूरे जोश से कार्य कर रही है ।'

श्रीराजेन्द्रबाबू का स्वर्गवास होने के वाद भारत के गृह-मन्त्री श्रीलालबहादुर शास्त्री इस सभा के अध्यक्ष हुए ।

१. यह सभा अपने विविध और विस्तृत कार्य-क्रम को चलाने के लिए वार्षिक ३,००००० तीन लाख रुपये से भी अधिक व्यय करती है ।

२· इस सभा द्वारा ली जानेवाली परीक्षाओं में प्रतिवर्ष ४०००० प्रायः चालीस हजार विद्यार्थी बैठते है । ये परीक्षाएँ आन्ध्र के ३०० केन्द्रों में वर्ष में दो बार ली जाती है । एक बार फरवरी में और दूसरी वार अगस्त में ।

३. इस सभा द्वारा राष्ट्रभाषा विशारद, राष्ट्रभाषाप्रवीण और हिन्दीप्रचारक इस प्रकार तीन तरह की उच्च परीक्षाएँ ली

जाती हैं। उन्हें केन्द्रीय शासन तथा दक्षिण के चारों प्रान्तों की सरकारों ने मान्यता दी है।

४. इस सभा के साथ लगभग ११५ स्थानीय संस्थाएँ सम्बद्ध है, जो कि 'हिन्दी प्रेमी मण्डली' के नाम से पहचानी जाती है और वे हिन्दी कक्षा आदि का सञ्चालन करती हैं। उनमें से ४४ हिन्दी प्रेमी मण्डलियों को पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सरकार की ओर से अनुदान मिलता है और प्रायः २० हिन्दी मण्डलियों को सभा स्वयं अनुदान देती है।

५. यह सभा स्वयं तथा हिन्दी प्रेमी मण्डलियों की सहायता से १७ हिन्दी महाविद्यालय चला रही है, जिनमें सुव्यवस्थित रूप से उच्चशिक्षा देने की व्यवस्था है। इनमें ११ महाविद्यालयों को पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आर्थिक सहायता मिलती है।

६. यह सभा हिन्दी अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए आन्ध्र-प्रदेश के भिन्न-भिन्न भागों में समय-समय पर हिन्दी प्रचारक विद्यालयो का सञ्चालन करती है। अब तक इन विद्यालयों द्वारा २००० से अधिक अध्यापक "हिन्दी प्रचारक" प्रशिक्षण पा चुके हैं।

७. यह सभा तेलुगु भाषा में 'स्रवन्ती' नामक एक साहित्यिक मासिक पत्रिका चलाती है। सन् १९५४ में इसका प्रारम्भ हुआ था। यह उच्चकोटि की साहित्य-रचना द्वारा लोकप्रिय मासिक प्रमाणित हुआ है।

८. यह सभा पुस्तक-प्रकाशन का कार्य भी करती है। इसने अब तक २१ पुस्तकें हिन्दी और तेलुगु में प्रकाशित की हैं।

९. इस सभा का हैदराबाद में अपना केन्द्रीय ग्रन्थालय है, जिसमें हिन्दी, तेलुगु और अंग्रेजी भाषा के कुल मिलाकर ३००० पुस्तकें है। उसके साथ वाचनालय भी है, जहाँ ५० पत्र-पत्रिकाएँ मँगाई जाती हैं। इसी प्रकार इस सभा के विजयवाड़ा स्थित शाखा कार्यालय में भी ग्रन्थालय तथा वाचनालय का प्रबन्ध है।

१०. यह सभा अपनी ओर से एक छापाखाना चलाती है। उसमें हिन्दी, तेलुगु, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषाओं में सुंदर छपाई का काम होता है।

११. भारत की भाषाओं के बीच भावात्मक एकता को सुदृढ बनाने के उद्देश्य से यह सभा समय-समय पर कुछ मुख्य केंन्द्रों में हिन्दी प्रचार सम्मेलन, तथा साहित्यिक और सास्कृतिक कार्य-क्रमों का आयोजन् करती है, जिनमें विभिन्न भाषाओं में कविसम्मेलन, गोष्ठियाँ, नाटक, नृत्य आदि को प्रमुख स्थान दिया जाता है।

१२. यह सभा बृहत् हैदरावाद में पन्द्रह मुख्य केन्द्रो में स्त्रियों और पुरुषों के लिए पृथक-पृथक् हिन्दी कक्षाओं का सग-ठन करती है।

गत दस वर्षो से मैं इस संस्था का कोषाध्यक्ष रहा हूँ और इसके अनेकविध प्रश्नों के समाधान में रुचि लेकर यथाशक्ति सहयोग दे रहा हूँ।

सन् १९६३ में दक्षिणभारत हिन्दी प्रचारसभा-आन्ध्र ने अपना रजतजयन्ती महोत्सव मनाया, उसमें भी मैंने कोषाध्यक्ष

तथा द्वितीय मन्त्री का काम किया था। इस महोत्सव का अध्यक्षपद भारत के गृहमन्त्री श्रीलालबहादुर शास्त्री ने सुशोभित किया था, वे उस सभा के वर्तमान अध्यक्ष भी हैं। इस महोत्सव का उद्घाटन भारत के राष्ट्रपति डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के हाथों हुआ था जो कि इस सभा के कार्यों के प्रति प्रारम्भ से ही आदरपूर्ण दृष्टि रखते थे।

इस प्रवृत्ति के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों से मिलने तथा उनके साथ विचार विनिमय करने का प्रसङ्ग, आता है, तथा भारत के मान्य विद्वानों के सम्पर्क-सहवास का लाभ भी मिलता है।

मैं अपनी मातृभाषा का ज्ञान भी अच्छी तरह नहीं पा सका, उसका दुःख कई बार हुआ है, किन्तु जब ऐसी प्रवृत्तियों के द्वारा दूसरों के भाषा ज्ञान की वृद्धि में निमित्त बनने का प्रसङ्ग आता है, तब यह दुःख कम हो जाता है और राष्ट्रीय आन्दोलन के कुछ अंशों में उपयोगी हो सकने के कारण सन्तोष का अनुभव होता है।

सन् १९६० के नवम्बर मास में हिन्दी के माध्यम से आर्टस कॉलेज की स्थापना करने के लिए एक स्वतन्त्र हिन्दी महाविद्यालय समिति बनाई गई। तदन्तर उसकी प्रबन्ध समिति की रचना होने पर मैं उसका सदस्य तथा कोषाध्यक्ष बना हूँ। इस हिन्दी महाविद्यालय को आन्ध्र-प्रदेश सरकार ने छः एकड़ भूमि भेट दी है और प्रायः पाँच लाख रुपये के व्यय से उसका अपना भवन बन गया है, उस संस्था के अध्यक्ष श्रीपन्नालाल बंशीलाल पित्ती हैं।

३२

# ग्राम विस्तार का सुधार

भारत की आबादी का बड़ा अंश गावों में बसता है, अतः गाँवों की परिस्थिति के बारे में हमें ध्यान देना चाहिए।

पहले के जमाने में हमारे गाँव लगभग स्वावलंबी थे। वे खेती-बाड़ी से अपने लिए अपेक्षित अन्न तथा शाक भाजी उत्पन्न कर लेते थे; गाय-भैंस आदि का पालन करके दूध, दही, छाछ तथा घी प्राप्त कर लेते थे; तेल के तिल बोते और घानी का उपयोग करते; तथा एरंड से एरंडी तेल तैयार करके उसका दीपक जलाते थे। इसी प्रकार भोजन पकाने के लिए अपने स्थान से अथवा आसपास के जंगलों से अपेक्षित ईंधन जुटा लेते थे।

दरजी, सुनार, लुहार, मोची, कुम्हार, बुनकर आदि अपना अपना धन्धा करते और उसके द्वारा ग्राम्य-जीवन की अन्य आवश्यकताएँ पूरी होती थीं।

जहाँ कपास उत्पन्न होता है वहाँ कपास के बीज निकाले जाते, चरखे चलते, रुई से पूनियाँ बनाने का काम होता, चरखों

द्वारा सूत तैयार किया जाता और बुनकर उसका कपड़ा बुन देते। उसे रंगने की आवश्यकता होती तो प्रायः अपने हाथों से ही लोग रँग लेते अथवा रँगरेज की सेवा लेते।

वस्तु के क्रय-विक्रय में व्यापारी सहायक होता। तथा वह सराफ का काम भी करता और कठिनाई के समय सलाह-मशविरा दे कर किसान, कारीगर आदि को सुस्थिर रखता है।

परन्तु यन्त्रों के आगमन के पश्चात् इन उद्योगों का ह्रास होने लगा और उसका प्रभाव गाँवों पर भी पड़ा। इससे भी अधिक बाहर की वस्तुओं के प्रति हमारा आकर्षण बढ़ा, जिससे गाँवों के कारीगर बेकार होने लगे और उन्हे अपनी रोजी चलाने के लिए बड़े शहरों का आश्रय लेना पड़ा। सारांश यह है कि यन्त्रों के आने के बाद गाँवों की स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ने लगी और उसे सुधारने का प्रश्न उपस्थित हुआ।

आज गाँवों में निरक्षरता की मात्रा अधिक है, बेकारी भी व्याप्त है और खराब प्रवृत्तियों के कारण रोग के प्रकारों तथा विस्तार में भी बहुत वृद्धि हुई है। तथा अनेक प्रकार के भ्रम और कुरीतियों के कारण वे ऊपर नहीं उठते और जीवन का उत्कर्ष साध नही सकते।

पूज्य गांधीजी ने लेख तथा भाषणों द्वारा इस ओर हमारा ध्यान खींचा और रचनात्मक कार्य के उन्नीस सूत्रों में उसे प्रमुख स्थान दिया है। पूज्य विनोबा जी ने भी इस बात पर पर्याप्त बल दिया है। परिणाम यह हुआ कि कितने ही सेवाभावी

हैदराबाद रोटरी क्लब के अनुदान से हस्मतपेट में निर्मित पाठशालाभवन के उद्घाटन का दृश्य।
मध्य में : इज़रायेल के रोटरी क्लब के अध्यक्ष, बाईं ओर में पंचायतराज के
मन्त्री डा० लक्ष्मीनरसय्य, दाहिनी ओर में लेखक खड़े हैं।

रोटरी क्लब के अनुदान से निर्मित पांच ग्रामीण पाठशाला भवनों में से फ़तेहनगर भवन का उद्घाटन श्री डा० लक्ष्मीनरसय्य के हाथों हुआ। रूरल वेलफ़ेर कमेटी के अध्यक्ष की हैसियत से लेखक ग्रामसुधार कार्य पर बोल रहे हैं। १९६४–६५
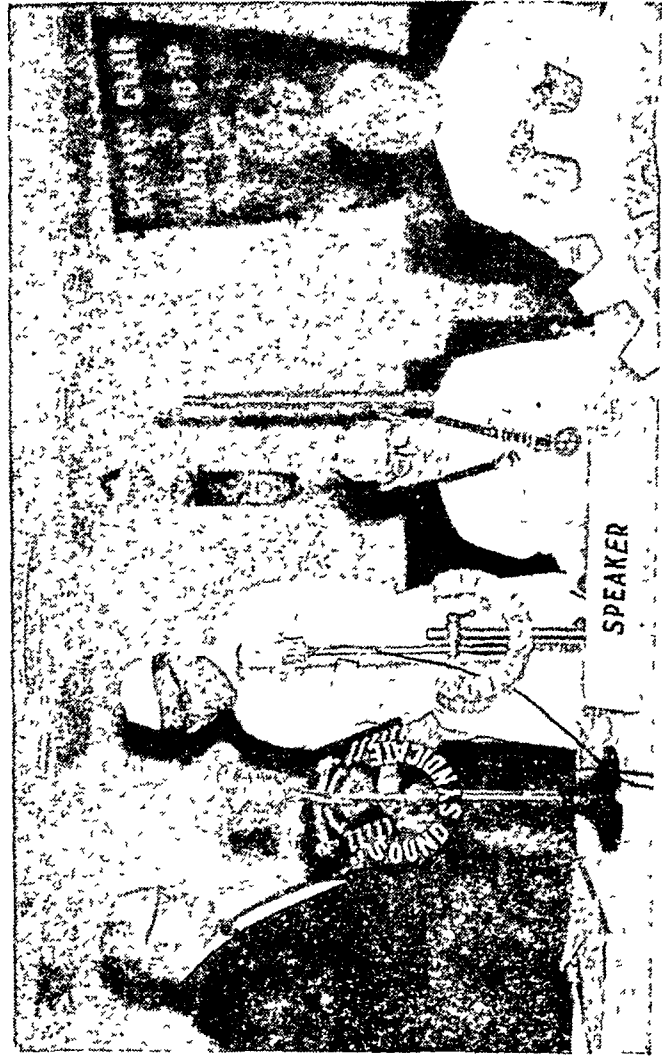
हैदराबाद रोटरी क्लब के 'रूरल वेलफ़ेर कमेटी' १९६२-६३ के अध्यक्ष के रूप में लेखक, भूतपूर्व गवरनर श्री डा० रामभंडारी के हाथसे श्रेष्ठ सामाजिक सेवा का शील्ड प्राप्त कर रहे है। पास में बैठे हुए : श्री ई जी· तारापोर (अध्यक्ष) तथा श्री पत्री (मानद मंत्री)
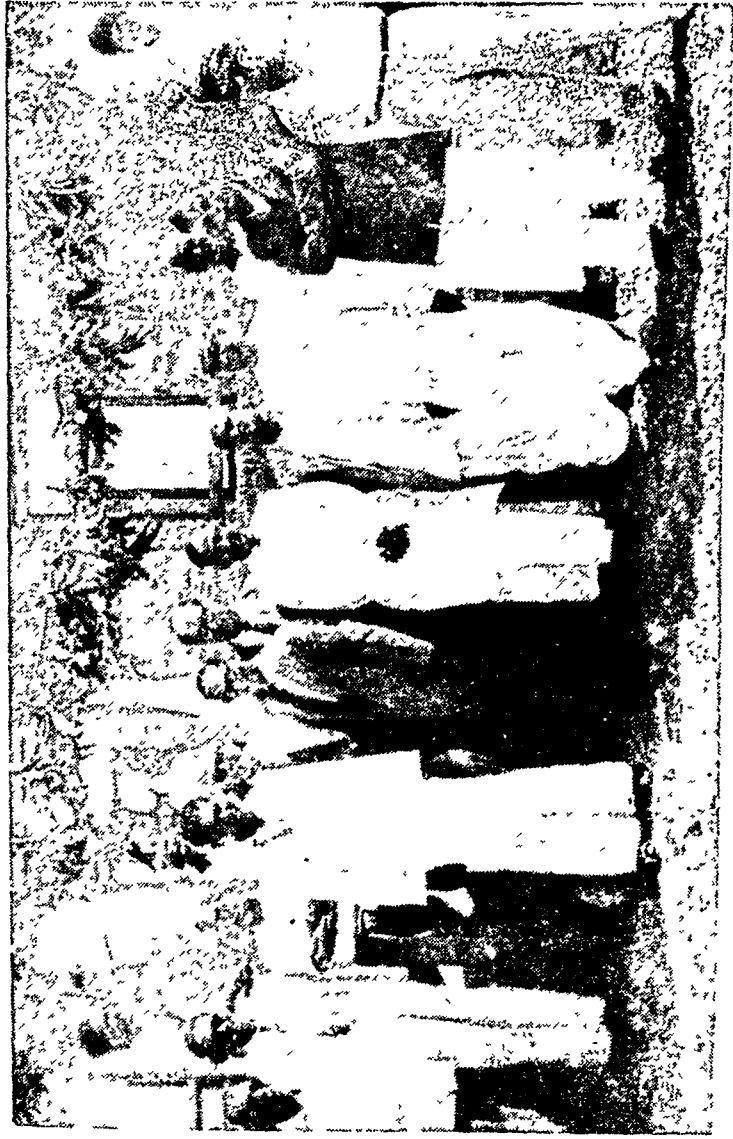
रोटरी क्लब डिस्ट्रिक्ट ३१५ के गवरनर श्री मद्दि सुदर्शनम् के साथ गगनपहाड गाँव में लेखक (दाईं से ३ रे) १९६२-६३

मनुष्य गाँवों में पहुँच गये और उनके सुधार के लिए शक्ति के अनुसार प्रयत्न करने लग।

मेरी भावना भी इसी प्रकार की थी, किन्तु संयोगों ने मुझे शहर में ढकेला और अन्त में वहीं स्थिर हो गया। इतना होने पर भी ग्राम सुधार के लिए मुझे कुछ करना चाहिए, यह विचार मन से दूर नहीं हुआ था। पत्री में गांधी विद्यालय तथा अन्य सेवाकार्य किये, तथा यहाँ सर्वोदय ट्रस्ट बनाकर शिवराम पल्ली में 'ग्राम सेवा केन्द्र' आरम्भ किया। उसके पीछे भी यही उद्देश्य निहित था।

परन्तु इस सम्बन्ध में अधिक व्यवस्थित कार्य मैं हैदराबाद के रोटरी क्लब में जुड़ जाने के बाद कर सका और उसी का कुछ परिचय यहाँ देना चाहता हूँ।

रोटरी क्लब शिक्षित-सभ्य समाज का एक विशिष्ट प्रयास है। इसके द्वारा व्यापार, धन्धा तथा कला-कौशल में आगे बढे हुए लोग पारस्परिक मिलन साध सकते है विचारो का आदान प्रदान कर सकते हैं; और कुछ समाजकल्याण की प्रवृत्तियाँ भी चला सकते है। ऐसे क्लब आज विश्व के प्रत्येक बड़े शहर में चलते है।

हैदराबाद शहर में रोटरी क्लब सन् १९४९-५० मे आरम्भ हुआ था। किन्तु मैं इसमे सन् १९५९-६० में सम्मिलित हुआ था। यह क्लब सामाजिक सेवा के लिये छोटी-बड़ी अनेक प्रकार की समितियों का निर्माण करके उनसे काम लेता था। उनमें से एक समिति 'अर्बन एण्ड रूरल वेल्फेअर' नामक थी, अतः उसे

शहरों और ग्रामों में कल्याणकारी कार्य करना था। उसका भार पहले वर्ष में ही मुझ पर डाला गया अर्थात् मुझे उसका अध्यक्ष चुना गया। उसके बाद भी तीसरे, पाँचवें और छटे वर्ष भी मुझे इसी प्रकार अध्यक्ष बनाया गया।

हमने इस सेवा के लिये सर्वप्रथम राजेंद्रनगर विभाग में ६० गावों की जानकारी का कार्य हाथ में लिया, वहाँ के लोगों में अक्षरज्ञान की बहुत कमी प्रतीत हुई। इस विभाग में जनता को अक्षरज्ञान देने के लिए विद्यालय बहुत ही कम थे। इस दृष्टि से हमने इस क्षेत्र में तीन रात्रिशालाएँ आरम्भ की। एक काटेधन में, दूसरी साथमरायि में तथा तीसरी गगन पहाड़ में। इसका फल अच्छा निकला। उन गाँवों के छोटे-बड़े सभी लोगों ने बड़ी उत्सुकता से भाग लिया।

इसको देख कर हमने राजेन्द्रनगर क्षेत्र में अन्य कई शालाएँ खोलने का विचार किया, किन्तु वहाँ बड़ी कठिनाई मकानों की थी, अतः शालाओं के लिए मकान बनवाने की योजना हाथ में ली और उसके लिये हमने ऐसीं व्यवस्था की, कि प्रारम्भ के लिये कुछ रुपये रोटरी क्लब दे तथा सरकार से प्राप्त किये जाएँ और शेष काम स्थानीय जनता श्रमदान करके तथा यथाशक्ति अन्य सहायता देकर पूरा कर दे। यह योजना सफ़ल हुई। पाँच वर्षों में हम नीचे लिखे १२ गाँवों में शाला के लिए मकान बनाने में सफल हुए-१. भवानपल्ली, २. लक्ष्मीगुडा, ३. काटेधन, ४. रालगुडा, ५. जल्लपल्ली, ६. मूसापेट, ७. साथमराय, ८. गल्वगुड़ा, ९. अनन्तरेड्डिगुडा, १०. शंकरपुर, ११. हमिदौलनगर तथा १२. मैलरादेयपल्ली।

रोटरी क्लब ने इन मकानों के निर्माण में कुल ३,१०,००० रुपये की सहायता दी। अभी इन शालाओं से १३४० छात्र लाभान्वित हो रहे है।

इसके अतिरिक्त गतवर्ष और दूसरे छः गावों में इसी प्रकार शालाओं के मकान बनवाने की योजना हाथ में ली गई है। तथा चालू वर्ष में पाँच शालाओं के मकान तथा मूसापेट में एक कम्युनिटी हॉल बनवाने का कार्य चल रहा है।

तथा हमारी कमेटी की ओर से काटेधन गॉव में एक यूथक्लब भी चालू किया गया है जहाँ युवक वर्ग एकत्रित होकर दैनिक पत्र पढ़ते हैं, देश के प्रश्नों पर चर्चा करते हैं तथा शक्ति और संगठन की भावना प्राप्त करते हैं।

यहाँ इतना बतलाना उचित होगा कि हम इस विभाग में केवल शालाएँ स्थापित करके ही सन्तुष्ट नहीं हुए। इस विभाग की स्वच्छता, स्वस्थता तथा उन्नतिकारक अन्य योजनाओं के बारे में भी व्यवस्थित कार्यक्रम चलाने में तत्पर हुए है। काटेधन में प्रसूतिगृह, शिशुविहार तथा अलवाल रोटरी क्लब ने चिकित्सालय आरम्भ किया है, जिसे बाद में शासन ने हास्पिटल बना दिया है।

काटेधन गॉव के स्कूल में मकान का उद्‌घाटन दि० १६–१०–'६० को उस समय के आन्ध्रप्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री संजीवय्या के हाथों करवाया गया था। उस समय हमारी समिति के प्रबन्ध से शिवरामपल्ली में मुख्यरूप से शामियाना

लगवाया गया और रोटरी क्लब के तत्कालीन प्रमुख श्री पन्नालाल भण्डारीने मुख्य मन्त्री का तथा वहाँ पधारनेवाले अन्य अतिथियों और ग्राम्य जनता का स्वागत किया था।

मुख्यमन्त्रीने राष्ट्र के स्वास्थ्यपूर्ण विकास के लिए शरीर और मन की अच्छी आदतें डालने का अनुरोध किया और हरिजनों को साग्रह बतलाया था कि यदि आपको आगे बढ़ना हो तो आपके बालकों को इस शाला में अवश्य भेजें और उनको शिक्षित बनाइये। अन्त में उन्होंने रोटरी क्लब को ऐसी सुन्दर प्रवृत्ति हाथ में लेने के उपलक्ष्य में अभिनन्दन किया और हमारी समिति को, तथा उसके अध्यक्ष के रूप में मेरा स्मरण करके इस कार्य को विशेष आगे बढ़ाने के लिए सूचना दी। तदनन्तर प्रतिवर्ष जो मकान बने उन्हें राजेन्द्रनगर पंचायत समिति को भेंट करते समय उत्सव किए गए जिन से ग्रामविकास को नवीन वेग मिला।

रोटरी क्लब परस्पर स्नेहसम्बन्ध रखनेवाले विशिष्ट व्यक्तियों की एक सुसंगठित संस्था है। अतः उसके द्वारा इस दिशा में अभी बहुत किया जा सकेगा, ऐसी मेरी आन्तरिक श्रद्धा है।

३३

## नेत्रदान की प्रवृत्ति

सेवा का क्षेत्र अति विस्तृत है। वह मानव-जीवन के अनेक भागों को छूता है। उनमें से कुछ भागों को स्पर्श करने का अवसर इस क्षणभंगुर जीवन में मैं प्राप्त कर सका, इसे मैं अपना अहोभाग्य मानता हूँ।

नेत्रदान की प्रवृत्ति वैसे तो विश्व के भिन्न भिन्न देशों में तथा भारत के भिन्न-भिन्न भागों में कुछ समय से चल रही है, किंतु इसकी ओर मेरा ध्यान विगत दो वर्षों में अधिक आकृष्ट हुआ है। मुख्यतया जब से मैंने बम्बई निवासी श्रीडुंगरशी खजीभाई को जो कि मेरे मित्र और समधी भी है, इस प्रवृत्ति मे लगे हुए देखा, तब से मेरे मन पर इस का बहुत प्रभाव पडा और मुझे लगा कि इस दिशा मे मुझे भी अवश्य सहयोग देना चाहिए। इसके बाद हैदराबाद मे मेरे पडोस मे मेरे स्नेही मान्यवर श्री जेठाभाई दामजी ने अपने नेत्रों का दान किया और उनके स्वर्गवास के बाद उनके नेत्रों द्वारा दो व्यक्तियों को ज्योति प्राप्त होते देखा, उससे भी मुझे इस कार्य की प्रेरणा मिली।

आज भारत में प्राय: ४० लाख मनुष्य नेत्र ज्योति से रहित है, जिनमें ४ लाख मनुष्य आन्ध्रप्रदेश मे हैं। जब मनुष्यो के नेत्र के आगेवाली पारदर्शक पुतली का तेज चला जाता है तब वह अन्धा हो जाता है। तब वह कोई वस्तु देख नही सकता। हम थोड़े समय अँधेरे मे रहते है तब क्या देख सकते हैं? किसी भी वस्तु को न देख सकने के कारण हम एक प्रकार की बेचैनी का अनुभव करते हैं और मानों हमारे समक्ष सारी रंगीन सृष्टि मिथ्या हो गई हो, ऐसा लगता है। तब फिर जिसके नेत्र की ज्योति सदा के लिए चली गई हो, उसे कैसा लगता होगा? यदि ऐसे मनुष्यों को नेत्र की ज्योति पुन: प्राप्त हो तो उन्हें नया जीवन मिलने के समान आनन्द होता है और वे अपना व्यवहार सरलतापूर्वक चला सकते है।

शीतला, उपदंश (सिफिलिस), मधुमेह, हिस्टीरिया आदि कारणों से मनुष्य के नेत्रों की ज्योति चली जाती है तथा अधिक धूप अथवा बिजली का प्रकाश सेवन करने से भी नेत्रों की ज्योति क्षीण हो जाती है। कई बार क्विनाइन आइडोफार्म, तथा सोमल आदि की बनावटों को बिना समझे उपयोग करने से भी नेत्र की दर्शनशक्ति को बड़ा धक्का पहुँचता है और वह विकल बन जाती है। इसके अतिरिक्त आकस्मिक दुर्घटना से, चोट लगने से अथवा अन्य कारणो से भी मनुष्य अपने नेत्रों की ज्योति खो बैठता है।

आधुनिक विज्ञान ने अशक्य समझी जानेवाली अनेक बातों को शक्य बनाया है, इसी प्रकार अन्धे मनुष्यों को दृष्टि देने में भी शक्ति प्राप्त की है और उसमें एक के नेत्र दूसरे को बिठा देना (Cornea grafting) प्रमुख है।

एक मनुष्य की मृत्यु के बाद छः घण्टे तक उसकी आँखे अच्छी स्थिति मे रहती है। यदि उन आँखों को निकाल लिया जाए और उचित रीति से उन्हे सुरक्षित रखा जाए तो अन्धे मनुष्य की आँखों के स्थान पर उन्हें बिठाया जा सकता है और उससे वह देखनेवाला बन जाता है। सन् १९६५ मे की गई खोज के अनुसार भारत मे ४० लाख लोग अन्धे हैं। उनमे से चौथा भाग इस ऑपरेशन से अच्छा होने की स्थिति मे है।

मृत्यु के पश्चात् हमारा शरीर कुछ समय में ही भस्मीभूत हो जाता है अथवा भूमि में गाड़ दिया जाता है और वह कुछ ही दिनों में मिट्टी मे मिलकर तद्रूप बन जाता है। इसके विपरीत हमारे नेत्रों का इस प्रकार दान कर दे तो मानव-जाति की कितनी महान् सेवा हो? पशुओं को हम सामान्य कोटि के प्राणी मानते हैं, किंतु मृत्यु हो जाने के बाद उनका चमड़ा, सीग, नख, बाल आदि वस्तुए हम अपने काम में लाते तो है? इस स्थिति में यदि उनकी आँखे भी काम आती तो यह चाहने योग्य है।

कई लोगों का कहना यह है कि मृत मनुष्य की आँखे निकाल लेने पर उसकी आकृति विकृत हो जाती है, इसलिए ऐसा करना उचित नहीं है, किन्तु यह कहना भ्रान्तिपूर्ण है। आँखों के निष्णात चिकित्सक मृत-मनुष्यों की आँखे बड़ी सावधानी से केवल दस मिनिट में निकाल लेते है और उनपर पलके ढक देते हैं, जिससे उनकी मुखाकृति पूर्ववत् ही लगती है। उसमें विकृति का कोई चिह्न नहीं दिखाई देता। तात्पर्य यह कि इस

वारे में तनिक भी चिन्ता न करते हुए नेत्रदान के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए।

आन्ध्रप्रदेश सरकार में सन् १९६३ में पहले ही 'कॉनियल ग्रेफ्टिंग एक्ट' पास किया है; उसके द्वारा उसने ऐसा अधिकार प्राप्त कर लिया है कि वह किसी लावारिस शव की अथवा दान देनेवाले व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसकी आँखें निकाल सकती है।

इस प्रकार प्राप्त हुई आँखों का संग्रह करने के लिए उसने विशाखापट्टणम्, कर्नूल, वरंगल, काकिनाडा गुंटूर, तिरुपति और हैदराबाद इन सात स्थलों में 'नेत्र बैंक' खोलने की योजना वनाई है। इनमें से हैदराबाद का कार्य 'सरोजिनीदेवी आइ हॉस्पीटल' को सौंपा गया है।

इस हॉस्पीटल को सभी अपेक्षित मात्रा में नेत्र नहीं मिलते है, क्योंकि लोग उसका महत्त्व नही समझे है, इसलिए तदर्थ सरोजिनीदेवी हॉस्पीटल के सुपरिण्टेण्डेण्ट डॉ. पी. शिवरेड्डी, एम. बी. वी. एस., एम. एस, डी. ओ. की अध्यक्षता में सन् १९६५ के अक्टूवर मास में पाँच सदस्यों की 'आइ बैंक' कमेटी बनाई गई है और उसके सम्मान्य मन्त्रीपद का दायित्व मैंने सँभाला है; इतना ही नही अपितु इस प्रवृत्ति से सम्बन्धित स्टेशनरी छपाई का कार्य, डाक, सभा का आयोजन आदि का जो कुछ भी खर्च करना पड़े उसके लिए टोकरशी लालजी कापड़िया पब्लिक चेरिटिवलट्रस्ट ने १० हजार रुपये की व्यवस्था की हैं। ट्रस्ट की ओर से ही समिति मे ट्रस्ट के मेनेजिंग ट्रस्टी (मेरा पुत्र) धीरज लाल सदस्य के रूप मे उन पाँच व्यक्तियों में है।

आन्ध्र प्रदेश के मुख्य मत्री श्री ब्रह्मानन्दरेड्डी 'ऐ बैंक कमेटी का प्रारंभ कर रहे है। लेखक कमेटी के संचालक की हैसियत से साथ खड़े है। १९६६

'ऐ बैंक कमिटी' के प्रारंभोत्सव के समय लेखक भाषण कर रहे हैं।

दाहिनी ओर से: डा० पि. शिवरेड्डी (अध्यक्ष ऐ बैंक कमिटी); मुख्यमत्री श्री ब्रह्मानंद रेड्डी (प्रारभक); डा० एम. चेन्नारेड्डी (वित्त अण्ड उद्योग मन्त्री, आं. प्र.); पद्मभूषण मेहदी नवाज जगः श्री कुजबिहारी लाल (सचिव स्वास्थ्य विभाग); श्री एस. एम. कादर (डैरेक्टर मेडिकल सर्वीसेस)।

इस प्रवृत्ति में प्रथम आवश्यकता साहित्य की होने से इस सम्बन्ध में अंग्रेजी, तेलुगु, हिन्दी, उर्दू, कन्नड, मराठी तथा गुजराती भाषाओ में कुछ साहित्य छपाया है और वह महत्त्वपूर्ण स्थानों पर भेजा गया है। विशेषतः यह कार्य वेगवान् बने इसके लिए भिन्न-भिन्न समितियों का निर्माण हुआ है, जो इस बारे में प्रचार करते है और नेत्रदान करनेवालो से दान-पत्र भरवा लेते है।

'गुजराती प्रगति समाज' के जिसे मैं अपनी संस्था कह सकता हूँ कार्यकर्ताओं ने इस कार्य में अच्छा सहयोग दिया है तथा चक्षु-दाताओं के १५१ दानपत्र प्राप्त किए है। सिकन्दराबाद गुजराती सेवामण्डल ने भी इस कार्य में सक्रिय सहयोग देकर हमारे उत्साह की वृद्धि की है। इस प्रकार 'ग्रामसेवाकेन्द्र शिवरामपल्ली', 'सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट', 'नेचरक्यूर हॉस्पीटल', 'जीवरक्षा ज्ञान प्रचारक मण्डली', 'नवजीवन महिलामण्डल', 'महाराष्ट्र मण्डल', 'राजस्थान प्रगति समाज', 'जैन मण्डल', 'रोटरी क्लब', 'लायनसक्लब', 'यूथ क्लब', 'भारत सेवक समाज', 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा', 'आन्ध्र-प्रदेश ग्रेन एण्ड सीड्स मर्चेन्ट एसोसिएशन', 'चार मीनार सिगरेट फेक्टरी', 'उपामशीन इण्डस्ट्रीज', 'आन्ध्र रीरोलिग वर्क्स', 'सर्वोदय मण्डल—आन्ध्र-प्रदेश' आदि हैदराबाद शहर की महत्त्वपूर्ण सामाजिक संस्थाएँ सब मिल कर ३९ समितियाँ बना चुकी है और इन्होंने ६१५ चक्षुदाताओ के दानपत्र प्राप्त किए है, जिनमे मन्त्री, अधिकारी, शिक्षक, सामाजिक कार्यकर्ता, व्यापारी, उद्योगपति, युवक, युवतियाँ आदि सम्मिलित है।

यहाँ यह भी बतला देना चाहिए कि इस प्रवृत्ति के परिणाम-स्वरूप दि. ६–४–६६ तक कुल १० अंधे व्यक्तियों को नेत्रदान प्राप्त हुआ है ।

दि. ९–१–६६ को सरोजिनीदेवी आइ हास्पीटल में एक खास सेमिनार का आयोजन किया गया था; जिसका उद्‌घाटन केन्द्र की स्वास्थ्यमन्त्री श्रीमती डॉ, सुशीला नैय्यार ने किया था। इस अवसर पर आन्ध्रप्रदेश के वित्तमन्त्री तथा स्वास्थ्यमन्त्री पधारे थे । तथा सारे भारत में से आँखों के बड़े-बड़े डॉक्टरों ने भी आकर आयोजन की शोभा बढ़ाई । इस अवसर पर स्वास्थ्यमन्त्री ने श्रीगुजराती प्रगति समाज की आइ बेंक कमेटी का उसकी उत्साहपूर्ण कार्यवाही के लिए अभिनन्दन किया था।

इस कार्य के लिये मैं सतत जागरूक रहता हूँ और जहाँ आवश्यकता पड़ती है, वहाँ स्वय जाता हूँ । दि. ३१–११–६५ को स्वर्गीय श्रीपेथराजभाई कानजी का देहान्त होने पर उनके कुटुम्बियों ने हमारी प्रार्थना को स्वीकृत कर नेत्रदान किया। दि॰ २३–१–६६ को श्रीरामकृष्ण धूतजी की धर्मपत्नी का देहान्त हुआ, तब मैंने इस बात की ओर श्रीरामकृष्णजी का ध्यान खींचा और उन्होंने तत्काल अपनी मृत पत्नी के नेत्रों का दान किया था ।

मुझे आशा है कि कुछ ही समय में हम आन्ध्र-प्रदेश में 'आइ बेंक कमेटी' से सम्बद्ध प्रायः १००० आइ बेंक समितियाँ स्थापित कर सकेंगे, जो आन्ध्र-प्रदेश की आइ बेंक को अपेक्षित नेत्र दे सकेंगी ।

वास्तव में यह कार्य बहुत कठिन है। आन्ध्र के ४ लाख अन्धे भाइयों मे से एकलाख अन्धे भाइयों को नेत्रदान द्वारा कीकी प्राप्त हो तब उनको ज्योति मिल सकती है ऐसी स्थिति है। शेष ७५ प्रतिशत अन्धे भाइयों के ज्ञानतन्तु खराव हो जाने से 'कोरनिया ग्राफटिंग' काम नही आ सकता अर्थात् उनका अन्धत्व दूर नहीं हो सकता। दूसरी ओर अन्धत्व का रोग बढ़ता जा रहा है, अत. मृत्यु के वाद एक भी नेत्र छोड़े नही तभी इस कार्य को कठिनाई से पूरा किया जा सकता है। परन्तु अभी तो लौकिक धारणा नेत्रदान के विरुद्ध है, अत· प्रचार के द्वारा तथा समझाकर ही आगे बढ़ना है।

दि· ३–४–६६ को गांधीभवन में आइ बेक कमेटी का उद्घाटन आन्ध्र के मुख्यमन्त्री श्री के· ब्रह्मानन्द रेड्डी के शुभहस्त से हुआ। उस समय राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधामन्त्री श्रीमती इन्दिरागांधी, स्वास्थ्यमन्त्री, श्रीमती सुशीला नैयर, पूज्य विनोबा, बंगाल, महाराष्ट्र आदि के राज्यपाल तथा और भी बहुत से महानुभावों के उत्साहप्रद सन्देश प्राप्त हुए थे। जनता भी पर्याप्तमात्रा मे उपस्थित हुई थी।

मैंने इस प्रसग पर आइ बेक कमेटी को सहयोग देनेवाली संस्थाओं तथा व्यक्तियों का प्रकट रूप से आभार-प्रदर्शन किया था और यह विचार व्यक्त किया था कि इस कार्य मे सभी जाति-पाँति का भेद छोड़ कर सम्मिलित हुए, इससे देश की एकता को बहुत लाभ होगा।

गुजरात के राज्यपाल पद्मभूषण श्रीमेहदी नवाजजग वहादुर ने इस प्रवृत्ति को पुष्ट करने के सम्बन्ध मे प्रवचन किया था और

स्वयं नेत्रदान करने की इच्छा व्यक्त की, तदनुसार दानपत्र पर हस्ताक्षर करके इस आइ बेंक को भेंट किया था।

इस समारोह में नेत्रदान करनेवाले प्राय: ६०० व्यक्तियों को मुख्यमन्त्रीजी के हाथों से अभिनन्दन-पत्र दिए गये थे और उसने वातावरण को बहुत ही उत्साहप्रद बनाया था।

विशेषत: इस प्रसंग पर उसी दिन आन्ध्र के एक वयोवृद्ध पुरुष की मृत्यु हो जाने के बाद तत्काल उनके पुत्र श्रीराजन्ना ने नेत्रदान किया, और उससे दो नेत्रहीनों को ज्योति मिली।

उद्घाटन करते हुए मुख्यमन्त्रीजी ने अपने भाषण में कहा था कि—मुझे अनेक प्रकार के उद्घाटन-प्रसंगों पर जाना पड़ता है। उनमें आज का प्रसंग महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह मानवता के सबसे उच्च कार्य के लिए आयोजित हुआ है। जहाँ दान देना हो, वहाँ सामान्यरूप से दर्शक थोड़े आते हैं, किन्तु आज की उपस्थिति देखकर मुझे बहुत ही आनन्द होता है। श्रीटोकरशी कापड़िया के विविध सार्वजनिक कार्यों मे यह कार्य सबसे उत्तम है, ऐसा मैं मानता हूँ। नेत्रहीन भाईयों को नेत्रदान करना, उन्हें नवीन जीवन देने के बराबर है। इससे बड़ा दान कौन-सा हो सकता है ?

आन्ध्र राज्य के वित्त एवं उद्योगमन्त्री डॉ. एम. चन्नारेड्डी इस समारोह के अध्यक्ष पद पर आसीन हुए थे। उन्होंने अपने भाषण मे अपने और अपनी पत्नी के नेत्रों का दान घोषित करते

हुए कहा था कि इस निर्दोष कार्य मे सभी को सहायता करनी चाहिए। भारत में बम्बई आदि स्थलों पर ऐसी कमेटियों ने कई वर्ष पूर्व ही अपनी सेवाएँ आरम्भ कर दी है, जब कि आन्ध्र के लिए यह पहला अवसर है। इस कमेटी की कार्यपद्धति व्यवहारोचित है, अतः यह सर्व साधारण जनता तक ठीक तरह से पहुँच जाएगी और भारत के अन्य प्रान्तों के लिए मार्गदर्शक बनेगी ऐसी आशा करता हूँ।

३४

# आरोग्य की सुरक्षा

मनुष्य में सभी प्रकार की योग्यता हो, किन्तु उसे आरोग्य की रक्षा करना नही आता हो तो वह जीवन की वाजी हार जाता है। आज एक व्याधि कल दूसरी व्याधि। तीसरे दिन तीसरी व्याधि तो चौथे दिन चौथी व्याधि। इस प्रकार व्याधियों के आक्रमण चालू ही रहें तो मानव-जीवन का आनन्द किस तरह मिल सकता है? वह अपने कुटुम्ब, समाज, धर्म तथा देश के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कैसे कर सकता है?

जो मनुष्य अपने स्वास्थ्य की सुरक्षा नही करता, वह स्वयं अपनी ही हानि नहीं करता, बल्कि अपने कुटुम्ब की भी वड़ी हानि करता है। कुटुम्व का एक व्यक्ति रुग्ण हो, तो उसकी सेवा-चाकरी करनी पड़ती है और अनेक प्रकार की परेशानियाँ उठानी पड़ती हैं, इसके साथ ही औषधि एवं उपचार में भी व्यय होता है, जिससे आर्थिक स्थिति पर भी प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार कुटुम्ब के उत्कर्ष के लिए जो योजनाएँ वना रखी हों अथवा कार्यान्वित करने का निर्णय कर रखा हो, उनमें बड़ा विघ्न उपस्थित हो जाता है।

तात्पर्य यह कि आरोग्य की सुरक्षा मानव-हित में महत्त्व-पूर्ण प्रश्न है और इसी लिए मैने इस प्रकरण में उसके सम्बन्ध में कुछ अनुभव तथा विचार प्रस्तुत करने का निश्चय किया है।

१३ वर्ष की आयु में बम्बई में रहते मेरा स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था। वमन, सिरदर्द आदि सप्ताह में एक बार तो अवश्य होते, किन्तु ब्रह्मदेश जाने के बाद नियमित रूप से व्यायाम करना आरम्भ किया; उससे यह शिकायत दूर होगई; इतना ही नहीं मेरा शरीर भी प्रायः सशक्त और स्फूर्तिवाला बन गया। इस आधार पर मै यह कहने की स्थिति पर आया हूँ कि—'नियमित व्यायाम करने से स्वास्थ्य बनाये रखने में बड़ी सहायता मिलती है, अतः सभी को चाहिए कि अपनी आयु और मर्यादा के अनुसार नियमित व्यायाम करना चाहिए।

मैं अनेक शैक्षणिक संस्थाओं से सम्वद्ध हूँ। वहाँ छोटे-बडे जो छात्र पढने के लिए आते हैं, उनसे नियमित व्यायाम करवाने के लिए मैंने सदा आग्रह किया है और मुझे यह बताते हुए आनन्द होता है कि मेरे अन्य सहयोगी कार्यकर्ता भाई-बहिनों ने भी इसका समर्थन किया है।

मैंने अनुभव से यह भी देखा है कि जिस समाज ने व्यायाम को अपनाया है और व्यायाम शाला अथवा अखाड़े के साथ स्नेह किया है, उस समाज के आरोग्य का स्तर सदा ही अच्छा रहा है; और उसके समस्त व्यक्तियों का शरीर व्यायामहीन वर्ग की अपेक्षा अधिक सशक्त तथा अधिक सुडौल रहा है।

हैदराबाद में 'हनुमान व्यायामशाला' सबसे पुरानी और व्यवस्थित संस्था है। उसमें अखाड़ तथा व्यायाम के सभी साधन है। साथ ही सुन्दर 'स्विमिंग बाथ' (सार्वजनिक तरणागार) भी है। वह संस्था बालमन्दिर और प्राथमिक शाला भी चलाती है। उस संस्था के माध्यम से हजारों युवकों ने फौलादी स्वास्थ्य प्राप्त किया है, उसी से कुछ पहलवान भी तैयार हुए हैं। मैं उस सस्था की कार्यकारिणी समिति का वर्षों से सदस्य रहा हूँ तथा अब उपसभापति के रूप में सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त है।

विदेशी लोगों की सभी बाते चाहे अनुकरण के योग्य न हों, किन्तु उनकी एक बात तो अवश्य अनुकरण करने योग्य है और वह है आरोग्य की सुरक्षा। लाखों-करोड़ों रुपये का व्यापार करनेवाला भी समय हो जाने पर ऑफिस से बाहर निकल जाता है और क्रिकेट, फुटबॉल, हॉकी आदि खेल खेलता है, अथवा स्वीमिंग बाथ में जाकर घण्टे दो-घण्टे तैरने में रुचि लेता है, अथवा घुड़ सवारी या ऐसा ही कुछ करके शरीर से पूरा व्यायाम करता है और इस प्रकार अपना स्वास्थ्य बराबर बनाए रखता है।

ब्रह्मदेश छोड़ने के बाद मैं हैदराबाद आया और व्यवसाय में स्थिर हुआ किन्तु खाने-पीने की अनियमितता से तथा शरीर और मन पर अधिक भार पड़ने से दो भयानक रोगों का शिकार हो गया। उनमें से पहला रोग है सर्दी, जो किसी भी प्रकार से मेरा पीछा नहीं छोडती थी।

डाक्टरों की दवा ली, वैद्यों की पुडिया खाई तथा घरेलू उपचार भी बहुत से किए, परन्तु अड़ियल घोडे की तरह वह रोग तनिक भी हिला-डुला नही। अन्त में बम्बई गया और वहाँ चार प्रसिद्ध डाक्टरों के द्वारा मेरे शरीर का परीक्षण करवाया। उन सब का अभिप्राय एक ही था कि 'आपको ऐसी हठीली सर्दी अभ्यस्त हो गई है कि जो जीवनभर मूलतः नष्ट नही होगी। परन्तु आप कुछ दवा पिये और सूँघे तो इस पर कुछ नियन्त्रण पा सकेंगे।' बाद में उन्होंने उन दवाओं के नाम लिख दिये।

उस समय मुझे अपनी भूलों का ज्ञान हुआ और मैने 'ककड़ी के लिए ककण खो दिया है', इसका स्पष्ट ज्ञान हुआ। किन्तु अब क्या हो सकता है ? इतना होने पर भी जीवन की अनेक हरी-सूखी स्थितियाँ देखते देखते मैंने यह बात दृढता से निश्चित की कि 'कभी हिम्मत नहीं हारना तथा कार्य सिद्धि के प्रयत्न अन्तिम घड़ी तक छोड़ना नहीं।' अत. सर्दी दूर करने के प्रयत्न करता रहा और उनका परिणाम अच्छा ही निकला।

एक अनुभवी डाक्टर की सलाह से नाक की हड्डी का आप्रेशन कराया, उससे कुछ लाभ हुआ। उसके बाद एक महिला डॉक्टर से भेट हुई जो कि वर्षो से मुझ जैसी ही सर्दी के रोग से पीडित रही और जिन्हें एक जर्मन बनावट की गोलियो से लाभ हुआ था। उन्होंने मुझे उन गोलियों का सेवन करने की सलाह दी। वे गोलियाँ मैने तत्काल मँगवाई और उनकी एक ही शीशी अर्थात् केवल २५ गोलियों का ही उपयोग किया कि साँप

कोंचुली छोड़कर जिस प्रकार भागता है इसी प्रकार सर्दी मेरा शरीर छोड़ कर भाग गई। इसके वाद उसका पुनरागमन आज तक नहीं हुआ।

एक रोग के हमारे शरीर में घर कर लेने के वाद उमे दूर करने का काम कितना कठिन है, यह इस से समझा जा सकता है। यह तो दवा ठीक लग गई और रोग दूर हो गया, परन्तु सदा ऐसा नहीं होता; अतः उचित तो यही है कि आरोग्य के स्थायी नियमों का पालन करके रोग को प्रविष्ट ही नही होने दें और कदाचित् प्रविष्ट हो जाए तो उसे हटाने के लिए आरम्भ से ही प्रवल प्रयास करना चाहिए। नीतिकारोंने कहा है कि— 'उदित होते शत्रु तथा रोग को तुरंत ही दवा देना चाहिए अन्यथा वह हमारा विनाश कर देता है।'

अव संग्रहणी की कथा कहता हूँ। थोड़ी सी भी खुराक ली और दस्त होने लगे। इन की संख्या कभी पाँच-सात तक रहती तो कभी दस-वारह और कभी तो तीस-चालीस से भी ऊपर पहुँच जाती। इससे शरीर में शक्ति का नाम भी नहीं रहता। इस रोग को मिटाने के लिए एलोपेथिक, आयुर्वेदिक तथा होमियोपेथिक दवाएँ की, किन्तु उनसे कुछ लाभ नहीं हुआ। तदनन्तर दो मास तक प्राकृतिक उपचार किया। उसमें उपवास का सहारा लिया, केवल फलों का रस और साग-सब्जी पर रहा, किन्तु संग्रहणी ने पीछा नहीं छोड़ा। शरीर दिनोंदिन क्षीण होता गया और थकावट वहुत मालूम होने लगी। वाद में तो उठना-वैठना भी कठिन हो गया।

इतने में एक आयुर्वेद के निष्णात वैद्य से भेट हो गई। उन्होंने कहा कि 'सुवर्णपर्पटी' संग्रहणी की सिद्ध दवा है, उसका सेवन करने से आपका रोग अवश्य मिट जाएगा, किन्तु उसके लिए आपको ४० दिन तक केवल मठ्ठे पर ही रहना होगा। उस समय आप पानी भी नहीं ले सकेंगे।'

मुझे तो येनकेन प्रकारेण रोग मिटाना ही था, अत ये सब बाते स्वीकार कीं और उपचार आरम्भ हुआ। प्रारम्भ में कुछ अशक्ति का अनुभव हुआ और वजन भी घट गया। किन्तु बाद में इसमें अच्छा सुधार हुआ और वजन बढने लगा। पहले छाछ थोड़ी ले सकता था अर्थात् १॥ सेर से २ सेर दूध की छाछ ले सकता था, किन्तु धीरे-धीरे इसकी मात्रा बढ़ी और अन्त में २॥ सेर, ३ सेर दूध की छाछ पर आ गया। ४० दिन के इस उपचार से मै संग्रहणी से मुक्त हुआ और मेरा वजन २॥ किलो बढ गया। आयुर्वेद में कितनी अच्छी वस्तुएँ पड़ी हुई है, इसका वास्तविक ज्ञान मुझे इसी समय हुआ।

एलोपेथी, होमियोपेथी आदि पद्धतियाँ तो गत एक-दो शताब्दी से ही प्रयोग में आई है, इससे पूर्व हमारे देश में आयुर्वेद का ही आश्रय लिया जाता था और उसके सादे–सरल उपचार तथा कतिपय विशिष्ट पद्धतियों से लाखों-करोडों लोग अपने खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करते थे।

कायाकल्प की पद्धति जो कि वृद्ध मनुष्य को युवा बना देती है, मै मानता हूँ कि केवल आयुर्वेद ही बता सकता है।

कुछ वर्ष पूर्व एक स्वामीजी ने पण्डित मदनमोहन मालवीयजी से कायाकल्प का प्रयोग करवाया था, किन्तु वह जैसा अपेक्षित था, सफल नहीं हुआ। इस पर कुछ लोगों ने कह डाला कि 'यह तो एक प्रकार की गप है कहीं वृद्ध मनुष्य भी जवान हो सकता है ?' किन्तु अभी ही वज्रेश्वरी के पास गणेशपुरी में महाराष्ट्र की वैद्य मण्डली ने वैद्यराज एन. एम. जोशी की देखरेख में वेलणकर नामक ४८ वर्षीय मनुष्य पर जो प्रयोग किया था, वह सफल हुआ है। ४८ दिन के प्रयोग में श्वेत बालों के स्थान पर काले बाल आ गये हैं, उसकी दंत पक्ति नयी जैसी श्वेत बन गई है। त्वचा में अधिक कोमलता और लावण्य निखर आया हैं तथा शारीरिक स्फूर्ति में आश्चर्य जनक परिवर्तन हो गया है।

आज एलोपेथी का व्यापक प्रचार है और सभी हास्पिटल मुख्य रूप से उसका अनुसरण करते हैं, किन्तु हमारी राष्ट्रीय सरकार तथा हमारे शिक्षित समाज को चाहिए कि वे हमारे देश की इस प्राचीन विद्या को खास प्रोत्साहन दें और छोटे गाँवों में जहाँ के लोग औषधोपचार के लिए अधिक पैसे खर्च नही कर सकते, वहाँ तो आयुर्वेदिक औषधालय ही खोलना चाहिए।

इसके अतिरिक्त मेरी बीमारी में हरस-मसे की तकलीफ हुई थी, किन्तु उसका आपरेशन कराने के वाद वह कष्ट दूर हो गया।

जन्म होने से पूर्व मनुष्य को नौ मास तक माता के गर्भ में रहना पड़ता है ! उस समय की स्थिति के अनुसार उसके

शरीर का सगठन बनता है। तात्पर्य यह है कि उस समय यदि गर्भस्थ पिण्ड को अपेक्षित पोषण नही मिलता है तो शिशु दुर्बल और रोगी उत्पन्न होता है और पूर्ण पोषण मिलता है तो वह सशक्त, निरोगी उत्पन्न होता है। उसके बाद भी बालक जब तक बड़ी आयु का हो, तब तक उसके शरीर की देखरेख माता-पिता को रखनी पड़ती है। उस समय किसी न किसी कारण से कमी रह गई तो उस बालक के शरीर का सगठन अपेक्षानुसार सुदृढ नही होता और छोटी बड़ी अनेक बीमारियाँ उसे सताने के लिये आ पहुँचती है।

दस-बारह वर्ष की आयु मे बालक के ज्ञानतन्तु विकसित होते है। उस समय उसके संरक्षकों को चाहिए कि वे बालक को शारीरिक स्वस्थता सुरक्षित रखने की जानकारी दे और उसमे ब्रह्मचर्य का महत्व मुख्य रूप से समझाएँ, जिससे वह बुरी आदतो का शिकार न बन जाए। साथ ही उसे अच्छी सगति प्राप्त हो यह भी देखना चाहिए। समझदार माता-पिता अपने बालक के लिए अच्छे मित्र ढूँढ देते है, जिससे वह सदा अच्छी सगति में रह सके और उनके पास से अच्छे विचार तथा अच्छे आचार सीख सके।

विशेषत: उन्हें व्यायाम की ओर प्रवृत्त करना चाहिए और खेल-कूद तथा आमोद-प्रमोद के लिए पर्याप्त अवसर देना चाहिए। उस समय उनके हाथों में जो साहित्य दिया जाय वह नैतिक स्तर बनाने वाला तथा आरोग्य के सामान्य नियमो का ज्ञान देनेवाला होना चाहिए।

चाय, बीड़ी, शराब तथा अधिक स्वादिष्ट भोजन स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते है। मिष्टान्न यदाकदा लिया जाय उसमे कोई आपत्ति नही।

भूख की अपेक्षा कुछ कम खाने की आदत प्रमुख रूप से डालनी चाहिए, क्योकि उससे स्वास्थ्य की सुरक्षा में बहुत सहायता मिलती है। मिताहारी मनुष्य अधिक खानेवाले मनुष्य की अपेक्षा अधिक दीर्घ एव निरोगी जीवन बिताते है, इस में कोई संशय नही।

भूख से बढ़कर अधिक खाने से अनेक बीमारियाँ आती हैं; वैसे ही एक बार का नाश्ता और दो बार के भोजन से अधिक खाएँ तब भी बीमारी आती है। हमारा पेट कोई लेटर-बॉक्स नही कि जिसमे बार-बार खुराक डालते रहें और वह सब पच जाए। इस बारे में नियम की खास आवश्यकता है।

मनुष्य का शरीर १०० वर्ष अथवा इससे भी अधिक चल सके ऐसी योजना प्रकृति ने की है, किन्तु हम उसे बिगाड़ देते हैं। यदि हम नियमों का पालन करके आरोग्य बनाये रखे, तो हम अपने जीवन को अत्यन्त मधुर तथा सुखमय बना सकते हैं। यह हमारे अपने हाथ की बात है।

मैंने वर्षो से घूमने की आदत रखी है। उससे अपेक्षा से अधिक काम तथा अनियमितता होने पर भी मेरा स्वास्थ्य ठीक-ठीक बना रहा है। तथा चाय, बीड़ी, मद्य आदि अनेक अवगुणों से बचा हूँ। इससे भी मेरे स्वास्थ्य की सुरक्षा में अच्छी सहायता मिली है।

मानसिक परिश्रम अधिक होता है तो स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है । यदि मैंने अपने शरीर की मर्यादा देखकर मानसिक परिश्रम किया होता तो आज नवयुवक जितनी शक्ति तथा स्फूर्ति निश्चित ही बनी रहती और १०० वर्ष तक जीने का शारीरिक बल प्राप्त कर सकता, इसमें कोई शंका नही । आयु का अन्तिम दौर कुदरत के हाथ में है, किन्तु शारीरिक सुख-दुःख उत्पन्न करने का बहुत बड़ा भाग हमारे ही हाथ में है। ऐसी मेरी मान्यता है।

शारीरिक शक्ति मुख्य रूप से वीर्य की सुरक्षा पर निर्भर है, इस लिए गृहस्थ जीवन में भोगविलास पर खास नियन्त्रण होना चाहिए। अधिक वीर्यक्षय होने से शरीर निर्बल होता है तथा सुस्ती आती है, इसलिए भोगविलास करना ही हो तो उसके लिए भी संयम की आवश्यकता है। जैसे भूख की अपेक्षा दुगना खाने से अजीर्ण, तथा पेट के अनेक रोग होते है, उसी प्रकार अधिक वीर्यस्खलन से भी कमजोरी, हिस्टीरिया, मिरगी, अगपीडा, बेचैनी आदि अनेक रोग होते हैं।

सन्ततिनिरोध का प्रश्न इन दिनों सबसे आगे है, और इसके लिए कतिपय साधनों का प्रचार किया जाता है, किन्तु जो लाभ ब्रह्मचर्य के पालन तथा संयम के धारण से हो सकता है, वह लाभ और किसी से नही हो सकता। विषयभोग में निरंकुश रहना और सतति का नियमन करना, यह एक बड़ा विचित्र प्रयोग है। इसके फलस्वरूप स्त्री पुरुषों के स्वास्थ्य को बहुत हानि होने का भय रहता है। इसके बारे में देश के नेताओं तथा शरीर विज्ञान के विद्वानों को अधिक गहराई में उतरना आवश्यक है।

मैं ऐसा मानता हूँ कि जो संसारिक मोह छोड़कर आत्म-कल्याण की साधना करते हों और कुछ समय समाज की कल्याणकारी प्रवृत्तियों में देते हों, उन्ही को हमें साधु के रूप में स्वीकृत करना चाहिए और उन्ही का हमें मान सन्मान करना चाहिए। जो इस प्रकार का व्यवहार करने से इनकार करे, उन्हे हमें साधु के रूप में मान्यता देना बन्द कर देना चाहिए। इस सम्बन्ध में स्वामी रामकृष्ण परमहंस के शिष्यों तथा ईसाई पादरियों का उदाहरण अनुकरणीय है।

मैंने आज तक शिक्षित और उत्तम माने जाने वाले अनेक साधुओं से ऐसी प्रार्थना की है कि आप हमारी किसी भी शैक्षणिक अथवा सेवाभावी संस्था में आएँ और कुछ घण्टे अपनी धार्मिक क्रियाएँ करके शेष समय संस्था को दें, किन्तु अब तक किसी ने ऐसी प्रार्थना स्वीकृत नही की। इस आधार पर मै ऐसा अनुमान करता हूँ कि यह बात केवल समझाने से नही होगी, इसके लिए खास आन्दोलन करना पड़ेगा और आवश्यकता होने पर सरकार को इसके लिए प्रमुख रूप से विधान बनाने पड़ेगे।

पूज्य गांधीजी ने धर्म का सच्चा मर्म समझाने के लिए 'धर्ममन्थन' आदि जो ग्रन्थ लिखे है, वे जिज्ञासुओ के वाचन—मनन के योग्य है।

धर्म का अनुसरण करे, किन्तु धर्मान्धता का अनुसरण न करें, इतना बताकर यह प्रकरण समाप्त करता हूँ।

३८

## राष्ट्रीय जीवन पर विचार

दासता के हजार वर्षों में हमारे सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन को बड़ा धक्का लगा है। अंग्रेजों के समय में कुछ सामाजिक सुधार हुए, किन्तु राष्ट्रीय जीवन अधिक मूक हो गया और गुलामी-मन.प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। आघात के सामने प्रत्याघात यह प्रकृति का नियम है, इसलिए उसके सामने प्रत्याघात हुआ। बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र आदि में क्रान्तिकारी आन्दोलन हुआ, देशभर में स्वदेशी आन्दोलन शुरु हुआ और उससे हमारे राष्ट्रीय जीवन में कुछ हलचल हुई, कुछ जागृति आई।

परन्तु उसमें वास्तविक प्राण तो पूज्य गांधीजी ने फूंका, हम सब एक राष्ट्र की सन्तान हैं और इस राष्ट्र की स्थायी स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों का बलिदान करना चाहिए, ऐसी प्रदीप्त तेजस्वी भावना उन्होंने--अपने लेख, प्रवचन और परिषदों द्वारा व्याप्त की। उनका अद्‌भुत त्याग, उनका निःस्वार्थ सेवापरायण-जीवन, उनकी दीर्घदृष्टिपूर्ण निर्मल विचारधारा ने सभी लोगों के मन पर जादुई प्रभाव डाला।

लाखों स्त्री पुरुष स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ने के लिये उनके पवित्र नेतृत्व में एकत्र हुए। उन्होंने अहिंसा तथा सत्याग्रह के शस्त्र से स्वतन्त्रता प्राप्त करने की प्रतिज्ञाएँ ली और उसके लिये लाठियों की निर्दय मार खाई, जेलों की कष्टप्रद यातनाएँ सहीं, आवश्यकता पड़ने पर अपने बहुमूल्य प्राणों का बलिदान भी दिया। विश्व भर के इतिहास में अपूर्व कहा जानेवाला संग्राम प्रायः तीन दशकों तक चला और वह भारत की स्वतन्त्रता को निकट लाया।

परन्तु स्वतन्त्र होते ही भारत के दो टुकड़े हों, यह बात पूज्य गांधीजी को स्वीकार नही थी। इस प्रकार दो टुकड़े होने का परिणाम क्या होगा? यह उनकी चिन्तन परायण दीर्घ-दृष्टि ने देख लिया था। स्वातन्त्र्य-संग्राम से सन्तप्त होकर जो मिले वही लेकर संतुष्ट होने का विचार रखनेवाले लोग देश में अधिक हो गये थे। अतः जिस भारत माता की एकता और अखण्डता को सुरक्षित रखने के लिये गाँधीजी ने वर्षों तक उपदेश दिये और आन्दोलन किए उसी भारतमाता की समृद्धकाया के दो टुकड़े हो गये।

उसका परिणाम क्या हुआ? कुछ भागों में हिंसक तूफान उठ खड़े हुए, खूनखराबी हुई और स्त्रीवर्ग के प्रति आदर और सम्मान की भावना होनी चाहिए, उस पर घोर अत्याचार हुए। उस समय अनैतिकता और भ्रष्टाचार के जो दृश्य देखने में आये उनसे पूज्य बापूजी का हृदय काँप उठा।

गांधीजी १२५ वर्ष तक जीवित रहने की इच्छा रखते थे और जेल की तीव्र बीमारियों में भी उन्होंने उस इच्छा को नहीं

छोड़ा था, किन्तु यह सब देखने के बाद उनका जीना निरर्थक प्रतीत हुआ जीने में अधिक रुचि नही रही थी। इतने में ही दि. ३०-१-४८ को नाथूराम गोडसे की गोली से वे शहीद हुए और अमरत्व को प्राप्त हुए।

पूज्य गांधीजी वस्तुतः हमारे राष्ट्रीय जीवन के जनक थे, इसीलिए जनता ने उन्हें राष्ट्रपति के रूप में सम्बोधित किया और उनके देहावसन के दुःखद समाचार सुनकर कई दिनों तक आँसू वहाये थे। भारत के इतिहास में पूज्य गांधीजी का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा गया है और वह युगों तक नहीं भुलाया जा सकेगा, ऐसी मेरी धारणा है।

उसके वाद श्रीनेहरूजी तथा सरदार के पुरुपार्थ के फलस्वरूप हमने कुछ प्रगति की। उसमें सात सौ देशी-राज्यों का भारत के गणतन्त्र में विलीन हो जाना, सबसे बड़ी सफलता थी। इसके अतिरिक्त इस्पात आदि के वड़े उद्योग, स्थापत्य, जलसंग्रह के लिये प्रचण्ड बाँध बँधवाये गए। हजारों मील लम्बी नहरें खुदवाई और विद्यालयों की संख्या में अच्छी-सी वृद्धि हुई। इन सबके कुछ न कुछ अच्छे परिणाम तो निकले ही हैं, किन्तु ये देश की स्थिति सुधारने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। आज भी जनता का वड़ा हिस्सा दरिद्रता भोग रहा है।

देश की जनसंख्या में जिस तेजी से वृद्धि हो रही है, वह भी चिन्ता का विपय वन गया है। इस वढ़ती को रोकने के लिए सन्तति-निरोध की प्रवृत्ति चल रही है, पर उसमें जो साधनों का उपयोग किया जा रहा है, वह नहीं होना चाहिए। ब्रह्मचर्य

तथा संयम की भावना का व्यापक प्रचार ही इसका वास्तविक उपाय है, परन्तु जडवाद ने हमारे मन पर इतना गहरा प्रभाव डाल दिया है कि इस उपाय के प्रति हमारा आकर्षण नही होता। जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण स्थान और अन्न की कमी का प्रश्न हमारे सामने आता ही रहेगा तथा दरिद्रता दूर करने के हमारे प्रयासों की सफलता में अनेक प्रकार के विघ्न आते ही रहेंगे। इसके साथ ही बेकारी का प्रश्न भी बना ही रहेगा। इन प्रश्नों के सम्बन्ध में केवल देश के नेताओं को ही नहीं अपितु समाज के सभी हित-चिन्तकों को भी गम्भीरता पूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

जनता का नैतिक स्तर बहुत निम्न हो गया है, यह भी उतनी ही चिन्ता उत्पन्न करता है। सभी की दृष्टि पैसे की ओर जा रही है और उसके लिए नीति-नियमों को एक ओर रखने में कुछ भी सकोच नही होता है। पहले तो ईश्वर का भय था कि हमें अनुचित मार्ग से धन संचय नही करना चाहिए, पर धार्मिक भावना शिथिल हो जाने से वह भय भी समाप्त हो गया और शिक्षा का कोई स्तर स्थापित नहीं हुआ है। जिससे नीति-नियमों को जीवन के ताने-बाने में बुना जा सके। साथ ही जिन्हें हम बड़े अथवा प्रतिष्ठित मानते हैं, वे भी नीति के नियमो को तोड़ते हों तो सामान्य मनुष्य का कहना ही क्या?

अधिक दुःख की बात तो यह है कि खाद्य-पदार्थ जो जन-जीवन का प्रमुख आधार है, उसमें भी अपार मिलावट हो रही है और पौष्टिक-विशुद्ध आहार खाने को नही मिलता है। सरकार की ओर से राशनिंग में जो अनाज आदि मिलते हैं वे भी

सामान्यकोटि के होते हैं और केवल उदरपूर्ति करने के ही काम आते हैं। वेजिटेबुल (डालडा) को रंग देने का सुझाव कई वार आया, जिससे अच्छे घी में उसकी मिलावट न हो सके, परन्तु सरकार ने अब तक कोई न कोई वहाना बनाकर इस सुझाव को स्वीकार नही किया, तथा उसे रोकने के लिये कोई नियम भी नहीं बनाया। वेजीटेबल घी के कारखाने चलानेवाले अपने स्थापित हित के लिये चाहे जैसे तर्क उपस्थित करें, किन्तु सरकार को उसके लिये गम्भीरता से विचार करना ही चाहिये।

सरकारी शासन तन्त्र में रिश्वत-घूस की मात्रा बहुत ही बढ़ गई है और उसने जनजीवन के विकास में बड़ा रोड़ा अटकाया है। छोटे-से-छोटे काम में भी पैसे की मांग होती है तो बड़े कामों का कहना ही क्या ? यदि उस माँग को पूर्ण नहीं किया जाता, तो वह काम पचड़े में पड़ जाता है और किसी भी तरह लाइन पर नहीं आता। दिल्ली में जहाँ केन्द्रिय सरकार के महत्व पूर्ण कार्यालय हैं, एक टेबुल से दूसरे टेबुल पर फाइल पहुँचाने के लिए भी पैसे की माँग होती है, और ऐसे टेबुल प्रत्येक विभाग में दो-चार नहीं अपितु दस-बारह या उनसे भी अधिक होते हैं !

कॉन्ट्रैक्ट आदि में अधिकारी छिपे रूप में भाग रखते है अथवा बड़ी रकम ले लेने के बाद ही कॉन्ट्रैक्ट आदि पर हस्ताक्षर करते हैं। चपरासी से लेकर विभाग के प्रधान तक की यह दशा हो तो रष्ट्रीय जीवन में प्रामाणिकता कहाँ से आये ?

जिन्होंने स्वतन्त्रता मिलने से पूर्व त्याग और वीरता दिखलाई वे भी सत्ता के पद पर आरूढ होने के पश्चात् लक्ष्मी के लालच में पड़ गये और ऐश-आराम की ओर दृष्टि रखने लगे। उन की इस प्रकार की दुरंगी स्वार्थी जीवन लीला ने जनता पर अधिक बुरा प्रभाव डाला और नीति का नीचे जाता हुआ स्तर और नीचे उतर गया। श्री नेहरू ने इस स्थिति के बारे मे अनेक बार खेद प्रकट किया और कुछ कार्यवाही भी की, किन्तु उसका कोई खास परिणाम नही निकला। केन्द्र सरकार के मत्री श्रीनन्दा-जी की अध्यक्षता मे सदाचार-समिति का गठन हुआ, किन्तु वह भी प्रभावशाली परिणाम नही ला सकी। क्षय और केन्सर जैसे रोग धीरे-धीरे बढते जाते हैं और शरीर का शोषण कर डालते है, उसी प्रकार यह सडाँघ दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है और यह जनता के जीवन का शोषण कर रही है। यह कहाँ जाकर रुकेगी? यह कहना कठिन है।

अंग्रेजों के शासन में घूस-रिश्वत का प्रचार था किन्तु वह बहुत थोड़ी मात्रा में था और उसके सम्बन्ध मे कोई शिकायत होती तो बहुत कठोर कार्यवाही की जाती। परन्तु हमारे हाथ में राज्य व्यवस्था के आ जाने के बाद यह बात अधिक फैल गई है और प्रधान तथा अन्य अधिकारियों ने ऐसी दलबन्दी बना रखी है कि उसमें किसी का कुछ चल नही सकेगा। उसमें जो थोड़े व्यक्ति घूस-रिश्वत के कुप्रभाव से मुक्त है, उन्हे गिराने अथवा फँसाने के लिए अनेक प्रकार के षडयन्त्र रचे जाते है और उनके सफल हो जाने पर प्रामाणिक व्यक्ति भी दुखी हो जाते है।

जिन पर जन-जीवन की सुरक्षा का आधार है, वे ही नीति विहीन, स्वार्थी और पैसों के लालची हों वहाँ अच्छा परिणाम कैसे निकलेगा ?

पू. गांधीजी तथा अन्य देश के नेताओं के प्रचार से जनता की यह निश्चित धारणा वन गई थी कि स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने के वाद इस देश में रामराज्य स्थापित हो जाएगा और उससे सभी लोग सुखी होंगे। किन्तु यह आशा अभी तो धूल में मिल गई है और हमारी चिन्ताएँ अनेक गुना वढ़ गई हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि इसकी अपेक्षा तो पहले का अंग्रेजी राज्य ही अच्छा था, परन्तु इस मत से मैं सहमत नहीं हूँ, फिर भी आज राज्य व्यवस्था जिस रूप मे चल रही है, वह अवश्य ही अनेक प्रकार के सुधार चाहती है।

पहले राजाओं और वादशाहो के समय में प्रजा की आवाज सुनी जाती थी और उसे सुनने के वाद तत्काल ही योग्य कार्यवाही की जाती थी, जव कि आज की लोक-तन्त्रीय राज्यप्रणाली मे प्रजा की आवाज नही सुनी जाती। कितने ही तार दें, निवेदन करे और प्रतिनिधि मण्डल ले जाकर वास्तविक स्थिति से अधिकारियों को आवगत कराएँ फिर भी वे अपनी मनमानी ही करते हैं। इसके उदाहरण देने लगूँ तो अनेक दे सकता हूँ, किन्तु उससे पुस्तक का कलेवर वढ़ जाता इसलिये इस सामान्य निर्देश से ही सन्तोष कर लेता हूँ।

जिन्होंने पहले कुछ भी सेवा नही की, उन्हें भी सिफारिश आदि के बल पर निर्वाचन केलिए कांग्रेस का टिकट मिलता है, यह देख कर कुछ अवसरवादी कांग्रेस में प्रविष्ट हो गये है और वे जनता की सेवा न करके इसका प्रयास करते है कि अधिक से अधिक सत्ता किस प्रकार मिले।

जो काग्रेस किसी समय महान् त्यागी और सेवापरायण कार्यकर्ताओं का समूह मानी जाती थी, वह आज राजकीय सत्ता प्राप्त करने का एक साधन बन रही है। ऐसी स्थिति में उसके प्रति जनता का आदर कम होने में कोई आश्चर्य नहीं है।

इस देश में कोई भी राजनीतिक दल इतना सबल नहीं है जो कांग्रेस का मुकाबला कर सके। इससे कांग्रेस के नेता निश्चिन्त है और वे अपनी रुचि के अनुसार कार्य करते हैं। परन्तु लोकतन्त्र के रक्षण की दृष्टि से यह वस्तुस्थिति अभीष्ट नही है। ऐसा एक सबल राजनीतिक दल होना ही चाहिए जो कांग्रस का सामना कर सके। तभी उस पर उचित नियन्त्रण रह सकता है। इंग्लेण्ड और अमेरिका में इस प्रकार के दल हैं और वे वहाँ के लोकतन्त्र को बचाने में सहायक बनते है।

श्री नेहरूजी ने चीन को बहुत सम्हाला था, फिर भी उसने सन् १९६२ में हमारे देश पर आक्रमण कर दिया। अब वह पाकिस्तान के साथ मिला हुआ है। सभी सीमाओं पर प्रतिदिन छोटे-बड़े आक्रमण होते रहते है। उनके कारण हमें आर्थिक रूप से हानि पहुँचती है।

21

पाकिस्तान आकाश-पाताल को एक करके भी काश्मीर लेना चाहता है। अभी-अभी ताशकन्द समझौता हुआ, वह उसका पालन भी करना नही चाहता। कोई वहाना मिला कि वह उसे तोड़कर अपनी वात पर आ जाना चाहता है। वह इसमें कितने अंश तक सफल होगा, यह अलग वात है, किन्तु उससे सदा सावधान रहना पड़े, ऐसी स्थिति वनगई है।

चीन को आसाम अथवा ऐसा ही अन्य कोई पूर्वी प्रदेश चाहिए जहाँ वह अड्डा जमा सके और जहाँ से वह हिन्दी गुरिल्ले खड़ा करके आसपास क प्रदेशों में बड़ी मात्रा मे तोड़फोड़ कर सके। उसकी ऐसी निश्चित धारणा है कि यदि भारत मे गरीवी और अव्यवस्था फैलेगी तो वह अवश्य ही साम्यवादी वन जाएगा और इस प्रकार अपने पक्ष मे मिल जाएगा। इस लिए वह हमारी सीमा पर भारी संख्या मे सेना जमा कर हमें निरन्तर भयभीत कर रहा है।

हमारे राजनीतिक नेता इससे परिचित है, किन्तु इस प्रकार की परिस्थितिवश हमारा सुरक्षा-सम्वन्धी व्यय वहुत ही बढ़ गया है और उसके लिए हमारी जनता को बहुत वड़ कर चुकाने पड़ते है। ऐसी स्थिति बहुत समय तक चलती रही तो हमारी आर्थिक व्यवस्था को भारी धक्का लगेगा, इसमे कोई सशय नही है।

भारत की सीमा पर जो परिस्थिति रही है उसे देखते हुए भारत को एक और अखण्ड रहना ही चाहिए, अन्यथा उसे असाधारण कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। फिर भी प्रान्तीयता

का वाद वढ़ता जा रहा है और उसके लिए हिंसक उपद्रव हो रहे हैं। पहले आन्ध्र मद्रास से अलग हुआ फिर महाराष्ट्र और गुजरात का विभाजन हुआ। अब पजाब सूबे की माँग स्वीकृत हुई है और उसके कारण पजाब की स्थिति अशान्त हो गई है। इसका निराकरण अवश्य खोज लिया जाएगा, किन्तु यह सब देखने के बाद महामालव, विदर्भ तेलगाना आदि राज्य बनाने की माँग होना सम्भव है और इस प्रकार प्रान्तों की सख्या वढ जाने पर अनेक विकट प्रश्न खड़े होंगे यह निश्चित है।

मुझे तो ऐसा लगता है कि गाधीजी ने वर्षो तक तपस्य करके राष्ट्रीयजीवन मे जो एकता प्राप्त की थी, वह आज नष्ट हो रहीं है और इसके परिणाम अच्छे नही होंगे। यदि प्रत्येक प्रान्त अपना ही हित सोचे और समष्टि हित को गौण बना दे तो केन्द्र की सत्ता निर्वल होगी यह स्पष्ट है। आज भी केन्द्र की सत्ता जैसी चाहिए वैसी दृढ नही है और वह अधिक निर्वल हो जाय तो उज्ज्वल भविष्य की आशा कैसे की जा सकती है?

भारत की प्राचीन संस्कृति मे अपरिग्रह और दान को महत्त्व दिया गया है। अपरिग्रह का अर्थ है आवश्यकता से अधिक सम्पत्ति का संग्रह न करना; और दान से तात्पर्य है अपने पास अधिक सम्पत्ति हो, तो उसे आवश्यकतावाले व्यक्तियो मे सस्नेह वितरित कर देना। इससे सम्पत्ति का समान विभाजन होता था और प्रजा का प्रत्येक वर्ग सुखी रहता था।

परन्तु आज जैसे भी हो अधिक सम्पत्ति एकत्र करने का सभी को मोह हो गया है और दान की धारा संकुचित हो गयी

है। जो दान होते है, वे भी त्याग की भावना से नहीं, अपितु, नाम अथवा कीर्ति उपार्जित करने के मोह से किये जाते है। इससे एक और दूसरी ओर बिलकुल गरीबी इस प्रकार दो असमान अवस्थाएँ उत्पन्न हो गई हैं।

इस स्थिति का निवारण करने के लिए कांग्रेस ने समाजवादी समाज की रचना का सिद्धान्त अपनाया है। उसमें राजा महाराजा और जमींदार तो गये। भूमि सुधार के नियम (लैन्ड रिफार्म एक्ट) से कृपि के क्षेत्र में भी जो जमीदारी रीति थी वह उठ गई। अब पूंजीवाद को समाप्त करने के लिये टैक्स और अन्य पद्धतियाँ आरम्भ हुई हैं।

बीमा, बेक यातायात एवं अन्य प्रमुख उद्योग शासन ने अपने हाथ मे ले लिये हैं। अन्य व्यापारों पर नियन्त्रण रखने के लिये 'स्टेट ट्रेडिग कारपोरेशन' की स्थापना हुई है। अन्य कारखानों का राष्ट्रीय-करण अभी स्थगित रखा है, किन्तु वह कब साकार हो जाएगा, यह नही कहा जा सकता।

'जिसका राजा व्यापारी उसकी प्रजा भिखारी' यह एक पुरानी कहावत है और यह बहुत अंशों में सत्य है। शासन सभी महत्त्वपूर्ण व्यापारों को अपने हाथ में ले तो व्यापारी एवं अन्य वर्ग का बहुत शोपण होता है, यह स्पष्ट है। किन्तु सत्ताधारियों की समझ में यह बात नहीं आती है। जिन व्यापारियों ने स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ने के लिये मुक्तहस्त से धन दिया है, तथा निर्वाचन आदि में बहुत सहायता की है, उन्ही व्यापारियों को आज काले-बाजारी और चोर आदि कहकर दबा दिया जाता

है और उनके हित की ओर तनिक भी नहीं देखा जाता है। इससे आज समस्त व्यापारीवर्ग में शासकों के प्रति भारी असन्तोष फैला हुआ है।

कतिपय राजनीतिक नेता ऐसा मानते है कि हम किसानों और मजदूरो को अपना बना ले तो यह पर्याप्त है; क्योंकि मत का बड़ा हिस्सा उन्ही से प्राप्त होता है। किन्तु यह न्यायोचित नही कहा जा सकता। राज्यकर्ताओं को प्रजा के प्रत्येक वर्ग का हित देखना चाहिए और इस प्रकार व्यापारी तथा सामान्य वर्ग के हित के प्रति थोड़ी-सी भी उपेक्षा नही होनी चाहिए।

यहाँ मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि व्यापारियों में व्यापार करने की जो दक्षता, योग्यता और अनुभव है उसका सोलहवाँ भाग भी सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारियो मे नही है और इससे देश के करोड़ों रुपये निरर्थक व्यय हो जाते है। इसका वर्णन आये दिन पत्रों मे छपता ही रहता है, फिर भी आँख नही खुलती, यह वस्तुतः बहुत खेदजनक है। इस दृष्टि से व्यापारियों का सहयोग लेना आवश्यक है।

भारत के सुरक्षामन्त्री श्रीयशवन्तराव चौहान ने कुछ समय पूर्व ही कहा था कि 'आजादी प्राप्त करना सरल है, किन्तु उसे सुरक्षित रखना कठिन है।' मैं उनके इस विचार से पूर्ण सहमत हूँ, पर उसमे इतना जोड़ना चाहता हूँ कि 'हमे प्राप्त स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखना हो तो हमारी स्वार्थवृत्ति पर अकुश रखना होगा और हम सब एक ही भारतमाता की सन्तान है,

यह बात सभी के मन में स्थिर रखनी पड़ेगी।' इसके अतिरिक्त श्रीनेहरूजी ने जैसा कहा था उस प्रकार आराम को हराम समझना पड़ेगा तथा श्रमदान करने में तत्पर रहना पड़ेगा।

हम पर ऋण का भार बढ़ता जा रहा है। सीधा कर्ज ४४ अरब हो चुका है। तथा ४८० पी. एल. अमेरिका का और अन्य ऋण सब मिलकर ३०–३५ अरब रुपये का ऋण दूसरा भी हो चुका है। इस तरह लगभग ८० अरब रुपये के कर्ज का भार हमारे सिर पर लदा हुआ है। इसके अतिरिक्त सरकार ने देश के अन्दर जनता से भी बड़ा कर्ज लिया है, वह अलग। इन सब का वार्षिक व्याज लगभग ४ अरब रुपये होता है और इसके लिए हमें भारी टैक्स चुकाने पड़ते है।

सरकार की कागजी योजनाओं में से कुछ पर अमल होता है और उसमें भी लोग बहुत पैसा खा जाते है, इसलिए केवल उस पर भरोसा नही रखा जा सकता। इसके लिये तो जनता को स्वयं सावधान होकर भारी परिश्रम करना पड़ेगा, अन्यथा दिवाला निकालकर कम्युनिष्ट बन जाने का अवसर आयेगा।

मैं हृदय से चाहता हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह भारत को उस सीमा तक पहुँचने से बचा ले और प्राप्त की गई स्वतन्त्रता का पूर्णतः रक्षण करे।

३६

# शिक्षण पर विचार

गत प्रकरणों में मैंने सामाजिक, धार्मिक तथा राष्ट्रीय जीवन के बारे में अपने विचार प्रकट किए। अब मै शिक्षण के बारे मे अपने विचार व्यक्त करूँगा।

शिक्षण को हम सामान्यत: शिक्षा कहते है क्योंकि उसमें पांच ज्ञानेन्द्रियों तथा मन को प्रशिक्षित करने का कार्य प्रमुख होता है। जो शिक्षण ज्ञानेन्द्रियों को कार्यक्षम नही बनाता तथा मन का विकास करके उसकी धारणा शक्ति, कल्पनाशक्ति तथा विवेकशक्ति अर्थात् बुद्धि को विकसित नही करता वह सच्चे अर्थ में शिक्षण नही कहा जा सकता।

प्राचीन काल में शिक्षण का अर्थ इससे भी गहरा होता था, अर्थात् उसमें आत्मा को शिक्षित करने का भी समावेश होता था। यदि आत्मा शिक्षित हो जाय तो दया, संयम, सत्य, नम्रता, त्याग, तप आदि गुण विकसित हो जाएँ और उनके आधार पर वह मुक्तावस्था तक पहुँच सकता है। 'सा विद्या या विमुक्तये।' यह उस समय का प्रसिद्ध सूत्र था।

प्राचीन भारत का यह आदर्श तो आज प्रायः भुला दिया गया है, किन्तु शिक्षा का जो स्थूल अर्थ करते है, उस अर्थ में भी आज शिक्षण कहाँ दिया जाता है ? वर्षों तक शाला में शिक्षण प्राप्त करने के बाद भी ज्ञानेन्द्रियाँ कार्यक्षम नहीं बनतीं अथवा धारणा शक्ति, कल्पना शक्ति और वुद्धि का जैसा चाहिये वैसा विकास नहीं हो पाता ।

विद्यार्थी के मन में केवल जानकारी भर देना शिक्षण नहीं कहा जा सकता, किन्तु आज मुख्यतः यही कार्य चल रहा है और उसी का यह परिणाम है कि—विद्यालयों-महाविद्यालयों से बाहर आने पर छात्रों को जीवन के प्रत्यक्ष कार्यों में ससक्त होने में बहुत कठिनाई होती है ।

स्वतन्त्रता मिलने के बाद विद्यालयों की संख्या बढ़ी हैं और उनके लिए बहुत-से भवन बनाए गये हैं, परन्तु शिक्षण-पद्धति में विशेष सुधार नहीं हुआ है ।' मुझे तो ऐसा भी लगता है कि हमारे देश के जो महान् मस्तिष्क थे, वे सब स्वतन्त्रता के मिलने के बाद राजकीय क्षेत्र में ही लग गये और उनमें से किसी ने भी शिक्षण पर अपना लक्ष्य केन्द्रित नहीं किया। यदि उन्होंने अपना लक्ष्य शिक्षण पर केन्द्रित किया होता तो आज की शिक्षण-पद्धति में जड़-मूल से कुछ तो परिवर्तन अवश्य ही होगये होते और उसने हमारे युवकों के हृदय तथा मस्तिष्क को नवीन ही प्रकाश से चमका दिया होता ।

शिक्षण की आधुनिक पद्धति में सुधार करने के लिए शिक्षा-निष्णातों की समितियाँ निर्मित होती हैं, उनकी बैठकें भी होती

हैं और उनके सम्बन्ध मे अच्छा खासा व्यय भी होता हैं, किन्तु उनके सुझावों पर मुख्यतः अमल नही होता, अथवा अंशतः ही अमल होता है।

स्वतन्त्रता के गत अठारह वर्षो मे हमारे विद्यार्थीयों ने विनय और सयम के स्थान पर अशिष्टता एवं विलास के विकृत प्रदर्शन किये है। वे आज छोटी-छोटी समस्यायों पर हड़ताल करते हैं, उपद्रव मचाते है और यथेच्छ तोड़-फोड़ करने में भी संकोच नही करते। इस सम्बन्ध मे कुछ समय पूर्व हमारे राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् ने गहरी चिन्ता व्यक्त की थी और वर्तमान शिक्षा में धार्मिक तथा नैतिक अश भी सम्मिलित करने का प्रबल समर्थन किया था।

हमारा शासन धर्म-निरपेक्ष-शासन है, यह वात सत्य हैं; किन्तु उसने धर्म और नीति के साथ सम्वन्ध-विच्छेद नही किया है। तव फिर उन्हे शिक्षा-क्रम मे योग्य स्थान क्यो नही दिया जाता? आज से लगभग पॉच वर्ष पूर्व श्री श्रीप्रकाश जी की अध्यक्षता मे विद्यालयों और महाविद्यालयो मे धार्मिक-नैतिक-शिक्षा का समावेश करने के लिए एक समिति गठित हुई थी, उसने इस वात पर मुख्य रूप से वल दिया था।

हम धार्मिक विवाद मे न पड़े, किन्तु धर्म से सर्वथा रहित हो जॉय और नीति-नियमों की भी अवहेलना करे, तो हमारा व्यक्तिगत, कौटुम्बिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन किस प्रकार उन्नत हो सकता है? छोटी-सी स्वार्थ भावना उन्नति मे अन्त-

राय रूप होती है जो कि आज हो रही है और हमारे जीवन का स्तर बहुत निम्न बना रही है।

पूज्य गांधीजी तथा विनोबा ने आश्रम खोलकर तथा मुख्य रूप से विद्यालय स्थापित करके शिक्षा का जो आदर्श हमारे समक्ष उपस्थित किया है, उसे आज का शिक्षा विभाग लक्ष्य में नहीं लेता है, इतना ही नहीं, किन्तु उस पर गम्भीर विचार भी नहीं करता। वह अपनी दृष्टि मुख्यरूप से यूरोप-अमेरिका की ओर रख कर ही शिक्षण का क्रम बनाता है और उसके अनुसार शिक्षण संस्थाएँ विद्यार्थियों को शिक्षा देती है।

आज की शिक्षण-पद्धति में विषय बहुत हैं और प्रत्येक विद्यार्थी को कम-से-कम तीन तो भाषाएँ ही सीखनी पड़ती है। इसमें विद्यार्थी के मन पर भार पड़ता है और किसी भी विषय का ठोस ज्ञान नहीं मिल पाता। पहले विषय थोड़े सिखाये जाते थे, किन्तु वे पूर्ण रूप से सिखाये जाते और उनसे विद्यार्थियों को बहुत लाभ होता।

'मैं तो संक्षिप्त ही पढ़ा हूँ, किन्तु उस समय गणित का जो ज्ञान मिला, उसके आधार पर कैसा भी हिसाब करना हो, चुटकी बजाते हुए गिन लेता। आज भी चालू फोन पर भी हिसाब गिनकर ग्राहकों को भाव आदि के बारे में अपेक्षित जानकारी दे सकता हूँ, जबकि आज का मैट्रिक पास विद्यार्थी अथवा ग्रेज्युएट ऐसी स्फूर्ति से हिसाब नहीं गिन सकता। उसके लिये उसे कागज पेन्सिल का उपयोग करना पड़ता है और उसमें भी कई बार भूल

करना सम्भव है। गणित की हमारे व्यापार मे नित्य आवश्यकता होती है फिर भी हमारे शिक्षितों की यह स्थिति है।

आज न्यूनतम वेतन के कारण शिक्षकों को टच्यूशन करने की अनुमति दी जाती है, परन्तु एक शिक्षक कितनी टच्यूशने करे? इसका कोई नियन्त्रण नही है, अत: शिक्षक का मुख्य ध्यान विद्यालय की कक्षाओं पर न रहकर टच्यूशनों की सख्या पर और उसके वेतन पर रहता है और शालेय कक्षाओ में वह उचितरूप से शिक्षण नही देता। यदि अभिभावक उस सम्बन्ध मे उससे चर्चा करते है तो इस प्रकार कहा जाता है कि 'आपके वालक के लिये टच्यूशन रख ले, सब ठीक हो जाएगा।'

इस टच्यूशनखोरी से और भी वहुत-से अनिष्ट उत्पन्न होते है, किन्तु यहाँ मैं उनकी गहराई में उतरना नही चाहता। मेरा कहने का अभिप्राय इतना ही है कि आज की शिक्षणपद्धति सुधारनी है और इस प्रश्नपर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है। यदि इसका कोई सफल समाधान नही ला सके तो शिक्षण पंगु ही रहेगा, फिर उसका क्रम चाहे कैसा भी बनाएँ।

आधुनिक शिक्षण की सवसे वड़ी कमी यह है कि उसे प्राप्त करने के वाद विद्यार्थी में शारीरिक श्रम की वृत्ति नहीं रहती। वह अपने पिता-पितामह का श्रम-पूर्ण धन्धा-रोजगार करने के वदले अच्छे स्वच्छ वस्त्र पहनकर टेवुल-कुर्सी पर वैठना अधिक पसन्द करता है, फिर चाहे उसमें आय कम ही क्यों न हो?

अंग्रेजों ने हमारे देश में नयी पद्धति की शिक्षा चालू की, तब उनका उद्देश्य शासकीय कार्यालयों में अपेक्षित क्लार्क आदि तैयार करना था। अतः उन्होंने सारी व्यवस्था उस के अनुकूल बनाई। उसकी छाया आज तक गई नही है, परन्तु अब हमें एक स्वतन्त्र राष्ट्र की तरह जीना है और उससे सम्वद्ध अनेक कर्तव्य निभाने हैं, अतः श्रम के प्रति रुचि और सम्मान की भावना बनानी ही पड़ेगी तथा व्यापार-उद्योग के प्रत्येक क्षेत्र को सम्हालना पड़ेगा।

जर्मन, जापान आदि देश द्वितीय महायुद्ध में बरबाद हो गये थे, उनके उद्योग-धन्धे टूट चुके थे और आर्थिक दृष्टि से दिवालिए जैसी स्थिति हो गई थी, परन्तु उन देशों की प्रजा में भारी श्रम करने की आदत थी, इसलिए वे थोड़े ही समय में ऊपर उठ आये और आज तो हमें भी ऋण देने लगे है। यदि हमें अपनी स्थिति सुधारनी हो और ससम्मान जीना हो, तो हमें इन देशो से श्रम का गुण सीख लेना चाहिये और उसे अपने जीवन में उतार लेना चाहिए।

शिक्षण में सैद्धान्तिक (Theoretical) तथा क्रियात्मक (Practical) इन दोनों ज्ञानों को समान स्थान देना चाहिए। परन्तु हमारे यहाँ सैद्धान्तिक ज्ञान को मुख्य और क्रियात्मक ज्ञान को गौण बना दिया जाता है। फल यह होता है कि शिक्षा का सर्वाङ्गीण विकास नही हो पाता।

भगाभाई को विद्यालय में शिक्षा दिलाई गई। गणित का विषय सिखाया गया और छोटी-बड़ी रकमों को मिला कर मान

कैसे निकालना यह ज्ञान दिया गया। बाद में वह एकबार अपने परिवार के साथ बाहरगाँव जाने के लिए निकला। वहाँ रास्ते में नदी आई। उसका पानी कुछ स्थानों पर छिछला था और कुछ स्थानों पर गहरा। किन्तु भगाभाई ने तो अपने को शाला मे प्राप्त गणित के ज्ञान के आधार पर पानी की गहराई का मान निकाला और ऐसा निर्णय करके कि इस नदी को पार करने में कोई कठिनाई नही होगी सभी को नदी मे उतरने की सूचना दी। वे नदी मे उतरने लगे, परन्तु पानी सात-आठ फुट गहरा आया कि सभी उसमें डूब गये।

यह दृष्टात गुजरात के प्रसिद्ध कवि दलपतराम डाह्या-भाई ने स्वरचित पिगल में अङ्कित किया है। इसका सार यह है कि मनुष्य केवल सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करे तो उससे व्यवहार नही चलता। उसे क्रियात्मक ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये।

प्रत्यक्ष कार्य करने की योग्यता न होने के कारण हमारी बड़ी-बड़ी योजनाएँ असफल हो जाती है और देश का बहुत-सा धन व्यर्थ नष्ट हो जाता है। सन् १९६०–६१ में गुजरात सरकार ने पर्वतीय विस्तार के आदिवासी परिवारों की सहायता करने के लिये १०० बैल और ५० गौएँ २७,४००) रु॰ में खरीदे थे। उन बैलों और गायों की खरीदी के बाद तत्काल ही उनमें से ५४ बैल और ४१ गाये मर गई। 'ऐसा कैसे हुआ ?' इसका कारण पूछा गया तो सम्बन्धित अधिकारियों ने बतलाया कि 'इन पशुओं को वहाँ का जलवायु अनुकूल नही हुआ।' यह तो 'ओठ अच्छे तो उत्तर तैयार' वाली बात हुई। बाद में हिसाब ऑडिट हुआ,

तब हिसाब ऑडिट करनेवाले ने नोट दिया कि 'ये जानवर वस्तुतः मर गये अथवा खो गये, यह कहना कठिन है और इस सम्बन्ध में सरकार को दर्याफ़्त करनी चाहिए।', अतः सरकार ने दर्याफ्त आरम्भ की।

इस किस्से में कुछ अधिकारियों ने बदनीयत से काम लिया हो तो यह बात अलग है, किन्तु उन्होंने वस्तुतः इतने पशु खरीदे हों और उनमें इतना बड़ा भाग शीघ्र ही मर गया हो तो उनके व्यावहारिक ज्ञान के लिए हमें क्या कहना चाहिए? ऐसी गड़-बड़ियाँ तो प्रतिदिन होती है, इस लिये सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

पढ़ने के साथ गुनना चाहिए और गुनने के साथ चुनना चाहिए। तात्पर्य यह कि विद्यालयीन शिक्षा प्राप्त करने के बाद विद्यार्थी को व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और इस बात में सफल होना हो तो किस प्रकार हो सकता है इस पर विचार करना चाहिए। इसके साथ ही चरित्र का निर्माण भी होना चाहिए, जिससे किसी भी कार्य को स्वीकृत कर लेने पर उस पर दृढ़ता से लगा रहे और उसे पूरा करने के बाद ही संतोष कर ले।

मैंने तो विद्यालय का थोड़ा-सा शिक्षण प्राप्त करने के बाद ही जीवनक्षेत्र में पैर बढाए, किन्तु वहाँ प्रत्यक्ष ज्ञान बहुत मिला, जिससे मेरा मन खुल गया और चाहे जैसा साहस करना हो उसके लिए तैयार हो गया अन्य महानुभावों के चरित्र में भी यही

बात दिखाई देती है, इसीलिए पढ़ने के साथ गुनने और गुनने के साथ चुनने का मै मुख्य रूप से समर्थन करता हूँ ।

भारत में परीक्षा मे प्राप्त अंकों पर ही विद्यार्थी की योग्यता आँकी जाती है और वे परीक्षाएँ मुख्यतः प्रश्नपत्रो के द्वारा ली जाती है । इजीनियरिग और मेडिकल लाइन आदि मे प्रथम श्रेणी अथवा उसके निकटस्थ अकों के होने पर ही प्रवेश मिल सकता है, जब कि उन्नत देशों मे यह पद्धति नही है । वहाँ विद्यार्थी का दैनिक कार्य शिक्षक अथवा उसका प्राध्यापक देखता है और उसका सामान्य ज्ञान तथा व्यावहारिक योग्यता इन सब को देख लेने के वाद ही उसको भिन्न-भिन्न लाइनो मे प्रवेश दिया जाता है ।

आज तो विचारों मे तेजी से क्रान्ति आ रही है और प्रत्येक वस्तु का मूल्य बदल रहा है । विश्व की तेजी से वढ़ती हुई आवादी हमारे समक्ष अनेक प्रश्न खड़ा कर रही है । इस परिस्थिति मे प्रत्येक मनुष्य अपना कर्तव्य योग्यता से निभा सके इस ढंग का शिक्षाक्रम बनाना चाहिए और शीघ्रतिशीघ्र उस पर अमल करना चाहिये ।

४०

## जीवन यात्रा

मानव-जीवन की यात्रा सफलता पूर्वक पूर्ण करने के लिये मेरे मन में जो विचार बने हैं, उन्हें मैं इस प्रकरण में प्रस्तुत करता हूँ।

वचपन मे हमारी बुद्धि का विकास पूर्णरूप से नहीं हो पाता, अतः अपना हिताहित नहीं समझ सकते। उस अवस्था का वड़ा अंश खल-कूद तथा व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने में चला जाता है, परन्तु मनुष्य जब युवावस्था में प्रवेश करता है तब उसकी बुद्धि उचित रूप से विकास प्राप्त कर चुकी होती है। 'सोलह मे सान और बीस में वान' अर्थात् सोलह वर्ष की आयु मे समझ और बीसवें वर्ष की आयु मे शारीरिक संघटन व्यवस्थित होते है, यह कहावत प्रसिद्ध है। इस समय उसे अपना जीवनपथ निश्चित कर लेना चाहिए और बाद में उसी पथ पर चलते रहना चाहिए। तभी वह एक दिन इष्ट लक्ष्य पर पहुँच सकता है और अपनी जीवनयात्रा सफल कर सकता है। जिसे कहाँ जाना है इसका ध्यान न हो वह कहाँ जायेगा ?

परन्तु खेद की बात तो यह है कि बहुत से मनुष्य युवावस्था में प्रविष्ट हो जाने पर भी अपना जीवनपथ निश्चित नही करते और जो राह मिली उसी पर चलने लगते है। परिणाम यह होता है कि उनके जीवन के बहुत से कीमती वर्ष नष्ट हो जाते हैं। क्षण मे उत्तर, क्षण मे दक्षिण, क्षण में पूर्व, क्षण में पश्चिम, इस प्रकार बार-बार दिशा बदल कर चलनेवाला मनुष्य अन्तत: कहाँ पहुँचेगा ?

जीवन सीधी रेखा जैसा नहीं है और सभी को सीधा मार्ग मिल नहीं सकता, यह बात सत्य है। इसके लिए उसे प्रारम्भ में कुछ प्रयोग अवश्य करने पड़ते हैं, परन्तु समझदार मनुष्य के मन मे इतना तो निश्चित होना चाहिए कि मुझे इस प्रकार का जीवन बिताना है और व्यवसाय का कोई भी क्षेत्र हाथ आये तब भी मुझे अपनी जीवन यात्रा सफल करनी है। यदि उसके मन मे ऐसा कोई निश्चय न हो तो उसकी जीवन यात्रा में कोई महत्वपूर्ण सिद्धि नहीं होती और वह अपने द्वारा पूर्ण करने योग्य कर्तव्यों का पूर्णरूप से पालन नहीं कर सकता।

जीवनयात्रा में मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है, उस मार्गदर्शक का कार्य कभी तो उसके परिवार के बड़े सदस्य करते हैं, और कभी अध्यापक करते है, कभी धर्मगुरु करते हैं, तो कभी समाज के अग्रणी करते है, परन्तु अन्त में तो स्वयं को ही स्वयं का मार्गदर्शक बनना है। अन्तर की वास्तविक सूझ के बिना यह कार्य सम्भव नही है।

हम धन, अधिकार अथवा बुद्धि का गर्व छोड़ दे और विनम्र होकर ईश्वर की प्रार्थना करें तो अन्तर से सत्य का प्रकाश मिलता

है और वह हमारी जीवन यात्रा को सफल बनाने में बहुत उपयोगी होता है।

इस जीवन में आपत्तियां किस पर नहीं आतीं ? संकट किसे नहीं सताता है ? बहुत से मनुष्य ऐसे समय में हिम्मत हार जाते है अथवा नहीं करने योग्य कर बैठते हैं, किन्तु यदि वे एकान्त में बैठ कर विनम्र भाव से ईश्वर-प्रार्थना करें तो संकट का उपाय मिल जाता है और वह अवश्य ही सफल होता है।

हमारे महापुरुषों ने ईश्वर के दर्शन किये थे और हम भी ईश्वर के दर्शन कर सकते हैं, किन्तु उसके लिये हमारे अंतर में उत्सुकता होनी चाहिए। नदी, सरोवर, मैदान, पहाड़, सागर, धरती तथा जीवजन्तु और वनस्पत्ति की विशाल सृष्टि हमें ईश्वर की सत्ता का ज्ञान कराती है।

निराकार ईश्वर को हम देख नहीं सकते किन्तु उसका भान तो होता ही है और साकार ईश्वर के दर्शन तो हमें प्रत्येक युग में होते ही हैं। राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, ईशु, मुहम्मद इन सबको ईश्वर का साकार रूप समझना चाहिए।

कुछ समय पहले किसी ने पूज्य विनोबा से पूछा था कि 'क्या आपने आत्मा को देखा है ?' उत्तर में पूज्य विनोबा ने कहा कि 'हाँ मैंने आत्मा को देखा है। वह अनुभव से दिखाई देता है, तर्क से नहीं।' ये शब्द हम सबके लिए मार्गदर्शक हैं।

हमें इस जीवन में अनेक प्रकार के धर्मों का—कर्तव्यों का पालन करना है। उसका मुख्य साधन शरीर है, अतः उसकी

रक्षा करनी चाहिए और उसमें रोग अथवा व्याधि प्रविष्ट न हो जाय इसकी सावधानी रखनी चाहिए। इतना होने पर भी यदि कोई रोग अथवा व्याधि लग जाय तो उसे प्राकृतिक उपचारों से दूर करना चाहिए अथवा उसके लिये सिद्ध उपायों का प्रयोग करना चाहिए।

हमारा जीवन यथासम्भव सरल और सात्त्विक रहे, भोग-वासना को प्रबल न होने दें, पुरुषार्थ करते हुए जो कुछ मिल जाता है, उस पर सन्तोष करना चाहिए। प्रतिदिन थोडा व्यायाम करना अथवा आसन करना और प्राणायाम भी करना चाहिए। आहार अपनी प्रकृति के अनुसार तथा नियमित लेना चाहिए। जीभ को नियन्त्रण में रखना चाहिए। शरीर को नीरोग और स्वस्थ रखने की ये मुख्य कुँजियाँ है।

शरीर की तरह मन को भी सम्हालना चाहिए, नही तो जीवनयात्रा बिगड जाती है और उसका सब आनन्द उड़ जाता है। मन को सम्हालने का अर्थ है उसकी चंचलता को बढ़ने न देना। अथवा उसे मलिन न होने देना। जब धन, अधिकार अथवा अन्य किसी वस्तु की लालसा बढ़ जाती है, तब मन अधिक चंचल बन जाता है और उस से एक प्रकार के उद्वेग का अनुभव होता है। बाद मे उसे कुछ अच्छा नही लगता अथवा रुचिकर प्रतीत नही होता।

एक बार एक धनाढ्य अमेरिकन से मेरी भेट हुई। उससे मैने स्वाभाविक ही प्रश्न किया कि 'आपका यहाँ आने का प्रयो-

जन क्या है ।' उसने कहा 'मेरे पास धन बहुत है और व्यापार जोरदार चलता है पर चित्त को शान्ति नही है, मुझे किसी वस्तु में आनन्द नही आता इसलिये सब कुछ छोड़ कर शांति की खोज मे यहाँ आया हूँ । मैंने सुना है कि भारत में ऐसे योगी और सिद्ध महात्मा रहते हैं जो शान्ति का तत्काल अनुभव करा सकते हैं ।''

मैंने कहा—'आपको किसी योगी अथवा महात्मा के पास जाना हो तो अवश्य जाएँ किन्तु शान्ति प्राप्त करने का उपाय आपके पास ही है । यदि सम्पत्ति की लालसा मर्यादित करें और मन को किसी सेवामय प्रवृत्ति में लगा दें तो अवश्य ही आपको शान्ति का अनुभव होगा ।'

उसने कहा—'बात सच है । मेरे अन्तर में गहराई से व्याप्त धन लालसा ही मुझे शान्त नहीं बैठने देती । इसीसे अनेक प्रकार की योजनाएँ बनाता हूँ और उन्हें प्रयोग में लाने को तत्पर होता हूँ । ऐसा करते हुए मेरा मन इतना चंचल बन गया है कि अब वह शान्त रह ही नही सकता । आपकी अच्छी सलाह के लिए आभारी हूँ ।'

तात्पर्य यह कि चित्त की चंचलता बढ़ न जाए इसके लिए हमें सावधान रहना चाहिए ।

काम, क्रोध, अभिमान, कपट, ईर्ष्या, लोभ आदि मन को मलिन करनेवाले है, अतः इनसे जितना बचा जाय उतना बचना चाहिए । कामलालसा बढ़ी तो मनकी स्वस्थता भंग हो जाती

है। क्रोध का परिणाम भी ऐसा ही होता है। अभिमान से मन में एक प्रकार की जडता पैदा होती है और नम्रता आदि गुण नष्ट हो जाते है जिनकी खास आवश्यकता है। कपट से वक्रता आती है और सरलता चली जाती है। कपटी का कोई विश्वास नहीं करता। खास मित्र भी उसे छोड़ देते है और एकाकी जीवन बिताना पड़ता है। ईर्ष्या तो साक्षात् अग्नि का रूप है वह हमारी मानसिक स्वस्थता को जला देती है और हमारे लिए कांटों की शय्या तैयार करती है। लोभ हमारी विवेक चक्षु पर परदा डाल देता है, इसलिए कर्तव्य-अकर्तव्य कुछ नही दिखाई देता तथा असन्तोष की आग पैदा कर देता है, उससे चित्त की स्वस्थता नष्ट हो जाती है। संक्षेप मे कहना यह है कि—जीवनयात्रा सफल करनी हो, तो मानसिक दोषो से वचना चाहिए और मन को यथाशक्ति शान्त और पवित्र वनाना चाहिए।

'सुख में मस्त नहीं होना और दुःख मे हिम्मत नही हारना।' अनुभवियों ने यह बात बार-बार कही है, तो भी मैं पुनः दुहराता हूँ; क्यों कि मेरे समक्ष आधुनिक समाज का जो दृश्य उस्थित है, उसमें इन दोनों वातों का अभाव है।

सुख के दिन सदा स्थायी नही रहते। वे भी एक दिन जाने के लिये ही वने है। ऐसी आन्तरिक श्रद्धा रख कर चलने से मान-सम्मान वना रहता है और सकट से छुटकारा पाया जा सकता है। ऐसे समय यदि हिम्मत हार जाएँ और आँख से आँसू बहाने लगे तो दूसरों का दयापात्र वनना पड़ता

है, उससे जीवन का महत्त्व नष्ट हो जाता है। अतः दुःख मे हिम्मत रखना यही श्रेष्ठ उपाय है।

खर्च आय के अनुसार रखना, कभी अधिक नहीं रखना। अधिक खर्च रखनेवाले को दूसरे के पास से द्रव्य उधार के रूप में लेना पड़ता है और उससे प्रतिष्ठा घटती है। उधार लिया हुआ द्रव्य समयानुसार वापस नही दे सके, तो हम झूठे वनते है अथवा हमारी सच्चाई के सम्बन्ध में सामने वाले को शका होती है। इससे अन्त मे मानहानि होती है और सम्बन्ध विगड़ते हैं।

घर के खर्च के लिए कर्ज लेना, यह दिवालिए की निशानी है। ऐसा मनुष्य कभी ऊपर नही उठ पाता। व्यापार-उद्योग के लिए कर्ज करना पड़े तो वह भी सोच समझकर करना चाहिए। क्योंकि ब्याज तो किए हुए कर्ज पर रात-दिन चढ़ता जाता है। जब कोई पेढी अधिक ब्याज भरने लगे तो समझना चाहिए कि अब इसकी हस्ती थोड़े ही दिनों की है।

हम किसी तीर्थ की यात्रा के लिए निकलते है तो बहुत सी तैयारी करते है, तब जीवन यात्रा के लिए कितनी तैयारी करनी चाहिए? अपने व्यक्तित्व का विकास करना, सद्‌गुणो को विकसित करना और यथाशक्ति समाज की सेवा करना। जहाँ जाएँ वहाँ प्रेम, नम्रता और मधुर भाषा द्वारा सामनेवाले का हृदय जीत लें, यह वास्तविक बुद्धिमानी है। कटुभाषा का कभी प्रयोग नही करना क्योंकि वह मनुष्य को सदा खिन्न बना देती है।

खान अब्दुल गफ़ार खान, 'सरहद गाँधी'-सुल्तान बजार हैदराबाद में 'गाँधी ज्ञानमंदिर' का शिलान्यास कर रहे हैं। १९६९.

सर्वोदय नेता श्री प्रभाकरजी तथा सर्वोदय ट्रस्ट के मैनेजिंग ट्रस्टी लेखक श्री खान अब्दुल गफ़ारखान को शिवरामपल्ली ग्रामसेवा केन्द्र दिखा रहे है।

गुजराती सेवा मण्डल की 'मितव्ययी विवाह योजना' का प्रारंभ गवर्नर श्री खण्डूभाई देशाई लेखक के पुत्र के शुभविवाह के अवसर पर कर रहे हैं।

४१

# निवृत्ति नहीं, प्रवृत्ति ही अधिक रही

(यहाँ से जो अध्याय परिशिष्ट में जोड़े गये हैं उन में वर्णित विषय लेखक के सन् १९६६ के बाद के जीवन से सबन्ध रखते हैं।)

अब तो मै जीवन के संध्याकाल में पहुँचा हूँ, अतः मुझे व्यापार व्यवसाय के धंधे छोड़ कर विश्राम लेना समुचित होगा; और सचमुच मैं उस अविश्रांत परिश्रम से छुट्टी पा ही गया हूँ। परन्तु कभी कभी कुछ ऐसे अवसर भी आते हैं जब अपने रिस्तेदार, व्यापारी और व्यावसायिकों से चर्चा करते हुए मुझे व्यापार संबधी अपने विचार प्रकट करने पड़तेहै। यह मेरी निश्चित धारणा है कि हमारा पुरोगामी देश समाजवादी रास्ते पर तभी अग्रसर हो सकेगा जब यहाँ के व्यापारी और उद्योगपति उच्च नैतिक सिद्धांत मान कर चलने लगेगे। यदि वे अपने को समाज का प्रमुख अंग मान कर उसे समृद्ध बनाने के उद्देश्य से काम करने लगेंगे तो अपना भला भी कर सकेगे। धन दौलत जोड़ कर रखने के लिए नही है, सद्व्यय ही उसका मुख्य प्रयोजन है।

स्वेच्छा पूर्वक अवकाश ग्रहण कर लेने पर भी मेरी प्रवृत्तियाँ कम नही हुई, पहले से अधिक ही हो गई, किंतु उनकी दिशा और क्षेत्र में परिवर्तन हो गया है। अब तो मेरा ध्यान अपने अभीप्सित आदर्शपूर्ण कार्यो पर स्थिर हो गया है, सारी शक्ति उन्ही पर व्यय होने लगी है। अपनी जीविका के लिए किये जाने वाले धंधों में और परमप्रयोजन की सिद्धि के लिए उत्साह पूर्वक स्वीकृत कार्यो में आकाश पाताल का अंतर पड़ना है। मेरे इस समय के श्रमपूर्ण कार्यों का एकमात्र लक्ष्य समाजसेवा है। जब तक प्राणों की ज्योति जलती रहेगी तब तक यदि मैं अधिक से अधिक सेवा कर सका तो जन्म के सार्थक होने में सन्देह नहीं रह जायगा।

जीवन में मुझे इसका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ है कि यदि मनुष्य फुर्तीला रहा, पुष्टिकारक किंतु सात्विक आहार लेता रहा और सयमशील रहा तो निश्चय ही अपने स्वास्थ्य और बल की रक्षा कर सकेगा।

'सर्वोदय ट्रस्ट' का मैं पहले जिक्र कर चुका हूँ। शिवराम-पल्ली ग्रामसेवा केन्द्र का मैनेजिंग ट्रस्ट रहना मैंने छोड़ा नही। संस्थाओं के संचालकों को उनकी श्रीवृद्धि में सतत यत्नशील रहना चाहिए। हमारे देश में अनेकों संस्थाएँ जो उत्पन्न होती हैं, उनकी वृद्धि पर ध्यान देने वालों के अभाव के कारण शीघ्र ही नष्ट भी हो जाती हैं। अतः यह बहुत ही आवश्यक है कि धनी मानी, अवकाश प्राप्त सज्जन आगे आवे और ऐसी संस्थाओं को चलाने का भार संभाले।

शिवरामपल्ली ग्राम सेवा केन्द्र का विस्तार किया गया है। एक हाईस्कूल एक छात्रावास (वापू विद्यार्थी गृह) और एक प्रकृति चिकित्सालय नये स्थापित हुए हैं। हाईस्कूल की स्थापना के लिए सर्वोदय ट्रस्ट के अतिरिक्त रोटरी क्लब तथा हैदराबाद जिला परिषद से भी अनुदान प्राप्त हुए है।

सर्वोदय ट्रस्ट के मैनेजिग ट्रस्ट रहने के अतिरिक्त मैं "सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट" का भी ट्रस्टी रहा हूँ। हैदराबाद में "गांधी ज्ञान मंदिर" स्थापित करने का मैं वहुत दिनों से स्वप्न देखता रहा। अब उसे चरितार्थ करने का संतोष मुझे मिला है। किसी भी समाज की सस्कृति, सपन्नता तथा कल्याण उन आदर्शो पर आधारित रहता है जिन्हे वह अपने आचरण के लिये चुन लेता है। गांधीजी के आदर्शो का प्रचार इसी दृष्टि से महत्व रखता है। "गांधी ज्ञान मंदिर" की स्थापना इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये हुई है।

इस "गाँधी ज्ञान मंदिर" के निर्माण के लिए हैदराबाद नगर-पालिका ने अपने सुलतान वाजार के वगीचे में से आवश्यक भूमि प्रदान की जो सुलतान वाजार हास्पिटल से पोछे की तरफ लगी हुई है। नगर के मध्य भाग में होने के कारण यह जमीन 'गाँधी ज्ञान मंदिर' के लिए अत्यत अनुकूल पड़ती है। इसका शिला-न्यास २७ दिसम्बर १९६९को खान अव्दुल गफ़ारखान (सरहद गाँधी के) हाथों संपन्न हुआ है।

इस मंदिर में गाँधीजी की जीवनी से संवंध रखने वाले चित्र, प्रतिमाये, मानपट, इत्यादि सामग्री एकत्रित रहेगी। साथ

साथ अनुसंधान-विभाग, पुस्तकालय तथा वाचनालय की भी व्यवस्था रहेगी। गाँधीजी के संबंध में संसार भर के देशों में प्रकाशित ग्रंथों का संकलन पुस्तकालय में रहेगा। व्याख्यान तथा प्रार्थना के समावेशों के लिए एक विशाल मंडप भी बनेगा। चित्र-पटों के प्रदर्शन के लिए प्रबंध रहेगा; साथ ही गाँधी जी के व्याख्यान और प्रवचनों के रिकार्ड भी सुनवाने की व्यवस्था की जायेगी। इन सब के साथ गाँधी साहित्य, दस्तकारी की वस्तुएँ तथा खादी की बिक्री के लिए अनुकूल दूकाने भी रहेंगी।

इस भवन के निर्माण के लिए ५लाख रुपये की योजना तैयार की गयी है। इस प्रकार सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट तथा गाँधी ज्ञान मंदिर की स्थापना के मेरे स्वप्न साकार हो कर हैदराबाद नगर की शोभा और महत्व बढ़ायेंगे।

अखिल भारतीय उद्योग प्रदर्शनी समिति ने अपने अहाते (Exhibition Grounds) में से, सेंचुरी हाल के बाजू में, एक विशाल प्रदेश सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट को दे दिया, जिसमें प्रति वर्ष "गाँधी दर्शन" नामक मंडप रचा जाता रहा। ट्रस्ट ने "गाँधी दर्शन" के लिए एक स्थाई मंडप खड़ा करना चाहा। इस मंडप की बुनियाद ३० जनवरी १९७० को जानकी देवी बजाज ने डाली थी। यह उत्सव आंध्र प्रदेश के गवर्नर श्री खंडूभाई देसाई की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। आहूत अतिथियों में प्रदर्शनी-समिति के अध्यक्ष श्री जे. वी. नरसिंग राव भी उप-स्थित थे।

यह मण्डप बनवाने के लिए १ लाख रुपये का खर्चा अनु-मानित हुआ है। महात्मा गाँधी शताब्दी उत्सव के केन्द्रीय

समिति ने 'गाँधी-दर्शन' को एक प्रदर्शिनी के रूप में रेल के डिब्बों में सजा कर भारत भर में घुमाया था। अखिल भारतीय औद्योगिक प्रदर्शिनी हैदराबाद में प्रति वर्ष ४० दिन तक चलाई जा रही है, जिसे लाखों लोग देखकर लाभ उठाते है। प्रदर्शिनी-समिति स्त्रियों के लिए "कमला नेहरू पोलीटेकनिक" नामक एक संस्था भी चलाती है जिसमें इस समय लगभग २००० छात्राएँ प्रशिक्षण पा रही है। प्रदर्शिनी के गाँधी दर्शन मंडप में महात्मा गाँधी की जीवनी तथा आचार्य विनोबा भावे के भूदान आन्दोलन से सम्वन्धित चित्र आदि प्रचार सामग्री सजाई जाती है। मद्यनिषेध और सर्वोदय संबधी प्रकाशित साहित्य भी यहाँ बेचा जाता है। यह विभाग लोगों को बहुत पसंद आया। इसलिए उसे स्थाई रूप देने का निश्चय किया गया है। इसके साथ गाँधी तत्व के प्रचार के लिए स्थाई पुस्तकालय रखने का निश्चय हुआ। गाँधी विचार प्रचार ट्रस्ट तथा प्रदर्शनी समिति के प्रतिनिधियों ने मिल कर एक उपसमिति बनायी जिसने इस आयोजन को कार्यान्वित करने का भार अपने ऊपर लिया। जनता का सहयोग भीं इस समिति को मिल रहा है। प्रजातन्त्र के विकास, और सफलता के लिए यह अत्यत आवश्यक है कि सभी वयस्क व्यक्ति साक्षर बन जाये। देश का शासन और व्यवस्था संभालने के लिए उच्चशिक्षा प्राप्त असख्य युवकों की आवश्यकता होती है। अत: नये नये विद्यालय खोलना तथा वर्तमान विद्यालयों कीं वृद्धि करना भी आवश्यक है। मैं ने स्वयं उच्चशिक्षा नहीं पायी। इस कमी से उत्पन्न कठिनाई मैं भोगचुका हूँ। इस कारण उच्चशिक्षा के लिये विद्यालय खोलने की मुझे प्रेरणा मिली है। सत्कार्य करने वाले को अवश्य ही दो–चार सहयोगी मिल जाते हैं। गुजराती

प्रगति समाज के संचालक के सिलसिले में, मुझे इस सत्य का अनुभव हुआ है। १९६८–६९ में मैं गुजराती प्रगति समाज का सम्मान्य मत्री चुना गया। उस समय उस संस्था ने अपनी रजत-जयंती मनाई थी। सबका सहयोग पा कर मैं ठोस कार्य कर सका। कालेज की स्थापना के लिये जब मैंने ५ लाख रुपये की माँग पेश की तब "टोकर्शी लालजी कापड़िया पब्लिक चरिटेबल ट्रस्ट" की तरफ़ से एक लाख का अनुदान प्राप्त हुआ। यह प्रोत्साहन पा कर समाज ने एक जूनियर कालेज खोल दिया। उसमें हिन्दी तथा अंग्रेजी माध्यम से विज्ञान और वाणिज्य के विषयों में शिक्षा देने की व्यवस्था की गई। पिछले दो वर्षों से उसे विश्वविद्यालय की परीक्षाओ में शत प्रतिशत सफलता मिल रही है। इस अद्भुत सफलता का श्रेय गुजराती प्रगति समाज को तथा कालेज के अध्यापक वर्ग को मिलता है। इस समय कालेज के छात्रों की संख्या ३४१ है। कापड़िया ट्रस्ट के अनुदान का द्रव्य वाणिज्य मे डिग्री स्तर का पाठ्यक्रम चलाने के लिए व्यय होगा; विज्ञान और कला (Arts & Science) पाठ्यक्रम चलाने के मिमित्त श्री डी॰ आर. देसाई ने एक लाख रुपयों का दान दिया। यह विभाग श्री देसाई के नाम पर चलाया जायगा। इसी प्रकार श्री प्राणलाल भाई का नाम एम॰ वि॰ ए. विभाग के साथ जुड़ा रहेगा जिन्होंने उसकेलिए एक लाख का दान दिया था। श्रीमती कुमुद नायक, जो कि गुजराती प्रगति समाज की अध्यक्षा हैं, और हैदराबाद नगरपालिका की मेयर रह चुकी हैं, उच्च शिक्षा का प्रबंध संभालती हैं। श्री मोहन भाई रमणी, जो समाज के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा वर्तमान मंत्री हैं, कालेज के कार्य-निर्वहण में हाथ बँटाते हैं।

महिलाओं के व्यक्तित्व के विकास के लिए उन्हें उच्च शिक्षा की सुविधाये देना आवश्यक है। अतः 'टोकर्शी लालजी कापड़िया चारिटबल ट्रस्ट' ने महिलाओं के लिए एक साइन्स कालेज चलाने का निश्चय किया। नवजीवन महिला मण्डल वर्षों से हैदराबाद में एक हाईस्कूल का संचालन कर रहा है, अतः दोनों संस्थाओं के प्रतिनिधियों के द्वारा कालेज के लिए एक व्यवस्थापक समिति (Governing Body) तथा एक 'पालक मण्डल' (ट्रस्ट वोर्ड) बनाया गया है और मण्डल के भवन में ही कालेज स्थापित हो गया। उसका नाम 'अमृत कापडिया नवजीवन महिला महाविद्यालय' रखा गया है। इस कालेज के लिए 'टोकर्शी लालजी कापडिया पब्लिक चारिटबुल ट्रस्ट' ने एक लाख रुपये का दान दिया था। थोड़े ही समय मे कालेज ने बड़ी उन्नति की; इस समय उसमें जूनियर इंटरमीडियट से लेकर डिग्री स्तर तक का पाठचक्रम चलाया जा रहा है। छात्राओं की संख्या ५२० को पहुँच गयी, किन्तु प्रतिवर्ष प्रवेश चाहने वालियों की भीड़ हो जाती है। इसलिए नयी जगह लेकर भवन को विशाल बनाने का प्रयत्न हो रहा है।

आई वैंक (Eye Bank) की तरफ़ से नेत्र दान के प्रचार कें लिए मैंने जो श्रम किया उस का उल्लेख पहले हो चुका है। १९६४ में हैदराबाद में 'सरोजिनी देवी आई हास्पिटल' और 'इन्स्टिटट्यूट ऑफ आफ्तालमालोजी' स्थापित हुए; उसी क़ी ओर से जब 'आई बैंक कमिटी' बनी तब से लेकर मैं उस कमिटी के मन्त्री की हैसियत से अब तक बराबर सेवा कर रहा हूँ। १९७१ में दो महीनों के अंदर-अंदर २५ अंधे पुरुषों तथा ६ अंधी स्त्रियों

को ग्राफ़टिंग ऑपरेशन हुए जिससे उन्हें नेत्र ज्योति मिल गई आन्ध्र प्रदेश से बाहर रहनेवाले व्यक्तियों को भी इस आपरेशन का लाभ पहुँचाया गया है।

हमारे देश में अंधों की संख्या अपार है, उस के अनुपात में नेत्रदान का कार्य बहुत ही कम हुआ है। इस कारण से लोगों को नेत्रदान के लिए उत्साहित करने, उनसे दानपत्र भरवाने, मृतकों के नेत्र प्राप्त करने के लिए उनके दुखी भाई बन्धुओं से अनुरोध करने की दिशाओं में सतत परिश्रम करना आवश्यक हो जाता है। मैं इस कार्य में व्यस्त रहता हूँ। 'आई बैंक कमिटी' के प्रचार विभाग के मन्त्री डुंगरशी भाई रावजी मृतकों के नेत्र प्राप्त करने के यत्न में उस्मानिया जेनरल हास्पिटल में नित्य प्रति रोगियों की सेवा में लगे रहते हैं। 'आई बैंक कमिटी' को अब तक ९५० ऐसे दाता मिल गये हैं जिन्होंने मरणानन्तर अपने नेत्र बैंक को प्रदान करने की स्वीकृति दी है।

आरंभ से अब तक सरोजिनी देवी आई हास्पिटल में ३०० के करीब कोर्नियल ग्राफ्टिंग के आपरेशन किये जा चुके हैं। चार कोर्निया गुजरात प्रांत के जूनागढ़ को दिये गये हैं। १९६३ से लेकर इस कमिटि का मैं अवैतनिक संचालक बना हुआ हूँ।

## धर्मशाला–भवन

लगभग सभी अस्पताल शहर और नगरों में ही बने हुए हैं, ग्रामवासी जो अपने बीमारों को चिकित्सा के निमित्त शहरों में लाते हैं, अपने ठहरने के लिए बसेरा न मिलने से कष्ट भोगते रहते हैं। ऐसे लोगों के ठहरने के लिए हर एक अस्पताल से
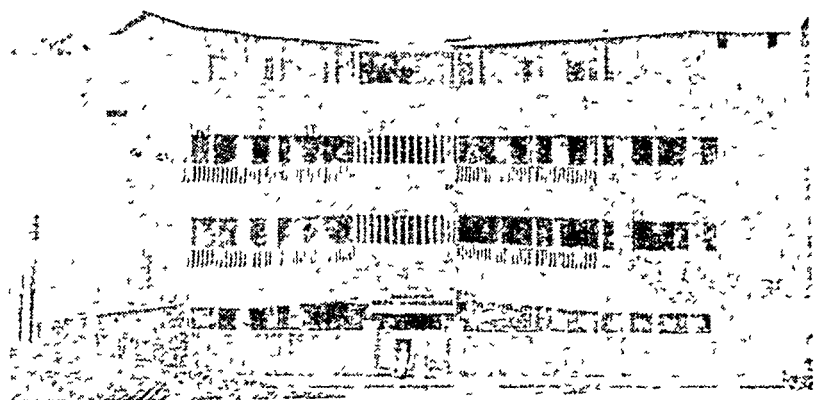
अमृत कापडिया नवजीवन महिला महाविद्यालय हैदरावाद, का भवन ।
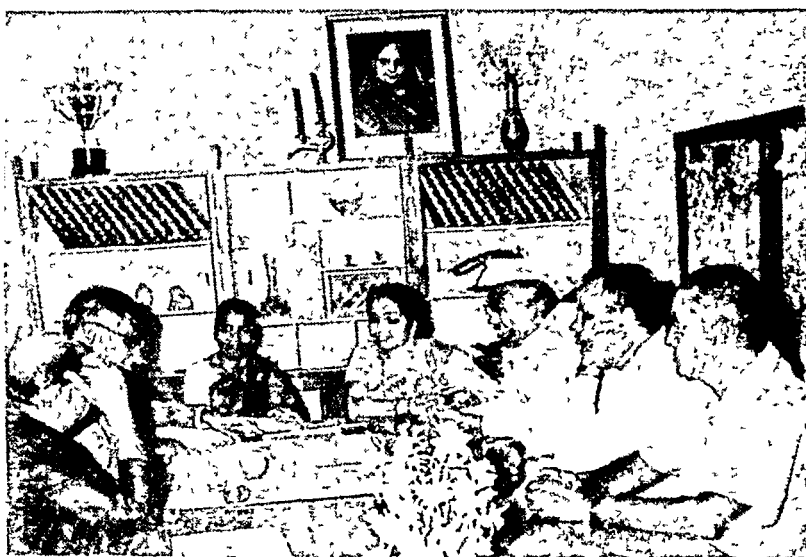
त कापडिया नवजीन महिला महाविद्यालय की गवर्निगवाडी मे उस्मानिया
विश्वविद्यालय के वाइसचान्सलर. श्री रावाड सत्यनाराण भाषण दे रहे है ।

अमृत कापड़िया नवजीन महिला महाविद्यालय का वार्षिकोत्सव। (बैठे बाईं ओर से) ४. श्रीमती प्रेमलता गुप्त, ५. श्रीमती रावाड सत्यनारायण, ६ उस्मानिय विश्वविद्यालया के वाइस-चान्सलर डा० रावाड सत्यनारायण (मुख्य अतिथि), ७. लेखक : विद्यालय कमिटि के उपाध्यक्ष ८. श्री एल. एन. गुप्त, ऐ. ए. एस, ९. श्री सागरलाल गुप्त: करेस्पांडेंट, १०. श्रीमती सीता युद्धवीर: विद्यालय कमिटी की संचालिका। (खड़े) छात्रा-संघ की सदस्याएँ।

गवर्नर श्री खण्डूभाई देशाई सरोजिनीदेवी आई हास्पिटल का निरीक्षण कर रहे हैं
(वाई ओर से) १. आइ बैंक कमिटी के सम्मान्य संचालक श्री टि. एल. कापडिया।
२. आं. प्र. सरकारी मेडिवल सर्विसेस डैरेक्टर डा० के. आर. पाई,
३. हास्पिटल के सूपरिंटेडेट डा० पि. शिवारेड्डि, ४. गवर्नर।

ble wrath at honour's wound!
madness irrepressible?

"This is the wor
reward

criminal

आइ बैंक कमिटी के सदस्य, डॉ० के. आर. पाई, ऑ०. प्र० मेडिकल सर्विसेस डैरेक्टर से उस्मानिया हास्पिटल में परामर्श कर रहे है।

सरोजिनीदेवी आई हास्पिटल मे 'शिवरेड्डि-निवास' का राष्ट्रपति श्री वि वि. गिरि उद्घाटन कर रहे है।

लगा हुआ एक धर्मशाला भवन बनवाने की बहुत बड़ी आवश्य-कता है। 'सरोजिनी देवी आई हस्पिटल' में बाहर से आनेवालों को भी यही तकलीफ़ रहती है। इसके निवारण के लिए अस्प-ताल से जोड़कर एक धर्मशाला बनवाने का मैंने प्रस्ताव रखा। सेवा-परायण धनीमानी व्यक्तियों ने उसका समर्थन किया। इसके लिए 'कापडिया ट्रस्ट' से रु. १०,०००, डाक्टर शिवरेड्डी द्वारा रु. २१,०००, श्री आर. वि–शेपाचार्लू जी से रु. १०,००० और श्री जी पुल्लारेड्डी से रु. १०,००० के दान प्राप्त हुए। इस भवन का नाम 'श्री शिवरेड्डी रेस्ट–हाउस' रखने का निश्चय हुआ।

यद्यपि 'टोकरशींलाल जी कापडिया पब्लिक चारिटबुल ट्रस्ट' के साथ मेरा नाम जुड़ा हुआ है, फिर भी उसका ट्रस्टी रहना मैंने छोड़ दिया है, फिर भी मैं उसे यथा साध्य सहायता पहुँचाता रहता हूँ। मैं अपनी तरफ़ से द्रव्य का दान देकर कई संस्थाएँ खड़ा कर चुका हूँ, पर अपना नाम उनके साथ जोड़ने का कभी आग्रह नहीं किया। आत्मसंतोष ही मेरा पुरस्कार रहा है। ट्रस्ट का रिजिस्ट्रेशन केन्द्र सरकार के साथ हो जाने के कारण दान के द्रव्य आयकर से बरी किये जाते हैं। ट्रस्ट का उद्देश्य स्वयं कालेजों की स्थापना करना, और कालेज स्थापित करनेवाली संस्थाओं को अनुदान देना है। मेरा यह विश्वास है कि नाम और यश प्राप्त करने के उद्देश्य से दान देना व्यर्थ है।

इन दिनों जीवन व्यय हर क्षण बढता जा रहा है। गृहस्थों पर अपनी कन्याओं को शिक्षित करने का ही नहीं, उनके शादी-ब्याह का भी बहुत बड़ा भार पड़ रहा है। दो वर्ष पूर्व सिकिन्द्रा-बाद गुजराती सेवा मंडल को मैंने एक योजना बनाकर दी। उस

पर अमल करने पर अपनी संतान का व्याह् करनेवाले गृहस्थों का व्यय कुछ अंश तक कम हो सकता है। योजना के स्वीकृत होने पर कापडिया ट्रस्ट ने रु. २०,११६ का अनुदान उसे चलाने के निमित्त दिया। नीचे लिखे नियमों के अनुसार मंडल के भवन में एक विवाह्-मंडप चलाने की व्यवस्था की गयी।

१. अ) व्याह् के अवसर पर दिये जाने वाले भोज या दावत में वर पक्ष से ७५ और कन्या पक्ष से ७५, कुल मिला कर १५० से अधिक अतिथि भाग न लेंगे।

आ) भोजन के बदले में जलपान, फलाहार आदि से ४०० तक के अतिथियों का सत्कार किया जा सकता है।

इ) शर्बत आदि पानीयों के लिये अतिथि संख्या की कोई कैद नहीं है।

२. वर या वधू को यहाँ पर कोई दहेज नहीं दिया जा सकता।

३. विवाह के पहले अथवा पश्चात् दो महीने के अंदर कोई भी पक्षवाले अपने घर पर व्याह का भोज नही दे सकते।

४. इन नियमों को मान कर चलनेवाला ग्रहस्थ मंडल के विवाह मंडप में विवाहोत्सव मना सकता है। उसे एक दिन के लिए केवल ५१ रुपये का शुल्क भरना पड़ेगा। इस प्रकार वह अपना खर्चा घटा सकता है। अधिक व्यय कर सकने वाले धनवान भी इस योजना में भाग लेने पर अपना धन वचा सकते हैं और उसे समाज-सेवा के कार्यो में लगा सकते हैं।

गुजराती सेवा मण्डल लोगों में सामूहिक विवाह और सामूहिक उपनयन प्रचलित करने का प्रयत्न करता है। यहाँ पर इतना अच्छा प्रबन्ध किया जाता है कि कोई भी उत्सव निराडम्बर किंतु भव्य रूप में मनाया जा सकता है। फिर भी यदि कोई सज्जन या दल इन नियमों का पालन करना न चाहे तो एक हज़ार रुपया किराया भर कर विवाह मण्डप की सभी सुविधायें प्राप्त कर सकता है।

उदारता और सुधार दूसरों को उपदेश देने से नही बल्कि स्वीय आचरण के द्वारा प्रचलित किये जा सकते है। धनवान लोग विवाह आदि सामाजिक अवसरों पर अपने ऐश्वर्य का आडम्बर के साथ प्रदर्शन किया करते है। साधारण लोग भी उनका अनुकरण करने की कोशिश करते है। धनवानों का अनुकरण करने से गरीब और भी निर्धन बन जाता है। अतः धनी लोगों का कर्तव्य है कि वे स्वयं सादापन और निराडम्बरता बरत कर दिखावें जिससे साधारण लोगों को भी उनसे प्रेरणा मिले। इस प्रयोजन को दृष्टि में रखकर मेरे पुत्र श्री कीर्ति कुमार, तथा मेरे भागीदार श्री रतीलाल केशवजी का पुत्र नवीनचन्द्र–इन दोनों के विवाह इसी विवाह मंडप में ८-३-१९७० को बिलकुल सादेपन के साथ मनाये गये है। दूध और पानीय देकर अतिथियों का सम्मान किया गया है। इस शुभ अवसर पर गुजराती सेवा मण्डल के तत्वाधान में, आन्ध्र प्रदेश के गवर्नर श्री खण्डूभाई देशाई ने 'साधन समारंभ समिति' का प्रारंभ किया जो कापडिया ट्रस्ट से संबद्ध है। सभी वर्गो के अतिथियों के समक्ष राजपाल ने इस योजना के संचालकों को हार्दिक बधाइयाँ दी और लोगों को

निराडवरता सीखने का उपदेश दिया। उन्होंने दोनों दंपतियों को शुभ आशीर्वाद देकर अपना संतोष व्यक्त किया।

इसी अवसर पर कच्छी मित्र मण्डल ने हैदरावाद नगर में भी ऐसी एक योजना चलाने का अपना सकल्प व्यक्त किया। इस योजना के लिए 'टोकरशी लाल जी कापडिया पब्लिक चारिटेबुलट्रस्ट' ने रु. ३०,००० का दान देना स्वीकार किया। रामकोट के 'ईडन गार्डन' में एक सर्वसंपन्न भवन वनवाने के लिए काफ़ी वड़ी जमीन खरीद ली गई। भवन के निर्माण में ५ लाख रुपये खर्च होंगे। कच्छी मित्र-मण्डल के अध्यक्ष श्री घानजी भाई लखमशी ने जब इस भवन के संवंध में अपना निश्चय घोषित किया तब राज्यपाल तथा अन्य सामाजिक कार्य कर्ताओं ने उनका अभिनंदन किया।

किसी भी जाति वर्ण या धर्म का व्यक्ति इस विवाह मंडप की व्यवस्था से बेरोक-टोक लाभ उठा सकता है। यह नं· ११४१ राष्ट्रपति रोड, जीरा, सिकंदरावाद में श्री गुजराती सेवा मंडल के द्वारा संचालित हो रहा है। इस मंडप में एक साथ २००० व्यक्ति भाग ले सकते है। केवल रु· ५१/= चुकाने पर कुसियाँ, बत्ती, पानी, सजावट के सामान, वाजा, बर्तन-वासन, दरी और शतरंजी आदि विवाह के लिए आवश्यक समस्त सामग्री और सुविधाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। यदि इतने सामान और सुविधा अन्य किसी स्थान में प्राप्त करना हो तो गृहस्थों को वहुत खर्च उठाना पड़ेगा, ऊपर से सामन लाने और ले जाने का कष्ट भी होगा। मंडप में ऐसी बात नहीं होगी। साधारण आमदनी का आदमी

भी बडे आराम के साथ इस मंडप में विवाह आदि का उत्सव कर ले सकता है।

## विश्व हिन्दू परिषद्

विश्व हिन्दू परिषद् की आन्ध्र शाखा का १४ वाँ वार्षिक सम्मेलन १४ नवंबर १९७१ को हैदराबाद में संपन्न हुआ। उस अवसर पर उदयपुर के महाराणा, राणा प्रताप के वंशज श्री भगवतसिंह जी सम्मेलन की अध्यक्षता करने हैदराबाद पधारे थे। मुझे स्वागत समिति का मंत्री बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ। तीन दिन तक संपर्क में रहने के कारण मुझे महाराणा के निराडंबर तथा उदात्त स्वभाव का अच्छा परिचय मिल गया, जिसने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला। श्री पन्नालाल जी पित्ती की अध्यक्षता में संपन्न एक सभा में भगवतसिंह जी को १½ लाख रुपये की भेंट अर्पित की गयी।

धर्मनिरपेक्ष भारत देश में धार्मिक और सांप्रदायिक संस्थाएँ राजनीति से दूर रहकर निर्माणात्मक सहयोग दे तथा सांस्कृतिक सेवा करे—यह अत्यंत वांछनीय है। हमारे देश में ऐसे कार्य के लिए बहुत बड़ा क्षेत्र प्रस्तुत है। विश्व हिन्दू परिषद् की ओर से ६० संस्कृत विद्यालय, १३ निश्शुल्क चिकित्सालय और ३ गिरिजन छात्रावास चलाये जा रहे है। तीरस्थ आन्ध्र प्रदेश में एक और गिरिजन छात्रावास, एक हरिजन मजदूर कोलोनी में देवालय का निर्माण, वट्टुवारिपल्ली नामक ग्राम में कुटीर उद्योग तथा कर्नूल शहर में एक अनाथालय की स्थापना परिषद् के नूतन कार्यक्रम के मुख्यांश है। श्री पुल्लारेड्डी ने इस

योजना की १० हज़ार प्रतियाँ देश के सभी स्तरों के व्यक्तियों के पास पहुँचा दी गई। इससे समाज में कुछ जागृति अवश्य उन्पन्न हुई और योजना के मुख्य प्रस्तावों पर चर्चा भी हुई। उस योजना के कुछ अंश वाणिज्य संबन्धी पत्र पत्रिकाओं में उद्-धृत किये गये हैं। इस प्रकार इस योजना का देश में अच्छा स्वागत हुआ। इस प्रकाशन में मैंने भारत की आर्थिक स्थिति सुधारने के संबंध में अपने कुछ मौलिक सुझाव प्रस्तुत किये हैं। साथ ही उन सुझावों को कार्यान्वित करने के तरीकों पर भी प्रकाश डाला था।

भारत ने समाजवाद (सोशलिजम) का लक्ष्य स्वीकार किया और उस मार्ग पर चलने भी लगा है। समाजवाद के आदर्शों पर चल कर हमारी सरकार ने कुछ व्यवसाय धंधों का राष्ट्रीयकरण भी कर दिया; और आयात निर्यात का व्यापार भी धीरे-धीरे अपने ही हाथ में लेने लगी है। सरकार ने यह जो कदम उठाया है समाज-कल्याण की दृष्टि से समादर के योग्य है। किन्तु इसका अधिकाधिक लाभ तभी उठाया जा सकेगा जब ये आदर्श सही ढंग पर आचरण में परिणित किये जायेंगे। इसकी व्यवस्था जब विशेषज्ञों के सुपर्द रखी गयी और बड़े पैमाने पर योजनाएँ बनने लगी हैं तो हमें बहुत कुछ सन्तोष हुआ। परंतु सरकारी प्रशासकों में ऐसे कर्मचारियों की कमी रही है जिनमें ईमानदारी, सच्चाई, लगन, और कार्यक्षमता भरपूर हो। इस कारण से उन व्यवसाय धंधो में भी, जिन पर सरकार को सर्वाधिपत्य (Monopoly) और सारी सहूलियतें प्राप्त हैं, उसे भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। स्वतंत्र व्यापार और व्यव-

विश्व हिन्दू परिषद् के अध्यक्ष, उदयपुर के महाराणा श्री भगवत् सिहजी महाराज के स्वागत में जुलूस ।
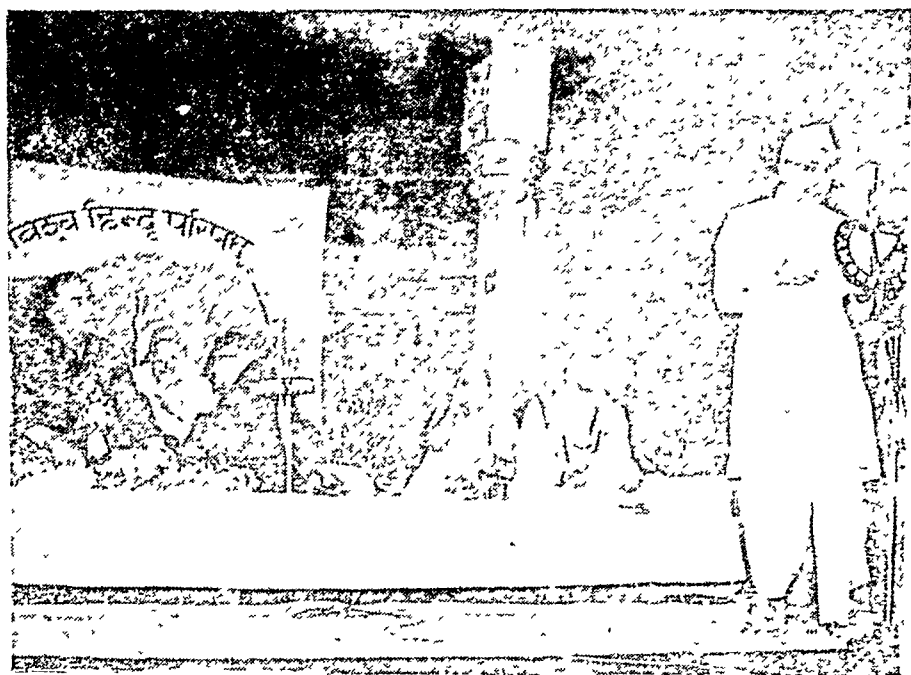
विश्व हिन्दू परिषद् के अध्यक्ष, उदयपूर के महाराणा श्री भगवत् सिह महाराज का लेखक स्वागत कर रहे है।

सायों पर कुछ ऐसा नियंत्रण और रोकटोक लगा दी गई है जिस से व्यापारी, उद्योगपति और जनता को भी कष्ट हो रहा है। महात्मा गांधी ने साधनों की पवित्रता पर जोर दिया है जिस के बिना साध्य का प्रयोजन नष्ट हो जाता है। इस में शक नहीं कि वर्तमान युग में समाजवाद एक महत्वपूर्ण विधान है परतु प्रशासन की असमर्थता के कारण इस का जो महान लाभ जनता को होना चाहिए वह नही हो रहा है।

'तिलहन, तेल का वाणिज्य और उद्योगो' (Oil Seeds Oil Trade And Industry) का अखिल भारत नौवाँ सम्मेलन १-२ नवंबर १९७१ को कलकत्ते मे संपन्न हुआ था। 'दि ईस्ट इण्डिया आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन कलकत्ता' ने सम्मेलन के उपलक्ष्य में एक स्मारिका प्रकाशिन की, जिस मे मेरे सुधार कार्य से सबधित नीचे अद्धृत विवरण प्रकाशित हुआ।

"आन्ध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन, हैदराबाद" के अध्यक्ष श्री टोकरशी लालजी कापडिया ने १९६४ मे ही सम्मेलन बुलाने का श्रीगणेश किया। तिलहन और तेल के व्यापार ओर व्यवसाय से सबधित सामान्य समस्याओं पर विचार विनिमय करना तथा व्यापारीवर्ग में एकता लाना उस सम्मेलन का उद्देश्य रहा। सम्मेलनो का प्रदीप जो उस समय जलाया गया था, वर्षो के बीतते बीतते बल पा गया और अब तक अधिकाधिक ज्योतिर्मय प्रकाश देता आ रहा है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय, और चतुर्थ सम्मेलन क्रमशः हैदराबाद, गुलबर्गा, हैदराबाद, और नागपूर में संपन्न हुए जिन की अध्यक्षता स्वयं श्री टोकरशी लालजी कापडिया ने ही की थी। तिलहन, तेल तथा तैल-पदार्थो का

हमारे देश में जो प्रमुख स्थान है उसे दृष्टि में रखते हुए एक ऐसे समर्थ रगमंच की आवश्यकता अनुभव की गई जहाँ पर व्यापारी और व्यवसायपति समाविष्ट होकर अपनी समस्याओं पर चर्चा कर सकें, अपना मंतव्य अधिकारियों के सामने पेश कर सकें और संगठित होकर काम कर सकें।"

इस प्रकार १९६४ में सम्मेलन बुलाने का मैं ने जो प्रारभ किया उस का सिलसिला देश में चल पड़ा। प्रथम दो सम्मेलन हैदराबाद में सगठित हुए; उन की सफलता ने प्रोत्साहन दिया। १९६५ में तीसरा सम्मेलन हुआ, फिर तो चौथा सम्मेलन १९६६ में नागपूर में, पाँचवाँ दुवारा हैदरावाद में, छटा १९६७ में मद्रास में, सातवाँ १९६९ में इन्दौर में, आठवाँ १९७० में दिल्ली में तथा नौवाँ १९७१ में कलकत्ते में सपन्न हुए। सम्मेलन की स्थापना का उद्देश्य सफल हो रहा है। क्योंकि एक ही मंच पर इकट्ठ होकर तिलहन की उत्पत्ति करनेवाने किसान, व्यापारी तथा तैलपदार्थों को तैयार करनेवाले व्यवसायी अपनी साधारण समस्या, सरकारी कर, संवाहन के साधन, उत्पत्ति बढ़ाने के तरीके आदि पर चर्चा करके समाधान प्राप्त कर रहे है। इन सम्मेलनों की कार्रवाई वर्ष प्रति वर्ष अधिक महत्वपूर्ण होकर एक तरफ खेती करनेवाले किसानों को तथा व्यापार विनिमय करनेवाले वणिकों को अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हो रही है। देश के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में प्रतिवर्ष ऐसे सम्मेलन आयोजित करने की प्रथा सी चल पड़ी है। समूचे भारत के स्तर पर विचार करने के अतिरिक्त प्रादेशिक समस्याओं को भी हल करने के निमित्त दक्षिण-मण्डल (Southern zone) सम्मेलन भी बुलाये जाने लगे।

दक्षिण-मण्डल में आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, मैसूर और केरल के राज्य सम्मिलित है। भारत भर में दक्षिणी मण्डल के राज्यों में ही तिलहन की उत्पत्ति अधिक होती है, और इनकी स्थानिक समस्याओं को प्रकाश में लाकर उन्हें हल करने का प्रयत्न करना आवश्यक हो गया है। १९७० में दक्षिणी मण्डल का जो सम्मेलन हुआ उसने पर्याप्त सफलता प्राप्त की। इस में संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रचलित रीति का अनुसरण लिया गया। सभी पक्ष एक साथ मिल कर विचार-विनिमय द्वारा अपनी समस्याओं के हल निकाल लिये है। इतना ही नही सरकार के पास अपनी सिफ़ारिशें और मतव्य भी पहुँचाये हैं। मेरा यह अटूट विश्वास रहा है कि कोई भी समस्या हो–चाहे वह मनुष्य के जीवन से सबंधित हो या चाहे व्यापार वाणिज्य से–परिष्कार पाने का संकल्प रख कर यदि चर्चा की जाय तो अवश्य हल की जा सकती है।

४३

# आन्ध्र में एक महत्वपूर्ण-प्रयोग

लोगों का यह साधारण विश्वास है कि व्यापारी और व्यवसाय में लगे हुए व्यक्ति स्वलाभ ही देखा करते है; और सरकार उनसे करों के रूप में जितना हो सके उतना रुपया निचोड़ने के प्रयत्न में रहती है। इस में थोड़ा वहुत सत्य अवश्य है। सरकार और व्यापारी लोगों को चाहिए कि वे समाज को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाने की दृष्टि से अपना वर्तमान व्यवहार बदल ले। व्यापारी और व्यवसायी लोग ईमानदारी से अपना धंधा चलावें और अपनी कठिनाइयों को अपनी अपनी संस्थाओं के द्वारा सुलझा ले तो इस वदनामी से वच सकते है। और अपना कार्य शान्ति और संतोष पूर्वक चला सकते है।

कई दशकों के प्रत्यक्ष अनुभव से मुझे यह विश्वास हो गया है कि व्यापार और उद्योग धंधों से संबंध रखने वाले सरकारी अफसर लोग व्यापारियों की कठिनाइयाँ समझ ही नही सकते और व्यापारी लोग अपने स्वलाभ के लिये ऐसे अधिकारियों को अनीति के मार्ग पर चलाने लगते है। परिणाम यह होता है कि उन अधिकारियों को घूस लेने की आदत हो जाती है। लोगों

का यह विश्वास हो जाता है कि बिना रिश्वत दिये सरकारी कर्मचारियों से कोई काम निकाला नही जा सकता। अफ़सर लोग अपनी तरफ से व्यापारियों के रास्ते में कुछ न कुछ रुकावट डाला करते है! किन्तु ऐसे अधिकारी व्यापारियों के आर्थिक सकटों से बिलकुल अनभिज्ञ रहते है; फिर भी यदि उनको वास्तविक स्थिति का परिचय दिया जाय, ठीक ठीक आँकडे सामने रख कर विश्वास दिलाया जाय तो वे सहानुभूति दिखाते हुए सरकारी नीति नियमों में आवश्यक परिवर्तन भी कर देते है, जिस से व्यापारी और आम जनता को ही नही बल्कि सरकार को भी फायदा पहुँच सकता है।

"आध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन" के अध्यक्ष की हैसियत से मैंने ऐसा ही अनुभव प्राप्त किया है। तिलहन की उत्पत्ति में आंध्र प्रदेश सबसे आगे है, अत यहाँ पर इसका व्यापार भी अधिक ही चलता है। इस राज्य में ९२१ तेल के मिल काम कर रहे है; किन्तु इस विस्तृत व्यापार और व्यवसाय से ऑध्र प्रदेश को उतना लाभ नही पहुँच रहा है जितना उसे वास्तव में मिलना उचित है। लाभ तो पड़ोस के मैसूर और महाराष्ट्र को मिल रहा है। इस कारण आध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन का अध्यक्ष होकर मुझे आंध्र के मुख्य मंत्री को परिस्थिति का ठीक ठीक परिचय देना पड़ा। अपने पत्र में मैंने इस समस्या का हल भी सुझाया और कुछ निर्माणात्मक सूचनाएँ भी दे दी।

हमारे एसोसियेशन ने हैदराबाद और सिकंदराबाद के तेल-मिलों के मालिकों से विक्रय कर (Sales tax) वसूल कर सरकार

को पहुँचा देने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया। मेरी अध्यक्षता में सच्चाई और कुशलता के साथ काम करके एसोसियेशन के कार्य कर्ताओं ने यह कर्तव्य पूरा कर दिया। मिल-मालिकों तथा व्यापारियो ने नीति-नियमों का पूरा पूरा पालन किया। परिणाम यह हुआ कि पिछले ५ वर्षो में पूर्व की अपेक्षा २ करोड़ रुपयों का सेल्स टैक्स अधिक वसूल हुआ। यह वृद्धि पहले की रकम से लगभग सात गुना थी। बाहर के केन्द्रों में भी सेल्स टैक्स की वसूली में हमारे एसोसियेशन ने सरकार को मदद पहुँचायी। इस के बदले में सरकार ने हमारे सदस्यों को कुछ राहत दे दी। जब कोई 'आइल मिल्लर' अथवा व्यापारी रेजिस्ट्री-सर्टिफिकेट के लिए दरख्वाश्त देता है तो उसे नियमानुसार छे महीने के टैक्स के बराबर की रकम अमानत में जमा करनी पड़ती है। किन्तु हमारे सदस्यों के श्लाघनीय सहयोग और नीतिमत्ता दृष्टि में रख कर सरकार ने उन्हें इस अमानत के नियम से बरी कर दिया। कोई नया सदस्य एसोसियेशन से सिफारिश लेकर जाय तो केवल एक हजार रुपये की अमानत लेकर उसे सर्टिफिकेट दिया जाने लगा। हमारे केन्द्र से संवद्ध जिला एसोसियेशनों को भी यह सुविधा मिल गयी।

जैसे पहले कहा गया है, पाँच वर्षो की टैक्स वसूली में सरकार को २ करोड़ रुपयों की वृद्धि दिखाई दी, राज्य के अन्य भागों में भी ऐसी ही वृद्धि पायी गई, परंतु वह जितनी होनी चाहिए उतनी नही थी। यदि हर एक जिले में तेल, चावल, दाल आदि वस्तुओं के व्यापारियों की तरफ़ से 'व्यापारी संघ' आयोजित हुए होते, और टैक्स वसूल करने का उत्तरदायित्व उन्हे

सौपा गया होता तो ३५ करोड़ से कम वसूल न हुए होते। व्यापारी संघों का सगठन न होने की दशा में सरकारी कर्मचारियों द्वारा टैक्स की वसूली ठीक ठीक होना संभव नही है। व्यापारियों की वास्तविक कठिनाइयों को उदारतापूर्वक अधिकारियों को महसूस करना चाहिए। यदि ऐसा हो जाय तो वर्तमान ४५ करोड रुपयों की आमदनी बढ़ कर रु ६० करोड़ होने में शक नही रहता।

आन्ध्र प्रदेश में तेल पर लगनेवाले कर की दर आजू-बाजू के राज्यों की अपेक्षा अधिक होने के कारण वहाँ के तेल-मिलों के मालिक यहाँ से तिलहन खरीद ले जाते है। इस कारण से आन्ध्र प्रदेश को मिल सकनेवाली आमदनी मिलने से रह जाती है। यहाँ की उपज में से ४० प्रतिशत तिलहन तेल निकालने के लिए पड़ोसी राज्यों में पहुँच जाता है। यहाँ की व्यवस्था सुविधाजनक न होना ही इसका कारण है।

आन्ध्र प्रदेश में तैयार होनेवाले तेल और खली में ८० प्रतिशत माल 'कान्सैनमेंट बेसिस' पर बाहर के प्रान्तों को बेचा जाता है। 'सि फार्म' पर होनेवाली बिक्री ५ प्रतिशत से अधिक न होगी। टैक्स अधिक लगने के कारण से यहाँ का तिलहन राज्य से बाहर चला जाता है, उसका परिणाम यह होता है कि स्थानिक मिल साल में कई महीने बंद पड़े रहते है, और लगभग ४० हजार कर्मचारी और मजदूर बेकार रह जाते है।

इसलिए मैंने प्रदेश-की सरकार तथा भूतलिगम् कमेटी के सामने यह मामला पेश किया और उनसे अनुरोध किया कि स्थानिक मिलों में निचोड़े जानेवाले तिलहनो पर, तथा 'सि फार्म'

पर वाहर निर्यात करने के लिए खरीदे जानेवाले तिलहनो पर दो सैकड़ा रियायत दी जाय।

मेरे प्रतिवेदन पर विचार होने के पूर्व ही 'इण्डियन कौन्सिल ऑफ इकनामिक रिसेर्च'(Indin Council of Economic Research) के भूतलिगम् आयोग ने एक (१%) प्रतिशत रियायत देने की सिफ़ारिश कर दी; परंतु यह शर्त लगा दी कि तेल और खली पर का टैक्स केन्द्रीय सरकार के टैक्स के रूप में अदा किया जाय। यह सिफारिश आचरण के योग्य नही थी। क्योंकि इसके अनुसार 'सि फ़ार्म' पर बेचे जानेवाले तेल पर २.७५ प्रतिशत टैक्स लगता है और खली पर २.२५ प्रतिशत टैक्स। पड़ोस के महाराष्ट्र में तेल के ऊपर लगने वाले ३ प्रतिशत टैक्स में एक प्रतिशत रियायत मिल जाती है, और खली पर तो कोई टैक्स नही लगता। तिलहन को अपने ही राज्य में सीमित कर रखने के उद्देश्य से मैसूर सरकार ने तेल पर का टैक्स ३ से घटा कर २ प्रतिशत कर दिया और तिलहनो पर २ प्रतिशत वनाये रखा। यह इस बात को दिखाने का निदर्शन है कि जब सरकारी अधिकारी आवश्यक ध्यान न देकर मनमाना नियम चलाते हैं तव उससे व्यापारी, व्यवसायी तथा जनता-सभी को नुकसान उठाना पड़ता है। अंतर-प्रान्तीय स्पर्धाओं के रहने पर भी ये अधिकारी लोग वाणिज्य में गहरा अनुभव रखनेवाले विशेषज्ञों से न सलाह लेते हैं और न उनकी दी हुई सलाह पर अमल करते हैं।

अतः मैं ने यह सुझाव दिया कि रियायत एक प्रतिशत की नही वल्कि दो प्रतिशत की देनी चाहिए।

कर वसूल करने में जिला प्रान्तों में कई अनुचित व्यवहार प्रचलित हैं, इस कारण से मैंने अपने इस सुझाव पर विशेष जोर

नागपूर रेल्वे स्टेशन पर सम्मेलन के अध्यक्ष : लेखक का स्वागत हो रहा हैं।

'तिलहन, तेल का वाणिज्य और उद्योग सघ' का अखिल भारत चतुर्थ अधिवेशन १९६६ मे नागपूर मे संपन्न हुआ। लेखक अध्यक्षीय भाषण दे रहे है।

तिलहन, तेलका वाणिज्य और उद्योग' के अखिल भारत ५ वे मम्मेलन-(हैदरावाद १९६७) का प्रतिनिधि वर्ग। वीचमें अध्यक्ष : श्री जि. एस. नेवटिया, उनके दाहिनी तरफ लेखक और वाई तरफ आं प्र. राज्स्व सचिव श्री वि त्रि राजु खडे है।

दिया कि जिला स्तर पर व्यापारी संघ संगठित किये जायँ, टैक्स वसूली का उत्तरदायित्व उन्हे सौपा जाय, और उन व्यापारी संघों की स्थापना के लिए सरकार आर्थिक सहायता भी पहुँचावे। मैने यह भी प्रस्ताव भेजा कि अनुचित व्यवहार और प्रचलित अनीति की जाँच के लिए एक विशेष अधिकारी का आयोग नियुक्त किया जाय। ६३ हजार टन तिलहनो पर ही सरकार को टैक्स वसूल हुआ है, जवकि यथार्थ मे ४·१२ लाख टन तिल-हनो का इस प्रदेश से वाहर निर्यात हुआ। लगभग २०० टन तेल पर कोई टैक्स वसूल नही किया जा सका, क्योकि वह माल 'कन्सैन्मेंट बेसिस' पर प्रदेश से वाहर भेजा गया था। यदि मेरे सुझावों पर अमल किया जाता तो ४९ लाख का नुकसान होने पर भी १·५८ करोड की अधिक आमदनी हुई होती। इसके आलावा बेकारी भी कुछ हद तक घट जाती।

इन सव विषयों पर मैने सेल्स टैक्स सलाहकार समिति (Sales Tax Advisory Committee) के सदस्यों, राजस्व सचिव तथा अधिकारियों से चर्चा कर उनका ध्यान आकर्षित किया था। मेरा प्रस्ताव अब तक उनके विचाराधीन है।

"सत्यमेव जयते" यही भारत का आदर्श है, अत सत्य के लिए हमें एच होकर प्रयास करना चाहिए, किन्तु ऐसी समस्याएँ केवल प्रदर्शनों से और हड़तालों से सुलझने वाली नही है। वस्तु-स्थिति संवंधी ऑकड़े और प्रमाण अनुभवियों और विशेषज्ञों के द्वारा यदि सरकार के समक्ष रखे जायँ तो अवश्य ही अंत में सत्य की जीत होगी।

४४

# भारत की आर्थिक स्वतंत्रता के लिए एक योजना

जिन दिनों 'आंध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन' का मैं अध्यक्ष था, महात्मा गाँधी शत जयंती के उपलक्ष्य में देश भर में २–१०–'६८ से लेकर २–१०–'६९ तक उत्सव मनाने की अनेक योजयाएँ बन रही थीं। यद्यपि गाँधीजी के अथक परिश्रम से यह देश स्वतत्र ो चुका था, फिर भी आर्थिक दृष्टि से अभी तक स्वतंत्र नही हुआ। मैं वर्षो से यह सोचता रहा हूँ कि गाँधीजी के आदर्शों पर चलकर आर्थिक स्वतंत्रता किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है। सोच विचार के बाद मैंने इसके लिय एक योजना तैयार की और उस पर अमल करवाने के लिए गाँधी जयंति का वर्ष उत्तम पर्व समझा। इस संबंध में मेरे विचार "भारत की आर्थिक स्वतत्नता के लिए एक योजना" के रूप में प्रकाशित हुए हैं।" "फ़ेडरेशन आफ आंध्र प्रदेश चेंबर्स आफ कामर्स एड इंडस्ट्री" नामक संस्था ने अपनी मासिक पत्रिका के विशेषांक में मेरी इस योजना को प्रकाशित किया। आंध्र प्रदेश आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन ने उदारता पूर्वक उसकी छपाई का खर्चा उठाया। उस योजना के हिन्दी और तेलुगु अनुवाद भी

प्रकाशित हुए। जैसे इसके पहले कहा गया है इस योजना की दस हजार प्रतियाँ भारतीय समाज के सभी स्तरों के इने गिने व्यक्तियों के पास पहुँचायी गयी हैं।

भारत के राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, यूनियन के अन्य मन्त्री-गण, भिन्न-भिन्न राज्यों के मुख्य मन्त्री, तथा देशभर के आर्थिक शास्त्र वेत्ताओं ने इस रचना का जो स्वागत किया उसे देखकर मुझे हार्दिक सतोष हुआ, और मैने समझा कि मैंने सच्चाई के साथ अपने कर्तव्य का पालन कर लिया।

उक्त 'आर्थिक स्वतंत्रता की योजना' का सारांश पाठकों के परिचय के लिए नीचे दिया जाता है :—

## १. योजना

महात्मा गान्धी के नेतृत्व में भारत ने राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त की थी, और अब वह अपनी अपार मनुष्य-शक्ति तथा सम्पत्ति-स्रोतों को लेकर आर्थिक स्वतत्रता भी पाने के यत्न में आगे बढ़ रहा है।

पिछले महायुद्ध मे बहुत से यूरोपीय राज्य नष्टभ्रष्ट हो गये, साथ ही उन के सहज संपत्ति-स्रोत भी सूख गये। परन्तु उन देशों ने अपने अथक परिश्रम और सच्चाई के बलपर पुनर्निमाण कर लिया और इस समय वे फिर से सुसम्पन्न बने हुए हैं।

भारत अबतक तीन पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्णकर चुका है। इन से कुछ उन्नति अवश्य हुई इस में शक नही, परंतु जैसी चाहिए वैसी उन्नति नही हो सकी। बढ़ती जन संख्या हमारी

उन्नति केलिए एक जटिल समस्या हो गयी है। अतः आर्थिक स्वतंत्रता केलिए हमें भगीरथ-यत्न करना होगा।

देश में महात्मा गांधी के शताब्दि-उत्सव हो रहे हैं। इस सुअवसर पर हमें आर्थिक स्वतंत्रता के लिए भी मजबूत नींव डालनी होगी, और उस की साधना के लिए आनेवाले पाँच वर्षों में कठिनश्रम करना आवश्यक होगा।

आर्थिक दृष्टि से जब देश स्वतंत्र बन जायगा तभी तो उस में से दारिद्रय, बेकारी, अनीति, सूदखोरी, और हिंसा आप से आप निकल जायेंगी।

१९४२ के आंदोलन में हम लोगों ने एकता तथा निष्ठा-भाव से काम किया था। उसी प्रकार आज भी हमें यत्न करना होगा। पिछले दिनों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र चारों वर्णों के लोग समाज की भलाई के लिये अपना अपना कर्तव्य निभाते थे। उसी रीति पर आज के दिन भी परस्पर सहयोग, निष्ठा, सच्चाई तथा जिम्मेदारी के साथ हमें आर्थिक स्वतंत्रता की लड़ाई लड़नी होगी। तभी हम अपने लक्ष्य पर पहुँच सकते हैं।

## २· हमारे लक्ष्य

आर्थिक स्वतंत्रता की इस योजना पर हमें प्रजासत्तात्मक रीति से अमल करना है। देश के सभी वर्गों को अपने व्यक्तिगत लाभ छोड़ने पड़ेंगे। खेती पर आधारित उद्योगों को प्रधानता मिलनी चाहिए। किसान, व्यापारी, उद्योग धंधे-वाले, ग्राहक जनता तथा सरकारी नौकर-सभी को उत्तरदायित्व, सच्चाई तथा

ईमानदारी का आचरण बढ़ाना होगा। सरकारी तथा गैर-सर-कारी क्षेत्रों में प्रचलित अविनीति भगा देनी होगी। जीवन के हर पहलू में नैतिक मूल्यों का अवलंबन होना चाहिए; कर वसूल करने के विधान में आवश्यक परिबर्तन हो जाना चाहिए; जिस से सभी लोगो को कर देने में सुविधा उत्पन्न हो। यह सुधार केन्द्र तथा प्रादेशिक सरकारों में होना चाहिए। उन्नति की योज-नाओं को कार्यान्वित करने में सरकारी अधिकारी तथा व्यापारी, उद्योग धंधे चलानेवाले तथा उत्पत्ति करनेवालो मे पूर्ण सहयोग और संपर्क स्थापित होना चाहिए। २-१०-१९६९ से ले कर, जो कि महात्मा गाँधी का जन्म दिन है, आर्थिक स्वतत्रा की योजना के लिए मजबूत बुनियाद डालनी चाहिए।

### ३. साधना और उपाय

इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए स्वेच्छापूर्वक सगठित किसान, उद्योगपति, व्यापारी, शासक-वर्ग, वस्तूत्पत्ति करने वाले, और विनियोग करने वालो की अलग अलग समि-तियाँ आवश्यक होगी।

आर्थिक उन्नति के मार्ग में रोड़े अटकाने वालों पर शान्ति-पूर्ण उपायों से नैतिक, सामाजिक और कानूनी दबाव डालना होगा।

व्यापारी, व्यवसायपति, डाक्टर, वकील आदि पेशेवर वर्गो के लिए नैतिक-वर्तन (Code of Ethics) का निर्धारण करना चाहिए।

देश के सामने निश्चित लक्ष्य और रचनात्मक कार्य की एक प्रणाली उपस्थित करने की बड़ी आवश्यकता है। बिना

आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त किये प्रजातंत्र-शासन का पूरा-पूरा लाभ उठाया नहीं जा सकता।

भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में वाणिज्य करनेवाले व्यापारी अपनी-अपनी समितियों का संगठन कर लें और आचरण संबंधी नीति नियम बना लें। उनको इस का प्रबन्ध करना चाहिए कि उन के संघ के सदस्य सरकारी टैक्स बराबर चुकाते रहें। उन सब समितियों को "आल इण्डिया फेयिर ट्रेड प्राक्टीसेस एसोसियेशन" (All India Fair Trade Practices Association) से संबद्ध होकर काम करते रहना चाहिए। अगर यह हो जाय तो राज्य के मन्त्री तथा अन्य अधिकारी वर्ग सहयोग करने के लिए आगे बढ़ेंगे। सभी व्यापारियों की सहकारिता प्राप्त हो जाय और योजना सफलता पूर्वक कार्यान्वित की जाय तो देश में १० हजार करोड़ रुपये की पूँजी (Capital Formation) इकट्ठी हो जायगी। इस कार्य विधान के अनुसार कमीशन खर्च आदि अनावश्यक व्यय से व्यापारी बच जायेंगे। कर्मचारी और मजदूर वर्ग को इस बात की प्रेरणा और प्रोत्साहन मिल जाय कि वे अपना उत्तरदायित्व पहचान कर समाधान और सहयोग की रीति अपना लें।

## ४. हमारे द्रव्य के स्रोत

यदि हमारे व्यापारी न्यायपूर्ण व्यवहार का अनुसरण करें तो अनाचार और दूसरी प्रचलित बुराइयाँ दूर की जा सकती हैं। चोरी से माल मंगाना, बेहद लाभ उठाना, सही सही हिसाब न रखना--इस प्रकार के अन्य अनाचार के कारण सरकारी टैक्स वसूली में बड़ा घाटा पड़ रहा है। लोगों की नीयत सुधर जाने पर टैक्स की आमदनी बढ़ जायगी। सरकारी क्षेत्र के व्यव-

सायों पर होनेवाले अपव्यय को तुरन्त रोक देना चाहिए। इसी प्रकार शासन का भारी खर्चा जो इस समय हो रहा है घटा देना पड़ेगा। यदि सरकारी क्षेत्र के व्यवसाय दक्षता के साथ चलाये जायँ तो पाँच वर्ष के अंदर-अदर ५००० करोड़ मूल-द्रव्य (Capital Formation) आसानी से जुट जायगा। व्यक्तिगत क्षेत्र के व्यवसायों में भी इतना मूलधन जमा हो सकता है।

देश में असीम खनिज संपत्ति है, अति आधुनिक साधनो से उसका पूरा-पूरा लाभ उठाना पड़ेगा।

देश की मनुष्य-शक्ति भी अपार है, उसके सदुपयोग के लिए समुचित साधनो का आविष्कार और अवलंबन करना चाहिए।

### ५. कृषि-विकास द्वारा प्रगति

हमारे देश में लगभग ४० करोड मनुष्य निपट गरीबी में गुजारा कर रहे हैं। यद्यपि ७० प्रतिशत जनता खेती पर निर्भर है, फिर भी ८० प्रतिशत भूमि पर सिचाई का प्रबन्ध नहीं है। यदि हम अपनी उपज बढ़ाना चाहे तो 'लिफ़्ट इरिगेशन' तथा सिचाई के छोटे निर्माणों (Minor Irrigation Projects) को प्रधानता देनी होगी। इस प्रबंध से किसानों को केवल वर्षा पर निर्भर रहने की आवश्यकता न होगी और वे साल में दो तीन फसले उठा सकेंगे। खेतीबारी की वृद्धि हो जाने पर कृषक-मजदूरो को अधिक मजूरी मिल सकेगी, व्यापार और व्यवसाय भी दुगुना बढ़ सकेंगे। समाज के भिन्न वर्गो में आर्थिक असमानता बहुत कुछ कम हो सकेगी ग्रामीण प्रान्तों में काम धंधों के अवकाश

बढ़ा देने से ग्रामवासियों का नगरों की तरफ़ दौड़ना रुक जायगा। इस प्रकार बेकारी घट जायगी।

आजकल हमारे देश में लगभग ३८,६०,००० एकड़ ज़मीन पर ही खेतीबारी हो रही है। इसमें केवल २० प्रतिशत भूमि को सिंचाई की सुविधा प्राप्त है। इसके अतिरिक्त ६ करोड़ २२ लाख एकड़ बंजर ज़मीन पडी हुई है, यदि प्रयास किया जाय तो वह सारी की सारी जमीन खेती के अनुकूल बना दी जा सकती है। ग्राम-प्रान्तों में भी बिजली की सुविधा हो जाय और आधुनिक वैज्ञानिक साधन वहाँ के लोगों को अनायास प्राप्त हो सके—ऐसा यत्न करना चाहिए।

## ६. समस्याएँ

१) 'ज़ोनल सिस्टम' (Zonal System) तथा 'कन्ट्रोल' के कारण सरकार तथा जनता दोनों को कष्ट उठाना पड़ रहा है। जहाँ पर कंट्रोल से दुष्परिणाम निकलता दिखाई देता है, वहाँ से उसे उठा देना चाहिए। १९६७ में सबसे पहले एक जिले से दूसरे जिले को अथवा एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश को खाद्यान्न ले जाने पर नियत्रण लगाया गया है। परन्तु अंदाज से यह मालूम होता है कि यह नियंत्रण तोड़ कर ५० लाख टन का खाद्यान्न एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश को रवाना कर दिया गया। यह काम चोर बाज़ार चलाने वालों ने किया। लगभग ४ लाख टन का चावल केवल आन्ध्र प्रदेश से चोर बाजार के ज़रिये पड़ोसी राज्यों में पहुँचाया गया। इस काम में खेती का काम करने वाले मज़दूर नियुक्त हुए थे जिससे खेतीबारी को भी नुक़सान पहुँचा और साथ

तिलहन, तेल का वाणिज्य और उद्योग सघ का ५ वाँ अधिवेशन १९६७ मे हैदराबाद मे सपन्न हुआ। लेखक सभा मे भाषण दे रहे हैं। आ० प्र० राजस्व मन्त्री श्री वि वि. राजु तथा अधिवेशन के अध्यक्ष श्री जि एम नेवाटिया भी विराजमान हैं।

'सौत जोन आयिल मिलर्स अण्ड ट्रेडर्स एसोसियेशन' का सम्मेलन १९७० मे हैदराबाद में हुआ। मुख्यमंत्री श्री ब्रह्मानंद रेड्डी ने उसका उद्घाटन किया तथा उपमुख्यमंत्री श्री जे. वि. नरसिंगराव ने उस की अध्यक्षता की।

सौत जोनआयिल मिल्लर्स अण्ड ट्रेडर्स एसोसियेशन के सम्मेलन में, अध्यक्ष श्री जे.वि नरसिंगराव से लेखक परामर्श कर रहे हैं। हैदराबाद १९७०

ाथ लोगों की नीतिमत्ता को भी धक्का लगा। अवैध रूप से इस कार खाद्यान्न रवाना होने के कारण सरकार को करोड़ो रुपयों ा नुकसान हुआ, क्योंकि चोर बाज़ार के इस व्यापार पर बिक्री र, सेस, चुंगी कर तथा आयकर वसूल नहीं किया जा सका। ोर बाज़ार में लगे व्यापारियों को इससे जो लाभ मिलता है ह बही खाते में दर्ज नहीं होता।

**२) चोरी से माल आयात करना :**

मुख्यतया समुद्र के किनारोंपर बसे हुए गरीब लोग ही चोरी े माल आयात करने और उसे बेचने के काम में सहायक होते हते हैं। चूंकि ऐसा माल बिना रसीद के बेचा जाता है, उस पर ोई टैक्स नहीं लगता। इस व्यापार की बदौलत देश में छिपा हुआ धन बढ़ता जाता है।

**३) बेईमानी का व्यापार :**

ईमानदार व्यापारी को सेल्स टैक्स, मार्केट टैक्स, सेस, एक्साइज़, चुंगी कर, प्रोफ़ेशन टैक्स, लाइसेन्स फीज, आयकर, संपत्तिकर, गिफ्ट टैक्स आदि तरह तरह के टैक्स चुकाने पड़ते हैं। रंतु, इसके विपरीत बेईमानी से व्यापार करने वालों को कुछ ी देना नहीं पड़ता, अनीति उन्हें तरह तरह से मदद पहुँचाती है।

**४) नियमों का दुरुपयोग :**

अधिकांश व्यापारी छोटा मोटा कारोबार करते हैं। सरकार का कार्यविधान तथा कायदे कानून उन की समझ में नहीं आते; फिर हर एक विभाग अपने अपने अलग ढंग से नियमों का अर्थ

लगाता है। ईमानदार व्यापारियों की और उनके व्यापार की रक्षा के लिए जो नियम बनाये गये उन का दुरुपयोग स्वार्थी और अनाचारी लोगों के द्वारा हो रहा है।

### ७. कुछ समाधान

१. ईमानदार व्यापारियों को अपने वर्ग का अलग सगठन कर लेना चाहिए जिस के द्वारा वे अपना व्यवसाय अनायास चला सकें। सरकार का वर्तमान वित्तीय शासन (Finance Bill) छिपे धन को बाहर खीच लाने में असमर्थ ही रहा। अत: व्यापारी संस्थाओं को अपनी तरफ़ से ऐसा यत्न करना चाहिए कि वह सारा छिपा हुआ धन खुले तौर पर व्यवहार में आ जाय। इसे साध्य बनाने के लिए सरकार को एक ऐसी घोषणा करनी चाहिए कि जो लोग अपने छिपे धन का हिसाब स्वय प्रगट करते हैं; उन के उस धन का केवल २५% शतांश विशेष कर (स्पेशल टॅक्स) के रूप में लिया जायगा; और ३०% शतांश सरकारी कृषि विकास ऋण (Agricultural Development Loan) में लगाना होगा, तथा बचा हुआ ४५% शतांश वे अपने वही खाते में दर्ज कर कारोबार में विनियोग कर सकेंगे।

२. जहाँ खाद्यान्न की अधिक (Surplus) फ़सल होती है वहाँ उस का ३०% शतांश सरकारी 'लेवी' (Levy) के रूप में खरीद लिया जाय और उसे कम दाम पर कम आमदनी वालों तथा कार्मिक जनता को बेच दिया जाय। बचे हुए अंश को देश के किसी भी भाग में बे-रोकटोक ले जाने की अनुमति दी जानी चाहिए।

३. सेल्स टैक्स (विक्रयकर) लगाने के हिसाब में इस समय एकरूपता नहीं है। एक ही प्रान्त में कही कही अलग अलग हिसाबों से टैक्स लगाया जाता है। इस के वदले सारे भारत में लागू होनेवाला एक ही दर और हिसाब होना चाहिए।

४. नये उद्योगों की स्थापना के लिए इस समय लाइसेन्स देने का जो क्रम है उसे या तो बंद कर देना चाहिए अथवा उस में उचित रीति से रद्दोबदल करना चाहिए। कच्चे माल के आयातों के संबध में प्रधानता (Priority) देने का एक निश्चित क्रम बना देना चाहिए; कृषि संबधी यन्त्र सामग्री तैयार करने वाले उद्योगों को अधिकाधिक प्रधानता देनी चाहिए। उस के बाद विदेशी मुद्रा कमानेवाले उद्योगों को तथा देश की उन्नति के लिए अत्यावश्यक उद्योगों को क्रमश. तर्जीह मिलनी चाहिए।

५ साधारणतया कीमतों पर कोई कन्ट्रोल (Control) न होना चाहिए, किंतु कम आमदनी वालों को और मजदूरों को कम कीमत पर आवश्यक पदार्थ पहुँचाने की दृष्टि से उत्पादित वस्तुओं में २० से लेकर ५० प्रतिशत तक की वस्तुओं पर कीमत कन्ट्रोल बनाये रखना चाहिए।

६. हमारे देश के ८० प्रतिशत किसान एक एक पाँच एकड़ से कम ही जमीन रखता है। उनको कुँआ खुदवाने के लिए आवश्यक ऋण बेंकों से मिलने की सुविधा होनी चाहिए। यदि किसान अकाल आदि प्राकृतिक बाधाओं के कारण क़िस्त चुका न सके तो सरकार ही उस की तरफ़ से वह किस्त चुकावे।

## ८. योजना के आधारभूत आँकड़े

इस योजना में मैं ने आचरण के योग्य उपाय बता कर यह स्पष्ट किया है कि उन के द्वारा गुप्त धन में से कम से कम ४५%

प्रतिशत बाहर लाया जा सकता है और उसे कृषि विकास में लगाया जा सकता है। इस तरह कृषि संबंधी उद्योग धंधे भी बढ़ाये जा सकते हैं। सरकार को चाहिए कि वह वणिक वर्ग को तंग करना छोड़ दे, और साथ ही टैक्स वसूल करने के नियमों में अनुकूल परिवर्तन कर दे। इसके परिणाम में टैक्सों के द्वारा सरकार को लगभग ७३५० करोड़ की आमदनी होगी जिसे वह कृषि विकास के कार्यों में लगा सकती है। योजना में यह भी स्पष्ट दिखाया गया है कि प्राइवेट क्षेत्र के उद्योग धंधे, व्यापार तथा खेतीबारी के द्वारा भी ५०००· करोड़ रुपयों की पूंजी आसानी से जमा हो सकेगी।

### ६. अनुमानों का आधार

टैक्सों के ज़रिए सरकार को इस समय मिल रही आमदनी छोटे और कम संपन्न राज्यों में अधिक है तथा बड़े और अधिक संपन्न राज्यों में कम है। उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की अपेक्षा आन्ध्र प्रदेश में बिक्रीकर (सेल्स टैक्स) अधिक वसूल हो रहा है। वास्तव में इन अधिक विस्तृत प्रान्तों में दुगुना या तिगुना अधिक कर वसूल होना उचित है; किन्तु वहाँ गुप्त धन पर आयकर (इंकम टैक्स) लग ही नहीं रहा होगा अथवा अनाचार की प्रबलता रही होगी। रिश्वत देने और लेने का बाज़ार गरम रहता होगा इस में संदेह नहीं। आन्ध्र प्रदेश में भी यदि सेल्स टैक्स की वसूली ईमानदारी के साथ होती तो उस की रकम दुगुनी से भी ज्यादह होती।

### नैतिक विधान (Code of Ethics)

आन्ध्र प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री ब्रह्मानन्द रेड्डि ने १६६८ में यह स्वीकार कर लिया था कि प्रशासन के नियमों द्वारा जहाँ

ईमानदार व्यापारी कष्ट भोग रहे हैं वहाँ बेईमान व्यापारी अवैध लाभ उठा रहे हैं। अतः व्यापारी वर्ग से अनुरोध किया जाता है कि वह नीचे बताये विधि निषेध मान कर चलना स्वीकार करे :

१. व्यापारी समुचित लाभ पाने का हकदार है, अतः अनुचित लाभ पाने के लालच में न पड़े।

२ व्यापारी लोग स्वयं ही आपस की अनुचित स्पर्धा रोक देने का यत्न करें।

३. सरकार को जो जो टैक्स देने होंगे ठीक समय पर सच्चाई के साथ चुका दे, साथ ही इस पर भी ध्यान रखें कि कोई भी व्यापारी टैक्स चुकाने से न चूके।

४. अपनी ईमानदारी और सच्चाई के द्वारा व्यापारी लोग ग्राहक जनता की सहानुभूति, और अधिकारियों का सहयोग प्राप्त करें।

५. व्यापारी संस्थाओं को तथा सरकार को चाहिए कि वे संकट में पड़े ईमानदार व्यापारी की मदद करें।

६. व्यापार और व्यवसायों के सबध में वणिक् वर्ग सरकार को समुचित सलाह देता रहे।

### ११. सब से निवेदन

घटिया माल बेचनेवाले, मिलावट कर देने वाले, काला बाजार करते हुए टैक्स न भरनेवाले, अनाचार कर नफ़ा उठाने वाले सभी व्यापारियों का यह परम कर्तव्य है कि राष्ट्र के हित

पर लक्ष्य रख कर वे अपनी बुराई छोड़ दें। उन का हृदय-परिवर्तन हो जाना चाहिए। उन के कारण देश की साधारण जनता के साथ-साथ ईमानदार व्यापारियों को भी भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। सच्चाई बरतने वाले व्यापारी सब मिल कर एक संस्था के रूप में संगठित हो जायें, और अनाचारियों को समझा बुझा कर ठीक रास्ते पर लावें, उन्हें चेतावनी दे कर आवश्यकतानुसार उनके साथ असहयोग और बहिष्कार का भी प्रयोग करें। सच्चाई के बिना कोई भी व्यापार देश में पनप नहीं सकता। अनाचार से व्यापारियों को भी नुकसान उठाना पड़ेगा।

तरह तरह के पेशेवर लोगों को भी आयकर वगैरह सब प्रकार के टैक्स चुकाना आवश्यक है।

देश की आर्थिक दशा सुधारने का यत्न सामाजिक संस्थाओं को भी करना चाहिए। साथ ही केन्द्र तथा प्रादेशिक सरकारों को इस योजना पर अमल करना आरंभ कर देना चाहिए। सभी किसानों को अपनी उन्नति का उपाय स्वयं कर लेना होगा। ग्राम सुधार का काम जब सभी ग्रामवासी मिल कर करेंगे तभी वह पूरा हो सकता है। जिन दिनों खेतीबारी का काम नहीं रहता किसानों को कुओं, तालाबों की मरम्मत पर ध्यान देना चाहिये। कुटीर उद्योग भी वे फुरसत के समय चला सकते हैं।

सरकारी अधिकारी और कर्मचारियों को चाहिए कि वे अनाचार और अविनीति से दूर रहें। लापरवाही, आलस्य और पक्षपात छोड दें। निगरानी करने वाले अफ़सरों के हाथ में अविलंब निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिये। केन्द्र और प्रान्तों

के मंत्रियों तथा धारा सभा के सदस्यों का कर्तव्य है कि वे व्यापारियों को समाज में सम्मान का स्थान दिला दें।

प्रांतों के बीच के झगडों का निपटारा मध्यवर्तियों द्वारा अथवा राष्ट्रपति के द्वारा कर लिया जाय। इस काम में राष्ट्रपति को सलाह देने के लिए विशेषज्ञों की एक समिति बनाई जा सकती है। देश में एकता का भाव बनाये रखने के लिए आवश्यक सभी उपायों का अवलंबन करना होगा।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी लोगों की गरीबी तथा दुस्थिति शीघ्रातिशीघ्र दूर करने का कोई विशष यत्न नहीं हुआ। अभी अभी कांग्रेसी सरकार ने यह काम हाथ में लिया।

लोगो में नैतिक बल बढाने के लिए धार्मिक गुरुओं को भी कमर कस कर यत्न करना चाहिए। लोगों का जीवन जब सच्चाई पर चलने लगेगा तब आर्थिक स्वतन्त्रता पाना कुछ कठिन न होगा।

अनाचार में प्रवृत्त होने और बगैर बिल के सामान खरीदने से पुरुषों को घर की स्त्रियाँ रोक सकती है। इस योजना पर अमल करने केलिए सरकार की प्रतीक्षा करना आवश्यक नही है।

सन् १९६८ में "फेयर ट्रैड प्राक्टीसेस एसोसियेशन' की बैठक जब बम्बई में हुई तब मुझ से कहा गया कि मैं वहाँ पर उपस्थित सदस्यों को अपने 'आयिल मिल्लर्स एसोसियेशन' का कार्यविधान समझाकर कहूं। मैने उस अवसर पर उन सब विधिनिषेधों (Code of Ethics) का ब्यौरा बता दिया जिन्हें मान कर हमारे सदस्य आचरण कर रहे है। भिन्न-भिन्न प्रान्तों से आये हुए प्रतिनिधियों के लाभ केलिए मैंने उस अवसरपर इस

आर्थिक स्वतंत्रता की योजना की भी रूपरेखा खींच दी। इसकी विशेषताएँ समझकर उन लोगों ने अपना अनुमोदन व्यक्त किया।

'आल इण्डिया आयिल & आयिल सीड्स ट्रेड कन्वेन्शन' के मद्रास, इंदौर, दिल्ली तथा कलकत्ते में हुए अधिवेशनों में भाग लेते हुए मैंने वणिक् समाज का ध्यान व्यापार में ईमानदारी बरतने की आवश्यकता पर आकृष्ट किया था।

आर्थिक स्वतंत्रता की यह योजना सर्वथा स्वतंत्र है। लोग स्वेच्छापूर्वक इस पर अमल कर सकते हैं। इस केलिए आवश्यक व्यवस्थापक-मंडलों का संगठन करने का क्रम भी मैंने सूचित किया है। प्रदेश समन्वय समिति (State Coordination Committee) के साथ साथ जिला समन्वय समितियों का विधान भी सूचित किया गया है। इन समितियों में समाज के सभी वर्ग, दल तथा समुदायवाले भाग ले सकते हैं और अपना अपना सहयोग दे सकते हैं। यह योजना पूरे विवरण के साथ हिन्दी तेलुगु तथा अंग्रेज़ी-तीनों भाषाओं में प्रकाशित की गई है।

हमारी सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का प्रतिपादन किया है। किंतु केवल इतने से ही देश आर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्र होनेवाला नहीं है। ये योजनाएँ तभी सफलता-पूर्वक कार्यान्वित हो सकती हैं जब जनता तथा संबंधित वर्ग के लोग स्वेच्छापूर्वक इस भार को वहन करें। केवल कानून और दबाव के बलपर कोई भी सुधार का काम चलाया नहीं जा सकता। उसके लिये अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना चाहिए। जब जनता और उसकी संस्थाओं को यह विश्वास हो जाय कि सुधार से उनको वास्तविक और स्थिर लाभ होने जा रहा है, तभी वह सुधार प्रत्यक्षरूप धारण करेगा।

१९६९ में इन्दौर में हुए तिलहन, तेल का वाणिज्य और उद्योग के ७ वें अखिल भारत सम्मेलन में लेखक भाषण दे रहे है। बीच में सम्मेलन के अध्यक्ष श्री ब्रजरतन-एस मोहता।

तिलहन, तेल का व्यापार तथा उद्योग संघ के कलकत्ते में १९७१ को हुए ९ वें अखिल भारत सम्मेलन के प्रतिनिधि श्री ए. पि. सिन्दे (यूनियन मिनिस्टर आफ़ स्टेट फ़ॉर एग्रिकलचर) ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। बीच मे श्री सिन्दे; अध्यक्ष श्री एस. एस. स्वैका दाहिनी ओर आखिर में खड़े है।

४५

# धर्म और मानवता

सभी धर्म और संप्रदायवाले धर्म के नाम पर उत्सव आदि किया करते हैं। परंतु अकसर इन उत्सवों का प्रत्यक्ष संबंध धर्म के साथ नही होता; फिर भी उन पर लोग लाखों रुपये खर्च करते हैं। धर्म का उद्देश्य मनुष्य को आत्मिक उन्नति की तरफ़ ले जाना है, किन्तु इन उत्सवों में सामूहिक दावतों, जुलूसों तथा सजधज को प्रमुख स्थान दिया जाता है। कुछ समय पहले मुझे कच्छ जाना पड़ा। वहाँ चद्रप्रभु जैन मंदिर में प्रतिष्ठा का उत्सव हो रहा था। उस अवसर पर मैंने वहाँ के कार्यकर्ताओं से अनुरोध किया था कि वे पुराने रीति-रिवाज़ों को समय के अनुकूल बदल दें। मैंने उन्हें इन शब्दों में समझा दिया—"भगवान का पूजन और उनके नाम का उच्चारण मनुष्य के हृदय, से संबंध रखता है। धर्म हमें प्रेरित करता है कि हम दूसरों का धन लेने का लालच न रें। उनकी संपत्ति उन्हें लौटा दें और हम सादा जीवन बितावें। ऐसे अवसरों पर सांप्रदायिक भोज देने की जो प्रथा है उस का कायापलट होना चाहिए। भोज-दावत का खर्चा भरने केलिए टिकट बेचनेका क्रम रखना

चाहिए। इस से यह लाभ निकलता है कि उत्सव में भाग लेने केलिए जो लोग इकट्ठे होते हैं वे खाना पकाने की चिंता से निवृत्त हो कर भगवद्ध्यान-दर्शन आदि में अपना समय लगा संकेत हैं। दूसरा, टिकटों की संख्या से प्रबंधकों को मालूम हो जाता है कि कितने लोगों को भजन तैयार करना होगा, जिससे खाद्यान्न को दुर्व्यय से बचाया जा सकता है, और वह धन दूसरे विकास के कामों में लगाया जा सकता है। इस प्रकार धार्मिक उत्सव आदि मनाने के लिए संस्थाओं के पास एक स्थायी कोश (Fund) जसा होता जायगा और वे क्रमशः आत्मनिर्भर भी होंगी। सांप्रदायिक भोज का व्यय दान में देने वाला व्यक्ति सिर्फ़ उसी एक दिन केलिए प्रसिद्धि पा जाता है। इस के बदले यदि उस का नाम स्थायी दाताओं में दर्ज किया जाय तो उस की प्रशंसा हमेशा होती रहेगी।"

उस उत्सव के समय मैंने धार्मिक कार्यकर्ताओं के विचारार्थ यह प्रस्ताव रखा कि पत्री ग्राम में जितने धार्मिक संप्रदाय प्रचलित हैं उन सब का सर्वोदय आदर्शों के अनुसार संगठन होना चाहिए और सब की उन्नति का सम्मिलित यत्न होना चाहिए। जमाना तेज़ी के साथ बदल रहा है, अतः मैंने उन्हें सुझाया कि सुधार लाने के संबध में सब लोग मिलकर कुछ निश्चित मार्ग तै करलें। मेरा यह दृढ विश्वास है कि धार्मिक और सामाजिक परंपराओं में व्यक्ति और समाज की अभ्युन्नति को दृष्टि में रख कर आवश्यक परिवर्तन लाया जाना चाहिए।

मंदिर के इस प्रतिष्ठामहोत्सव में भाग लेने केलिए लगभग ७०० भक्त दूर-दूर से पत्री आये हुए थे। स्थानिक युवक मंडल ने

उन को ठहराने और आराम पहुँचाने का प्रबन्ध किया। आचार्य श्री जंबु विजयजी के विकासात्मक विचारो से प्रभावित हो कर भक्तो ने अपनी शक्ति के अनुसार चन्दा दिया इससे उत्सव का खर्चा निकल आया था। लोगों के हृदयों में प्रेम और एकता की भावना दृढ़ हो गयी।

मैंने पत्री ग्राम की कार्यवाही देखकर यह जान लिया कि सुधार के लिए काम करना आवश्यक होने पर भी अत्यन्त कठिन है। स्वय सेवक कार्यकर्ता एक केन्द्र का काम समाप्त कर जैसे ही दूसरे केन्द्र में पहुँचेगे वैसे ही वह प्रथम केन्द्र पहले की सोचनीय दशा को वापस जाने लगता है। सुधार लाने के लिए वहाँ पर जो परिश्रम किया गया था उस सब पर पानी फिर जाता है। हरिजन तथा पिछड़े हुए वर्ग के प्रति जो उदासीनता और नफ़रत पहले थी वह फिर से सिर उठाती दिखाई दे रही है। छोटे-छोटे झगड़े फसाद, तू तू और मैं मैं तीव्र हो कर गाँव की शांति को भग कर रहे हैं। पत्री मे मैंने यह दशा प्रत्यक्ष देखी है।

इस से मुझे ऐसा लगता है कि सुधार की ज्योति को गाँवों में धीमी पड़ने देना नही चाहिए, ऐसा प्रयत्न करना चालू रहे जिस से वह अविराम जलती रहे। इसके लिए समाज-सुधार मे लगे कार्यकर्ताओ को चाहिए कि वे एक केन्द्र छोड़ कर अन्य केन्द्र में जाने के पहले कुछ स्थानिक युवको को इस दिशा में शिक्षित करें जिससे काम लगातार चलता रहे।

### जैन दर्शन

दश-लक्षणी और पर्युषण के शुभ पर्व पर 'जैन-सदेश' का विशेषाक प्रकाशित हुआ, उसमें मैंने जैन संप्रदाय पर अपने विचार

प्रगट करते हुए एक लेख लिखा था। जैन संप्रदाय का अनुयायी होने के कारण से नहीं परंतु सारे विश्व को अहिंसा का दिव्य संदेश देनेवाले उस जैन दर्शन में गहरा विश्वास होने के कारण ही मैंने वह निबंध लिखा था। उस निबंध का सारांश पाठकों के परिचय के लिए नीचे दिया जा रहा है :-

'हमें जैनी होने का गर्व है; अतः हमें उसके आदेशों पर चलना आवश्यक है। धर्म हमें अपना जीवन प्रेम, मर्यादा, उदात्तता, सादगी, तथा शांति के साथ व्यतीत करने का मार्ग बताता है। जैन दर्शन के सिद्धान्त, वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर सुधारात्मक प्रथा क्रांतिकारी मालूम पड़ते हैं। क्योंकि उनके अनुसार :-

१. हम धर्म के मूल सिद्धान्तों को सुरक्षित रखते हुए अपने जीवन को परिस्थितियों के अनुकूल बिता सकते हैं।

२. हर व्यक्ति अपने-अपने कार्य का फल भोगने पर बाध्य बतलाया गया है।

३. यह धर्म इतना उदार है कि उसके किसी भी अंग को पकड़ कर हम आत्मानुसंधान करते जा सकते हैं।

हर एक व्यक्ति को आत्मपरिज्ञान आवश्यक है; अपने पुरुषार्थ के द्वारा आत्म निर्भर बन जाना चाहिए। मनुष्य का मन बड़ा ही अस्थिर रहता है; योगियों और मुनियों के लिए भी उसे स्थिर रखना दूभर हो जाता है। साधारण गृहस्थों के लिए तो मन पर वश पाना अति दुष्कर है। कुविचार हमें पाप के गर्त में गिरा देते हैं; अतः हर घड़ी मन को सत्कार्य में लगाये

रखना ठीक होगा। गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी हमें जीवहिंसा तथा परपीडन से बचे रहना चाहिए। कुछ जैनी तो यह विश्वास करते हैं कि काम करने से पाप का भार बढ़ता है। अतः कम से कम कर्म करते रहना वे धर्म का साधन समझते है। फिर भी चित्त की चंचलता को रोकना दुस्साध्य ही समझना चाहिए।

जो हमारे लिए अनिवार्य नहीं है उसे ग्रहण न करना अपरिग्रह कहलाता है; वर्तमान परिस्थिति में अपरिग्रह क्रांतिकारी भावना है। आर्थिक असमानता तथा सामाजिक भिन्नताओ के कारण आज देश में समाजवाद और समतावाद फैल रहे है। जैन धर्म ने हज़ारों वर्ष पूर्व ही अपरिग्रह सिद्धांत के द्वारा इसक समाधान बतला दिया था।

जैन धर्म चाहता है कि शाकाहार के द्वारा मनुष्य अहिसक, तपस्वी, और उदार बन कर अपनी आत्मा को पवित्र रखे। निरामिष आहार आत्मोन्नति की पहली सीढ़ी है। शरीर में आरोग्य तथा आत्मा में पवित्रता प्राप्त करने की कामना से अनेक मांसाहारी व्यक्तियों ने अपना मार्ग बदल कर शाकाहार ग्रहण कर लिया है। यूरोप और अमेरिका आदि विदेशो में भी आज नि शाकाहार का रिवाज फैलता जा रहा है।

प्राणी की हिंसा किये बिना मॉस खाने को नही मिल सकता, अतः माँसाहारी के लिए आत्मिक उन्नति असंभव है। स दृष्टि से भगवान महावीर के उपदेशों का, जो जैन धर्म में निहित है संसार भर में प्रचार करना हरएक जैनी का कर्तव्य हो जाता, है। यह धर्म केवल जैन समाज तक ही सीमित नही है, वरन् संसार भर के मनुष्यों के लिए उद्दिष्ट है।'

सभी जैनी गृहस्थों को मण्डल के भवन में अकसर जमा होकर अपने जीवन को सुधारने तथा उसे उन्नतिशील बनाने के साधनों का अन्वेषण करना चाहिए। संगठित यत्न से सब प्रकार की कठिनाइयाँ पार की जा सकती हैं।

## आदर्शपूर्ण जीवन

मनुष्य मात्र सुखी और दीर्घजीवन की अभिलाषा करता है। इस के लिए प्रकाश गुज्जर नामक एक लेखक ने, गुजराती मासिक: 'लोक जीवन' में प्रकाशित अपने एक लेख "नवरंगी खेड" में कुछ उपाय सूचित किये हैं। ११० वर्ष की आयु के एक विदेशी किसान की आत्मकथा पढ़ कर लेखक ने उस के सारभूत विषय अपने लेख में प्रस्तुत किये हैं। सुखी और दीर्घजीवन के उन साधनों का प्रयक्ष ज्ञान न रखते हुए भी न मालूम कैसे—मैं ने अपने जीवन में ठीक उन्हीं साधनों से काम लिया और लाभान्वित हुआ। पाठकों के लाभ के लिए मैं उन साधनों का संक्षेप में उल्लेख करता हूँ।

१. किसी भी परिस्थिति में मनुष्य को चिन्ताग्रस्त न होना चाहिए।

२. नित्य का जीवन प्रातःकालीन प्रार्थना से आरंभ करना चाहिए।

३. हरएक को यह सत्य मान लेना चाहिए कि हर एक की कुछ सीमाएँ होती हैं।

४. मनुष्य किसी से डाह न करे।

५. मनुष्य मात्र का विश्वास कर लेना चाहिए।

६. मनोविनोद का एक न एक साधन (Hobby) चुन कर रोज उस का अभ्यास करना चाहिए।

७. कोई अच्छा विषय रोज़ नियमपूर्वक पढते रहो।

८. रोज़ थोड़ी देर एकांत में बैठे रहो।

९. तुम्हारे पास जो कुछ है उसे पसंद करना सीख लो।

१०. हार्दिक संतोष के द्वारा ही सुख और शांति प्राप्त हो सकती है।

**जैन सेवा-संघ, हैदराबाद**

धर्म का मुख्य प्रयोजन व्यक्ति को आत्मिक संतोष प्रदान करना है। अनेकानेक धार्मिक क्रियाओं का संबंध मनुष्य के कल्याण से लगा हुआ है। मानव जीवन के परमोच्च आदर्शों को प्रत्यक्ष जीवन में उतारना ही धर्म कहलाता है। इस प्रकार के विश्वासो को लेकर ही मैं अब तक जैनियों का साथ देता रहा और पिछले तीन वर्षों से जैन सेवा संघ, हैदराबाद, का अध्यक्ष भी रहा हूँ। श्वेताम्बर, दिगम्बर, देरावासी, स्थानकवासी-इत्यादि भिन्न भिन्न जैन सम्प्रदायों के बीच एकता लाने के महान् उद्देश्य को लेकर इस संघ की स्थापना हुई। बिहार, गुजरात और आन्ध्र प्रदेशों में प्रकृति-प्रकोप के कारण जब संकट उपस्थित हुए उन दिनों इस संघ ने प्रशंनीय सेवा और सहायता प्रदान की थी। एक जैन पाठशाला चलायी जा रही है जहाँ अल्पवयस्क बालक बालिकाओं को सत्य, अहिंसा, प्रेम, पवित्रता, सदाचार आदि गुणों की सांस्कृतिक शिक्षा दी जाती है। भगवान महावीर की जयंती, जैन कला के प्रदर्शन, कवि-सम्मेलन, सर्व धर्म-सम्मेलन, और स्त्री शिक्षा आदि प्रवृत्तियाँ संघ की ओर से चलाई जाती हैं। संक्षेप

में यदि कहा जाय तो इस संघ द्वारा संचालित कार्यक्रम समाज कल्याण का ही कार्य है। इस उदार भावना को लेकर ही मैं ने धार्मिक संस्थाओं के साथ सहयोग किया है।

## क़ैदियों की सेवा

मनुष्य जन्म से ही कभी अपराधी (Criminal) स्वभाव का नहीं होता। कुटुम्ब तथा समाज की कुरीतियां तथा आवश्यकताएँ उसे अपराधी बना देती हैं। ईसा ने उपदेश दिया कि पाप से घृणा करो परंतु पापी से नहीं, उस से प्रेम ही करना उचित है। जेलखाने के वातावरण में मुद्दत तक रह कर आने के बाद कैदी को अपना अपराधी स्वभाव छोड़ देना वास्तव में कठिन हो जाता है। समाज भी यत्न पूर्वक उसे नागरिक बनाने के बदले उस से घृणा करता है और दुत्कार देता है। परिणाम यह होता है कि जल का पक्षी बाहर घूम फिर कर फिर अपने जल के घोंसले में जाकर ही आराम पाता है। मुझे इस मानवता के क्षेत्र में भी थोड़ी बहुत सेवा करने का अवकाश मिल गया। "हैदराबाद डिस्चार्जड् प्रिज़नर्स एयिड सोसाइटी" के उपाध्यक्ष के पद पर होने के कारण मैं पिछले १२ वर्षों से इस संस्था के कार्य-विधान से भली भांति परिचित रहा हूं। कैद से छूटे हुए बंदियों को समाज में पुनारावास दिलाने में यह संस्था सहायता पहुंचाती है। उन्हें आवश्यक द्रव्य का अनुदान, उधार, अथवा कोई काम धंधा दिलाया जाता है जिस से वे स्थिर आजीविका पा सकें।

महात्मा गांधी शतजयंती उत्सव के उपलक्ष्य में पिछले वर्ष २६०० बंदी जेल से छोड़ दिये गये थे। उन्हें धन रूप में सहायता देकर स्वयं पोषक बनाने का बहुत बड़ा बोझा इस संस्था को
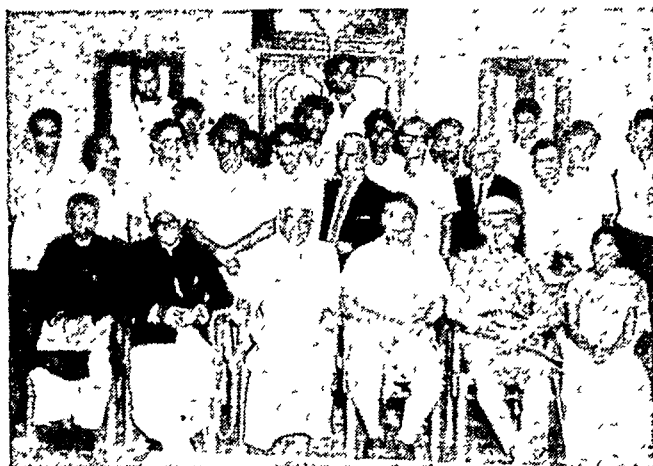
आं. प्र डिस्चार्जड् प्रिज्नर्स एयिड सोसाइटी की बैठक:
लेखक अध्यक्षता कर रहे हैं।

आन्ध्र प्रदेश स्टेट कौन्सिल आफ़् चैल्ड वेलफ़ेर,
हैदराबाद, पुरस्कार वितरण-१९७१

मुख्यमंत्री श्री पि· वि· नरसिंहराव की अध्यक्षता में होनेवाला
बालदिनोत्सव। आं-प्र-स्टेट कौन्सिल आफ़ चैल्ड
वेलफेर-१९७१·
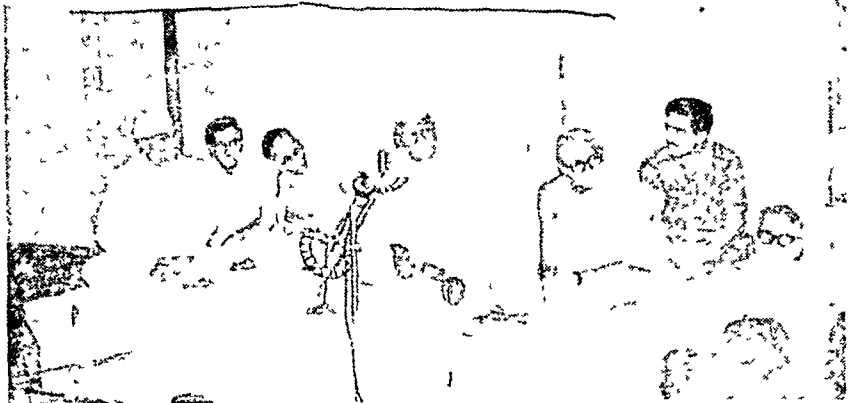
गवर्नर खण्डूभाई देशाई महावीर जयंती का प्रारंभ कर रहे हैं जो जैनसेवा संघ द्वारा १९७१ में आयोजित हुआ। संघ के अध्यक्ष लेखक दाहिनी तरफ़ आखिर में है।

महावीर जयती के शभअवसर पर जैन सेवासघ द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन।
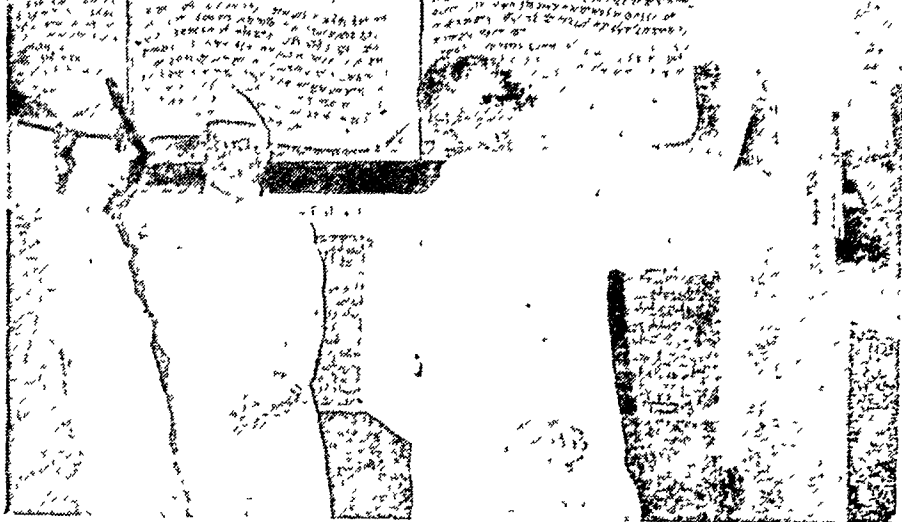
जैन सेवासंघ द्वारा रवीन्द्रभारती में आयोजित महावीर जयंती का उत्सव मुख्यमंत्री श्री कासु ब्रह्मानंद रेड्डी जैन-कलाप्रदर्शन का उद्घाटन कर रहे हैं।
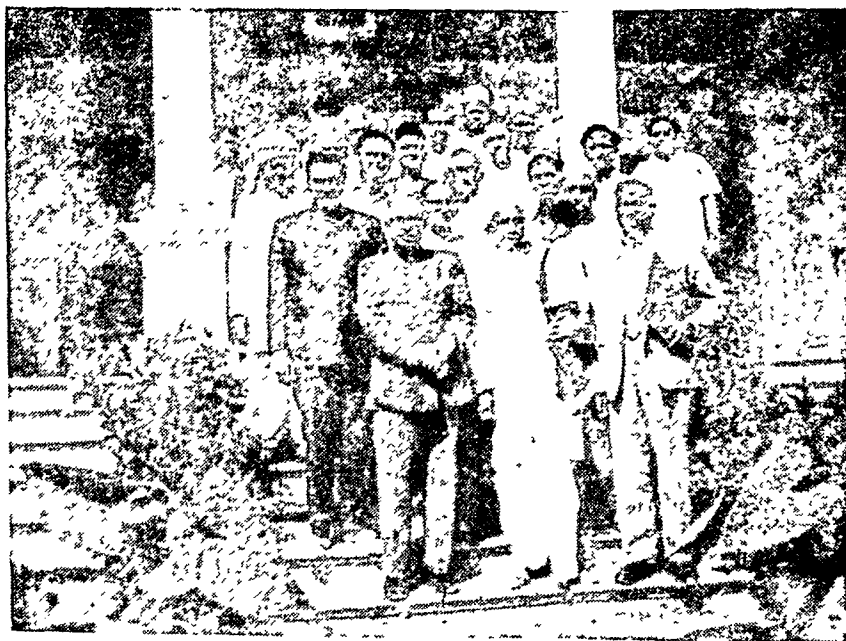
यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमिशन के अध्यक्ष: श्री कोठारीजी का जैन सेवासंघ में स्वागत हो रहा है।

उठाना पड़ा। दुस्साध्य होने पर भी हमने यह गुरुतर कार्य धीरे धीरे आगे बढ़ा कर आखिर अंजाम पहुंचाया।

आन्ध्र प्रदेश सरकार एक जूनियर और एक सोनियर सर्टिफ़ैड स्कूल चलाती है जिन मे नाबालिग वाल-अपराधियों (Juvenile Delinquents) को शिक्षा देकर स्वस्थ नागरिक बनाने का यत्न किया जाता है। इस समय उन संस्थाओ में लगभग ७०० बाल अपराधी शिक्षा पा रहे हैं। उन्हे पढ़ाई के साथ साथ किसी न किसी पेशे का काम-धधा भी सिखाया जाता है। निरीक्षक-सदस्य के रूप में मै कई वर्षो से इन सस्थाओ की सेवा कर रहा हूँ। सरकारी जूनियर सर्टिफाइश स्कूल से कुछ लड़को को वेजबाई वाल निवास में भी भेजा जाता है जो 'हैदराबाद चिल्ड्रेन्स एयिड सोसाइटी' द्वारा संचालित हो रहा है। चूँकि इन बालको के मस्तक पर अपराधी होने का टीका लग चुका है, बड़े ही प्रेम-वात्सल्य और सहन के साथ इन की देख रेख करनी पड़ती है। मैं इस काम में बड़ी दिलचस्पी लेता हूँ; यद्यपि मेरी सेवा सामान्य है फिर भी मेरे विचार में यह मेरे जन्म को सफल बना देनेवाली है।

## शिशु-संरक्षण

"आन्ध्र प्रदेश स्टेट काउन्सिल आफॅ चैल्ड वेल्फेर" शिशु संरक्षण के लिए कार्य करनेवाली सस्था है, जिस का मैं समान्य कोशाध्यक्ष हूँ। वर्तमान समय मे इसमें ५६ वालक संरक्षण पा रहे है; उनमें से कुछ मानसिक कमजोरी के शिकार बने हुए हैं। इस संस्था के संचालन में कई बाल-सेविका-प्रशिण-केन्द्र (Training Centres) १९६४ से काम कर रहे है। यहाँ प्रशिक्षण पूरा करने पर बाल सेविकाएँ प्रान्त भर की बालवाडियों मे अध्यापिका पद

पर नियुक्त होती हैं। भारत सरकार का समाज कल्याण विभाग (Social Welfare Department) पुष्टिकारक-आहार-योजना (Nutrition Programme) चलाता है, उस में १९७१–७२ के लिए आन्ध्र प्रदेश बालवाडियों को भी सम्मिलित किया गया है। हर बालक के पीछे १५ पैसे इस योजना में प्रतिदिन खर्च किये जाते हैं; भोजन पकानेवाले सहायक को २० रु० का मासिक वेतन दिया जाता है। १९७१–७२ में अध्यापिकाओं के वेतन के लिए १८ लाख रुपयों का प्रबन्ध हो गया है।

४६

# विस्तृत गृह-निर्माण योजना

निजाम राज्य के भारत में विलीन हो जाने के बाद, विशेष रूप से आन्ध्र प्रदेश के संगठित हो जाने के बाद हैदराबाद आदि नगरों की आबादी में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इस कारण से आवासों की समस्या तीव्र हो गई है। अतः स्वाभाविक रूप से मेरा ध्यान इस पर आकृष्ट हुआ। आधुनिक नगर निर्माण पद्धति का अवलंबन कर नूतन गृहनिर्माण की योजना कार्यान्वित करने का मैने निश्चय किया। मेरे कुछ मित्रों और सहयोगियो ने इस का समर्थन किया।

फलस्वरूप 'प्रगति को आपरेटिव हाउसिग सोसाइटी' की स्थापना हुई जिसने नगर के मध्य भाग मे चालीस कुटुँबो केलिए घर बनवा दिये। इससे प्रेरणा पा कर एक दूसरी सस्था 'तिलक रोड़ हाउसिग सोसाइटी' के नाम से आयोजित हुई। उसने ११ हजार वर्ग गज की जमीन लेकर १०० के लगभग मकान बनवाये।

२५००० वर्ग गज की एक तीसरी जमीन 'किग कोठी' के समीप में मोल ली गई। यहाँ पर गृहस्थो के मकानो के अति-

रिक्त कुछ सार्वजनिक संस्थाओं के लिए भवन और कार्यालय भी बनवाने का निश्चय हुआ है, और काम चल रहा है। इनके अतिरिक्त 'बशीरबाग' में ३०,००० वर्ग गज के एक चौथे स्थान में और एक कोलनी (Colony) बसाने का प्रबंध हो गया है।

इस प्रकार सुहृत् वर्ग के लिए तीन चार आधुनिक 'हाउसिंग कोलनी' खड़ा करने का मेरा संकल्प सफलता पूर्वक रूप धारण कर रहा है। यहाँ पर सभी वर्गवाले एक कुटुँब की तरह मिला जुला जीवन व्यतीत कर सकेंगे। यह गृह निर्माण योजना दिन पर दिन विकास करती जा रही है। लोग अपने जीवन का आधा समय मकानों में बिताते है, अतः उन्हें सब तरह की सुविधाओं के साथ, हवादार और प्रकाशमय बनवाने की आवश्यकता है। वर्तमान नगरों के चारो तरफ़ इस प्रकार की बस्तियों का निर्माण अत्यन्त हितकर समझा जाता है।

तंग और गन्दी गलियोंवाले मुहल्लों में ही समाज विरोधी अनैतिक दुश्चरित्र जड़ जमाय रहते हैं। हमारी सरकार ऐसे गन्दे मुहल्लो को हटाकर साफ़ सुथरे निवास गृह गरीब लोगो के लिए और कम आमदनी वाला के लिए तैयार करने की कई योजनाएँ कार्यान्वित कर रही है। यह हर्ष का विषय है।

निवास गृहो की कमी के कारण बंबई जैसे नगरो में पगड़ी लेने की कुप्रथा फैली हुई है। जहाँ-जहाँ आबादी बढ़ रही है उन सभी स्थानों में यही दशा देखने में आती है। अतः शिक्षित और धनिक वर्ग इस विषय पर ध्यान दे कर 'सहकारी गृहनिर्माण सस्थाओं' की स्थापना करे और साधारण जनता को मार्ग बतलावे।

४७

# प्रकृति का प्रकोप और रक्षा के यत्न

बिहार भारत के गरीब प्रदेशो में से एक है। नदियों के निकटवर्ती स्थानो को छोड़कर शेष भभाग पर खेतीबारी वर्षा के आधार पर ही की जाती है। प्रायः प्रतिवर्ष नदियों में बाढ आती है, जिससे विस्तृत क्षेत्र नष्ट हो जाते हैं। १९६६ और १९६७ में वर्षाभाव के कारण अकाल पड़ गया था। बिहार की जनता जो पहले ही से दरिद्र थी अकाल से बहुत पीडित हो गई। किंतु ग्रामीण प्रजा में आत्म-सम्मान की भावना अधिक मात्रा में पायी जाती है, अतः उसने भीख माँगने की अपेक्षा भूख से तड़प-तडप कर जान दे देना श्रेष्ठ समझा। ऐसे मानधनियों की रक्षा शीघ्रातिशीघ्र होना अनिवार्य था; साथ ही प्रान्त भर की रक्षा का भी प्रबन्ध महीनो तक चलाते रहना आवश्यक हो गया। परिस्थिति इतनी विकट हो गयी कि खाद्यान्न के अतिरिक्त कपड़े लत्ते, दवादारू तथा बरतन बासन तक पहुँचाने की जरुरत पड गई।

सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाशनारायण की अध्यक्षता में बिहार क्षाम निवारण संघ ('बिहार रिलीफ कमिटी') की स्था-

पना हुई उन्होने निवारणचर्या बड़े पैमाने पर आरंभ कर दी। करोड़ों रुपयो की सहायता उनके पास पहुँच गयी। सैकड़ों स्वय सेवक कार्यकर्ता जुट गये; आवश्यक वस्तु सामग्री की मानो वर्षा भी हुई। १९६७ के एप्रेल में श्री जयप्रकाशनारायण ने हैदराबाद पहुँच कर अकाल पीडितो के कष्टों का वर्णन किया और सहायता की याचना की। उनकी इच्छा पर आन्ध्र प्रदेश मे काम करने के लिए एक अलग 'रिलीफ़ कमिटी' बनी जिस के मुख्य मन्त्री श्री ब्रह्मानन्द रेड्डी तथा एच्-एच् निजाम सरक्षक बने और जयप्रकाश जी स्वय अध्यक्ष रहे। मैंने उसका संमान्य मन्त्री (Hony. Secretary) का काम संभाला। नकद धन तथा अन्य वस्तु सामग्री वसूल करने का मैंने एक कार्यक्रम बनाया और उसके अनुसार सामाजिक संस्थाओं, कार्यकर्ताओ, उद्योगपतियों, व्यापारियों तथा अन्य धनिको से मिलकर कार्य आरंभ कर दिया। सबके सहयोग से हमारे यत्न बहुत कुछ सफल हुए।

आरंभ में हम ने अपनी तरफ से पचास अन्नसत्र (Feeding Centres) चलाने का निश्चय किया। इस का प्रबन्ध करने के लिए हमारे दो कार्यकर्ता: श्री विजयचन्द जी और श्री माणिक्यराव जी विहार भेज दिये गये। उन्होने शहाबाद जिले के भगवानपूर तालूका में स्थित पहाड़ी प्रदेश में क्षामपीडितो को खिलाने के लिए २० निश्शुल्क भोजनालय खोल दिये। श्री परमहंसराय, श्री सत्यनारायण सिन्ह, श्री अनिरुद्ध पाण्डेय आदि कई कार्यकर्ता तथा स्वयं सेवकों ने इस कार्य में हाथ बँटाया था।

जुलाई १९६७ में मैं ने सपत्नीक विहार पहुँच कर वहाँ पर होनेवाले सेवा-कार्य का निरीक्षण किया। मैं ने देखा कि विहार

की जमीन बड़ी ही उपजाऊ है, और बहुत कम गहराई में ही पानी के स्रोत मिल जाते है। यदि कुएँ और नलवाले कुएँ (Tube Wells) पर्याप्त संख्या में खोदे जायँ तो इस प्रदेश में अकाल का उपद्रव हमेशा के लिए दूर किया जा सकता है।

'बिहार रिलीफ कमिटी' के संमान्य मन्त्री श्री सिद्धराज डड्ढा से बातचीत करते हुए मैं ने यही राय दी कि बिहार के ५० लाख एकड जमीन में यदि कुएँ खोदे जायँ तो अकाल की पीड़ा से सदा के लिए छुट्टी मिल जायगी। श्री जयप्रकाशनारायण तथा कमिटी के अन्यान्य सदस्यों को मेरी यह सूचना बहुत जँच गयी। उन्होंने इस का स्वागत किया। इसलिए हमारी कमिटी ने भोजनालय चलाने के साथ साथ कुएँ खुदवाने का काम भी अपने हाथ में लेने का निश्चय किया। जब बरसात शुरु हुई तो भोजनालय चलाने का क्रम बंद किया गया। 'रिलीफ फण्ड' मे से बचे हुए ३ करोड़ द्रव्य का विनियोग कुएँ और नलवाले कुएँ खुदवाने के लिए किया जाने लगा।

कमिटी की तरफ़ से २० अन्न सत्र चलाने के पश्चात् हमारे पास १,७५,००० की बचत रह गई। आन्ध्र प्रदेश ने कुल मिला कर इस क्षाम निवारण कार्य के लिए ८ लाख रुपये जमा किये थे। बची हुई रकम को, जैसे कहा गया, कुएँ खुदवाने में लगाने का निश्चय हुआ था।

हमारी कमिटी ने रु. २४०० की दवाएँ भेजी, चिकित्सालय पर रु. २,६५,००० खर्च किये, रु. २८४६ के नूतनवस्त्र भेजे और रु. २०,००० पुराने कपडों के वितरण पर व्यय किये। इस के अतिरिक्त ६५ वाँगनो में चारा भेज कर मरणासन्न पशुओं

को बचाया गया । आन्ध्र प्रदेश कांग्रेस कमिटी ने ११,००० बोरे चावल, रु. २४,५०० के वस्त्र, और रु. २२,५०० नकद का अनुदान दिया । हमारे प्रचार तथा सेवा कार्यक्रम का आन्ध्र प्रदेश भर में बड़ा प्रभाव रहा । हैदराबाद स्टेट बैंक के कार्यकर्ताओं ने रु. २३,३६२ मुख्य मन्त्री के रिलीफ़ फ़ण्ड के लिए दान में दिये; और तिरुपति के देवस्थानम् ने ५०,००० रुपये दिये । जहाँ कहीं हम ने हाथ फैलाया हमें आशातीत दान प्राप्त हुए । कई महानुभाव तो अपने आप ही हमारे पास पहुंचे और बड़ी बड़ी रकमें दान में दीं । हमारे हिसाब से तो आन्ध्र प्रदेश ने लगभग १५ लाख रुपये वसूल कर कष्ट निवारण कार्यक्रम में खर्च कर दिये, इस काम में हाथ बँटाने के लिए हमारी कमिटी ने १२ सामाजिक कार्यकर्ताओं को तथा १० डाक्टरों को बिहार भेजा । गुजरात के भूतपूर्व गवर्नर और हमारी कमिटी के उपाध्यक्ष श्री मेहँदी नवाज जंग ने इस सेवा-कार्य में आरंभ से लेकर अंत तक बड़ी ही तत्परता दिखायी । श्री उत्तमचन्द चण्डीराम ने–जो कि हमारी कमिटी के संयुक्त मंत्री थे, इस कार्य में भरपूर सहयोग दिया था ।

हमारे देश में कई भिन्न भिन्न मतवाले हैं । परंतु संकट के समय हम सब अपना अपना भेद भाव छोड़ एक हो जाते है और उस के निवारण में अपनी सारी शक्तियाँ लगा देते हैं । यह अनेक अवसरों पर प्रमाणित हुआ है ।

बिहार प्रदेश के तत्काल मुख्य–मंत्री श्री महामाया प्रसाद सिन्हा ने हमारे सेवाकार्य की भूरि भूरि प्रशंसा की । अपने पत्र में उन्होंने यों लिखा :—
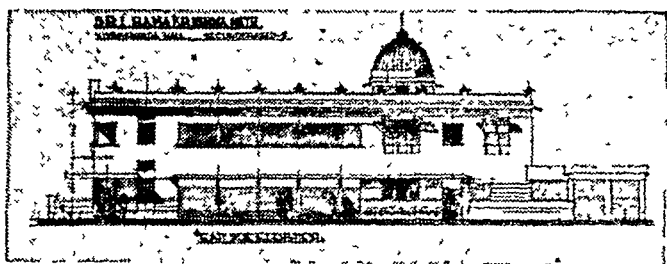
स्वामी विवेकानन्द भवन, सिकिंदराबाद।
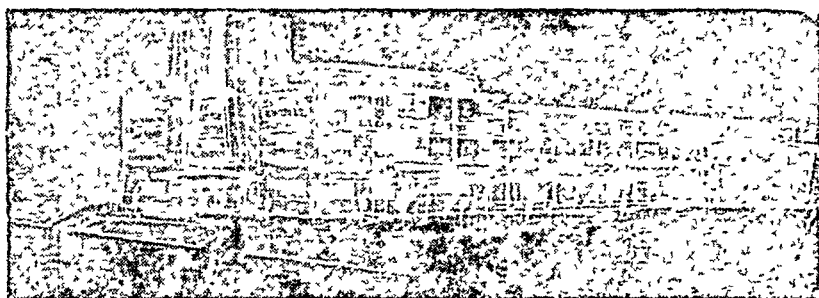
कच्छी मित्र-मंडली, हैदराबाद, का भवन
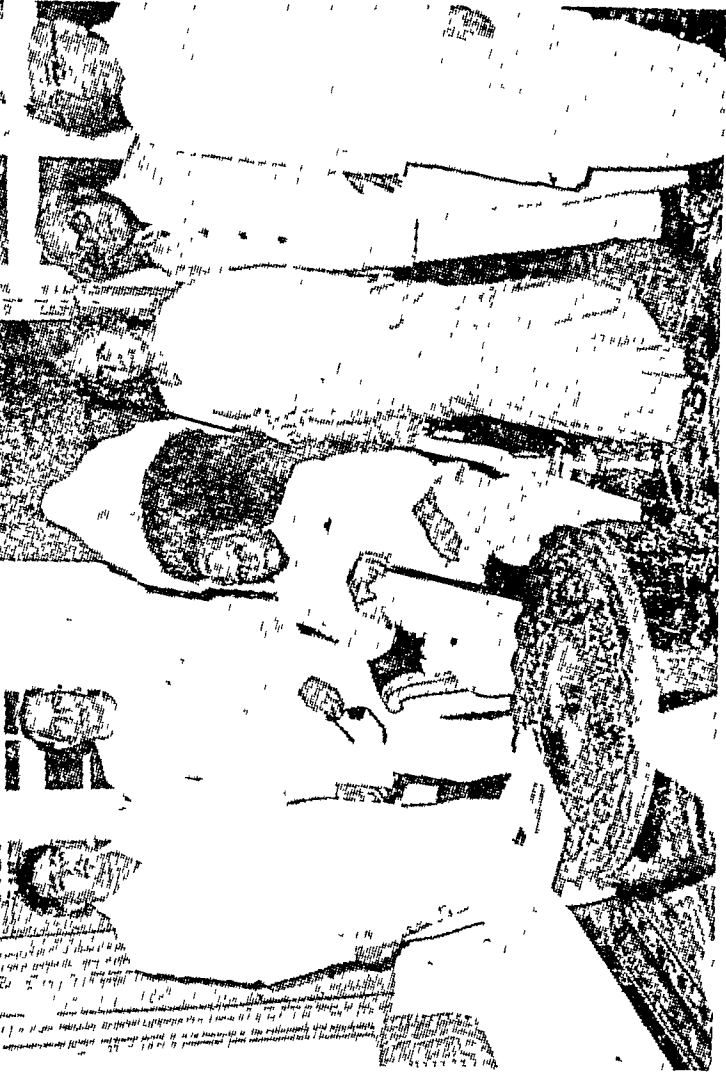
आ० प्र०, स्टेट कौन्सिल आफ़ चैल्ड वेल्फ़ेर के सदस्य राष्ट्रपति श्री वि. वि. गिरि के समक्ष में १९७२.

(बाईं ओर से) १. ठाकुर वि. हरिप्रसाद-भूत पूर्व सम्मान्य मंत्री, २. डा. तिरुमलराव-सम्मान्य मंत्री, ३. राष्ट्रपति, ४. श्रीमती जुबेदा बीगम, एम. ए., ५. अनन्तरामन-उपाध्यक्ष, ६. ग्रंथकर्ता-सम्मान्य कोषाध्यक्ष ।

"बिहार राज्य की जनता और सरकार 'आन्ध्रप्रदेश विहार रिलीफ कमिटी' के बहुत कृतज्ञ है जिस ने नकद द्रव्य और चीज वस्तुओं के अनुदान के साथ साथ खाद्यान्त की उपज बढाने के संबंध मे अमूल्य परामर्श देकर हमारी सहायता की है।"

हमारे कार्य के संबंध मे श्री जयप्रकाश नारायण ने भी दो पत्र लिख भेजे थे; उल्लेख के योग्य होने के कारण उन की यथा तथा प्रतिलिपियाँ नीचे उद्धृत की जा रही है :—

(१)

बिहार रिलीफ़ कमिटी

केन्द्र कार्यालय,
सदाकत आश्रम. पटना–२०
दि. २ अगस्त १९६७.

प. सं: १७९३०

प्रिय श्री टोकर्शी भाई,

पिछले महीने के आरभ में जब आप विहार पधारे थे, मैं उपस्थित न था, इस का मुझे वड़ा खेद है।

आप लोगों ने बिहार की सहायता के लिए जो अद्भुत कार्य किया है, उस के लिए मैं व्यक्तिगत रूप से आप के प्रति और आप की कमिटी के सदस्यों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। कृपया सभी सदस्यो, पोषकों, तथा दाताओं को मेरा आभार और धन्यवाद पहुँचा दीजिए।

आप के बिहार भ्रमण का सुंदर रिपोर्ट अभी अभी मेरे हाथ लगा। आप की इस सूचना की चर्चा श्री सिद्धराज जी ने मुझ से की है कि भगवानपुर के सत्र में वचे हुए द्रव्य का उपयोग

सिंचाई के साधनों के विकास के लिए किया जाय। हम लोगों ने इस सुझाव को मान लिया है, उस पर अवश्य अमल किया जायगा।

आज सवेरे हैदराबाद से ८ डाक्टर और पहुँच गये। उन में दो भगवानपुर ब्लाक में शेष जिलों में भेजे जा रहे हैं।

शुभकामनाओं के साथ,

आपका हितैषी

(ह) जयप्रकाशनारायण

सेवा में—

श्री टोकर्शीलाल जी कापडिया,
संमान्य मंत्री
विहार रिलीफ़ कमिटी (आं. प्र.)
बि–१–१७४, फ़तेह मैदान रोड़,
हैदराबाद।

(२)

विहार रिलीफ़ कमिटी

केन्द्र कार्यालय,
सदाकत आश्रम, पटना–१०.
दि. ९ सितंबर, १९६७

प्रिय श्री टोकर्शी भाई,

सेवा ग्राम में श्री प्रभाकर जी से मुझे मालूम हुआ कि विहार रिलीफ कमिटी की आन्ध्र प्रदेश शाखा की बैठक अब तक हुए कार्य का सिहावलोकन करने के लिए १० सितंबर को होने जा रही है। इस मौके पर मैं आन्ध्र प्रदेश के किये सेवाकार्य पर

अपना परम सन्तोष व्यक्त करना चाहता हूँ; मुख्य मन्त्री तथा उनके सहयोगियों ने उदारतापूर्वक कमिटी को जो सहायता पहुँचायी वह श्लाघनीय है। मुझे इस वात का भी बोध है कि कमिटी की अधिकांश सफलता आप की कार्यनिरति का फल है। आन्ध्र प्रदेश के दानी महानुभावो को मैं फिर एक बार धन्यवाद देना चाहता हूँ। जो कई स्वयं सेवक अपने समय तथा सुख सुविधा की हानि उठा कर बिहार के दुखी जनों की सेवा के लिए दौड़े आये है उन के प्रति भी मै अपनी कृतज्ञता व्यक्त करना चाहता हूँ। एच. इ. एच. निजाम को भी मेरे हार्दिक धन्यवाद पहुँचाइयेगा। जिन्होने उदारता पूर्वक कमिटी का पोषक रहना स्वीकार किया।

मै यह आशा करता हूँ कि इस मास के अंत तक हमारा अधिकाश सेवा-कार्यक्रम समाप्त हो जायगा। हमारा सिंचाई के प्रवन्ध का कार्य अलबत्ता दो वर्ष तक, यदि साधन संपत्ति प्राप्त हुई तो अधिक काल तक भी, चलने वाला है। इस के अंतर्गत कुएँ और नलवाले कुएँ (Tube Wells) खोदना, पत्थर फोड़ना (Drilling & Blasting) आदि काम होंगे। मै आशा करता हूँ कि आन्ध्र प्रदेश की जनता बिहार रिलीफ कमिटी की मदद करना चालू रखेगी जिस से वह इस परम आवश्यक और स्थायी सहायक कार्य को पूर्ण कर सकेगी।

शुभ कामनाओ के साथ,

सेवा में— भवदीय

श्री टोकर्शीलाल जी कापडिया, (ह.) जय प्रकाशनारायण

समान्य मत्री,

बिहार रिलीफ कमिटी, हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश।

## कोयना भूकंप में पीडितों की सहायता

जब बिहार में क्षाम देवता का अकाण्ड ताण्डव हो रहा था तब आन्ध्र प्रदेश में 'रिलीफ़ कमिटी' आयोजित हुई। जिन दिनों यह कमिटी बिहार में बचाव का काम कर रही थी, ठीक उसी समय १९६७ में महाराष्ट्र के कोयना प्रान्त में भारी भूकंप हुआ जिस के कारण सैकड़ों मकान गिर गये और लोग निराश्रय हो गये। वहाँ पर भी गरीब लोगों को ही अधिक क्षति पहुँची। बिहार रिलीफ़ कमिटी का सेक्रेटरी होकर मै काम कर ही रहा था, कोयना के विषय में भी तुरन्त रक्षण कार्य आरंभ करने का मैंने निश्चय किया। एतदर्थ एक उप-समिति बनाई गई।

कोयना के भूकंप-पीडितों की सहायता के लिये इस उप-समिति ने ५ हजार रुपये जमा कर महाराष्ट्र के मुख्य मंत्री श्री वि. पी. नायक के पास पहुँचा दिये थे।

## गुजरात में बाढ़-पीडितों की रक्षा

गुजरात की तापी नदी में पूर आने के कारण बहुत से गाँवों को भारी नुकसान पहुँचा। सूरत के आस-पास के ग्रामों में लोगों की दशा बहुत शोचनीय हो गयी थी। हैदराबाद गुजराती प्रगति समाज और सिकंदराबाद गुजराती सेवा मंडल दोनों ने मिलकर इन लोगों के सहायतार्थ एक रिलीफ़ कमिटी बनाई। मैं और श्री रमणलाल कडाकिया उस कमिटी के संयोजक चुने गये। हम लोगों ने ८०,००० रुपये वसूल किये थे। इस धन से ग्रामीण लोगों के पुनरावास के लिये मकान बनवाकर देने का निश्चय हुआ। फलतः श्री रमणलाल कडा-किया, जमनादास आशर और मैं गुजरात जा कर श्री रविशंकरजी

से मिले और अपने निश्चय के अनुसार चार ग्रामों का पुनर्निर्माण कार्य अपने हाथ में लिया। इन ग्रामों के लिये ऊँचाई पर जगह चुनली गयी और मकानो के लिये शिलान्यास का काम श्री रवि-शकरजी के हाथ संपन्न कराया गया। जब मकान बन कर तैयार हुए, तो आध्रप्रदेश के गवर्नर श्री खडूभाई देशाई ने उनका प्रारभोत्सव किया। साधारण परिस्तिथि मे सस्थाओ और समि-तियो का काम अपने अपने गाँव, शहर अथवा नगरो तक ही, सकट सीमित रहता है, किन्तु देश में विकट संकट उपस्तिथ होने पर लोगो की दृष्टि इन सीमाओं को पार कर भारत के कोने कोने तक प्रसारित हो जाती है। बिहार मे क्षाम निवारण का कार्य अधिकाश में अन्य प्रांतों की सस्थाओ ने ही सभाला था। कोयना के भूकंप के समय भी बाहरी प्रातो ने पर्याप्त सहायता पहुँचाई थी। इस प्रकार के उदार विचार तथा विशाल दृष्टिकोण भारत की राष्ट्रीय एकीकरण तथा उज्वल भविष्य के लिय अत्यत हितकर साबित होगा।

४८

## तूफान से ध्वस्त आन्ध्र प्रदेश में रक्षण-कार्य

सन् १९६९ में जब से 'आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय रिलीफ कमिटी' बनी तब से मैं उसका आनरेरी सेक्रेटरी बना रहा। गवर्नर खंडूभाई देशाई उसके संरक्षक थे और श्री प्रभाकरजी उसके अध्यक्ष। श्री सी. वि. चारी और सुरेन्द्रमल लुनिया उसके संयुक्त मंत्रि रहे। हर एक के जीवन में कभी न कभी अपनी अंतश्शक्ति दिखा देने का अवसर आता है। इस कमिटि के विषय में भी यही बात हुई। प्रकृति मनुष्य के प्रति दयालु होते हुए भी कभी कभी विकृत रूप धारण कर विनाश लाती है। ऐसे अवसरों पर मनुष्य के सद्गुण कसौटी पर कसे जाते हैं।

१९६९ में बाढ़ और तूफानों ने मिलकर आन्ध्र प्रदेश के कुछ हिस्सों को ध्वस्त कर दिया। ५ लाख एकड़ में फैली हुई धान की फ़सल मिट्टी में मिल गयी। लगभग २००० मनुष्यों की जानें चली गई। यातायात के मार्ग बेकार हो गये। दो लाख मकानों के गिर जाने से लाखों लोग निराश्रय हो गये, रहने को कहीं छाया तक न रही। कुछ गाँवों में मनुष्य अपने मवेशियों

के साथ पूर में बह गये। ऐसे हृदय-विदारक समाचार सुन कर दिल दहल उठा। सरकार की ओर से होने वाला रक्षणकार्य कितना ही बड़ा क्यों न हो इस विध्वंस को देखते हुए वह अत्यन्त अल्प ही मालूम हुआ। गुजरात में बाढ़ के समय मैं ने सहायता पहुँचाने का प्रबध किया था, इस कारण से इस बार भी 'सर्वोदय रिलीफ़ कमिटी' की ओर से सहायता आयोजित करने का भार मुझ ही सौंपा गया। यह कार्य बड़ा ही विस्तृत और श्रमसाध्य था, किंतु ऐसे सार्वजनिक-सेवा करने के अवसरों पर मेरा उत्साह द्विगुणित होता रहता है। यदि निश्चित कार्यप्रणाली हो और कार्यकर्ता सच्चाई बरतें तो लोक सेवा के लिए आगे बढ कर धन देने वाले दाताओं की कमी नही होती। अब तक के जीवन मे मै ने इसी सत्य का अनुभव किया है।

आरंभिक दशा मे हम ने निश्चय किया कि ८ आवास तैयार किये जयँ; जो सज्जन ४००० रुपये दान में दे उस का नाम उन आवासों के पास फलक पर प्रदर्शित किया जाय, नये और पुराने कपड़े इकट्ठे किये जायँ, हर एक कुटुब के लिए १५ रुपये के बरतन बासन और आवश्यक दवाएँ दी जायँ। बुच्चिरे-ड्डिपालेम् और ब्राह्मणपल्ली में इस योजना को कार्यान्वित करने के निमित्त हमारी कमिटी ने २५ हजार रुपये का अनुदान मंजूर किया। यह आवास-निर्माण बराबर हुआ या नही—यह जानने के लिए हम ने उन प्रदेशो को जाकर देखा। हम इस विषय में काफी सावधान रहे कि दान में दिये धन का सदुपयोग हो रहा है या नही और किफ़ायत बरती जा रही या नहीं।

सर्वोदय रिलीफ़ कमिटी के अध्यक्ष श्री प्रभाकर जी, श्री उम्मेत्ताल केशवराव, श्री रमणलाल कडाकिया और श्री रामजी

माणिक राव के साथ हम सब से पहले खम्मम् पहुँचे। कृष्णा तथा खम्मम् जिलों में ही सर्वाधिक विनाश हुआ। स्थानिक कलेक्टर से मिल कर हम ने सारी परिस्थिति अवगत कर ली। हम ने उन्हें सुझाया कि बाढ़ में जो ग्राम बह गये थे उन के आजू बाजू में ही नये आवास बना दिये जायँ, और लोगों में अविलंब पर्याप्त वस्त्र और आवश्यक बरतन बाँट दिये जायँ। हम ने उन को सूचित किया कि हमारी कमिटी शक्तिभर सहायता देने को तैयार है। कलेक्टर ने हमारी यह सूचना मान ली कि आवास बनवाने के लिए अनुकूल ऊँची जमीन प्राप्त करने में सरकारी अधिकारियों की तरफ़ से देरी होना संभव है, अतः उस की प्रतीक्षा करते रहने की अपेक्षा जमीन के मालिकों से मिल कर प्रत्यक्ष परामर्श के द्वारा जमीन प्राप्त की जाय। नदी के दोनों तरफ़ के उपजाऊ खेत पाँच पाँच फुट रेत के ढेरों से पट गये थे। हम ने सुझाया कि बुलडोजर मंगा कर सरकार उन खेतों को शीघ्र साफ़ करवा दे।

वहाँ से हमारा दल मदिरा नामक शहर पहुँचा। यहाँ की एक पाठशाला भवन में बुच्चिरेड्डिपालेम् के बचे हुए निवासियों को ठहराया गया था, वह गाँव का गाँव बाढ़ में बह गया था। यहाँ हमने उन विस्थापितों को फिर से बसाने तथा उन्हें आवश्यक सहायता पहुँचाने की योजना पर अधिकारियों और कार्यकर्ताओं से चर्चाएँ की। तदनंतर हम ब्राह्मणपल्ली देखने गये। यहाँ की पचास झोपड़ियाँ पानी में ऐसे बह गईं कि उनका निशान तक बाकी न रहा। यहाँ हमने गाँव से पश्चिम की तरफ जो ऊँचे स्तर की जमीन थी उसे नये आवास बनवाने के लिए खरीद लेने के प्रश्न पर विचार किया।

'बीहार रिलिफ़ फ़ण्ड' के लिए नगर की एक सभा में चन्दा मांगते हुए श्री जयप्रकाश नारायरण ।

ान्ध्र प्रदेश बिहार रिलीफ कमिटी के सम्मानित मत्री श्री टि. एल. कापडिया सार्वजनिक सभा मे भाषण दे रहे है । श्री जयप्रकाशनारायण सामने बैठे है ।

बिहार रिलीफ़ कमिटी के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण और लेखक जो कि कमिटी के संम्मानित सचालक हैं, कार्यक्रम पर विचार कर रहे हैं।

उसी दिन संध्या समय हम लोग बुच्चिरेड्डिपालेम पहुँचे। यह पूरा गाँव बाढ में बह गया था, केवल दो चार पेड़ चिह्न के रूप में इधर उधर बचे रहे। बस्ती के कुल २२६ निवासियों में से ४२ मनुष्यों को जल का बहाव खीच ले गया। शेष व्यक्तियों को मदिरा के हाईस्कूल भवन में टिकाया गया। गाँव के पूरब की तरफ़ एक ऊँची जगह थी जिस के मालिक ने उसे वाजिब दाम पर पुनरावास के लिए बेचना स्वीकार किया। यहाँ एक तालूका सर्वोदय रक्षण-समिति बनायी गई और इन दोनों गाँवो में पुनरावास खर्च के लिए २६,००० रुपये का अनुदान स्वीकृत किया गया। उस राशि में से २५,००० रुपये उन दो गाँवों में व्यय हुए। गुटूर जिले के वेटपालेम तथा मुनम्बरी गाँवों के लिए १०,००० रुपये दिये गये। श्री वेंपटि सूर्यनारायण और बि. आंजनेयुलु को पुनरावास कार्य के संचालन में मदद पहुँचाने के लिए एक स्थानिक उपसमिति भी बनाई गई। यहाँ से हम लोग कोसरा नामक एक और ग्राम देखने गये थे। बाढ़ में उस का अधिकाश भाग विनष्ट हो चुका था। लगभग ४० निवासी बाढ़ में बह गये। गडेपल्ली नामक एक और देहात इसी प्रकार नष्ट हो गया। इन प्रदेशों के गृह-विहीन असामियों को एक ऊँची जगह पर आवास का स्थान दिलाया गया। यह सारा रक्षण-कार्य सर्वोदय रिलीफ कमिटी की ओर से संचालित हुआ था, जिस का मैं सम्मानित मत्री रहा। इस कार्य में कमिटी के संरक्षक आं. प्र. के गवरनर श्री खण्डूभाई देशाई, अध्यक्षः श्री प्रभाकर जी, उपाध्यक्षः श्री एस. वि. नायक, सयुक्त मंत्रीः श्री सुरेन्द्रमल लुनिया, श्री सि. वि चारी आदि महानुभावों ने पूर्ण सहयोग किया था। मदिरा पंचायत समिति के अध्यक्षः श्री वि. प्रताप

रेड्डि, स्थानिक रिलीफ़ कमिटी के सधाता डा. वेंपटि सूर्यनारायण तथा तेनालि उपसमिति के सधाता श्री बि. आंजनेयुलु ने भी महत्व पूर्ण सहयोग प्रदान किया ।

हम लोगों ने चार दिन घूम-घूम कर खम्मम्, कृष्णा और गुण्टूर जिलों में कुल ३२ गाँवों का निरीक्षण किया जहाँ तूफ़ान और बाढ़ से अत्यधिक विनाश हुआ था। हमारी यात्रा एक हजार वर्गमील से भी अधिक प्रदेश में हुई थी। हम ने देखा कि लगभग ८ हजार मकान ढ़ह गये, करीब २ हजार मनुष्यों की जान चली गई, दो लाख ढोर बह गये, और ५ लाख एकड़ के खेतों पर की फ़सल मिट्टी में मिल गई। इस के अतिरिक्त दो लाख मकान निवास के योग्य न रहे। विशेष रूप से निपट गरीब ही इस विनाश के शिकार बन गये हैं, उन की अपनी कोई चीज़ बाकी न रही। केवल उन के हृदयों में एक यही विश्वास बाकी रह गया कि धनी मानी सज्जन उन की सहायता के लिए अवश्य ही दौड़ पड़ेग। अक्सर यह देखा गया है कि घाव लगने में कोई देर नहीं लगती, किन्तु उस के भरने में बड़ा ही विलब लगता है। ऐसे अवसरों पर सरकारी सहायता पर निरभर रहना बेकार है। समाज का एक अंग जब विपदग्रस्त होता है तब समूचे समाज का यह कर्तव्य हो जाता है कि तन मन धन से उस की रक्षा का प्रबन्ध करे। प्रकृति में कितनी तीव्र और विस्तृत विध्वस शक्ति छिपी हुई है इस का प्रत्यक्ष दर्शन मुझे इसी अवसर पर हुआ। महान् से महान् शक्तियों का भी घमड वह क्षण भर मे चूर चूर कर सकती है। अतः मनुष्य को किसी बात का गर्व करना नही चाहिए। प्रकृति का प्रकोप उपस्थित होने पर शीघ्र से शीघ्र

सहायता पहुँचाने के लिए एक स्थायी प्रबन्ध कर रखना आवश्यक
मालूम होता है। ऐसी योजना के द्वारा ही पीडितों की समुचित
सेवा साध्य हो सकती है।

४९

## संसार की यात्रा के संस्मरण

कुछ नूतन विषय जानने की, नये प्रदेश देखने की और नई जिम्मेदारी निभाने की उत्सुकता मुझ में बाल्यकाल से ही रही है। यही कारण है कि जब मैं बीस साल का भी न रहा, बर्मा जाने का साहस किया था। संसार की यात्रा कर आने का मैं वर्षों से स्वप्न देखता आया हूँ, किंतु फ़ुरसत नाम को भी न मिलती थी। व्यवसाय तथा सार्वजनिक सेवा संबंधी मेरे उत्तरदायित्वों का बढ़ते जाना ही इस का कारण है। किन्तु नदी के उस पार पहुँचने की अभिलाषा ले कर जल के सूख जाने की प्रतीक्षा में खड़े रहना बेकार है। अतः जुलाई १९७० में अवकाश पाते ही मैं संसार की यात्रा पर चल पडा। २१–७–१९७० से लेकर ६५ दिन तक का हमारा यात्रा-कार्यक्रम निश्चित हो गया। भाई बन्धुओं के साथ मिल कर भोगने पर साधारणतः हमारा आनन्द द्विगुणित हो जाता है। इस यात्रा में मेरे साथ मेरी पत्नी श्रीमती अमृतबाई, श्री चुन्नीलाल अग्रवाल और उनकी पत्नी श्रीमती प्रतिभा बहिन, तथा श्री पुल्ला रेड्डि और उन की पत्नी श्रीमती नारायणम्मा संसार के देश देखने के लिए चल पड़े। इस प्रकार

छे व्यक्तियों का हमारा यात्रीदल अत्यन्त आनन्द के साथ संसार के देशों में भ्रमण कर आया।

## तेहरान

ईरान देश की राजधानी तेहरान में हम लोगों ने सर्वप्रथम पड़ाव डाला। इस देश का पुराना नाम फारस था, इस का इतिहास सभ्यता और सस्कृति प्राचीन है; किन्तु वर्तमान मे इस ने आधुनिक सभ्यता ग्रहण कर ली। आधुनिक शैली पर निर्मित तेहरान नगर को छोड़ कर देश के शेप भागों में दरिद्रता का ही नग्न दृश्य दिखाई दिया। ठेठ राजधानी-नगर में अब भी महिलाएँ अपने को बुर्के में छिपा कर घूमती दिखाई देती हैं। ईरान के शाही खजाना हीरे, लालमणियाँ, पन्ने आदि कितने ही अमूल्य रत्नो से भरा पड़ा है, शाह का यह ऐश्वर्य वस्तुशाला में रख कर दर्शकों को दिखाया जाता है। परन्तु इस रत्न राशि का उपयोग यदि लोक हित के लिए किया जाता तो ईरान की दरिद्रता अवश्य मिट जाती। इस देश के निवासी स्वस्थ और उत्साही दिखाई देते है।

## एथेंस

हमारा दूसरा पडाव ग्रीस की राजधानी एथेंस रही। सारे यूरोप में व्याप्त सभ्यता का मूल स्रोत ग्रीक सभ्यता ही माना जाता है। इस नगर में हम ने ग्रीक सभ्यता के चिह्न स्वरूप कितने ही भवन और प्राचीन मंदिरों के अवशेप देखे है जो वहाँ के तत्ववेत्ता, गायक, कलाकार तथा देवी देवताओ की परंपरा के प्रतीक है। अरस्तू और सुकरात के इस जन्मस्थान में हम ने एक

ऐतिहासिक नाटक भी देखा। ऐतिहासिक नाटक खेलने वाले अभिनेता और विशेषज्ञ लोग प्राचीन वेषभूषा और वातावरण की सृष्टि करने में विशेष निपुणता दिखाते है। देशवासियों में पर्याप्त आज्ञापालन और संगठन है। इस कारण से वहाँ पर वाणिज्य और उद्योग धंधों में विशेष प्रगति दिखाई देती है। गरीबी हमें नजर आई।

## रोम

प्राचीनकाल में रोमवालों ने ग्रीस देश पर अधिकार कर लिया था, परन्तु ग्रीक सभ्यता तथा संस्कृति ने रोम पर ऐसा गहरा प्रभाव डाला कि उसे इतिहासकारों ने रोम पर ग्रीस का ही विजय मान लिया था। रोम के इतिहास में एक युग ऐसा प्रभावशाली रहा कि रोम साम्राज्य अधिकार, सम्पत्ति और प्राभव के शिखर पर पहुँच चुका था और साम्राज्य के कोने-कोने से धन संपत्ति राजधानी नगर में आकर एकत्रित हो गयी थी। उन दिनो रोम नगर कला, शिल्प, और स्थापत्य का केन्द्र स्थान बन गया था। अतः इस नगर के दर्शनार्थ आनेवाले यात्रियो का तांता ही लगा रहता है। वेनिस के समान यहाँ पर भी यात्रियों को जेबकट और प्रवचको से सावधान रहना पड़ता है, विशेषरूप से पासपोर्ट (Pass port) तथा कीमती चीज़-वस्तुओं पर निगरानी रखनी पड़ती है। वेनिस में हमें इसका कटु अनुभव हुआ था। वेनिस की तुलना कुछ अशो में हमारे श्रीनगर से की जा सकती है। यहाँ पर नाले ही सड़को का काम देते हैं और लोग एक जगह से दूसरी जगह नावों पर ही आया जाया करते हैं। शेकस्पियर कवि ने 'मर्चेंट आफ वेनिस' लिखकर वेनिस नगर को अमर कर दिया।

## स्विट्ज़रलैंड

जिस प्रकार काश्मीर भूलोक का स्वर्ग माना जाता है, उसी प्रकार स्विटजरलैण्ड यूरोप का स्वर्ग समझा जाता है। यह देश घड़ियों के व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध हो गया है, संसार भर के यात्री इसे देखने के लिये लाखों की सख्या मे आते है। यहाँ के प्राकृतिक दृश्य अत्याधुनिक होटलो का प्रबन्ध, यातायात के उत्तम साधन, सबसे बढ कर लोगों का सौजन्य-ये सब अन्यत्र उपलव्ध नही है। दिन भर में दो सौ मील की यात्रा कर हम ने प्राकृति सौन्दर्य का जो अवलोकन किया उससे हमारे नेत्र छक गये, जो अनुपम आनन्द पाया उसमे हमारे हृदय आप्लावित हुए। यहाँ के एक झील के पास कई देशो की सीमाएँ आ मिलती हैं, परन्तु हमारे यहाँ की तरह यहाँ पर सीमा सबधी लड़ाई झगड़े नही है। ससार के विशाल सरोवरो मे से यह एक है, और चारो तरफ़ एक सुन्दर सड़क शोभायमान है। यहाँ की आवादी का आधा हिस्सा वाहर से आकर बसे हुए आगन्तुकों की संतान हैं। अब तो यहाँ पर बसनेवालो पर नियन्त्रण लगा दिया गया है, अतः बाहरवालो को यहाँ आकर स्थिर हो जाना उतना सुलभ नही रहा।

## फ़्रांकफ़र्ट

जर्मनी में हम लोगों ने फ्रांकफर्ट और कई अन्य नगर देखे वाणिज्य और उद्योग धधो के लिए फ्राकफर्ट प्रसिद्ध है। जर्मन लोग यूरपियनो के वीच अपनी स्पष्ट रूप रेखा के साथ अलग दिखाई दे जाते हैं। उनका सौम्य रूप, फुर्तीलापन और सामर्थ्य विलक्षण हैं। उनके चमकते चेहरे, सीधी नाक, और तेज नज़रें

उनको दूसरों से पृथक बतला देती हैं। जर्मन लोगो ने उस देश को अपने अथक परिश्रम के द्वारा वाणिज्य और उद्योगों में सबसे प्रमुख और शक्तिशाली बना दिया। यद्यपि दूसरे महायुद्ध में जर्मनी नष्ट-भ्रष्ट हो चुकी थी, फिर भी लोगों की कार्यपटुता, और सुनिश्चित योजनाओ ने उस देश को [फिर से] ऊपर उठाया है। जर्मन महिलाओं ने भी समर में और शांति में समान रूप से अपने देशानुराग का प्रत्यक्ष परिचय दिया था। इसमें संदेह नही, यदि भारत जर्मनी के दिखाये पथ पर चले तो संसार के श्रेष्ठ दे   में शीघ्र ही स्थान प्राप्त कर सकेगा।

## इंग्लैण्ड

इंग्लैण्ड में हम लोगो ने लन्दन नगर और उसके आस-पास के ऐतिहासिक तथा दर्शनीय सुंदर स्थान देख लिये। इंग्लैण्ड मे लगभग सवा दो लाख गुजराती लोग रह रहे हैं। उनमें अधिकांश लोगो ने अपने निजी मकान भी बनवा लिये है, और ३५ प्रतिशत लोग अपना मोटरकार भी रखते है। भारतवासियों से चलायी जानेवाली दूकानों में आधी दूकानो के मालिक गुजराती है। हमने लन्दन के हवाई अड्डे पर एक गुजराती महिला को काम करते हुए पाया। जब हमने कई हिन्दुस्तानियों को-विशेष रूप से गुजरातियों को यहाँ देखा तो ऐसा लगा कि बीस दिन के बाद फिर से हम अपने देश में आ गये है। लन्दन मे रहते समय हमने होटेल शकना में भोजन किया था (पता: १०७, ग्रेट रसेल स्ट्रीट, वै. एम. सि·  , टाटेनहेम कोर्ट के पास, लन्दन-१) यह होटेल केवल शाकाहार परोसता है जबकि अधिकाश हिन्दुस्तानी होटलों में शाकाहार और मासाहार दोनों साथ-साथ दिये जाते

हैं। गुजराती फ़ेडरेशन और गुजराती समाज ने हमारे स्वागत में एक बड़ा भोज आयोजित किया, और अपना हार्दिक स्नेह व्यक्त किया। इंग्लैण्ड के गुजराती एसोसियेशन के अध्यक्ष श्री नलिनीकाँत पाण्ड्य, मंत्री श्री रामणिक सोलंकी और श्री मूलजी भाई-जे. नागडा से मिलकर हमें बड़ा सतोष हुआ। श्री सोलंकी से मिलना बड़े महत्व की बात थी। वे 'गर्वी गुजरात' नामक एक गुजराती मासिक पत्र का संपादन कर रहे हैं। इंग्लैण्ड में उस पत्र की १६,००० प्रतियाँ वितरित होती है। पत्र का पता–८२ पिल रोड वेम्बली, मिडिल सेक्स, लन्दन) वे बड़े दयालू मिलनसार, और सेवापरायण है, अत· सवके प्रेम पात्र हुए है। लन्दन में आनेवाले किसी भी गुजरा ी को कोई असुविधा या कष्ट न हो इस बात का सोलकीजी हमेशा ध्यान रखते है। उनका व्यक्तित्व ऐसा आकर्पक है कि जो कोई उनसे मिलता हमेशा के लिये उनका मित्र बन जाता।

लन्दन में श्रीमती कुमुद बहिन नाइक से मिलकर हमें विशेष प्रसन्नता हुई, वे हमारे साथ हैदराबाद मे समाजसेवा के कार्यो मे तत्पर रहा करती है। हमें उनकी सुपुत्री डा· श्रीमती देवयानी सावला और उनके पति डा· नवीनचन्द्र सावला से भी मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

ऐतिहासिक और राजनीतिक क्षेत्रों में इंग्लैण्ड बड़ा प्रभाव-शाली देश रहा है, और आज भी वाणिज्य और उद्योगो में वह संसार के प्रमुख देशों में गिना जाता है। इंग्लैण्ड वासियों की सूक्ष्म बुद्धि, कार्यतत्परता और व्यावहारिक दृष्टि विलक्षण है। लन्दन में टयूब रेल्वे यातायात का सबसे सस्ता साधन है। जापान,

यूरोप और अमेरिका के देशों में भी इस तरह के ट्यूब रेल्वे का प्रबन्ध पाया जाता है, किन्तु लन्दन की ट्यूब रेलों की अपनी कई विशेषताएँ हैं। अनेक स्टेशनों पर 'एस्कलेटरर्स' आपसे आप चलनेवाली सीढ़ियाँ) हैं जिससे लोगों को ऊपर नीचे चढ़ना उतरना नही पडता, ये चलती सीढ़ियाँ ही यात्रियों को नीचे उतारती हैं और ऊपर चढाती हैं। नगर के ऐतिहासिक स्थान और अजायबघर आदि हमने घूम-घूम कर देख लिये।

## ऑम्सटेर्डाम (नीदरलैण्डस)

नीदरलैण्डस मुख्यतया दूध-मक्खन के व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ पर गायों को पालने का ढंग देखने के बाद हमें अपने देश में प्रचलित गो-पालन की अत्यन्त दयनीय और हीन-स्थिति पर लज्जित होना पडता है यद्यपि भारत गो-सेवा परायण देश माना जाता है। इस देश मे दूध और मक्खन की बहुतायत पाई जाती है, दूध की बनी तरह-तरह चीजे अधिकांश में बाहर ही भेजी जाती हैं। यहाँ की जमीन समुद्र तल से नीचे है। खेतीबारी तथा बागबानी (Horticulture) की यहाँ पर भारी उन्नति की गई है। फूलों के बड़े-बड़े खेत खेत विशेष उल्लेख के योग्य है। बागबानी के विशेषज्ञ प्लास्टिक और काँच के घेरों में, बनावटी वातावरण पैदा कर फल फूल उपजाते है। यहाँ के फूल संसार के देशों में रवाना किये जाते है। यहाँ की गायें साधारणतया ४० लिटर तक प्रतिदिन दूध देती हैं, जो गाय २० लिटर से कम दूध दे उसे निरुपयोग करार दे कर दूर कर दिया जाता है। दूसरे उद्योग धंधों की भी यहाँ पर वृद्धि हुई है।

वेनिस और श्रीनगर के समान यहाँ पर भी जलमार्ग से याता-यात होता है, मोटार-लॉच (Motor launch) बसों की जगह काम में लाये जाते है। इस समय तो यहाँ पर ८ हजार हिप्पी लोग मोटार-लॉच चलाने का काम कर रहे है। जैसे ही हम होटल में उतरे हमें सावधान कर दिया गया कि हिप्पी जेबकतरों से बचे रहो। द्वितीय महा युद्ध के बाद यूरोप और अमेरिका में हजारों नवयुवक सेना से निवृत्त किये गये। बेंकारी और निराश के अतिरिक्त ये लोग, अनीति, नियमभग और दुश्चरित्र के भी शिकार हो गये है। इसके साथ-साथ मादक वस्तुओ के सेवन की भी इन युवकों को आदत पड़ गयी। संगठित समाज से पलायन करनेवाले ऐसे युवकों का एक अलग वर्ग ही इन देशो में तैयार हो गया। पश्चिमी सामाजिक जीवन में कोई निश्चित लक्ष्य न होने के कारण वहाँ के बुद्धिजीवी, कलाकार तथा शिक्षित वर्ग पुराने सामाजिक संगठन को तोडने पर तुल गये है। इस तरह की अंधाधुंधी के कारण पश्चिम देशों में हिप्पी वर्ग का जन्म हुआ। ये लोग समाज में गड़बड़ी पैदा करते है। उनके विचार सामाजिक क्रान्ति का सवाल उपस्थित करते है। हिप्पियों में थोडे से ऐसे भी है जो समुचित और सुनिश्चित विचार रखते है।

### पॅरिस

पॅरिस नगर जो फ्रांस की राजधानी है। यूरोपीय सस्कृति का केन्द्र स्थान है। हम ने सुन रखा था कि पॅरिस की स्त्रियाँ नित्यप्रति 'फ़ाशन' बदलती रहती है। अतः हमारे यात्रीदल की महिलाएँ उन 'फाशनबुल लेडीस' को देखने के लिए उत्सुक हो

गई। किन्तु हमें इस नगर में ऐसी कोई 'फ़ाशन' बदलनेवाली महिला न मिली। इसके विपरीत हमने देखा कि यहाँ की स्त्रियाँ सादा वेष पहनती हैं और परिश्रम से काम करती है। जिस होटल में हम लोग ठहरे थे उसका संचालन एक महिला ही करती थी, और वहाँ का अधिकांश काम स्त्रियों के हाथ से होता था। यूरोप के सभी देशों में पुरुषों के जैसे ही स्त्रियाँ भी शारीरिक और मानसिक सब तरह का काम करती रहती हैं। इससे उन्हें अपना जीवन-स्तर ऊँचा बनाये रखना तथा अपने देश को स्वयं-समृद्ध बनाना आसान हो जाता है। सभी लोग अपने अपने उत्तरदायित्व पहचान कर ही चलते हैं। दूसरों के साथ उनका बोलना चालना उचित सम्मान के साथ होता है। उनका बरताव हमारे मन और हृदयों पर अविस्मरणीय प्रभाव डाल देता है। पॉरिस नगर अपने सुँदर दृश्य, चित्र और कलात्मक वस्तुओं के संग्रहालयों के लिए प्रसिद्ध है, हमने उन सबका संदर्शन किया। संसारभर के देशों में जो क्रांतियाँ हुई उन सबका मूल स्रोत पॉरिस नगर ही है। यहीं से पहले-पहल समानता, स्वतन्त्रता तथा सौभ्रातृत्व की घोषणा हुई थी।

## यू. एस. ए.

फ्रांस छोड़कर हम लोग विमान यात्रा द्वारा 'अमेरिका संयुक्त राष्ट्र' (U S A) पहुँच गये। यहाँ पर बीस दिन रह कर हमने, न्यूयार्क, वाशिंगटन, सिन्सिनाटि, चिकागो, बफेलो, लास वेगास, शानफ्रान्सिस्को, लास एंजेल्स, होनेलूलू आदि स्थान देख लिये। विज्ञान और सांकेतिक शास्त्रों (Technology) में इस देश ने अपूर्व और आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की, उसने

मनुष्यो को चन्द्रमण्डल पर उतारा। इतना ही नहीं उसने एक ऐसा उपग्रह के अंतरिक्ष में भेजा जो अंगारक ग्रह के चारो तरफ़ मडरा रहा है और साथ-साथ वहाँ का साकेतिक विवरण भूमण्डल को भेज रहा है। औद्योगिक क्षेत्र में भी अमेरिका का स्थान सर्वोच्च ही रहा है। धन सपत्ति में तो इस के टक्कर का कोई दूसरा देश नहीं है। भारत से सैकड़ों विद्यार्थी अमेरिका जाकर वैद्यक, सांकेतिक, तथा वैज्ञानिक शास्त्रों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। वहाँ से वापस आने पर उन्हे दायित्वपूर्ण उच्च-पदो पर नियुक्त किया जा रहा है। यहाँ पर ऐसे अनेक भारतीय छात्रो से मिलकर हमे बड़ा आनंद हुआ। यहाँ के वड़े-बड़े नगरो में हमें ऐश्वर्य के साथ-साथ निपट दरिद्रता के भी दर्शन हुए। हम ने देखा कि यहाँ के अल्पवयस्को में चोरी, हिसा, शराबखोरी, जूआ, व्यभिचार, हत्या आदि कुरीतियाँ बढती जा रही है। एक तरफ़ ऐश्वर्य की जगमगाहट दूसरी तरफ रोगग्रस्त मस्तिष्क; इस प्रकार परस्पर विरुद्ध अवस्थाओ में फसे हुए लोग स्वाभाविकरूप से आत्म शांति पाने की अभिलाषा ले कर भारत की तरफ़ उन्मुख हो रहे है। भारतीय सस्कृति के प्रति उन में आकर्षण वढ़ता जा रहा है; परतु भारत के लोग अब भी पश्चिमी सस्कृति और विचार धारा के मोह मे बहते जा रहे है। अतः इस समय आवश्यकता इन बात की है कि इन दोनो परस्पर विरुद्ध धाराओ में सामंजस्य लाया जाय।

लॉस एजेल्स में हमें हरे राम भक्त मण्डल वालो से मिलने का अवसर मिला। वे लोग विश्वविद्यालय के खुले मैदान में भजन कर रहे थे। पश्चिम देशों में हरे राम का आन्दोलन खूब जोरों पर है, उन की सामूहिक प्रार्थनाएँ अकसर खुले मैदान,

सड़के अथवा रंगमंच पर आयोजित होती हैं। जीवन की चिंताओं और झंझटों से मनुष्य बचाव चाहता है, अधिक से अधिक शांति और आनन्द की खोज में रहना है। भक्तियोग ही वैसी शान्ति और आनन्द प्रदान कर सकता है। इस की आवश्यकता पश्चिम देशों की जनता अधिक अनुभव कर रही है, इस कारण से यह आन्दोलन वहाँ पर तेजी के साथ फैलाता जा रहा है। हिप्पी लोग भी कुछ ऐसी ही अभिलाषा रखते है, परतु उन का मार्ग अपवित्र है। हरे राम वाले भक्तिभाव पूर्ण गीतों के अतिरिक्त सस्कृत के स्तोत्र भी पढ़ते हैं। नीचे का श्लोक उदाहरण रूप में दिया जा रहा है।

संसारदावानललीढ़लोक, तरण्य कारुण्य घनाघनत्वम्।
प्राप्तस्य कल्याण गुणार्णवस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥

भावार्थ :—गुरु ससार रूपी दावानल में फसे हुए लोगों को बचाने वाला करुणापूर्ण मेघ, भक्तों के प्रति कल्याणकारी गुणों का समुद्र है, ऐसे गुरु के चरण कमलों की मैं वन्दना करता हूँ।

इस भक्ति आन्दोलन में जाति, धर्म, और संप्रदाय का भेद नहीं है, पवित्र और निष्पाप जीवन विताने पर जोर डाला जाता है। आधुनिक सम्पत्तिवाद के लिए यह आन्दोलन एक चुनौती है। इस भक्ति मार्ग का अवलंब लेकर सन्यास ग्रहण करनेवाले को अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन करते हुए 'हरे राम हरे कृष्ण' मन्त्र का एक लाख जप नित्य करना होगा। उसे शाकाहारी होना और मादक द्रव्यों के सेवन से दूर रहना अत्यन्त आवश्यक है।

इस आन्दोलन का प्रवर्तक श्री भक्ति वेदान्त स्वामी विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त स्नातक है। अपने गुरु की आज्ञा से उन्होने विदेशो में कृष्ण भक्ति के प्रचार का काम अपने हाथ में लिया है। एतदर्थ उन्होने एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रचार सस्था की स्थापना की, जिस में आज ढ़ाई हजार सन्यासी अपना पूरा समय दे कर सेवा कर रहे हैं। जिस प्रकार घने अधकार मे दीप का प्रकाश अधिक उज्ज्वल दिखाई देता है उसी प्रकार धन और ऐश्वर्य का मायामोह जहाँ अधिक होंगे वहाँ पर भक्तियोग का प्रभाव अधिक गहरा दिखाई देता है। 'हरे राम' के सन्यासियो ने वाशिंग्टन से ८० किलोमीटर की दूरी पर ८०० एकड़ जमीन पर 'नूतन वृदावन' का निर्माण किया। भक्ति वेदान्त स्वामी, चैतन्य महाप्रभु का जन्म स्थान मायापुरी में एक करोड़ रुपया खर्च करके अपमें इस आन्दोलन का केन्द्र कार्यालय स्थापित करना चाहते है।

अमेरिका और अन्य पश्चिम देशों के समाज में वृद्ध और सेवानिवृत्त गुहस्थों की दशा किस प्रकार है—यह जानने की स्वाभाविक अभिलाषा मेरे मन में उत्पन्न हुई। यद्यपि वहाँ पर सयुक्त-कुटुब-प्रथा नही है तब भी पेशे मे लगी हुई पुत्र-पुत्री-सतान वारात की छूट्टी में अपने मातापिता के यहाँ जा पहुँचती है अथवा माता पिता ही अपनी संतान के पास आ ठहरते है।

युवक पुत्र-पुत्रियाँ अपने माता पिताओं को देश विदेश की यात्रा पर ले जाया करती है। हमें ऐसे कई लोगो से मिलने के अवसर प्राप्त हुए। हम ने देखा कि प्रेम अनुराग आदि मानवता के भाव सारे ससार में सर्वत्र एकसे फैले हुए है।

उन देशों में वृद्ध व्यक्तियों के लिए विशेष प्रकार के वृद्ध निवास बने हुए है जहाँ वे लोग एक दूसरे की संगति में रह कर अपने दिन आनंद पूर्वक काट सकते हैं। सत्तर या अस्सी वर्ष की उमर में भी ये लोग नियमपूर्वक खेल कूद में भाग लेते रहते हैं। युवक लोग यद्यपि अपने माता-पिता से दूर रहते हैं, वे नियन्त्रित जीवन विताते हैं। हमारे भारत देश के कुटुंबों में वृद्ध माता पिता अक्सर दुःख पूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। एक तो वे लोग नई पीढ़ी की संतान के साथ, अपने को उन के अनुकूल बना कर रह नही सकते, दूसरा नई पीढ़ी के लोग अपने माता पिता के प्रति अपना दायित्व और कर्तव्य भुला देते हैं। अतः वयोवृद्ध माता पिता और युवा पुत्र-पुत्रियों के बीच में एक दूसरे के प्रति जो बर्ताव और कर्तव्यपालन होना वांछनीय है उस के संबंध में यदि हम कोई सुनिश्चित नियमावली (Code of ethics) स्थापित कर सकें और उस पर चलने वाले आदर्श कुटुम्बों का नमूना संसार के सामने रख सकें तो निस्संदेह हमारी सभ्यता और संस्कृति अन्य देशों को प्रभावित कर सकेंगी। अमेरिका का गृहजीवन शुचिपूर्ण है, उस की सम्पत्ति अपार है। संपर्क और यातायात के साधन श्रेष्ठ और आधुनिक हैं। लोगों को विज्ञान की भूख है, वहाँ के कालेजों में प्रत्यक्ष ज्ञान और प्रयोगों के लिए अपार साधन सामग्री उपलब्ध है, अत्युत्तम शिक्षा-विधान और विशेषज्ञ मौजूद हैं; इन सब सुविधाओं को दृष्टि में रख कर हमें अपने देश के अधिक से अधिक विद्यार्थियों को शिक्षण ग्रहण करने के लिए अमेरिका भेजना चाहिए क्योंकि अपने वाणिज्य और उद्योग धंधों का विकास करने के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता दिन पर दिन बढ़ती ही जायगी। पहले भी साहसिक प्रकृति के

विदेश यात्री वर्ग : ( बाई ओर से बैठे हुए ) १· श्रीमती अमृतबाई कापडिया, २. श्रीमती नारायणम्मा पुल्लारेड्डी, ३· श्रीमती प्रतिभा चुन्नीलाल, (खड़े हुए-बाई तरफ़ से) १ लेखक २ श्री जि. पुल्लारेड्डी, ३· श्री चुन्नीलाल अग्रवाल ।

विदेशयात्रा पर निकलते समय लेखक और उनके साथियों को नाम्पल्ली रेल्वे स्टेशन पर भाई बन्धु विदा कर रहे हैं।

वंबई के हवाई अड्डे पर विदेशयात्री वर्ग की विदाई। श्री शिवाजी नत्यू छेडा, जे. पि. दाहिनी तरफ़ आखिर में हैं।

भारतीय युवक वाणिज्य के लिए देश विदेश जाते ही रहे। उस उत्साह और साहस को कायम रख कर आज भी हमें अपने विद्यार्थियो को उच्च शिक्षण के निमित्त विदेश भेजना ही चाहिये इसी में हमारा लाभ है।

न्यूयार्क में श्री वसंतभाई-एच-गाला और उनकी श्रीमती डा० गंगाबन ने हम लोगो का जो हार्दिक स्वागत किया उसे हम कभी भूल नही सकते। उन्होने हमे अपने होटेल का रिजर्वेशन रद करने पर मजबूर किया और अपने घर बुला ले गये। वहाँ तीन दिन तक हमारा खूव आदर सत्कार होता रहा। उनका निवास न्यूयार्क से २५ मील की दूरी पर पेर्सीपेन्नी न्यू जेरसी में बना हुआ था।

न्यूयार्क में हम श्री नवीनभाई मेदीवाला, श्री जे.वि. इशरानी डा० काकर्ल सुब्बाराव और उनकी पत्नी से भी मिल सके। नवीनभाई डेढ़िया से भी हमारा मिलन हुआ, उन्होने हमारा परिचय पाने के बाद मेरे भानजे की पुत्री को ब्याह लिया था। श्री हेमचद्र भाई मोमया से तो हम केवल फोन पर ही बातचीत कर सके।

केनडा मे अपने चार दिन के भ्रमण के बीच हम श्री मोतीलाल भाई चांपशी और उन की पत्नी श्रीमती लता बहेन से मिले। उन का स्नेहभरा स्वागत हमारी स्मृति में सदा रहेगा।

केनडा से यू एस. ए. लौट आने पर श्री अनिल भाई एच. शा और उनकी पत्नी श्रीमती मधुबेन सिनसिनाटी में हम से आ

कर मिले, और हमें अपने शान्तिपूर्ण आवास में लिवा ले गये। उन का प्रेमपूर्ण सत्कार अब तक हमें याद है।

चिकागो में डा॰ ललिता भाई भीमशी सावला और उन की पत्नी श्रीमती हेमलता बहिन ने हमारा बड़ा प्रेमपूर्ण स्वागत किया। वे भी हमारा होटेल रिजर्वेशन रद्द करवा कर अपने यहाँ बुला ले गये। वहाँ से हम ने चिकागो के चारो तरफ़ भ्रमण किया। यहाँ के प्रसिद्ध चिकित्सक डा॰ गोल्ड स्मिथ ने मेरी पत्नी के टखने में होने वाली वातपीड़ा (Arthritis) का निदान किया। आद्यन्त परीक्षा करने के बाद उन्होंने जो दवा लिखा दी उस से रोगी को बड़ा लाभ हुआ।*

चिकागो में हमें श्री किशोर एस॰ छेडा और उन की श्रीमती भद्राबेन छेड़ा (जो मेरे बन्धु श्री भगवान जी भाई की पुत्री हैं); श्री जयन्तीलाल हीरजी शाह (जो मेरी पत्नी के बहनोई श्री उमरशी भाई के दामाद हैं); भगिनी दिनमणी (श्री नानजी वीरजी की पुत्री); श्री देवचन्द डेढ़िया–आदि से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। लोस एंजेल्स में श्री अशोक कुमार कोटेचा से, और शानफ्रान्सिस्को में श्री हरीश विसारिया तथा श्री शामजी वीरजी डेढ़िया से मिल कर हमें बड़ा आनन्द हुआ।

---

* दवा का नाम : COPIAR–X 178250 TYLENON TABLETS, SIG TABS 24.

मुझे वर्षो तक सर्दी जो सता रही थी उसे समूल नष्ट करने वाली दवा का नाम : ANDANTOL TABS (MADE IN GERMANY) इन्द्रयवा (मीठा) तथा काली मिर्च (Lindipser) का चूर्ण शहद में मिला कर सोते वक्त सेवन करने पर खाँसी का रोग दूर हो जाता है।

## केनडा

अमेरिका सन्दर्शन के बाद हम ने केनडा में मोन्ट्रील, टोरेन्टो और कुछ अन्य प्रदेशों मे भ्रमण किया। यहाँ पर हम ने प्रसिद्ध नियाग्रा जलप्रपात का भी दर्शन किया। एक्सपो १९६७ वाली अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शिनी के बहुत से भाग अब तक सुरक्षित रखे गये, उन्हें देख कर हम ने अनेक नूतन विषय जान लिये।

एक सरोवर का जल दूसरे सरोवर में १६५ फुट की ऊँचाई से गिरने के प्रदेश में यह जलप्रपात बना हुआ है। यह अपनी ऊँचाई के कारण नही बल्कि विस्तार के कारण प्रसिद्ध हुआ है। गगनतल में फैलनेवाली छीटों में कई इन्द्रधनुष बन जाते है, और विद्युत दीपकांति में झलकने वाले धुआँधार प्रवाह में अनेक प्रकार के रगों का खल मनोहर दृश्य उपस्थित करता है। इजनीयरो ने निपुणता पूर्वक कुछ ऐसे निर्माण तैयार किये हैं जिन के द्वारा दर्शक प्रपात के अति समीप पहुँच सके। इसके अतिरिक्त 'ऐयिरोकार' (Aerocar) का भी प्रबन्ध है जो दर्शको को प्रपात के एकदम सामने ले जा सकता है। जलप्रपात की ये सब विशेषताएँ दर्शकों के मन पर अमिट छाप डाल देती हैं। 'नियाग्रा' शब्द का विकास सस्कृत के 'निर्झर' से बतलाया जाता है जिस का अर्थ है—कल कल करता हुआ जलप्रवाह। जो लोग नियाग्रा को-जो संसार के अत्यद्भुत स्थानों मे से एक है प्रत्यक्ष जा कर नही देख सकते, उन को मैं सलाह देना चाहता हूँ कि वे 'नियाग्रा' नामक अग्रेजी चित्रपट अवश्य देख ले। क्योकि वह चित्रपट इस जलप्रपात के यथार्थ दृश्य उपस्थित करता है। योरोप और अमेरिका के अनेक देशों के निवासियो ने केनडा के निर्माण

में भाग लिया था, आज भी उस की जनसंख्या उस के क्षेत्रफल के अनुपात में बहुत कम है। यही कारण है कि संसार के देशों से तीन लाख, और भारत से दस हजार मनुष्यों को केनडा में बस जाने की अनुमति मिली। केनडा में भारतवासी काफ़ी संख्या में दिखाई दे रहे हैं जो तरह तरह के वाणिज्य और उद्योगों में लगे हुए हैं। भारतवासी सामान्य रूप में अनेक देशों से निकाल दिये जा रहे हैं, परंतु बुद्धिमान, उत्साही और क्रियाशील भारतीय युवकों को केनडा, यु एस ए, हांगकांग, बेंकाक् और जापान में बस जाने की अनेक सुविधाएँ मिल रही हैं। केनडा यद्यपि यु. एस. ए की सीमा पर स्थित है फिर भी उस की अपेक्षा यहाँ का जीवन-व्यय और आमदनी, ३० प्रतिशत कम ही बताई जाती है।

## जापान

एक्स्पो-७० की अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शिनी ओसाका में खुल गई जो जापान के प्रमुख नगरों में एक है। प्रदर्शिनी के समाप्त होने में अभी ३ ही दिन शेष थे कि हम उसे देखने वहाँ पहुँच गये। लगभग ३ लाख भारतवासी उसे देखने आये थे, और कुल दर्शकों की संख्या प्रतिदिन तीन से लेकर पाँच लाख तक होती थी। अतिम दो दिनों में एक नाटक सम्मेलन आयोजित हुआ था। रंगमंच पर प्रदर्शित रागात्मक और कलात्मक दृश्यों ने मेरे मन पर एक अमिट छाप डाल दी थी। जापान के चक्रवर्ती तथा प्रधान मन्त्री भी नाटकों का उत्सव देखने आये थे, विविध देशों के राजदूत, एजेंट तथा प्रतिनिधि वर्ग भी उपस्थित था। सांकेतिक शास्त्र तथा विज्ञान में ससार ने जो प्रगति की है और

आगे कर सकता है उसकी झलक इस प्रदर्शिनी में दिखाई गयी। मनुष्य अपने अथक परिश्रम से कैसी कैसी उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकता है --इसका दिग्दर्शन हमें इस प्रदर्शिनी में मिला। यहाँ दर्शकों को जो प्रेरणा मिली वह उनको आजीवन रास्ता दिखाती रहेगी।

ओसाका से टोकियो तक हम लोगों ने संसार भर में सबसे तेज दौड़नेवाली रेल में यात्रा की। चक्रवर्ती तथा प्रधान मन्त्री भी अपने अनुचर परिवारों के साथ उसी रेल में चले थे। इस अवसर पर हमने देखा कि जापानी जनता मे नियम पालन की भावना कितनी गहरी है, तथा अपने प्रभु और प्रतिनिधियों के प्रति कितना आदरभाव है। 'एक्स्पो' के सचालन में भी हमें जापानियों की स्वच्छता, निपुणता और आज्ञापालन की भावना हर बात में स्पष्ट दिखाई दे रही थी। वे इतने कार्यकुशल हैं कि जो काम भारतवासी महीनों में पूरा करते हैं उसे वे लोग कुछ घंटों में अंजाम दे जाते है।

टोकियो में हम लोगों ने एक हफ्ता बिताया। इस एशियायी देश ने भारतवर्ष के समान ही धार्मिक, सांस्कृतिक और मानवता संबंधी उपलब्धियाँ प्राप्त की थी, फिर भी हमे उनको देखकर समझने, उनसे सीखने और अनुसरण करने योग्य विषय कई एक दिखाई दे रहे है। जापानी कारखाने हमने कई देखे। नवयुवक और युवतियाँ मेहनत का काम करना पसद करते हैं, बड़ी उमरवाले निरीक्षण और मार्गदर्शन किया करते है। जब हमने जापानी मजदूरों का स्वास्थ्य, उनकी वर्दियाँ, और उनकी स्फूर्ति देखी तो स्वभावत. हम अपने मन में इनकी तुलना भारतीय

मजदूरों की दशा से करने लगें। यह बात तो स्पष्ट हो गयी कि हमारे मजदूरों के लिए हमें बहुत कुछ करने की आवश्यकता है; साथ ही हमारे मजदूरों को भी अपनी तरफ़ से बहुत कुछ करना आवश्यक है। कारखाने में एक जगह हमने यह एलान पढ़ा कि मजदूर हड़ताल कर रहे हैं। परतु कारखाने मे काम बन्द न हुआ, यथावत् मजदूर काम मे जुटे ही रहे, व्यवस्थित रूप से काम चल ही रहा था। केवल यही दखने मे आया कि हर एक मजदूर असम्मति सूचक एक पट्टी बाँह पर बाँधे हुए है। जब हमने आश्चर्य प्रगट किया तो उन लोगों ने कहा कि "किसी भी परिस्थिति में हम काम करना बन्द न करेग, क्योंकि वैसा करने से उद्योग को धक्का लगेगा, हमारा और देश का भी नुकसान होगा" वहाँ कोई भी मजदूर हड़ताल करने, धीरे धीरे काम करन अथवा यन्त्रों को तोड़ फोड करने का विचार तक मन मे नही लाता। यही कारण है कि यह छोटासा देश सारी दुनियां से मुकाबला कर रहा है, विशेष रूप से यु-एस-ए जैसे समृद्ध देशों से टक्कर ले कर अपार विदेशी मुद्रा का संपादन कर रहा है। उस की यह शक्ति देख कर हर कोई दांतों तले उंगली दबाते हैं। जापान बाहर के देशों से कच्चा माल आयात करता है, फिर उसे तैयार माल (Finished Goods) में बदल कर विदेशों को निर्यात करता है। उस का वह तैयार माल सस्ता और गुण में बेहतर उतरता है। इस का कारण यह है कि जापान के मजदूर दिन में अधिक समय तक काम करते है, उन का जीवन-व्यय यु-एस-ए व्यय में आधा ही होता है, सभी कार्यकर्ता, स्त्री और पुरुष परस्पर सहयोग, निपुणता और सच्चाई के साथ काम करते है।

हम ने अपने संभाषण में उन से कहा–" द्वितीय महायुद्ध मे आप को वडी क्षति पहुँची; देश बहुत छोटा है; कच्चा माल नहीं के वराबर है। फिर भी आप का देश पूर्ण विकसित समृद्ध देशों मे एक है। इस के विपरीत हमारा देश बड़ा विशाल और तरह तरह की प्राकृतिक संपत्तियों से भरा पुरा है; हमारी मनुष्य-शक्ति भी अपार है। हमारी संस्कृति आप की जैसी ही है। जापान के साथ भारत का धार्मिक सबध गौरवपूर्ण है। भारत के गौतमबुद्ध ने ही जापान के जनजीवन को नियमवद्ध, आदर्शवान् और स्फूर्तिमय बना दिया है। परन्तु भारत, दैहिक, मानसिक और आर्थिक हीनता तथा दास-मनोवृत्ति में फँसा हुआ है। इस का कारण क्या हो सकता है?"

पहले तो दो साँकेतिक कार्यकर्ता उत्तर देने में हिचकिचा रहे थे, परतु हमारे स्नेहपूर्ण अनुरोध ने उन का मौन भंग किया। उन लोगों ने कहा– "इस का मुख्य कारण तो यह है कि भारतवासी एक दूसरे से सहयोग नही करते। वे बुद्धिमत्ता और कार्यपटुता में हम से किसी प्रकार हीन नही है। हम ने देखा कि जब कई भारतवासी एक जगह मिलते है तो वे एक दूसरे को नीचा दिखाने लगते है, आपस में डाह करते हैं। एक भारतीय कई जापानियो को वाद विवाद में हरा सकता है, किन्तु यदि दो भारतीय व्यक्ति एक जापानी से वहस करने लगे तो जापानी अकेला ही उन दोनो को हरा देता है। भारतीयों में परस्पर सहयोग और सम्मिलित यत्न की भावना को वढाने की अत्यन्त आवश्यकता है। चार शताब्दियों तक विदेशी शासन में दवे रहने के कारण से आप लोग दास्य भाव से मुक्त नही हो सके। आप के बीच के जाति-भेद और कुलभेद, स्त्रियो को

पुरुषों से अलग रखने की परंपरा ये सब बातें आप की शक्ति को ग्रस लेती हैं; कुरीतियों के कारण ही आप की मनुष्य-शक्ति बिखर जा रही है; इसी कारण से गरीबी आप अभी तक दूर नहीं कर पाये हैं। दुनियाँ के पड़ोसी देशों को देख कर आप को अपने देश की प्रगति करनी चाहिए।"

जापान में ऐतिहासिक स्थान देखने के बाद हम लोग दूर दूर के दर्शनीय दृश्य देखने गये। फुजी नामक सुप्त अग्निपर्वत के पास हम लोगों ने एक पूरा दिन बिताया। हमारे साथ कुछ दूसरे विश्व-यात्री भी फ़ुजी देखने चले थे। यात्रियों को ले चलने वाला आम्नीबस कहलाता है। इस वाहन में यात्रियों को दर्शनीय स्थानों का विवरण दुनियाँ की नौ भाषाओं में सुनाया जाता था। साथ जो परिचायिका चली थी वह हँसी मजाक भी करती, गीत गाती और अध्यापिका बन कर जापानी भाषा के कुछ आवश्यक शब्द और वाक्य बोलना हमें सिखाती थी। आवश्यक जानकारी देने के साथ साथ वह हमें हर तरह से प्रसन्न रखती थी। उस ने अनुरोध करके हम लोगों से अपनी अपनी भाषा के गीत भी गावाये थे। ऐसी कई युवतियाँ यहाँ पर परिचायिकाओं के काम में लगी हुई थी। अन्य देशों में भी हम ने परिचायिकाओं को काम करते पाया, किन्तु इन जापानी लड़कियों ने हमें जितना प्रभावित किया उस में अर्धभाग भी उन लोगों ने नही किया। जब मैं ने उस जापानी युवती से उस के वेतन के बारे में पूछा तो वह संकोच करने लगी, परंतु मेरा दुबारा अनुरोध देख कर उस ने बताया कि वह माहवार १५० डालर पा रही है, इसी पद पर काम करने वालों को यु-एस-ए में ५५० से लेकर ६५० डालर तक का वेतन मिलता है, और केनडा में ४५०
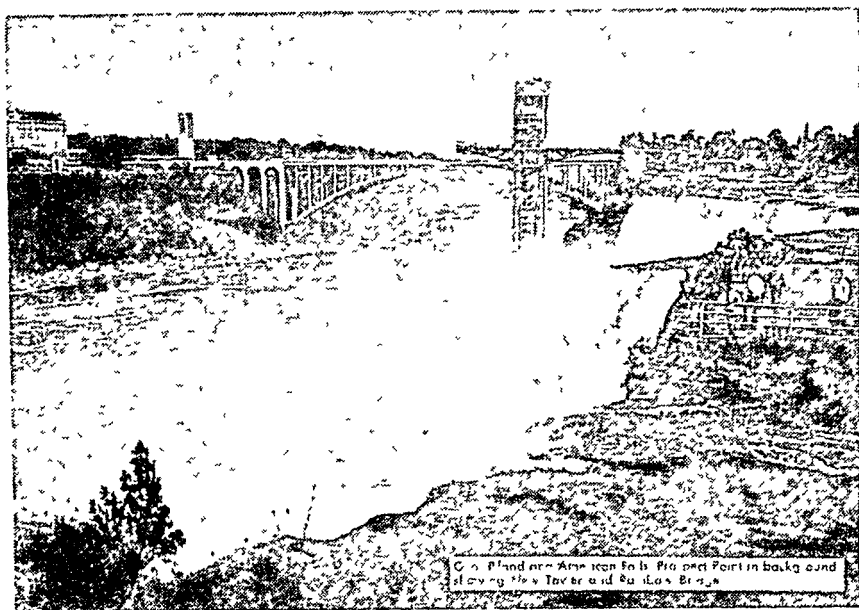
नयाग्रा (केनड़ा) जलप्रपात का एक दृश्य

वेनिस नगर (इटली) में एक दृश्य।

डालर दिय जाते है। इस तरह हम ने देखा कि जापान के लोगों में कम वेतन पाते हुए भी दुगुना काम करने का उत्साह है। हर एक जापानी स्त्री और पुरुष बड़ी मेहनत से काम करते हैं। महिलायें ही पुरुषों को क्रियाशील रहने की प्रेरणा देती हैं। इन लोगों के पारिवारिक जीवन से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। उन में सम्मिलित कुटुंबप्रथा अब तक विद्यमान है। बड़ों के प्रति उन का आदरभाव, दूसरो के साथ सौम्य व्यवहार, सादगी का रहन सहन, स्वच्छता, और कला प्रेम बड़े मनमोहक हैं। अन्य देशों के समान यहाँ के मदिर भी सुन्दर आलेखन और वर्णचित्रों से सजाते हैं। उन का शिल्प और स्थापत्य विलक्षण दिखाई देता है। यह स्पष्ट है कि धार्मिक विषयो पर भी जापानी लोग उदारता पूर्वक धन खर्च करते है। हम लोगों ने अब तक कोई समाजवादी देश नहीं देखा, अतः वहाँ की दशा पर कुछ कह नही सकते।

## हांगकांग

हांगकांग यद्यपि ब्रिटिश शासन के अधीन है, यहाँ की कधिकांश आबादी चीनी लोगो की है। आयात और निर्यात के विषय में हांगकांग का बंदरगाह स्वच्छंद (Free Port) है। इस कारण इस छोटे से प्रदेश में वाणिज्य और व्यवसाय की चहल पहल बनी रहती है। यहाँ के व्यापार का अधिकांश भाग लगभग १० हजार सिन्धी और कई अन्य भारतीयों के अधीन मे है। फिर भी नये व्यापारियों के लिए भी यहाँ जगह मिल सकती है। संसार भर में तैयार होनेवाला सामान चुगी से मुक्त होने के कारण यहाँ पर सस्ते दामो में बिकता है। यात्रियों के लिए यह एक

आकर्षण की बात है, फिर भी ग्राहकों के ठगे जाने की संभावना अधिक है। साधारणतया यहाँ के दूकानदार नियत कीमत से दुगुना या तिगुना दाम बतलाते हैं, और ग्राहक उस का आधा या पाव से अधिक देने को तैयार नहीं होता। हम ने देखा यहाँ पर ऐसा ही रिवाज फैला हुआ है, इस में किसी को आश्चर्य नहीं होता। हांगकांग की यात्रा करनेवालों का सदा से यही अनुभव रहा होगा। हांगकांग सिंगापुर, थाइलण्ड आदि प्राच्य देशों की यात्रा में हमें यही अनुभव हुआ कि हम बंबई या कलकत्ते में घूम रहे हैं।

### बॉगकाक

बॉगकाक थाइलैण्ड की राजधानी नगर है। लोग बुद्ध धर्म के अनुयायी हैं, फिर भी यहाँ के शिल्प, संगीत, नाटक और स्थापत्य पर रामायण और महाभारत का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। लोगों के नाम भी भारतीयों के से लगते हैं। बाँगकाक सुसम्पन्न यूरोपीय नगर के समान शोभायमान रहता है, किन्तु ग्राम-प्रान्तों का अभी विकास नहीं हुआ। यहाँ पर हमें पानी पर तैरता हुआ बाजार नजर आया, बर्मा के समान ही यहाँ पर भी नालों पर यातायात होता रहता है यहाँ आने पर मेरे मन में एकाएक बर्मा में बीता हुआ मेरा जीवन झलक उठा। तीस वर्ष पूर्व मैं ने बर्मा में जिस प्रकार का लोक जीवन देखा था वही दुबारा यहाँ दिखाई दिया। यहाँ के धान के मिल (Rice mills) और उन में काम करनेवाले मजदूर मेरी स्मृति को जबरन् अपने पूर्व जीवन में खींच कर ले गये। मेरे बर्मा प्रवास के अन्तिम दिनों में सेठ हासम प्रेमजी ने 'ईस्ट एशियाटिक रैस मिल' खरीद कर उस के सचालन का पूरा दायित्व मुझ सौप दिया था। उसी नाम

से चलता हुआ एक बड़ा धान का मिन्त मै ने इस समय बाँगकाक में देखा। अतः स्वाभाविक रूप से मुझे अपना बीता हुआ बर्मा का जीवन याद हो आया, और लगा कि मैं वही पर काम कर रहा हूँ। जिन दिनों मैं गाँगजी प्रेमजी को कपनी में काम कर रहा था, तब बाँगकाक में भी उस की शाखा उसी नाम से व्यापार कर रही थी। उस के मचालक मेरे बन्धुओं मे से थे, सेठ शिवजी भाई और उन की पत्नी के साथ उसी स्थान में मैं कई वर्ष रहा था। उन का मुझ पर बड़ा स्नेह और मेरे मन में उन के प्रति अतीव आदर का भाव रहा है। इस प्रकार जिन के साथ मै तीस वर्ष पूर्व रहा उन से दुबारा अब बाँगकाक में (फिर बबई मे) मिल कर मुझे आनंद का अनुभव हुआ। उन्होने पहले जैसा ही अनुराग दिखाया और स्मारक के रूप में एक उपहार भी दिया। उन्होंने और थोड़े दिन अपने साथ रह जाने का अनुरोध किया, किन्तु हमारा यात्रा का कार्यक्रम पूर्वनिश्चित होने के कारण दो दिन से अधिक हम वहाँ बिता नही सकते थे। अतः सेठ शिवजी और श्रीमती मणिबहेन के स्नेह की आनददायक स्मृति साथ लिये हम लोग विमान मार्ग से बबई आ पहुँचे। इस प्रकार हम ने संसार के देशों की अपनी यात्रा पूरी कर दी।

जिन बधु मित्रों ने २१-७-१९७० को बबई से रवाना होते समय हमें विदा किया था वे लोग फिर २५-९-१९७० को हमारा स्वागत करने के लिए हवाई अड्डे पर आ पहुचे।

दूसरे दिन 'पत्री सर्वोदय समाज' की बैठक बबई में बुलायी गयी। उसमें मैंने अपनी यात्रा का अनुभव सुनाने के बाद मित्रों को समझा कर कहा था कि हमें युवको को उच्च शिक्षा के निमित्त विदेशों में भेजना चाहिए, उसी तरह वाणिज्य और व्यवसाय के

निमित्त विदेशों में जाने का साहस करना कुटुंब और देश दोनों के लिए लाभदायक होगा। विदेशों के साथ संबंध रखने के कारण मनुष्य संसार का नागरिक बन कर उन्नति के पथ पर चलने लगता है। ऐसे मनुष्यो पर देश गर्व कर सकता है।

जब हम लोग हैदराबाद वापस पहुँचे, जिन्होंने यात्रा के आरंभ में हमें प्रेमपूर्ण विदाई दी थी, उन्हीं लोगों ने अब हमारा स्वागत किया। जीवन में सुख की घड़ियों को याद रखने में मनुष्य को बड़ा आनंद मिलता है; अतः इस विश्वयात्रा के संस्मरण भी मैं ने अमूल्य संपत्ति के समान यत्नपूर्वक सुरक्षित रख लिये हैं।

विदेशों के अधिकतर होटलों में माँसाहार का ही प्रबंध रहता है, किंतु उन में भी उसी मेज पर एक दो शाकभाजी के पदार्थ भी परोसे जाते हैं। फल, डबल रोटी, दूध, मक्खन वगैरह सब जगह मिल जाते हैं। हमारे दल के छहों व्यक्ति शाकाहारी हैं; और हमारे हाथ में विदेशी मुद्रा बहुत ही सीमित थी; अतः मितव्यय की दृष्टि से भी हम लोग होटलों के पार्श्व में स्थित दूकानों से स्वास्थ्यप्रद आहार-पदार्थ खरीद कर लाते थे। उन दूकानों में फल, दूध, दही, छाँछ, मक्खन, उबाले या तले हुए शाक भाजियों की टिनें, चाकलेट, आलू के टुकड़े (Chips) पावरोटी, मलाई, जेल्ली इत्यादि अफ़रत से मिल जाते थे। हम लोग स्वय ही सैण्डविच (SandWiehcs) बना कर दूध अथवा छाँछ के साथ खा लेते थे। गरम पानी तो होटलों के कमरों में ही हर वक्त मिल जाता था, अतः दूध, चायपत्ता और शक्कर बाहर से मँगवा कर आवश्यक चाय-काफी खुद ही बना लेते थे। इस तरह से स्वयं तैयार किया हुआ शाकाहार हमें सस्ता और स्वास्थ्यप्रद

भी बन जाता था। वंसा आहार यदि हम होटोलो से खरीदते तो खर्चा पॉच छे गुना आसानी से बढ़ जाता। शाकाहार देने वाले होटेलों में भी भारतोय पद्धति का भोजन चार छे गुना अधिक महँगा पड़ जाता है। इस प्रकार २७ दिन की यूरोप-यात्रा में हमें दैनिक दस डालर से अधिक व्यय करना नही पड़ा। इसी में फुटकर खर्च भी मिला हुआ है। जापान और अमेरिका में तो तीन चार डालर अधिक ही व्यय करना पड़ा था। खर्चा कम करने का तरीका हमे उन यात्रियो ने सिखाया जिन को इसका अनुभव हो चुका था। उन का सिखाया पाठ हमे लाभप्रद सिद्ध हुआ।

विदेशों में जहाँ जहाँ हम लोग गये, हम ने देखा कि वहाँ के लोग तेज़ी और निपुणता के साथ काम करके उत्पत्ति बढ़ाने पर विशेष ध्यान देते है। काम करते समय वे बाहरवालो से नहीं मिलते, काम का समय समाप्त हो जाने के बाद ही वे लोगो से मिलते है। समयपालन (Punctuality) और नियमपालन (Discipline) उन लोगो के सहज स्वभाव का ही अंग हो गया है। समाज के प्रति तथा राष्ट्र के प्रति अपना उत्तरदायित्व निभाने की प्रवृत्ति उन में स्वाभाविक रूप से पायी जाती है।

नीचे कुछ ऐसे होटलो का विवरण दिया जाता है जहाँ उचित किराया लेकर यात्रियो को सब प्रकार की सुविधाएँ दी जाती है :—

| स्थान— | नाम— | दैनिक किराया— | सुविधा |
|---|---|---|---|
| १. ओसाका– | होटेल कोरोना-- | १० डालर– | दो बिछौने |
| २. मान्ट्रील– | होटेल ले रेलैस– | ६ डालर– | दो बिछौने |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ३. वाशिंगटन्– | होटेल प्रेसिडन्शियल– | १० डालर– | दो बिछौने |
| ४. आमस्टेरडाम– | होटल-एयिरकोस– | ६ डालर– | दो बिछौने |
| ५. जूरिक– | होटेल लान हाडं– | ६ डालर– | दो बिछौने |
| ६. एथेन्स– | होटेल- एच-जासन – | ८ डालर– | दो बिछौने |
| ७. पॉरिस– | होटेल-डि-ला- कोमटे– | ४ डालर– | दो बिछौने |

ये सभी होटेल अच्छी सफ़ाई रखने तथा सब तरह की सुविधा देने में प्रसिद्ध है। वे नगर के बीचों बीच बने हुए हैं।

बंबई से आरंभ कर हमारी विश्वयात्रा का सारा आयोजन, "ट्रावेल कार्पोरेशन, लिमिटेड, के श्री रतनशी मोमया ने सभाला था। प्रबन्ध उत्तम होने के कारण हमें कहीं किसी प्रकार का कष्ट न हुआ।

## हिमालय-दर्शन

मनुष्य स्वयं प्रकृति की सृष्टि होने के कारण प्रकृति के प्रति उस के हृदय में विशेष आकर्षण पाया जाता है। इसी वजह से वह जब बनावटी जीवन से ऊब जाता है, प्रकृति की गोद में सुस्ता कर, लालित होकर, तरावट पाने को लालायित होता है। जब कभी मुझे अपने बनावटी, किंतु अनिवार्य जीवन से थकावट मालूम होती है, लबी यात्रा पर जाने, प्रकृति की गोद में विचरने वहाँ कुछ दिन तक आराम कर ताजा होने का मैंने नियम सा बना लिया है। मनुष्य ने भिन्न भिन्न क्षेत्रों में जो प्रगति की है, और हमारे चारो तरफ़ जो सत्य विद्यमान है, वह सब इन यात्राओं के द्वारा हमारे सामने प्रत्यक्ष हो जाता है।

महाकवि कालिदास ने हिमालय को देवताओं का आवास माना और उसे पृथ्वी का मापदंड भी कहा है। मेरे मन में उस के प्रति वर्षों से आत्मिक भावना रही है। १५ एप्रिल १९७२ को हम नैनिताल देखने गये। पहाड़ो की गोद में बसे हुए यहाँ के जलाशय की शोभा विलक्षण है। इस जगह पंचभूतात्मक प्रकृति अपनी अनुपम शोभा दिखाती है जिस में तन्मय होकर दर्शक अपनी स्मृति खो जाता है।

औरों के साथ मिल कर भोगने पर आनंद की सीमा विस्तृत हो जाती है। मेरे विषय में वही हुआ, क्योंकि मेरी पत्नी अमृत बाई, मेरी पुत्री देवयानी और मेरा पोता सुशील, इस यात्रा मे मेरे साथ थे। नौकाविहार और घुड़सवारी मे मेरा मन खूब बहल गया। बरफ से ढकी पहाड की चोटियाँ जो दूरबीन में से साफ़ दिखाई दे रही थीं, हमारी दृष्टियों को घण्टों आकृष्ट किये हुए थी। 'नाल्पे सुखमस्ति'—अर्थात् थोड़े में सुख नहीं है—इस कहावत का पूर्ण अर्थ अब हमारी समझ में आया।

नैनीताल से निकल कर सुंदर पहाड़ो में से होते हुए हम भीमताल पहुँचे। कहा जाता है कि भीमसेन ने कुछ समय तक इस झील के किनारे बसेरा किया था जिस से उस का नाम भीमताल पड़ा। यहाँ पर हमारा मन महाभारत की घटनाओं को ले कर जुगाली करने लगा।

फिर हम अल्मोडा पहुँचे। पडित नेहरू ने यहाँ के 'आराम धाम' में अपने कारावास का समय काटा था। अल्मोडा के 'सानिटोरियम' में उन की पत्नी श्रीमती कमला नेहरू जब क्षयरोग का इलाज करा रही थीं तब नेहरूजी का तबादला

अलमोड़ा जेल में कर दिया गया जिस से वे अपनी पत्नी को देख सकें। यह जान कर मुझे किसी महान की यह उक्ति याद आ गई–"हर एक महान पुरुष के पीछे कोई एक महिला है।"

अलमोड़ा छोड़ने के बाद हम लोग भाक्रानांगल बाँध पर जा कर ठहरे। यह बाँध इस बात का निदर्शन है कि यदि मनुष्य प्रकृति की अपार शक्ति को वश मे कर लेने का जी तोड़ यत्न करे तो वह मनुष्य-समाज के कल्याण का भारी साधन हो सकती है। भारत के पुर्निर्माण के लिए जो योजनाएँ तैयार की गई है और उन के अनुसार जो सगठित काम हो रहा है यह बाँध, उसे शाश्वत रूप प्रदान कर रहा है। यहाँ पर जो जलाशय बन गया है वह संसार के भारी से भारी मनुष्यनिर्मित जलाशयों में से एक है। इस का विस्तार ६५ वर्ग मील है। इस में से निकाले नहर और नाले २१०० मील दूर तक पानी ले जाते हैं जिस से ६५ लाख एकड़ ज़मीन की सिंचाई होती है, उस से ८ लाख टन का खाद्यान्न, ६ लाख बेलों का कपास, १५ लाख टन का गन्ना, और ३६ हजार टन के तिलहन और दालों की फसल प्रति वर्ष होती है। इस के अतिरिक्त १२८ शहरों और ७३०० ग्रामों को बिजली पहुँचायी जाती है। इस के साथ साथ ३० लाख बोरे रासायनिक खाद भी तैयार होती है। जब वियास नदी इस में बहने लग जाती है तब तो यह सारी उपज बढ़ कर दुगुनी हो जायेगी। पं० जवाहरलाल नेहरू ने इन बाँधो को भारत के आधुनिक देवमदिर कह कर पुकारा है।

पंजाब में हम लोगों ने गोविंदगढ और कुछ अन्य शहरों में भी भ्रमण किया। पंजाब की भूमि बहुत उपजाऊ है, सिंचाई का

भोजराज अण्ड सन्स कच्छी वीसा ओसवाल जैन बोर्डिग द्वारा संचालित हीरजी गेलाभाई सावला विद्यालय के वार्षिक उत्सव में लेखक मुख्य अतिथि के रूप में भाग ले रहे हैं।

हीरजी भोजराज अण्ड सन्स कच्छी वीसा ओसवाल जैन बोर्डिंग द्वारा संचालित श्री हीरजी गेला भाई सावला विद्यालय, बंबई, के वार्षिक उत्सव में लेखक मुख्य अतिथि के रूप में भाग ले रहे हैं।

भी अच्छा प्रवन्ध है, और पजाब के निवासी वड़े मेहनती कार्यकर्ता है। अतः वहाँ पर साल भर मे तीन फसले होती हैं, इस कारण से पंजाब को भारत वर्ष का धान्यागार कहना वहुत ही उचित है। यहाँ के किसान खेतीवारी के आधुनिक साधनो से काप लेने में अधिक उत्साह दिखाते हैं।

चण्डीगढ़ यह शहर आधुनिक नगर निर्माण का अच्छा नमूना है। पुराने शहरों के आसपास आधुनिक नगर निर्माण की योजनाएँ अनिवार्य रूप से अमल में लायी जा रही है। अतः तग और भीड़ भब्भड़ वाले पुराने शहरों का स्वरूप तेजी से वदलता जा रहा है।

चण्डीगढ से हम लोग हिमाचल प्रदेश की राजधानी **शिमला** पहुँचे। शिमला की प्रधानता इस विषय में रही कि वह वर्षो से सफल और असफल दोनों प्रकार के राजनीतिक सभाषणो और मेल-मिलापो का अड्डा रहा है। ब्रिटिश शासन के दिनो में यह शहर वाइसराय (राजप्रतिनिधि) तथा उच्च गोरे अफसरों का ग्रीष्मकालीन विश्राम स्थान बना हुआ था। अतः इस का निर्माण आदर्श शहर के रूप में हुआ। शिमला पहुँचने के लिए नॉरोगेज (Narrow gauge) रेल में हमने ६ घटे का जो सफर किया, वहुत ही मनोरंजक रहा, क्योकि रास्ते भर में हमें प्रकृति के शोभामय दृश्य देखने का सुयोग मिला था।

शिमला से चल कर हम लोग **मनाली** और कूलू पहुँच गये। मनाली में जहाँ हम लोग ठहरे थे वहाँ से १२ से १४ हज़ार फुट ऊँचे मिहाच्छादित पर्वत श्रृंग साफ साफ दिखाई दे रहे थे। बरफ

पिघल कर छोटे छोटे सोते बनाती, फिर नाले और झरने, आखिर में ये प्रवाह बियास नदी में मिल कर उसे क्रमश: विस्तृत करते जाते हैं। यह सारा दृश्य हमारे नेत्रों को दावत देता था। नदी के दोनों पार्श्व में देवदारु वृक्षों की लम्बी कतारें सौंदर्य को और भी बढ़ा दे रही थीं। बियास नदी पर का यह मनोहर दृश्य लगभग ६० मील तक फैला हुआ है। इस नदी के प्रवाह को मोड़ कर भाकानांगल में मिला देने के लिए जो बांध तैयार हो रहा है, उसे हमने देखा। कहा जाता है कि इस स्थान पर प्राचीन काल में स्मृतिकार मनु का निवास था अत: उनके नाम पर यह मनाली कहलाया। यह ऐतिह्य भी प्रसिद्ध है कि वन-वास के समय पाण्डव यहाँ रहे, और भीमसेन ने हिडिम्बा को यहीं ब्याह लिया था जिस ने घटोत्कच को जन्म दिया। मनाली के कुछ प्राचीन मंदिरों के भी हम ने दर्शन किये। मनाली का प्रकृति-सौन्दर्य अनिर्वचनीय है। यहाँ पर मेव और अंजीर के भी बड़े बड़े बाग हैं। यहाँ की आबादी लगभग दो हजार है, फिर भी यह बस्ती देश विदेश से आनेवाले यात्रियों से खचाखच भरा रहता है। हमारी सेना यहाँ से लद्दाख तक जानेवाली एक सड़क का निर्माण कर रही है। इस सड़क पर से होकर हम लाहौल तक गये, रास्ते में कई स्केटिंग (Skating) के स्थान और उष्णजल के सोते भी देख लिये थे।

हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी प्रदेशों में प्रकृति अपने स्वाभाविक रूप में, मनुष्य के द्वारा अस्तव्यस्त किये बिना ही सुरक्षित रखी गई है। कुछ समय पूर्व मैंने स्विट्जरलैण्ड में भ्रमण किया था जो यूरोप का स्वर्ग माना जाता है। इन दोनों प्रदेशों में मुझे यही भेद दिखाई दिया कि हिमाचल प्रदेश में अच्छी सड़कों, और

यात्रियों के लिए आवश्यक आधुनिक सुविधाओं का अभाव है। प्राकृतिक सौन्दर्य में हिमाचल प्रदेश किसी प्रकार पिछड़ा हुआ नही है। मसूरी से देखने पर हमें दूरी पर हिमालय की पर्वतमाला दृष्टिगोचर होती है। पहाड़ों पर की ये बस्तियाँ आरोग्यनिकेतन (Health Resorts) भी हैं, अतः कई शिक्षण संस्थाएँ यहाँ काम कर रही हैं।

काश्मीर पहुँचने पर हम ने अनुभव किया कि प्रकृति कितनी महान है और वह मनुष्य को कितनी स्फूर्ति प्रदान कर सकती है। हमारे हृदय और मस्तिष्क उस सौन्दर्य से भरपूर हो गये हैं। प्रकृति ने अपना पूर्ण सौदर्य कश्मीर के जल थल में बखेर दिया है। पेड़ पौधे, फल फूल, झील सरोवर, बाग बगीचे-ये सब विविध वर्ण के रत्नो के समान सर्वत्र झिल मिलाते हुए इस भूखण्ड को स्वर्गतुल्य बनाते है। यहाँ के मैदान और उपत्य-काएँ उपजाऊ है, यदि यहाँ के निवासी मेहनत करें तो कश्मीर धन धान्य पूर्ण होगा, और भारत के समुन्नत प्रान्तो में उस की गिनती होगी, इसमें सदेह नही।

हम जिस ससार में रहते है, सचमुच बड़ा ही विचित्र है; सुख और दुख जीवन-मुद्रा के दो बाजू हैं। श्रीनगर मे रहते समय से लेकर एक एक करके धीरे धीरे दुःखद समाचार हमारे पास आने लगा। सर्वप्रथम डा० रामभण्डारी के निधन का समाचार मिला, जो हैदराबाद रोटरी के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा जिला गवरनर थे। रोटरी सस्था में सम्मिलित होकर भर सक सेवा करने की प्रेरणा मुझे भण्ड़ारी ने ही दी थी। वे रात दिन समाज सेवा क कार्यो मे निमग्न रहा करते थे। दूसरा समाचार जो पहुँचा मेरे

युवक-मित्र, रोटेरियन और सहकार्यकर्ता श्री वि. शंकरलाल की अकाल मृत्यु का है। इससे मुझे धक्का सा लगा। तुरत ही हैदराबाद हाइकोर्ट के तेजस्वी न्यायाधीश श्री विनायक राव वैद्य के गुजर जाने की खबर मिली जिसने मुझे विचलित कर दिया। अभी मेरा मन संभला नही था कि श्री कमलनयन बजाज की आकस्मिक मरणवार्ता पहुँची। श्री कमलनयन बजाज २३ वर्ष तक पूज्य गाँधी जी के निकट संपर्क में रहे। हाल ही मे उन्होंने पूज्य बापू, काकाजी और विनोबा जी के साथ के अपने संबंध के विषय पर एक रोचक ग्रंथ लिखा जिस की एक प्रति उन्होने बड़े स्नेह के साथ मुझे भेंट की। उसमें प्रतिपादित उच्च आदर्श पाठको के चरित्र को समुन्नत कर उनके जीवन में मार्गदर्शक बन सकते हैं। हमने एक दूसरे के प्रति आदर और गहरा स्नेह बढ़ा लिया था। फरवरी १९७२ में जब उनकी माताजी जानकी देवी हैदराबाद के प्राकृतिक चिकित्सालय में बीमारी का इलाज करा रही थी तब श्री कमलनयन मद्रास जाते हुए हैदराबाद में उतरे थे, उस समय मैने उनसे स्नेहपूर्वक कहा था "आपको अपने स्वास्थ्य की रक्षा पर ध्यान देना चाहिए।" तब उन्होने यही उत्तर दिया कि 'भगवान ही मालिक है।" उनके स्वास्थ्य के विषय में उनकी माताजी भी चिंतित रहा करती थी। उन्होंने एक बार मुझ से कहा था "भगवान जाने, इसका जीवन कब और कहाँ पर अंत होगा। मुझे तो ऐसा लगता है कि उस समय हममें से कोई भी उसके पास नही रहेंगे।" जानकीबाई की यह भविष्यवाणी मुझे अब तक स्मरण है। श्री कमलनयन के सभी कुटुंबी-विशेष रूप से उनके पिताजी श्री जमनालाल बजाज राष्ट्र की सेवा में सबसे आगे रहते थे।

जव मैं थोड़े दिनों के लिये कच्छ गया हुआ था एकायव मुझे स्वामी रामानंदतीर्थ के स्वर्गवास का समाचार मिला। श्री स्वामी जी हैदराबाद में राजनीतिक, सामाजिक और शिक्षा के क्षेत्रों मे कई दशाब्दियों से प्रशसनीय सेवा करते आये है। उन्होंने अपना सारा जीवन हैदराबाद रियासत को राजनीतिक स्वतंत्रता दिलाने, उसकी आर्थिक सपत्ति बढ़ाने और हर प्रकार से उसकी उन्नति करने मे अर्पण किया। ३० वर्ष तक की उनकी राजनीतिक और सामाजिक सेवातत्परता ने मुझ जैसे अनेकों को सेवा के क्षेत्र मे उतरने की प्रेरणा दी। मेरा उनके साथ निकट संबंध रहा, उनकी निस्वार्थ वृत्ति मेरी हिम्मत बढ़ाती रही।

इन महानुभावो की मृत्यु ने मेरे सारे उत्साह पर पानी फेर दिया। यह तो सत्य है कि जो जन्म लेता है वह अवश्य मरता है। किन्तु सोचने पर ऐसा लगता है कि मेरी सारी स्मृतियों का अत हो गया है। अतः मैंने वर्तमान को ही मुख्य और मूल्यवान कहना उचित समझा। हमें वर्तमान पर ही विशेष जोर देकर उत्तम आदर्शों का अनुसरण करना चाहिए। हृदय से घृणा और द्वेष हटा कर प्रेम और अनुराग भर लेना चाहिए। भूलना नही चाहिए कि स्वर्ग हमारे हृदयों में ही स्थित है, और सत्कार्यों के द्वारा ही हमें उसकी अनुभूति हो सकती है। दुष्कार्य और दुश्चरित्र हमारे इसी जीवन को नरकमय बना डालते है।

प्रकृति में सामंजस्य और वैरुध्य दोनों मौजूद है। हिमालय के पहाड़ ठंडक और आराम पहुँचाते है, परंतु उसके तले के मैदान बेहद गरमी और हैरानी। तराई के निवासी कही कहीं पानी के लिए भी तरसते हैं। हिमालयो पर के शीतल वातावरण

में सुख का अनुभव करते समय मेरे विचार कड़ाके की धूप में पसीना बहानेवालों को घरे रहते थे।

पहाड़ो की ऊँचाई में जाने पर मनुष्य भौतिक विचारधारा छोड़ कर आत्म चिंतन करने लगता है। संभवतः इसी कारण से सारा हिमालय प्रदेश देव मंदिरो और तपस्वियों के आश्रमों से भरा हुआ है। साधारण कमाई का आदमी भी यहाँ से भिन्न भिन्न स्थानों की यात्रा आसानी से कर सकता है; क्योंकि सब जगह यात्रियों की सुविधा के लिए धर्मशालाएँ, सरकारी अतिथि गृह और सस्ते वाहनों का प्रबन्ध दिखाई देता है। ऐसी यात्राएँ आनंददायक ही नही, प्रेरणात्मक भी होती हैं।

पश्चिम देशों में मामूली औकात के आदमी भी, विनोदपूर्ण भ्रमण और यात्राओं के लिए रुपया बचा कर रखते है। हमारे यहाँ के मध्यवर्ग के लोगों को भी मितव्यय के द्वारा पैसा बचाकर पर्याय से एक एक प्रान्त में घूमते हुए समूचे भारत का दर्शन करना उचित है। भारत का हर एक प्रांत प्रकृति के विशेष सौन्दर्य से शोभायमान है, जो अवश्य दर्शनीय है।

५०

## बंगला देश के शरणार्थियों को सहायता

'विभाजित कर शासन करने'-की नीति का अनुसरण करते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारत के दो टुकड़े कर दिये। इसके परिणाम में असंख्य प्राणि और संपत्ति का विनास हुआ। पाकिस्तान ने पश्चिम देशों और चीन के प्रभाव में आ कर भारत से वैर विरोध बनाये रखा और काश्मीर के नाम पर तीन बार भारत पर आक्रमण किया।

भौगोलिक दृष्टि से पाकिस्तान दो टुकड़ों में बँटा हुआ है, एक पूर्वी पाकिस्तान और दूसरा पश्चिमी पाकिस्तान। पूर्वी पाकिस्तान, जो अब बगला देश कहलाता है-पश्चिमी पाकिस्तान से किसी भी बात मे मेल नही खाता; भौगोलिक, आर्थिक, व्यावसायिक ही नही बल्कि, नृवंशविज्ञान (Ethnology), सामाजिक औ सांस्कृतिक दृष्टियो से भी दोनों भागों में विभिन्नता ही पाई जाती है। पश्चिमी पाकिस्तान ने पूर्वी भाग को अपना उपनिवेश समझ कर शोषण करने के लिए वहाँ दमननीति चलाई। अतः आरंभ ही से वहाँ असंतोप के बीज बोये जाने लगे। क्रमशः असंतोष बढ गय और फलतः प्रतिरोध, वाद विवाद, और अधिकार के लिए संघ

उत्पन्न हुआ । आखिर, प्रजासत्तात्मक अधिकारों से जब जनता वंचित रखी गयी तब उसने स्वतंत्रता के लिए युद्ध आरम्भ कर दिया। पश्चिमी पाकिस्तान अपने लगभग एक लाख सैनिकों को भेज कर जनता पर अत्याचार करने लगा। लाखों निरीह स्त्री पुरुष और शिक्षित मेधावी समुदाय क्रूरता के साथ मार डाला गया। संसार के इतिहास में आज तक किसी भी नृशंस शासक ने इतनी बड़ी संख्या में–इतनी क्रूरता के साथ अपनी ही प्रजा का संहार नहीं किया था।

जब क्रूरता बढ़ गई जनता सह न सकी; प्राणों की रक्षा के लिए देश से भाग निकली। लाखों लोग भारत में चले आये। भारत ने पड़ोसी धर्म निभाते हुए इन विस्थापितों को आश्रय देने का भार अपने ऊपर लिया। फलत: लाखों निस्सहाय लोगों के लिए अस्थायी आवास, अन्न, वस्त्र और दवा दारू देने का प्रबन्ध कर दिया। बंगला देश के नेताओं ने, जो स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे, भारत सरकार से सैनिक सहायता की याचना की। दूसरा उपाय न होने के कारण भारत ने अपनी सेना भेज कर सहायता पहुँचायी जिससे युद्ध शीघ्र समाप्त हुआ और बंगला देश ने पश्चिम पाकिस्तान से अलग होकर अपना स्वतंत्र शासन कायम कर दिया।

जब शरणार्थी लाखों की संख्या में प्रतिदिन देश में प्रवेश करने लगे तो भारत सरकार अकेले ही सहायता का कार्यभार संभाल न सकी; जनता का सहयोग आवश्यक हो गया। अत: सार्वजनिक संस्थाओं ने अपनी अपनी योजनाएँ बना कर रक्षण का कार्य संपन्न किया।

१९७१ मार्च के उत्तरार्ध में शरणार्थियों का आना आरंभ हुआ था। एप्रिल के अतिम सप्ताह में मैं ने आन्ध्र प्रदेश में शरणार्थियों को सहायता देने के लिए एक समिति आयोजित करने का प्रयत्न आरंभ किया। आन्ध्र प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री पि· नरसा रेड्डी की अध्यक्षता में एक सभा बुलायी गयी। उस में "आन्ध्र प्रदेश वंगलादेश शरणार्थी सहायता सघ" की स्थापना हुई जिस के अध्यक्ष स्वयं श्री पि नरसा रेड्डी थे और श्री प्रभाकरजी उपाध्यक्ष चुने गये। मत्री का दायित्व मुझे सौंपा गया; श्री सि. वि. चारी और श्री सुरेन्द्र लुनिया संयुक्त मन्त्री, तथा श्री बनारसीलाल गुप्त कोशाध्यक्ष बना दिये गये। संघ के अन्यान्य सदस्यों में नीचे लिखे प्रमुख नागरिक भी थे : डा० जि· एस.मेलकोटे, श्री एर्रम सत्यनारायण, रामराव मार्चेर्ल, श्री अब्दुल रहीम, श्री मीर अकबरअली खान, श्री के एल. एन· प्रसाद, श्री रमेशचन्द्र लाहोटी, श्री त्रि· सि. चौधरी. श्री जि. माणिक्य राव, श्री पि. वि· नरसिंह राव, श्री वि. पि. मूर्तिराजु, श्री एस· वि. नायक और श्री के· वैद्यनाथन।

कमिटी ने यह निश्चय किया कि सहायता नकद रुपये, कपड़े और औषधों के रूप में वसूल की जाय और इस कमिटी को श्री एम. सी· सेतल्वाड़ और कुमारी पद्मजा नायुडू के नेतृत्व में दिल्ली में आयोजित "अखिल भारतीय वंग्लादेश सहायता समिति" के साथ संबद्ध किया जाय। हमारे संघ की कई उपसमितियाँ भी बनाई गयी। "टोकर्शीलाल जी कापडिया चारिटबुल ट्रस्ट" ने १००० रुपये और "हैदराबाद सर्वोदय रिलीफ कमिटी" ने ५००० रुपये का अनुदान देना तत्काल ही घोषित

किया। हमारी समिति को जनता का पूर्ण सहयोग मिला, पर्याप्त रुपया, बहुत से कपड़े और औषध वसूल हुए। यह सारी सहायता अधिकृत संस्था के पास पहुँचा दी गई।

## भारत पाकिस्तान युद्ध

पिछली बार जब पाकिस्तान ने भारत पर अचानक आक्रमण किया तब ५-१२-'७१ को मैंने अपनी जान पहचान के प्रमुख व्यक्तियों, संस्थाओं तथा समाचार पत्रों के पास एक सूचना पत्र भेज दिया था। इस पत्र में मैंने नागरिकों के दायित्व के विषय में अपने विचार प्रकट करते हुए तुरंत अमल में लाने के लिए कुछ सूचनाएँ भी लिख भेजी। इस पत्र के मुख्य विषय नीचे दिये जाते हैं:—

"इस संकट के समय में, जब हमारा देश आक्रमण का सामना कर रहा है और देश की सुरक्षा को धक्का लगनेवाला है, हर एक नागरिक को, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, स्त्री हो या पुरुष, अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता की रक्षा के लिये कमर कसना चाहिए। हमारी प्रजासत्तात्मक और धर्म-निरपेक्ष लोकप्रिय सरकार और हमारे राष्ट्रीय नेता निस्संदेह हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। मैं अपने देश के भाइयों से प्रार्थना करता हूँ कि सब लोग इस संकट के समय में एक होकर काम करें, सरकार का बल बढावें और अपनी सारी शक्तियों को सुरक्षा के कार्यों में लगा दें।

कई सामाजिक शैक्षणिक और व्यापारिक संस्थाओं ने मुझ पर विश्वास करके उनके संचालन का भार मेरे कंधों पर रखा

और मैं उन संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का पूर्ण सहयोग पाकर, शक्ति भर अपने कर्तव्य का निर्वहण कर रहा हूँ। इस अवसर पर मैं हर एक व्यक्ति और संस्था को युद्ध की सफलता के लिये कुछ कार्याचरण संबंधी सूचनाएँ देने का साहस कर रहा हूँ।

(१) हम में से हर एक को बालसेवकों (Boy scouts) का–"तैयार रहो"– वाला आदर्श मान लेना चाहिए और सरकार के आदेशों पर अमल करने के लिये हर समय तैयार रहना चाहिए।

(२) खाद्यान्न, पेट्रोल, वस्त्र आदि आवश्यक पदार्थों की इन दिनों कमी पड़ सकती है, अतः हर एक का यह कर्तव्य है कि इन वस्तुओं का किसी भी प्रकार से दुरुपयोग न हो।

(३) रुपये पैसे बचाने का पूरा पूरा यत्न होना चाहिए, विवाह आदि सामाजिक अवसरों पर अथवा धार्मिक कृत्यों पर मितव्यय से काम लेना चाहिए।

(४) सब को अपने खाने पीने का मासिक खर्चा कम से कम द्रव्य में चला लेना चाहिए जिससे कुछ पैसा बच जाय और 'उसे युद्ध निधि' के लिये भेजा जा सके। आवश्यक वस्तुओं का कम से कम विनियोग हो जिससे बाजार की कीमते बढ़ न जाएँ और वस्तुओं का मिलना कठिन न हो जाए। माल बचाकर रखने की आदत, भयोप्तादक वार्ता फैलाने की प्रवृत्ति एक दम रोक देनी चाहिए। शान्ति, धैर्य और संतोष का वातावरण बनाये रखना चाहिये।

(५) शासन का हाथ बँटाने के लिए सभी नागरिकों और व्यापारिक सस्थाओं का यह कर्तव्य है कि सव प्रकार के कर सच्चाई के साथ अविलंब चुका दें।

(६) सभी सरकारी विभाग और व्यावसायिक संस्थाओं में मितव्यथ वरतना और अपव्यय रोकना आवश्यक है।

(७) संकटकाल में सभी सशक्त मनुष्य राष्ट्र का वल वढ़ानेवाले सेवक वन सकते हैं। जनता द्वारा अपने आप चलाये जानेवाले रक्षण कार्यो में वे लोग सहायक हो सकते है, इसके लिये वे तैयार रहें और आवश्यक शिक्षण भी प्राप्त करे।

मैं सब वर्गो से यह अनुरोध करता हूँ कि वे तुरंत अपनी संस्थाओं के सदस्यों की वैठकें वुलावें और इन सूचनाओं को कार्यान्वित करने के उपाय निश्चत करें। हमें सारे राष्ट्र को इस प्रकार सन्नद्ध करना चाहिए कि सफलता के साथ शत्रु का सामना कर सकें। राष्ट्र की पुकार पर ध्यान देना सव का काम है।"

### बाद के प्रयत्न

यद्यपि मैं अविश्रांत कार्याचरण से निवृत्त हो कर अवकशा पाना चाहता था तो भी आखिर तक समाज सेवा करते रहने की अंत:प्रेरणा मुझे कार्य क्षेत्र में ढ़केलती ही रही।

यह देखा गया है कि "सरोजिनी देवी नेत्रचिकित्सालय" में अंधों को दृष्टि दिलाने के निमित्त किये जानेवाले "कोर्नियल फ़ाग्रटिंग" आपरेषन बहुत ही अपर्याप्त हैं। आपरेषन चाहने

वालों की संख्या अधिक है। उनके लिए हास्पिटल में सेवा का प्रबध कम है, इसलिए "आइ बॉक कमिटि" के मंत्री की हैसियत से इस कार्य को विस्तृत करने का मैने सकल्प किया। इसके लिये एक योजना तैयार की गयी जिसके अनुसार मब साधनों के साथ एक अलग "आपरेषन थियेटर" बनाया जायेगा, उसमें ग्राफटिंगवाले आपरेषन अधिक सख्या में किये जा सकते है। इसके साथ साथ एक 'स्पेशल वार्ड" भी बनवाया जायेग। जिसमें ५० रोगियों के लिए बिछौने रहेगे। इसके अतिरिक्त लोगों को नेत्र-रक्षा सबंधी जानकारी देने के लिये एक प्रदर्शन-गृह का भी प्रबंध किया जायेगा। इस नये आयोजन के अतर्गत यह सभी विशेषताएँ है। इस योजना की पूर्ति के लिए २ लाख रुपयो का अनुमान लगाया गया। "टोकर्शी लालजी कापड़िया चारिटबुल ट्रस्ट" ने इस कार्य के लिए ५०,००० रुपये का अनुदान मंजूर किया। शेष देढ़ लाख का द्रव्य चदा और नाटक आदि मनोरजनो द्वारा वसूल करने का कार्य चालू कर दिया गया है।

"आइ बैंक कमिटि" ने प्रति वर्ष "आइ बैंक दिन" मनाने का निश्चय किया था। इस उत्सव के द्वारा नेत्र दाताओं के भाई-वन्धु उन अंधे लोगों से मिलने का अवसर पा सकेंगे जिन को उस दान के फलस्वरूप दृष्टि मिल गई है। इस प्रकार इस आवश्यक सेवाधर्म पर जनता का ध्यान आकृष्ट हो सकता है। प्रथम 'आइ बैंक दिन' का प्रारभ १९६६ में तब के मुख्य मंत्री श्री कासु ब्रह्मानद रेड्डि के हाथों से हुआ था।

सामाजिक सेवा का एक और अंश, जिस में मेरा काफी सहयोग रहा, भारतीय विद्या भवन से संबध रखता है। उस का

भी उल्लेख करना मै उचित समझता हूँ। इस संस्था की एक शाखा आंध्र प्रदेश मे भी स्थापित हो गई है। उसकी कार्यकारिणी समिति का मैं एक सदस्य चुना गया हूं। उसकी उन्नति और विस्तार केलिए जो योजना बनाई गई, उसमें एक सभा मंडप, एक पुस्तकालय तथा एक अतिथि-गृह के अंश भी सम्मिलित हैं। सभा-मण्डप सभा समाजों के लिए, गीता और संस्कृत के वर्ग चलाने के लिए आवश्यक समझा गया है। इसके अतिरिक्त पत्र संपादन का कालेज (College Journalism) चलाने के लिए भी जगह मिल जायेगी। इस सारी योजन का अनुमानित खर्च १० लाख रुपये का होगा। इस योजना को कार्यान्वित करने में दूसरे सदस्यो के साथ मैं भी प्रयत्नशील रहा हूँ।

## ५१

# उपसंहार

अवकाश के समय मैंने अपने जीवन की मुख्य घटनाओं की एक लंबी सूची तैयार कर ली, साथ ही कई प्रश्नो पर अपने विचार भी सक्षेप मे अंकित कर लिये है। इस काम में मेरा उद्देश्य अपनी बीती जीवनी पर सिहावलोकन करने का और साथ ही भूल चूक सुधार लेने का रहा। जब मै युवावस्था में था तभी मैंने सकल्प कर लिया कि पचास वर्ष की उमर में व्यवसाय से निवृत्त होकर शेष जीवन सामाजिक सेवा में लगा दूँ। मेरी दूसरी अभिलाषा यह थी कि साठ वर्ष की आयु का होने पर सब प्रकार का अधिकार और दायित्व छोड़ कर निर्लिप्त अवस्था में आत्मिक उन्नति के लिए साधना करूँ।

मेरा संकल्प बहुत कुछ सफल हो गया है, इसलिए मैं पचास वर्ष की आयु के बाद से सामाजिक सेवा के लिए अधिक से अधिक समय व्यय करने लगा हूँ। मै अब तक दूसरो की भलाई के लिए जो कुछ कर पाया हूँ उससे मुझे पूर्ण सतोष है। मेरे कई मित्रो ने कई क्षेत्रो में उत्तरदायित्व पूर्ण सेवाकार्य संभालने का मुझे सुअवसर दिया है। ज्ञानी पुरुषों का कहना है—"समाज सेवा

करनेवालों में भी अहंकार, घमंड और अधिकार-वांछा का दुर्गुण उत्पन्न हो सकता है।" वर्तमान समय में इस सेवा कार्य में मैं इतना डूबा रहता हूँ कि आध्यात्मिक साधना के लिए अथवा आरोग्य की रक्षा के लिए समय का मिलना कठिन हो गया। मैं जीवन यात्रा में अभी अभी ५७ वाँ वर्ष पार कर चुका हूँ। उच्च प्रयोजन की सिद्धि केलिए यत्न करने का समय बहुत निकट आ रहा है। जब मैं पिछले जीवन पर गौर करता हूँ तो ऐसा लगता है कि मैंने अब तक के जीवन में आशातीत सफलता पायी है। मुझे इससे बढ़ कर संतोष और क्या हो सकता है ?

मेरी यह जीवनी पढने के बाद यदि पाठक को थोड़ी भी सत्प्रेरणा मिले तो अपना प्रयास सफल हुआ समझूँगा। महान पुरुषों के जीवन से तुलना करने पर मेरे जीवन में कोई विशेषता अथवा अनोखापन दिखाई नही देगा। यह मैं भली भांति जानता हूँ, किंतु मेरी जीवन-कथा यह अवश्य बतलाती है कि साधारण व्यक्ति भी यदि उत्तम गुणों की साधना में प्रयत्नशील रहा तो उसका जीवन बहुत संतोषजनक बन सकता है।

कुछ भी हो, मेरे जैसे व्यक्ति के लिए आत्मकथा लिखना अंधेरे में छलांग मारने के समान है। असंपूर्णता से पूर्णता की तरफ बढने का प्रयत्न ही जीवन है। मैंने भी अपने जीवन में ऐसा ही प्रयत्न किया है। इस दृष्टि से इस पुस्तक में मनुष्य के जीवन के विकास की कथा ही वर्णित हुई है। इस वर्णन में यदि पाठक कोई अनौचित्य अथवा असंगति देखें तो मैं विनयपूर्वक उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे मुझे क्षमा करें।

—सबको प्रणाम

५२

# संस्थाओं की सूची

नीचे उन सब संस्थाओ का विवरण दिया जा रहा है जिनके साथ मैं ने किसी न किसी प्रकार का दायित्व रखकर अपने जीवन में उनकी उन्नति के लिए तन, मन, धन से प्रयास किया है :-

अ) **व्यापार संबंधी :**

१) अध्यक्ष–आंध्र प्रदेश आइल मिल्लर्स एसोसियेशन ।

२) अध्यक्ष–हैदराबाद आइल सीड्स एक्सचेज, लिमिटेड ।

३) सदस्यः कार्यकारिणी समिति–फेडरेशन ऑफ़ आ० प्र० चेवर्स ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीस ।

४) सदस्य कार्यकारिणी समिति–आ० प्र० ग्रेइन्स एण्ड सीड्स मर्चेट्स एसोसियेशन (भूतपूर्व अध्यक्ष और मन्त्री) ।

५) सदस्य-सेल्स टैक्स एडवैसरी कमिटि, आ० प्र० सरकार ।

६) अध्यक्ष–आ० प्र० स्टील री-रोलिग एसोसिएशन, हैदराबाद ।

७) भूतपूर्व सदस्य–लोकल एडवैसरी कमिटि, युनैटेड कमर्शियल बैंक, लिमिटेड़।

८) उपाध्यक्ष–सेंट्रल आर्गनैजेशन फ़र आइल इंडस्ट्रीस एण्ड ट्रेड, बबई।

आ) शिक्षा-संस्थाएँ

१) मैनेजिंग ट्रस्टी–अमृत कापडिया नवजीवन विमेन्स कालेज ट्रस्ट।

२) उपाध्यक्ष–अमृत कापडिया विमेन्स कालेज (आर्टस एड सैंस)हैदराबाद।

३) करेस्पांडेंट–कन्या गुरकुल हाइस्कूल एड हॉस्टल (भूतपूर्व उपाध्यक्ष और आनरेरी मत्री।

४) सदस्य–गवर्निग कौंसिल, अध्यक्ष–फ़ैनान्स कमिटी—बद्रुका कालेज आफ़ कामर्स एंड आर्टस, हैदराबाद।

५) सदस्य–का० का० समिति हिन्दी महाविद्यालय (भूतपूर्व कोशाध्यक्ष) हैदराबाद।

६) सदस्य–का० का० समिति–केशव मेमोरियल हाइ स्कूल, हैदराबाद।

इ) सामाजिक संस्थाएँ

१) अध्यक्ष–जीव रक्षा मंडली, हैदराबाद।

२) अध्यक्ष–तिलक कॉलनी वेलफेर सोसैटी, हैदराबाद।

३) भूतपूर्व अध्यक्ष–आ० प्र० सहकारी संघ, हैदराबाद।

४) भूतपूर्व कोशाध्यक्ष–गाँधी सेंटिनरी सेलिब्रेशन्स कमिटी, हैदराबाद ।

५) भूतपूर्व सदस्य–हैदराबाद, सिकंदरावाद रैलवे स्टेशन्स कन्सलटेटिव कमिटी एंड रैल्वे यूसर्स कंसल्टेटिव कमिटी।

६) अध्यक्ष–आ० प्र० वेजिटेरियन लीग।

७) अध्यक्ष–जैन सेवा संघ-हैदराबाद ।

८) अध्यक्ष-विश्व हिंदू परिषद-हैदराबाद शाखा ।

९) उपाध्यक्ष-हैदरावाद चिलड्रेन्स एयिड सोसैटी; भू० पू० अध्यक्ष: वाल निवास, हैदराबाद ।

१०) उपाध्यक्ष–वालकजी-बारी, हैदराबाद ।

११) उपाध्यक्ष–हनुमान व्यायाम शाला, हैदरावाद ।

१२) अध्यक्ष-श्री कच्छी मित्र मडल भवन कमिटी, हैदराबाद ।

१३) आनरेरी मंत्री–आइ बांक कमिटी-हैदरावाद ।

१४) आनरेरी मंत्री-सर्वोदय रिलीफ़ कमिटी, हैदराबाद।

१५) आनरेरी मंत्री–बग्लादेश रिलीफ कमिटी-आ० प्र०, हैदराबाद ।

१६) मानेजिंग ट्रस्टी—सर्वोदय ट्रस्ट, शिवरामपल्ली, हैदराबाद ।

१७) भू० पू० उपाध्यक्ष—वी· वार्ड कांग्रेस कमिटी, हैदराबाद ।

१८) भू० पू० सदस्य–एडवैसरी कमिटी, पोस्ट एण्ड टेलि-ग्राफ डिपार्टमेंट, हैदरावाद ।

१९) मैनेजिंग ट्रस्टी, सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट, हैदरावद ।

२०) सदस्य, का० का०समिति—कुलपाकजी, जैन मदिर ।

२१ ट्रस्टी–रामकृष्ण मठ, हैदरावाद ।

२२) अध्यक्ष-स्वामी विवेकानंद हाल कमिटि-सिकंदरावाद ।

२३) कोशाध्यक्ष-आ० प्र० स्टेट कौन्सिल, फ़र चैल्ड वेलफ़ेर

२४) कोशाध्यक्ष–ग्राम स्वराज्य फण्ड, हैदरावाद ।

२५) आजीवन सदस्य–भारतीय विद्या भवन, वंबई ।

२६) सदस्य–का० का० समिति-भारतीय विद्या भवन, हैदरावाद ।

२७) सदस्य–का० का० समिति, भूत० पू० आनेररी मत्री, गाँधी स्मारक निधि–आ० प्र० ।

२८) सदस्य, का० का० समिति–नेचर क्यूर हास्पिटल एंड कालेज ।

२९ ट्रस्टी–गुजराती प्रगति समाज (भू० पू० अध्यक्ष, भू० पू० आनेररी मत्री) –हैदरावाद ।

३०) ट्रस्टी–भाग्यनगर खादी समिति–हैदरावाद ।

३१) भू० पू० आनरेरी मंत्री–बिहार रिलीफ कमिटि आ० प्र० शाखा ।

३२) भू० पू० कनवीनर गुजरात फ्लड रिलीफ कमिटि हैदराबाद ।

३३) सदस्य, का० का० समिति–आ० प्र० खादी नवनिर्माण सघ, हैदराबाद ।

३४) ट्रस्टी, भू० पू० कोशाध्यक्ष–दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (आंध्र) हैदराबाद ।

३५ ट्रस्टी, पल्ली सर्वोदय समाज, कच्छ ।

ई) **सरकारी संस्थाएँ:**

१) उपाध्यक्ष–आ० प्र० डिस्चार्जड प्रिसनर्स सोसैटी हैदराबाद ।

२) सदस्य–विजिटर्स कमिटि, गवर्नमेंट जूनियर सर्टिफइड स्कूल एंड गवर्नमेंट सीनियर सर्टिफइड स्कूल फर बाइस, हैदराबाद ।

३) आजीवन सदस्य–नेशनल स्पोर्टस क्लब आफ़ इंडिया ।

४) सदस्य–एक्सपोर्ट–इंपोर्ट एडवयिजरी कमिटि (सौतजोन गवर्नमेंट आफ़ इंडिया ।

५) सदस्य–आ० प्र० स्टेट मिनिमम वेजेस एडवयिजरी कमिटी ।

६) सदस्य– का० क० कमिटि, एसोसिएशन फ़र प्रिवेन्शन आफ क्रूयलटी टु ऑनिमल्स, हैदराबाद ।

७) भू० पू० सदस्य–रिनोवेशन कमिटि, श्री लक्ष्मी नरसिंहस्वामी टेंपुल, धर्मपुरी, कांस्टिटयूटेड-बै-गवर्नमेंट आफ आं० प्र० ।

८) भू० पू० सदस्य–सेंट्रल आइल सीडस कमिटि, गवर्नमेंट आफ़ इंडिया।

९) भू० पू० सदस्य–नेशनल सीडस डेवलोपमेंट कमिटी, गवर्नमेंट आफ़ इंडिया।

उ) **रोटरी क्लब आफ़ हैदराबाद :**

ऍक्टिव मेंबर।

भू० पू० चैरमन–कम्युनिटी सरवीस कमिटी।

भू० पू० अध्यक्ष–क्लब सरवीस कमिटी।

भू० पू० अध्यक्ष–अर्बन ऍंड रूरल वेलफेर कमिटी।

भू० पू० अध्यक्ष–एंप्लायर्स ऍंड एंप्लायीस रिलेशन कमिटी।

भू० पू० कोशाध्यक्ष।

भू० पू० उपाध्यक्ष।

# शुद्धि–पत्र

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध पाठ | शुद्ध पाठ |
| --- | --- | --- | --- |
| ४ | १४ | एकाग्र हीं | एकाग्र नही |
| १२ | १४ | महत्व | ममत्व |
| १६ | १ | करने से वे पूर्व | करने से पूर्व |
| २१ | २० | अब सभी | अब सभी को |
| २२ | २० | अधिक बड़ा | बढ कर |
| २६ | १४ | मत गभराना | मत घबराना |
| २८ | २ | होना चाहिए | रखना चाहिए |
| ४० | १२ | उसी से | उसी कारण से |
| ४५ | १२ | सस्वन्धियों | संबन्धियो |
| ,, | ३ | सात्विकवृत्ति | सात्विकवृत्ति की |
| ६२ | ७ | उसकी | उनकी |
| ७३ | ४ | बनाया हुआ | बना हुआ |
| ७४ | ८ | जमकर | जमा कर |
| ७५ | १ | वचनो का | वचनो की |
| ७८ | १६ | स्वदेशो | स्वदेश |
| ८३ | १८ | परम्पर | परस्पर |
| ८४ | १५ | सधा की नहीं | सधा कि नहीं |
| ९३ | १७ | अर्धशास्त्र | अर्थशास्त्र |
| ,, | २२ | नथु छेढ़ | नथुछेड़ा |
| ९४ | १० | समान | सामान |
| १०२ | १६ | योग्य दिया | योग दिया |
| १०४ | ५ | भूख तो | भूख के रहने पर |
| १०७ | ७ | इसका रटन | इसकी रटन |
| १२० | १९ | गासीराम | घासीराम |
| १२५ | १ | जातीय एकता | राष्ट्रीय एकता |
| ,, | १४ | उस्लासपूर्ण | उल्लास पूर्ण |
| १४४ | १५ | इक्कीसवें | बाईसवें |

| | | | |
|---|---|---|---|
| १५६ | ५ | न्यूज रीलीज | न्यूस रील्स |
| १७९ | अंतिम | प्रधाम | प्रधान |
| १८७ | ६ | चला रहा | चल रहा |
| ,, | ७ | चल रहा | चला रहा |
| १८९ | २० | समित थी | सीमित था |
| १९३ | ४ | करते हैं | कर रहे हैं। |
| १९५ | ८ | महेता | मेहता |
| २०८ | १२ | श्यामादेवी | श्यामलादेवी |
| ,, | १३ | प्रिजनर ऐड | प्रिज़नर्स ऐड |
| २१३ | ७ | एसोसियेशन्स | एसोसियेशन |
| २२४ | २० | मील | मिल |
| २२५ | अंतिम | मील | मिल |
| २४५ | २१ | असहयोग | सहयोग |
| २५२ | ८ | बनाइये | बनाये |
| २५६ | ३ | सरकार में | सरकार ने |
| ,, | १२ | सभी | अभी |
| २५७ | ६ | प्रचार करते हैं | प्रचार करती हैं। |
| २६६ | १२ | वह | वे |
| २७५ | १२ | बंगला रखा | बंगला ले रखा |
| २७७ | ६ | १८६३ | १९६३ |
| २९२ | ७ | होना | मिलना |
| २९४ | १२ | दुश्य | दृश्य |
| ३१२ | ७ | शाधु | साधु |
| ३१३ | २ | और कुछ | और अपना कुछ |
| ३१५ | १९ | स्त्री वर्ग | जिस स्त्री वर्ग |
| ३१६ | ६ | राष्ट्रपति | राष्ट्रपिता |
| ३२० | १९ | आवगत | अवगत |
| ३२१ | १८ | सम्हाला | सराहा |
| ३२३ | ३ | पंजाव सूब | पंजाबी सूबे |

| | | | |
|---|---|---|---|
| ३२४ | ३ | एक ओर | एक ओर धन के ढेर और |
| ३२८ | १० | ससक्त | सशक्त |
| ३४६ | १७ | ट्रस्ट रहना | ट्रस्टी रहना |
| ३५० | १ | संचालक | संचालन |
| ३५९ | ६ | दौर दैरा | दौर दौरा |
| ३६८ | ४ | Indın Councıl | Indian Councıl |
| ३६७ | १९ | एच होकर | एक हो कर |
| ३७१ | १८ | पुर्ननिणाण | पुर्ननिर्माण |
| ३८८ | १० | प्रथा | तथा |
| ३८९ | ८ | कहलता है | कहलाता है |
| ३९२ | १३ | जल का | जेल का |
| ४०५ | ६ | परिस्तिथि | परिस्थिति |
| ४०५ | ७ | सकट | अकसर |
| ४०८ | १३ | खत | खेत |
| ४१४ | ६ | नजर आई | नजर नही आई |
| ४१६ | ९ | देश में | देशों में |
| ४१८ | १० | पालमें का | पालने का |
| ,, | १७ | वशेष | विशेष |
| ,, | २० | इन बात की | इस बात की |
| ४२२ | ६ | फैलाता | फैलता |
| ४२३ | १३ | अपमें | उस में |
| ४३० | ७ | दखन में | देखने में |
| ,, | १७ | तले उगला | तले उगली |
| ४३३ | १० | सजाते है | सजाये जाते हैं |
| ,, | १६ | कधिकांश | अधिकांश |
| ४३६ | २० | Sand Wiehcs | Sand Wiches |
| ४४६ | २ | घरे रहते | घेरे रहते |
| ४५३ | १६ | अवकशा | अवकाश |
| ,, | २१ | फ़ाग्रटिंग | ग्राफ़टिंग |
| ४५२ | १४ | देढ़ लाख | ड़ेढ़ लाख |
| ४५४ | ८ | College | College of |